॥ श्रीः ॥

ग्रन्थ

स्वानुभवसार

वेदान्तमुख्यसिद्धान्त

जयपुरनिवासि दधीचवंशोद्भव संस्कृतपाठशालाध्यापक

पंडित

गोपीनाथ ने बनाया।

दोहा।

जड़ मति लखि समुझै नहीं ताको कछु न विचार।
काल अनन्त धरा अचल गहि हैं सज्जन सार ॥ १ ॥
जो याके हृदयार्थ कों समुझै चित दे कोय।
जल सिरधैं धारन करूँ ताके पद युग धोय ॥ २ ॥

अजमेर

राजस्थान यन्त्रालय में छपा।

प्रथमबार) सं० १९५० (मू० २)
प्रति१०००) सन् १८९४ (डा०म० =)

॥ श्रीः ॥

ग्रन्थ

स्वानुभवसार

वेदान्तमुख्यसिद्धान्त

जयपुरनिवासि दधीचवंशोद्भव संस्कृतपाठशालाध्यापक

पंडित

गोपीनाथ ने बनाया।

दोहा।

जड़ मति लखि समुझै नहीं ताको कछु न विचार।
काल अनन्त धरा अचल गहि हैं सज्जन सार ॥ १ ॥
जो याके हृदयार्थ कौं समुझै चित दे कोय।
जल सिरपैं धारन करूँ ताके पद युग धोय ॥ २ ॥

अजमेर

राजस्थान यन्त्रालय मैं छपा।

प्रथमवार } सं० १९५० { मू० २)
प्रति१००० } सन् १८९४ { डा० म० =)

स्वानुभवसारका सूचीपत्र

द्वितीय भाग समाप्ति

तृतीय भाग समाप्ति

॥ भूमिका ॥

श्री कृष्णोजयति ॥

स्वानुभवसार उपोद्घात ॥

विदित होकि ये शरीर सम्वत् १९०६ मैं श्रावण कृष्ण २ के दिन ब्राह्मम मुहूर्त मैं उत्पन्न हुवा है मेरी जननी हरिभक्ति मैं तत्पर रही यातैं मेरो प्रतिदिन शङ्खोदक तैं प्रोक्षण करावती ओर श्रीभगवत्स्नानोदक का मोकूँ पान करावती ऐसैं जब मैं पाँच वर्षकी अवस्थाकूँ प्राप्त हुवा तब माता के साथ ही श्रीमहाभारत ओर श्रीमद्भागवत इनका श्रवण करता रहा जब कथा समाप्त होती तब मेरी माता श्रुतकथाका मोकूँ पुनः श्रवण करावती ओर मेरे मुखतैं यथातथा श्रवण वी करती ओर मेरे पास श्रीकृष्ण के गुणौं को गान करती यातैं बाल्यावस्था मैं हीं मेरी प्रीति श्रीकृष्णमैं दृढ होगई ओर मेरे ज्येष्ठ भ्राता मोकूँ अध्ययन करावते इस प्रकारतैं ७वर्षकी अवस्था मेरी होगई ओर जब अष्टम वर्षका प्रवेश हुवा तब मेरा शरीर नाना विध रोगौं करिकैं आक्रांत होगया जिन रोगोंकूँ वैद्यौं नैं असाध्य कहे ओर ज्योतिर्विदौं तैं मेरे पिताजीनैं निश्चय किया तो उननैं वी इस वर्ष के अष्टम मासमैं मेरे शरीरपातका दिन निश्चित करदिया जब वो निश्चित दिन प्राप्त हुवा उसके प्रहर रात्रि शेष समय मैं दोय यमदूतौंका दर्शन हुवा सो सूर्योदय पर्यन्त होता रहा सो मैं मेरी माताकूँ कहता रहा ओर उनतैं भीत होकरिकैं विलाप करता रहा जब सूर्योदय हुवा तब वे दृष्टि पथतैं दूर भये उस हीं समयमैं मेरे शरीर के सकल रोग निवृत्त होगये यातैं मेरी माता परमेश्वर का परम अनुग्रह मानि करिकैं अति आनन्दित भई ।

अब उस दिन तैं मेरी ये व्यवस्था भई कि दिनमैं तो पठन और नानाविध बालक्रीडा इनमैं प्रवृत्ति होणैं तैं कुछ बी स्मरण होवै नहीं और जब रात्रि होय तब उन पुरुषोंका स्मरण हो करिकैं अत्यन्त भय होवै तब मैं ऐसैं प्रार्थना करूँ कि हे कृष्णचन्द्र उन भयानक पुरुषों तैं मेरी रक्षा आप ही करोगे और मेरा कल्याण मोकूँ आपही दिखावोगे और कोई समय मैं अतिभय होवै तब शयन स्थान मेरे अश्रुप्रवाहतैं आर्द्र वी हो जावै इस व्यवस्था तैं कालक्षेप होतैं मेरी अष्टादश वर्षकी अवस्था होगई जिस मैं मेरै कोश व्याकरण पञ्चकाव्य छन्दोग्रन्थ नायिकाभेद अलङ्कार रस नाटक श्रीमद्भागवत इनका तो अध्ययन होगया और नवीन काव्य निर्माण की शक्ति भी हो गई पीछैं मैंनैं न्यायशास्त्रका अध्ययन किया तो तर्कों करकैं विद्वानौं का आक्षेप करणैं लगा पीछैं सम्वत् १९१६ मैं स्वतः सद्गुरुतैं सुसिद्ध मन्त्र की दीक्षा भई जिससैं मेरी ये व्यवस्था भई कि शास्त्रौंमैं तैं वुद्धि सङ्कुचित हो करिकैं कल्याण की चिन्तामैं मग्न होगई सो १९१८के सम्वत् पर्यन्त नवीन शास्त्रका सङ्ग्रह हुवा नहीं पीछैं चित्तमैं ऐसी स्फूर्त्ति भई कि वेदान्तशास्त्र परमात्माका साक्षात्कार करावै है यातैं इस का अध्ययन करणाँ चाहिये तो मैं वेदान्तका अध्ययन करणैं लगा और यथामति वेदान्तशास्त्र अवगत किया परन्तु मेरा मन सन्तुष्ट हुवा नहीं काहेतैं कि मेरै वेदान्त का पठन केवल पण्डित कहावणैं की कामना करिकैं हीं नहीं रहा किन्तु आत्मज्ञान सिद्ध करणैंकी कामना करिकैं हुवा सो आत्मज्ञान हुवा नहीं ये ही मनके असन्तोष मैं हेतु रहा।

अब मेरी ये गति भई कि इधर तो यौवनका प्रवेश यातैं तो कामादिक शत्रुवौं की प्रबलता और इधर गृहमैं सङ्कोच यातैं उपार्जन की आवश्यकता और उन भयानक पुरुषौंका स्मरण होय यातैं अत्यन्त भय और आत्मज्ञान की लालसा यातैं मेरा मन अत्यन्त आतुर रहै एक समय का वृत्तान्त है कि श्रीकृष्ण के अनुग्रह तैं कोई महात्मा दृष्टि पथमैं आये सो कैसे कि जिन कै पूर्ण शान्ति और पूर्ण हीं शास्त्रज्ञता और जे परिग्रह शून्य और आत्मानुभवतैं सुखमग्न मैंनैं उनतैं प्रार्थना किई कि महाराज मैंनैं आत्मानुभव होणैं के अर्थ वेदान्तशास्त्रका अध्ययन किया और जैसी मेरी वुद्धि है तैसा मनन भी किया परन्तु मेरा मन आत्मानुभव के विषयमैं निःसंशय हुवा नहीं।

तब उननैं मोतैं ऐसैं आज्ञा किई कि तुमारै ज्यो संशय होय तिस कूँ पण्डितों सैं निवृत्त करलेवो तब मैंनैं उनतैं प्रार्थना किई कि महाराज किसी श्लोकमैं अथवा श्रुति मैं अथवा सूत्र मैं अथवा प्राचीन आचार्यों की लिखित ज्यो पङ्क्ति तामैं सन्देह होय तहाँ तो पण्डित अन्वय और अर्थ कहिदेवैं हैं परन्तु जब मैं ये कहूँ कि मोकूँ अनुभव करावो तबवे ऐसैं कहैंहैं कि हमनैं तो तुमकूँ श्रवण कराय दिया अब मनन निदिध्यासन करिकैं तुम आपही साक्षात्कार सिद्ध करलेवो और ये श्रीकृष्ण का वचन प्रमाण कहैं हैं कि

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

अर्थात् जिस का अन्तःकरण निष्कामकर्म करणैं तैं शुद्ध हो जाय है वो आप ही आत्मज्ञान कूँ प्राप्त होजाय है ।

औरकोई पण्डित ऐसैं कहैहै कि तुम सगुण ब्रह्म के उपासक हो यातैं तुमकूँ आत्मज्ञान होवै नहीं और कोई ये कहै हैं कि सन्न्यास विना ज्ञान होवै नहीं यातैं तुम सन्न्यास करो और कोई ऐसैं कहै है कि इस समय मैं अन्य उपाय तो ज्ञान होणैं का है नहीं यातैं काशी मैं शरीरपात करो तहाँ श्रीसदाशिव अन्त समय मैं तारक की दीक्षा करिकैं आत्म ज्ञान करावै है ऐसे ऐसे निश्चय पण्डितों तैं श्रवण करिकैं मैं अत्यन्त व्याकुल होय आप के शरणागत हुवा हूँ सो मोकूँ आप अनुग्रह करिकैं आत्मज्ञान करावो ।

वे पूर्वोक्त महात्मा मेरी प्रार्थना श्रवण करिकैं और मोकूँ आतुर जाणि करिकैं कृपादृष्टि करिकैं

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाःपर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

ये श्लोक पढि करिकैं ऐसैं कहणैं लगे कि जिनके ऊपर श्रीकृष्णका अनुग्रह होय है उनकूँ हीं आत्मज्ञान का लाभ होय है और हुवा ज्यो आत्मज्ञान लाभ तिसकी रक्षा बी उनके ही होय है सो ज्ञान यहीहै कि ॥

वासुदेवः सर्वम् ॥

परन्तु ये ज्ञान जिस कूँ होय ऐसा पुरुष अति दुर्लभ है काहेतैं कि श्रीकृष्ण हीं आज्ञा करैहै कि ॥

वासुदेवः सर्वमिति समहात्मा सुदुर्लभः ॥

और श्रुति भी ज्ञानका स्वरूप ये ही कहै है कि ॥

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

और ॥

आत्मैवेदं सर्वम् ॥

परन्तु तुम ये निश्चित जाणों ज्यो सर्व परमात्मरूप ही हुआ तो परमात्मा में अज्ञान और भेद सम्भवै नहीं और ज्यो अज्ञान तथा भेद ये अलीक भये तो ज्ञान स्वतः सिद्ध हुवा तथापि परमात्मा अज्ञान के विना हीं अज्ञात है और ज्ञान स्वतःसिद्ध है तोबी तत्वदर्शि पुरुष के उपदेश तैं होय है और केवल शास्त्रपाठि पुरुष तैं होवै नहीं काहेतैं कि श्रीकृष्ण नैं अर्जुन कूँ कही है कि ॥

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

और श्रुति बी ये ही कहैहै कि

समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठमुपगच्छेत् ॥

ये कथन महात्मा का श्रवण करिकैं मैं अत्यन्त आश्चर्य कूँ प्राप्त हुवा और उनतैं कहणें लगा कि महाराज अज्ञान और भेद इनकूँ तो बड़े बड़े ग्रन्थकार मानैं हैं आप इनकूँ अलीक कैसैं कहो हो ये मेरा वचन श्रवण करिकैं उननैं ऐसैं आज्ञा किई कि

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यम् ॥

यहाँ श्रीकृष्णनैं ज्ञान दोय बताये हैं एक तो शास्त्रीय ज्ञान और दूसरा अनुभव ज्ञान सो ग्रन्थों के पठनतैं तो शास्त्रीय ज्ञान होय है और ब्रह्मनिष्ठ आचार्य के उपदेशतैं अनुभव ज्ञान होय है शास्त्रीय ज्ञानवान् पुरुषों नैं जे ग्रन्थ बणाये हैं उननैं तो भेद अविद्या इनको अवलम्बन करिकैं ज्ञान वर्णन किया है और अनुभव वाले पुरुष जे उपदेश करैं हैं वे अविद्या और भेद इनको निषेध करिकैं स्वतः सिद्ध ज्ञान वर्णन करैं हैं और उस ज्ञानकूँ ब्रह्मरूप कहैं हैं तो इस कथनतैं ये अर्थ सिद्ध हुवा कि अनुभव वाले पुरुष के उपदेशतैं अनुभवज्ञान होय है केवल ग्रन्थों के पठन

तैं आत्मानुभव होवै नहीं ऐसैं कहि करिकैं मेरै उत्कंट जिज्ञासा जाणि-करिकैं और मेरी बुद्धि की परीक्षा करिकैं और मोकूं आत्मोपदेशको अधि-कारी जाणि करिकैं ऐसी विलक्षण प्रक्रियातैं उपदेश कियो कि मैं थोडे ही समयमैं कृतार्थताकूं प्राप्त हो गया काहेतैं कि उननैं केवल अद्वैतदृष्टिकूं ले करिकैं उपदेश कियो और सर्व पदार्थांकूं परमात्मभिन्नता करिकैं तो असिद्ध वर्णन किये और परमात्मरूप करिकैं सिद्ध किये और मतवादियों की कल्पनावों का खण्डन करिकैं श्रुति हृदयार्थके अनुकूल अनुभव प्रका-शित कियो ।

ऐसैं वे महात्मा सम्वत् १९२२ मैं मोकूं आत्मविद्या कराय करिकैं जब यात्रा करणैंकूं उत्कण्ठित भये तव मैंनैं प्रार्थना किई कि अव मोकूं कहा कर्त्तव्य है सो कृपा करिकैं कहो तव उननैं आज्ञा किई कि

सङ्गः सर्वात्मना हेयः सचेच्छातुं न शक्यते
सद्भिः सह कर्त्तव्यः सन्तः सङ्गस्य भेषजम् ॥१॥

और ये कही कि

अज्ञप्रबोधान्नैवाऽन्यत्कार्यमस्त्यत्र तद्विदः ॥

इनका अर्थ ये है कि सङ्ग ज्यो है सो सर्वथा त्याग करवे योग्य है और ज्यो इसका त्याग नहीं हो सकै तो ये सत्पुरुषों के साथ कर्त्तव्य है काहे तैं कि उनका सङ्ग ज्यो है सो सङ्ग कूं निवृत्त करैहै १ और आत्म वेत्ता को आत्मज्ञान करायबे तैं भिन्न कार्य नहीं है ऐसैं आज्ञा करिकैं वे महात्मा तो प्रस्थान करगये ।

पीछैं मैं सम्वत् १९३९ पर्यन्त तो उनकी प्रथम आज्ञा का पालन कर-ता रहा अर्थात् सत्सङ्ग करता रहा सो ऐसे ऐसे महात्माओं का दर्शन हुवा कि जिनकूं शुकदेव वामदेव अष्टावक्र दत्तात्रेय ही कहणैं चाहिये पीछैं सं-वत् १९४० मैं मोकूं द्वितीय आज्ञा का स्मरण हुवा और उसही वर्ष मैं रा-जाजी साहब खेतडी श्री १०८ अजितसिंहजी बहादुर जिज्ञासु उपस्थित भये तब उनके उपदेश के अर्थ तो उपदेशामृत घटी नाम ग्रन्थ की रचना किई उसमैं गान के पदों मैं श्री गीताभावार्थ प्रस्फुट किया है ॥
पीछैं सम्वत् १९४१ मैं मेरै यह विचार हुवा कि जिनकी बुद्धि सरल है और

जिनके बहुधा कुतर्क उपस्थित होवैं नहीं उनकूं तो "उपदेशामृतघटी" तैं आत्मज्ञान होजायगा परन्तु जिननैं बहुत शास्त्रों के मतोंकूं श्रवण किये हैं और जिनकी बुद्धि सरल नहीं है और जिन के नानाविध कुतर्क उपस्थित होय हैं उनकूं आत्मज्ञान कैसैं होय ऐसैं विचार करिकैं मैंनैं ये स्वानुभव-सार नाम ग्रन्थ सम्वत् १९४२ मैं बणाया है सो इसमैं केवल अद्वैत दृष्टि पुरुषों के अनुभव का वर्णन किया है और भेद अविद्या इनका खण्डन करिकैं

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुति के अनुसार अनुभव कहा है सो विद्वज्जनों तैं मेरी ये प्रार्थना है कि जिननैं सद्गुरूपदेश तैं आत्मानुभवका सम्पादन किया है वे तो इस ग्रन्थ का अवलोकन करिकैं ज्यो अपणैं अनुभव मैं न्यूनता होय तब तो उसकूं निवृत्त करलेवैं और ज्यो अपणैं अनुभवमैं न्यूनता नहीं होय तो इस ग्रन्थ कूं अपणैं शुद्धानुभव तैं सुपरिक्षित करि कैं जयपुरीय संस्कृत पाठशाला मैं मेरे पास अनुग्रह पत्र देवैं और उस अनुग्रह पत्र कूं अपणैं शुद्धानुभव लेख तैं वी अङ्कित करैं तो मैं महोपकार मानूंगा और जे केवल शास्त्रज्ञ हैं उनकूं उचित है कि इस ग्रन्थ तैं आत्मानुभव सम्पादन करि कैं कृतार्थता सिद्ध करैं और इसकूं भाषा मानि करिकैं अनादर नहीं करैं काहे तैं कि देश भाषा सैं अलौकिक अर्थ कहा है सो ये ग्रन्थ सर्वोपकारक होय इस कारण तैं कहा है ।

परन्तु ये निश्चित जाणोंकि उत्तम विद्वानों के विना इस ग्रन्थ के हृदयार्थ कूं समुझणां कठिन है और जे तीक्ष्ण बुद्धि हैं और जिनकै उत्कट जिज्ञासा है परन्तु जे शास्त्रज्ञ नहीं हैं वे पुरुष उत्तम विद्वान् के मुख तैं इस ग्रन्थ के हृदयार्थ कूं अवगत करैंगे तो उन कूं आत्मानुभवका लाभ होगा इसमैं किञ्चित् वी सन्देह नहीं है ।

अब द्वैत मतानुयायि पुरुषों तैं मेरी ये प्रार्थना है कि आप खण्डन करणें की बुद्धि करिकैं हीं इस ग्रन्थ का अवलोकन करैं परन्तु जब पर्यन्त ग्रन्थ का हृदयार्थ अवगत होवै नहीं तब पर्यन्त किया हुवा ज्यो खण्डन सो अशुद्ध होयहै यातैं आप इस ग्रन्थके हृदयार्थकूं अवगत करैं इससैं ज्यो आपकूं लाभ होगा उसके आनन्दका अनुभव आपही करैंगे जिससैं खण्डन की अनुपस्थिति होगी ॥

अब अद्वैतवादि पुरुषों तें मेरी ये प्रार्थना है कि आप अद्वैतानुभवी होवैं सो इस ग्रन्थका मनन अद्वैतानुभव मैं परम उपकारक होगा। यातैं आप अवश्य ही इस ग्रन्थका अवलोकन करैं।

और विचारसागर तथा वृत्तिप्रभाकर इन ग्रथोंके पढे हुवे पुरुषों कूँ तो चाहिये कि इस ग्रन्थका पठन अवश्य ही करैं काहेतैं कि इन ग्रन्थों मैं जहाँ २ अनुभवके विषयमैं ज्यो निर्णय शेष रह गया है वो इस ग्रन्थ मैं लिखा है॥

अब ये और समुझो कि इस ग्रन्थके ३ भाग हैं तिनमैं प्रथम भाग मैं न्यायमतका विवेचन किया है काहे तें कि न्याय शास्त्रका मत द्वैत है ऐसें मानि करिकैं वेदान्त के ग्रन्थों मैं इसके मतका खण्डन किया है परन्तु उन ग्रन्थकारों नें ये विचार नहीं किया कि गौतम ऋषि और कणाद ऋषि सर्वज्ञ योगी रहे उनका मत द्वैत कैसें होसकै द्वैत मत तो श्रुति विरुद्ध है यातें हमनें उनका मत और श्रुति इनकी एकवाक्यता करिकैं उनका मत इस भागमैं अद्वैत दिखाया है और उनका मत अद्वैत है इसमैं उनके सूत्र वी प्रमाण दिखाये हैं सो विद्वज्जन इसका साद्यन्त अवलोकन करैं॥

और इस ग्रन्थके द्वितीय भाग मैं अविद्याके स्वरूपका विवेचन किया है सो अविद्या तम जैसी आवरण स्वभाव नहीं है किन्तु सच्चिदानन्द ब्रह्मरूपा है ये अर्थ श्रुति युक्ति और अनुभव इनतैं सिद्ध किया है सो विद्वज्जन याका वी साद्यन्त अवलोकन करैं और इसके तृतीय भाग मैं ज्ञान के स्वरूप का विवेचन किया है सो ज्ञान वृत्ति रूप नहीं है किन्तु वृत्तितैं विलक्षण है सो विद्वज्जन याका वी साद्यन्त अवलोन करैं।

इसमैं ज्यो कहीं पुरुषस्वभावसुलभ प्रामादिक लेख होवै तो कृतात्मानुभव पुरुष शोधन वी करैं परन्तु कृपा करिकैं उस स्वकीय शोधन लेख कूँ मदीय दृष्टि गोचर वी कर लेवैं ये मेरी प्रार्थना है॥ शुभम्॥

श्रीरामसभातत्वोपदेष्टा श्रीजयपुरीयसँस्कृतपाठशालाध्यापक श्रीदधीचिवंशोद्भव पण्डित गोपीनाथशर्मा ॥ शुभम् ॥

॥ श्री ॥

स्वानुभवसार ।

सूचना ।

जयपुर का अहोभाग्य है कि स्वामी श्री विशुद्धानन्दजी यहाँ पधारे जिनका नाम कालीकमली वाला प्रसिद्ध है यह महात्मा विद्वान् और अनुभवी तथा परोपकारी हैं इननें यहाँ आय करिकैं सुनाँ कि पण्डित गोपीनाथजी जो सँस्कृत पाठशाला मैं काव्याध्यापनार्थ नियुक्त हैं उननें एक (स्वानुभवसार) नाम वेदान्त ग्रन्थ बनाया है उसकी प्रक्रिया अन्य भाषा ग्रन्थोंसैं विलक्षण है तो यह महात्मा रा० ठा० सौभाग्यसिंहजीकी हवेली मैं मुकाम (मलसीसर) रा० ठा० श्री भूर सिंहजी के पास ठहरे कारण यह रहा कि इन ठाकुर साहब के कनिष्ट भ्राता रा० ठा० श्री चतरसिंहजी नैं इनसैं हीं वेदान्ततत्व का रहस्य पाया है सो इन महात्मानैं पूर्वोक्त ग्रन्थ का साद्यन्त श्रवण किया और यह कही कि हमनें ऐसी प्रक्रिया अद्यावधि श्रुतिगोचर नहीं किई और वेदाँत शास्त्र का यह ही रहस्य है यातैं हम इसकौं मुद्रित कराय देंगे ऐसैं इन महात्मा का निश्चय श्रवण करिकैं यहाँ के सत्सङ्गियोँ का यह विचार हुश्रा कि इसकौं हम हीं मुद्रित कराय देवैं तो खेतड़ी नरेश श्री अजीतसिंहजी बहादुर तथा मु० मँहाबा रा० ठा० श्री अजीतसिंहजी तथा मु० मलसीसर रा० ठा० श्री भूरसिंहजी इननैं सहायता देकर मुद्रित करायकैं ग्रन्थकर्त्ता के ही निवेदन किया है सो जिन सत्सङ्गियोँ कौं चाहै वे ग्रन्थकर्त्ता सैं मँगाय लेवैं इस ग्रन्थ के मनन कर्त्ता कि आत्मानुभव होनें के अर्थ अन्य ग्रन्थ के मनन की अपेक्षा नहीं है और विचारसागर तथा वृत्तिप्रभाकर इनके पढे भये पुरुषोंकै तो अत्यन्त ही उपकारक है ।

और इस ग्रन्थ के मनन कर्त्ता मतवादियोँ की कल्पनावौं का सहज सैं खण्डन कर सकैंगे वशिष्टनैं दृष्टि ३ कही हैं प्रथम पामर दृष्टि १ द्वितीय यौक्तिक दृष्टि २ तृतीय तत्व दृष्टि ३ इनमैं द्वितीय दृष्टिसैं प्रथम दृष्टि को निवारण करै और तृतीय दृष्टिसैं द्वितीय दृष्टि को निवारण करै यह वशिष्ट मुनिको अभिप्राय है परंतु इस समयमैं जे विद्वान् वेदाँतज्ञ हैं वे के-

वल यौक्तिक दृष्टि के ही ग्रन्थों का मनन करते रहेंहैं इसमैं हेतु यह है कि केवल तत्वदृष्टि के प्रतिपादक ग्रन्थ उनकौं प्राप्त नहीं हैं और जीव-न्मुक्त विद्वान् उनकौं शास्त्राभिमानी जानिकैं उपदेश करै नहीं और वे यौक्तिक दृष्टि वाले पुरुष भी जिस उपदेशकौं करैं हैं उसमैं यद्यपि इसकौं अजातवाद नामसैं कहैं हैं तथापि अनभ्याससैं इनकी प्रक्रिया कहैं नहीं यातैं अधिकारी पुरुषोंकी जिज्ञासा सफल होवै नहीं यातैं इस ग्रन्थकौं मुद्रित कराया है सो सकल सत्सङ्गियों कौं उचित है कि इसकी प्रवृत्ति मैं जिज्ञासु पुरुषों की आशाकौं सफल करैं और अपनां मनोरथ पूर्ण करैं यह प्रार्थना है इत्ति–

इसके मनन कर्त्ता पुरुष कौं उचित है कि इस पुस्तक के अन्तमैं इस ग्रन्थ का निष्कर्ष लगाया है उसका अवलोकन करिकैं इस ग्रन्थ के तात्पर्यकौं हृद्गत करिकैं पश्चात् शुद्धिपत्रसैं इसकौं शुद्ध करिकैं शनैः शनैः निर्विक्षेप होकैं इसके अभ्यासमैं बद्धपरिकर होवैं और आत्मविद्या सिद्ध करिकैं कृतार्थ होवैं—

॥ श्रीकृष्णो जयति ॥

अथ स्वानुभवसाराख्यो वेदान्तग्रन्थः प्रारभ्यते ॥

दोहा ।

ज्यो सत चित आनँद अमल अलख अरूप अनूप ॥
जाकूं श्रुति नित ही रटत सो निज आतम रूप ॥१ ॥
ज्यो जग बिन जा विन न जग ज्यो जग जगत न ज्योइ ॥
जिहिं लखि परमानँद लहै सो निज आतम होइ ॥ २ ॥
जाहि लखें जग होइ वो न लखें जगत लखात ॥
सो निज आतम जानिये श्रुति शिर ताहि बतात ॥ ३ ॥
जाकी बाणी वेद हू जाकूँ कहत थकात ॥
शेष सैंस मुख हू रटत सोचि सोचि सकुचात ॥ ४ ॥
योग साधि योगी सकल लह्यो न जाको पार ॥
सो खेले व्रजभूमि मैं लेइ आप अवतार ॥५ ॥
गीताको उपदेश कहि हर्यो पाण्डुसुत मोह ॥
सो मोपैं करुणा करी धर्यो न औगन छोह ॥ ६ ॥
हृदय तिमिर कूँ दूर करि दियो ज्ञान परकाश ॥
संशय सकल निवारिकैं कियो भेद को नाश ॥ ७ ॥
शिष्य निमलमति नाम इक धारि ज्ञानकी आस ॥
भेट लेइ घरतैं गयो ज्ञानसिन्धु गुरु पास ॥ ८ ॥

पूजा करि कर जोरिकैं गुरु पद सीस नवाय ॥
या विधितैं बिनती किई भव दुख लखि घबराय ॥ ९ ॥
परमानँद परमातमा सुन्यो वेदमैं एक ॥
ताके दरशन काज मैं कीन्हे जतन अनेक ॥ १० ॥
मत बहु भांति पढें सुनें बाढ्यो भरम अथाह ॥
करो आप उपदेश ज्यों पूरै चित की चाह ॥ ११ ॥
बिनति विमलमतिकी सुनी लख्यों ताहि बहु ताप ॥
ज्ञान सिद्ध बोले गुरू धरि करुणा उर आप ॥ १२ ॥
सुर वाणी मैं ग्रन्थ बहु तिन मैं अति विसतार ॥
तातैं मैं तोकूँ सुमति कहूँ स्वानुभवसार ॥ १३ ॥
जीव ईश मैं जगत मैं जिहिं सुनि रहै न भेद ॥
कहूँ स्वानुभवसार सो सुनहु त्यागि मन खेद ॥ १४ ॥
तेरे आतमरूपको करहुं तोइ उपदेश ॥
भेद वाद खण्डन करूँ रहै न संशय लेश ॥१५ ॥

हे शिष्य उपनिषद जिस ब्रह्मतत्वकूँ प्रतिपादन करैं हैं सो सच्चिदानन्द परमात्मा आपका निजरूप है। आपके निजरूप मैं जगत तीन काल मैं नहीं। आप अज्ञान अन्तःकरण प्राण इन्द्रिय शरीर इत्यादि का साक्षी है। इस हेतु तैं सर्व का जानने वाला आप है। आपकूँ कोई नहीं जान सकै है। आपकूँ जानने मैं आपकै आप ही सामग्री है। और श्रुति ऐसैं कहै है कि जानने वाले कूँ किससैं जानैं तो इस श्रुतिका येही अभिप्राय है कि जाननैंवाले के जाननैं मैं जाननैंवाला ही सामग्री है इसके सिवाय अर्थात् इस सैं जुदी कोई सामग्री नहीं। और मन बुद्धि इन्द्रिय ज्यो जानते हैं सो तो सर्वका जाननैंवाला ज्यो आपका निज रूप तिस की सहायता सैं जाननैं वाले भये हैं। आपकी सहायता विना जाननैंवाले

नहीं तो ये आपकूं कैसें जान सकें। दृष्टान्त जैसें काच की हँडिया दीपक के प्रकाशसें प्रकाशमान भई है दीपक की सहायता विना प्रकाशमान नहीं तो दीपककूं नहीं प्रकाशती है। हाँ! अलवत्तैं दीपक के प्रकाशकूं विशेष बतलावै ये हँडियाका स्वभाव है। तो आपके निज प्रकाशकूं विशेष बतलावै ये मन बुद्धि इन्द्रियोँ का स्वभाव है। इस ही कारण तैं जैसें घटका स्पष्ट भान होता है तैसैं घटकी ज्ञातता अर्थात् घटमैं ज्यो जान्याँ गयापणाँ है उसका भान नहीं होता किन्तु घट की अपेक्षा अस्पष्ट भान होता है। जिससें जान्याँगयापणाँ घट मैं जान्याँ गया सो आपका निज रूप जानौं निज रूप के जाननैं मैं जाननैंवाला ओर जाननाँ ओर जान्याँ गया ये तीनूँ एक हैं अर्थात् आप ही आपसैं आपकूँ जानता है।

ज्यो कहो कि आपकूँ आप जानैंगा तो कर्मकर्तृ विरोध होगा अर्थात् आप ही कर्त्ता ओर आप ही कर्म होणेतैं दूषण होगा। जैसैं देवदत्त घटकूँ जानता है यहाँ देवदत्त ओर घट ये भिन्न पदार्थ हैं इस कारण तैं घटका जाननाँ वनैं है। ओर आपसैं आप भिन्न नहीं यातैं आपका जाननाँ कैसें वनैं। तो हम कहैं हैं कि लौकिक पदार्थके प्रत्यक्ष मैं लौकिक नियम है। आप तो अलौकिक पदार्थ है इसके जाननैं मैं लौकिक नियम नहीं रहे तो भूषण है दूषण नहीं। जैसें लौकिक पदार्थका प्रत्यक्ष अन्तःकरण की वृत्ति ओर चिदाभास इन दोनौं सैं होता है ये नियम है। परन्तु जब आपकूँ जानता है तब वृत्ति ही अज्ञान के आवरणकूँ दूर करणे मैं काम आती है। चिदाभास कुछ काम नहीं आता। तो ये नियम नहीं रहा कि वृत्ति ओर चिदाभास दोनूँ सैं ही प्रत्यक्ष ज्ञान होय। परन्तु आपका ज्ञान यहाँ प्रत्यक्ष ही मान्या जाता है। तो सिद्ध हुआ कि लौकिक पदार्थ के प्रत्यक्ष का नियम अलौकिक पदार्थके प्रत्यक्षमैं नहीं। जो कहो कि प्रत्यक्ष की सामग्री न्यून होणैं तैं प्रत्यक्ष मैं न्यूनता मानैंगे। यातैं आपके जाननैं मैं वृत्ति ओर चिदाभास दोनूँ काम न आये ओर एक वृत्ति ही काम आई तो आपका आधा जाननाँ हुवा। तो ये कथन ठीक नहीं। ऐसैं मानैं उसकूँ प्रकाशका प्रत्यक्ष वी आधा माननाँ पडैगा। काहेतैं कि ओर रूपवान् पदार्थों के प्रत्यक्ष मैं तो चक्षु ओर प्रकाश दोनूँ काम आते हैं। परन्तु प्रकाश के प्रत्यक्षमैं एक चक्षु ही काम आता है। ज्यो कहो कि एक चक्षु ही प्रकाशके प्रत्यक्ष मैं काम आया तो वी प्रकाशके प्रत्यक्षकूँ आधा

कोई नहीं मानता पूर्ण ही मानते हैं। तैसें आपके प्रत्यक्ष में एक वृत्ति ही काम आई तो बी अपनाँ जाननाँ पूरा ही माननाँ। इस कथन सैं हमारा आधा जाननाँ माननाँ खण्डित हूवा। परन्तु जिननैं अपनैं जाननैं में एक वृत्ति ही काम आई इस कारण तैं लौकिक नियम का निषेध किया है सो कैसें रहैगा। वृत्ति चिदाभास ये दोनूँ लौकिक सामग्री और केवल दृत्ति लौकिक सामग्री नहीं, ऐसें मानैं उनकूँ चक्षु और प्रकाश लौकिक सामग्री और केवल चक्षु अलौकिक सामग्री ऐसें बी कहनाँ पड़ैगा। तो हम कहैं हैं कि जिस सामग्रीसैं लौकिक विषयका प्रत्यक्ष होय सो लौकिक सामग्री और जिस सामग्रीसैं अलौकिक वस्तुका प्रत्यक्ष होय सो सामग्री लौकिक नहीं। यहाँ ऐसें विभाग किया है और सामग्री तो सर्व लौकिक ही है। यातैं केवल चक्षु अथवा चक्षु और प्रकाश दोनूँ अथवा वृत्ति और चिदाभास ये दोनूँ लौकिक सामग्री और केवल वृत्ति लौकिक सामग्री नहीं ऐसें कह्या है। यातैं हमारे कथन मैं कोई दोष नहीं। ज्यो कहो कि विषय अलौकिक होणें तैं लौकिक प्रत्यक्ष सामग्री मैं लौकिक पणाँ का निषेध किया। तो सामग्री लौकिक होणें तैं अलौकिक विषय सैं अलौकिक पणाँ का ही निषेध क्यौं नहीं। तो हम कहैं हैं कि सामग्रीका लौकिक पणाँ विषयके अलौकिक पणाँ मैं लौकिक पणाँ सिद्ध कर चुका इस कारण तैं विषय मैं अलौकिक पणाँ का निषेध करणैं मैं समर्थ नहीं। और विषयका अलौकिक पणाँ कहीं भी अलौकिक पणाँ कूँ सिद्ध किया नहीं या कारण तैं सामग्री मैं लौकिक पणाँ का निषेध करणैं मैं समर्थ है। ज्यो कहो कि इस कथन तैं अलौकिक लौकिक सामग्री के लौकिक पणाँनैं अलौकिक विषयके अलौकिक पणाँमैं लौकिक पणाँ सिद्ध किया ये सिद्ध हुवा तो दूषण हुवा काहेतैं कि एक वृत्ति मैं लौकिक पणाँ और अलौकिक पणाँ ये विरुद्ध धर्म मानणैं तैं। तो हम कहैं हैं कि निरपेक्ष विरुद्ध धर्म एक वस्तुमैं मानैं तो दोष होय सापेक्ष विरुद्ध धर्म तो एक वस्तुमैं रहैं हैं। जैसें एक पुरुष मैं पिता की अपेक्षा पुत्र पणाँ और पुत्रकी अपेक्षा पिता पणाँ ये विरुद्ध धर्म रहैं हैं। ज्यो कहो कि दृष्टान्त मैं तो लौकिक पुत्र पिताकी अपेक्षा लौकिक पुरुषमैं लौकिक विरुद्ध धर्म कल्पित हैं वे व्यवहारमैं सिद्ध हैं। इस कारण तैं दोष नहीं। परन्तु यहाँ लौकिक वृत्ति मैं तो अलौकिक पणाँ अलौकिककी अपेक्षा कल्पित है। इस कारण तैं दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम हैं।

तो हम कहैं हैं कि यहाँ अलौकिक आत्माकी अपेक्षा वृत्तिमैं अलौकिक पणाँ कल्पित नहीं है। किन्तु आत्मा मैं ज्यो लौकिक अलौकिक पणाँ है उसनैं लौकिक वृत्ति मैं लौकिक अलौकिक पणाँ सिद्ध किया है यातैं कुछ दोष नहीं। ज्यो कहो कि दृष्टान्त दार्ष्टान्तका विरोध तो दूर हुवा। ओर वृत्ति मैं अलौकिक पणाँ वी सिद्ध हुवा। परन्तु अलौकिक आत्मासैं रहनैवाला अलौकिक पणाँनैं लौकिक वृत्तिमैं अलौकिक पणाँ कैसैं सिद्ध किया। तो हम कहैं हैं कि जैसैं लौकिक वृत्तिनैं आत्मा अलौकिक सिद्ध किया तैसैं जानैं। ज्यो कहो कि लौकिक अलौकिक पणाँका आश्रय है तो भी आत्मा परमार्थ अलौकिक है तैसें वृत्तिभी लौकिक अलौकिक पणाँका आश्रय होवैं तैं परमार्थ अलौकिक क्यौं नहीं। तो हम कहैं हैं कि पदार्थका स्वरूप व्यवहार मैं मान्याँ जाय है। वृत्तिकूं परमार्थ अलौकिक कोई भी मानैं नहीं यातैं वृत्ति परमार्थ अलौकिक नहीं। ज्यो कहो कि मेरेकूँ परमार्थ निर्णयमैं व्यवहारसैं प्रयोजन नहीं यातैं परमार्थ कहो। तो परमार्थ ये है कि आत्मा सद्रूप है यातैं परमार्थ अलौकिक है। तैसें हीं वृत्ति सद्रूप मैं कल्पित है ओर कल्पितकी सत्ता अधिष्टानतैं जुदी होय नहीं किन्तु अधिष्ठान रूप है यातैं वृत्ति सद्रूप भई। वृत्ति कूँ सद्रूप होवैं तैं परमार्थ अलौकिक मानैं तो कोई दोष नहीं। याही तैं वेदनैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

या श्रुतिमैं अहं शब्द के अर्थमैं ब्रह्म शब्दके अर्थका अभेद वर्णन किया है ये विद्वानौंका निर्णय है।

ज्यो कहो कि परमार्थ निर्णय इस प्रकार है तो मेरा कहा कर्म कर्तृ विरोध ही नहीं बणैंसकेगा। काहेतैं कि देवदत्त घटकूँ जानता है। यहाँ देवदत्त ओर घट ये दोनूँ सद्रूपमैं कल्पित हैं। ओर कल्पित की सत्ता अधिष्टानतैं जुदी होय नहीं। यातैं देव दत्त ओर घट एक रूप भये। तो भी कर्त्ता कर्म बणैं हैं। तैसैं आप आपकूँ जानता है। यहाँ अभेद है तो वी आप ही कर्त्ता ओर आप ही कर्म बणैं सकेगा। परन्तु जैसैं मेरा कहा कर्म कर्तृ विरोध व्यर्थ हुवा तैसैं आपका किया समाधान वी तो व्यर्थ हुवा। ज्यो विरोध ही नहीं तो उसकी निवृत्ति कहा। तो हम कहैंहैं कि हमनैं व्यवहार दृष्टिसैं तेरा कहा कर्म कर्तृ विरोध मान्याँ है ओर व्यवहार दृष्टिसैं हीं समाधान किया है

यातैं हमारा समाधान व्यर्थ नहीं । परमार्थ दृष्टिसैं तो कर्म कर्तृ विरोधका बताणाँ ओर उसका दूर करणाँ दोनूँ हीं व्यर्थ हैं । ज्यो कहो कि विद्वान्कै परमार्थ दृष्टि सैं दूसरी तो दृष्टि नहीं । ओर परमार्थ दृष्टि मैं भेद नहीं ओर भेद विना व्यवहार होसकै नहीं । तो विद्वान् व्यवहार कैसैं करैगा । तो हम कहैं हैं कि विद्वान् तो सर्वव्यवहार स्वरूप परमात्मा सैं ही करै है । काहेतैं कि वो कल्पितकी सत्ता अधिष्ठानसैं जुदी जानैं नहीं । यातैं परमार्थ दृष्टिसैं अभेद वी रहा ओर विद्वान्का व्यवहार वी वणाँ गया । जैसैं लौकिक विवेकी पुरुष घट पटादिककूँ मृत्तिका जानैं है ओर व्यवहार वी करै है तैसैं जानौं । ज्यो कहो कि घट पटादिक का तो स्वरूप तैं नाश नहीं यातैं लौकिक विवेकी पुरुषकै भेददृष्टि वी रहै है यातैं उसका व्यवहार बनैं है तैसैं विद्वान्कै वी जगत्का स्वरूप तैं लोप नहीं यातैं भेद दृष्टि वी रहै है याहीतैं व्यवहार बनैं है सो कथन ठीक नहीं । काहेतैं कि जिस के होणैं तैं ज्यो रहे ओर जिसके न होणैं तैं ज्यो न रहे वो तद्रूप होय है । जैसैं मट्टी के रहणैं तैं घट पटादिक हैं ओर मट्टीकूँ निकालैं तैं घट पटादिक रहैं नहीं तो घट पटादिक मट्टी रूप भये तो भेद कहाँ है भेद नहीं है तो वी भेद मानैं है वो पुरुष लौकिक विवेकी नहीं किन्तु लौकिक पामर है ।

ज्यो कहो कि भेद विना व्यवहार कोई वी शास्त्रसैं सिद्ध नहीं इस ही कारणतैं अद्वैतमतमैं वी व्यावहारिकी सत्ता मानी है । ओर आप अभेद सैं हीं व्यवहार सिद्ध करो हो सो सर्व शास्त्रौं सैं विरुद्ध है । तो हम प्रथम भेद वादियौं सैं पूछैं हैं कि पदार्थौं मैं भिन्न पणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ तुम भेद पदार्थ मानैं हो तो भेद मैं भिन्न पणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ दूसरा भेद पदार्थ ओर मानणाँ पड़ैगा । ज्यो कहो कि जैसैं प्रथम भेदनैं पदार्थौं मैं भिन्न पणाँ सिद्ध किया तैसैं अपणैं मैं वी भिन्न पणाँ सिद्ध करैगा यातैं दूसरा भेद मानणाँ ठीक नहीं तो हम कहैं हैं कि तुमारा प्रथम भेद मानणाँ हीं ठीक नहीं । जैसैं भेदनैं अपणैं मैं आप भिन्नपणाँ सिद्ध किया है ऐसैं मानौं हो तैसैं पदार्थौंनैं हीं अपणैं मैं आप भिन्न पणाँ सिद्ध किया है ऐसैं मानौं तो प्रथम भेद ही नहीं मानणाँ पड़ैगा यातैं लाघव होगा लाघवकूँ गुण ओर गौरवकूँ दोष सकल शास्त्र मानैं हैं । जो

कहो कि पदार्थ तो प्रतीतिसैं मानैं जायँ हैं। पटसैं घट भिन्न है ये प्रतीति भेद कूँ सिद्ध करै है यातैं भेद पदार्थ घटतैं भिन्न मानणाँ। तो हम कहैं हैं कि भेद घटतैं भिन्न है इस प्रतीति सैं भेदमैं भिन्न पणाँ बताणैं वाला दूसरा भेद वी मानणाँ ही पडैगा। तो दूसरा भेद मैं भिन्न पणाँ कोन भेदसैं सिद्ध होगा सो कहो। ज्यो कहो कि दूसरा भेद मैं भिन्न पणाँकूँ प्रथम भेद सिद्ध करैगा। तो हम पूछैं हैं कि प्रथम भेद और दूसरा भेद एक ही है अथवा दोय हैं। जो कहो कि एक है तो आत्माश्रय दोष होगा। और जो आत्माश्रय दोष दूर करणैंकूँ दोनूँ भेद जुदे मानैं तो अन्योन्याश्रय दोष होगा। जो कहो कि दोनूँ भेद जुदे मानणैं मैं अन्योन्याश्रय होगा तो इस दोषकूँ दूर करणैं के अर्थ तीसरा भेद और मानैंगे तो चक्रकापत्ति दोष होगा। काहेतैं कि प्रथम भेदमैं तो भिन्न पणाँ सिद्ध किया दूसरा भेद नैं और दूसरा भेदमैं भिन्न पणाँ सिद्ध किया तीसरा भेदनैं और तीसरा भेदमैं भिन्नपणाँ सिद्ध करैगा प्रथम भेद ऐसैं चक्रकापत्ति दोष होगा। इस चक्रकापत्ति दोषके नहीं आणैं के अर्थ ज्यो चतुर्थ पञ्चम षष्ठ ऐसैं भेदकी कल्पना करोगे तो अनवस्था दोष होगा। यातैं भेदका मानणाँ सर्वथा अशुद्ध है।

ज्यो कहो कि भेद न मानणैं मैं प्रमाण कहा है तो।

एकमेवा द्वितीयं ब्रह्म। सर्वं खल्विदं ब्रह्म॥

इत्यादि तो श्रुति और विद्वानोंका अनुभव और पहिलैं कही सो युक्ति ये तीनूँ प्रमाण हैं। ज्यो कहो कि भेद नहीं मानैंगे तो विद्वान् ज्यो अभेद मानैं हैं सो कैसैं सिद्ध होगा। काहेतैं कि अभेदकी सिद्धिमैं भेद कारण है ज्यो भेद ही नहीं तो अभेद कैसैं सिद्ध होय सो कहो। तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थका वी अभाव सर्वके अनुभव सिद्ध है। जैसैं सुस्साका सींग आकाशका फूल बाँझका पुत्र ये अलीक पदार्थ हैं तो वी इनका अभाव सर्वके अनुभवसिद्ध है। तैसैंहीं भेद वी अलीक पदार्थ है तो वी इसका अभाव ज्यो अभेद सो विद्वानोंके अनुभव सिद्ध है यातैं विद्वान् अभेद मानैं हैं। ज्यो कहो कि अलीक पदार्थ का अभाव तो सर्वके अनुभवसिद्ध है। परन्तु अलीक पदार्थ किसीके भी

अनुभव सिद्ध नही है । यातैं ज्यो भेद वी अलीक पदार्थ होता तो ये किसीकै वी अनुभव सिद्ध नहीँ होता । अनुभव सिद्ध नहीँ होगेतैं कोई वी व्यवहार सिद्ध नहीँ करता । परन्तु पटतैं घट भिन्न है इस प्रतीत मैं पट भेदवाला घट विषय है यातैं भेद पदार्थ अलीक नहीँ । तो हम कहैं हैं कि कोई अलीक पदार्थ वी व्यवहार सिद्ध करे है । जैसैं हाव्वू अलीक पदार्थ है तो वी बालकके मनमैं भय सिद्ध करे है । तैसैं भेद अलीक है तो वी भिन्न व्यवहार सिद्ध करे है । ज्यो कहो कि बालक तो महा मूर्ख है यातैं अलीक हाव्वू कूँ मानैं है । परन्तु भेदकूँ तो बडे बडे विद्वान् मानैं हैं यातैं भेद अलीक नहीँ । तो हम कहैं हैं कि आत्मज्ञानियोंकी अपेक्षा सर्व अनात्मज्ञानी बालक हैं यातैं भेद मानैं हैं । आत्मज्ञानी भेद नहीँ मानैं हैं यातैं भेद अलीक है । जैसैं बालक अलीक हाव्वू कूँ और अनलीक घट पटादिकोंकूँ मानैं हैं तैसैं अनात्मज्ञानी वी अलीक भेदकूँ और अनलीक घटपटादिकोंकूँ मानैं हैं यातैं बालक ही हैं ऐसैं जानों ।

ज्यो कहो कि वेदान्त ग्रन्थोंमैं ब्रह्मकी पारमार्थिकी सत्ता और जगत्के पदार्थोंकी व्यावहारिकी सत्ता और रज्जु सर्पादिक की प्रातिभासिकी सत्ता ऐसैं सत्ता तीन मानी हैं । अब ज्यो आपनैं भेद हाव्वू ये अलीक पदार्थ बताये तो इनकी सत्ता कोन मानी जाय सो कहो । तो इनकी आलीकी सत्ता मानों इसमैं कुछ हानि नहीँ । ज्यो कहो कि आलीकी सत्ता मानोगे तो आपका कथन अप्रमाण होगा । काहेतैं कि सर्व वेदान्त ग्रन्थोंमैं आलीकी सत्ता कहीँ वी नहीँ मानी है । तो हम कहैं हैं कि वेदान्त ग्रन्थोंमैं एक जीववाद मत मुख्य है, उसमैं व्यावहारिकी सत्ता नहीँ मानी है तो वी व्यावहारिकी सत्ता माननें वालों के मत वेदान्ती प्रमाण ही मानैं हैं तैसैं आलीकी सत्ता माननेंवालों का कथन वी प्रमाण मानैं तो कुछ वी हानि नहीँ । ज्यो कहो कि जैसैं पारमार्थिकी सत्ता ब्रह्मकूँ परमार्थ सत्य बतावै है, और व्यावहारिकी सत्ता जगत् कूँ व्यवहार मैं सत्य बतावै है और प्रातिभासिकी सत्ता रज्जु सर्पादि कों कूँ दीखवें के समय मैं सत्य बतावै है तैसैं आलीकी सत्ता भेद हाव्वू इत्यादिकनकूँ किस समय मैं सत्य बतावै है । ज्यो कहो कि

मानणैं के समय मैं सत्य बतावै है, तो ये कथन ठीक नहीं। काहेतैं कि भेद हावू यें मानणैं के समय मैं सत्य होवैं तो ये अलीक ही नहीं बणं· सकैं गे। ज्यो सर्व अवस्थावों मैं और कोई बी काल मैं सत्य नहीं होय वो अलीक है। यें अलीकका लक्षण है। तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थ मानणैं के समय मैं सत्य ही हैं। ज्यो अलीक पदार्थ सत्य न होतातो बाल· क हावूतैं डरता नहीं। और अलीक का लक्षण ज्यो पहली कहा है सो नहीं है। किन्तु ज्यो कोई बी देश मैं कोई बी अवस्थामैं कोई बी प्रकार तैं सिद्ध न होय और मान्याँ जाय वो अलीक है। ज्यो कहो कि अलीकी सत्ता ये नाम सुणि करिकैं तो शब्द महिमातैं श्रोता के हृदयमैं पदार्थ का न मानणाँ सिद्ध होताहै यातैं ये नाम अच्छा नहीं। तो ये कथन ब· हुत ही ठीक है। यातैं इस सत्ताका नाम चतुर्थी सत्ता मानों। जैसैं न्या य शास्त्रमैं निर्विकल्पक ज्ञान की ज्यो विषयता है तिसकूँ चतुर्थी विषय· ता इस नामतैं लिखीहै। अथवा जैसैं आनन्दबोधाचार्यनैं सिद्धान्त लेश· मैं आत्मा मैं अविद्या निवृत्तिकूँ सती असती सदसती अनिर्व· चनीया इन च्यारोंतैं बिलक्षण अप्रसिद्धपञ्चमप्रकारा इस नाम करिकैं मानी है। तैसैं अप्रसिद्धचतुर्थप्रकारा इस नाम करिकैं मानौं तो बी कुछ हा नि नहीं।

ज्यो कहोकि भेद अलीक होता तो जैसैं हावू नहीं दीखता है तैसैं नहीं दीखता। परन्तु ये तो दीखता है यातैं हावू की तरैंह अलीक नहीं। तो हम पूछैं हैं कि तुम कूँहीं दीखता है अथवा कोई सर्वज्ञोंकूँ बी दीखा है ज्यो कहोकि गौतम कणादादि सर्वज्ञ ऋषियों कूँ बो दीखा है तो हम पूछैं हैं कि गौतम जी नैं अपणें मानें षोडश पदार्थों मैं भेद की गणना क्यों नहीं किई ज्यो कहो कि भेद अभाव पदार्थ है इसका अन्तर्भाव प्रमेय पदार्थ मैं है यातैं गौतमजीनैं भेद की गणना अपणें पदार्थोंमैं न किई तो हम कहैंहैं कि अभाव तो पदार्थ ही नहीं ज्यो अभाव बी पदा· र्थ होता तो कणादऋषि अपणें मानें पदार्थों मैं लिखते उननैं बी द्रव्य१ गुण २ कर्म ३ सामान्य ४ बिशेष ५ समवाय ६ येही पदार्थ कहेहैं यातैं गौतम कणादादि ऋषियों मैं भेद का दीखणाँ बताया सो सिद्ध नहीं और जैमिनि ऋषिनैं बी अभाव अधिकरणरूप कहा है यातैं बी ये ही सिद्ध होय है कि

भेद छः पदार्थां तैं जुदा मानों तो अलीक है और सांख्य शास्त्रके आचार्य कपिलदेवजीनैं वी अपणांसानैं पचीस तत्वाँ मैं अभाव की गणना न किई उनके मतमैं सत्कार्यवाद है यातैं असत् पदार्थ है ही नहीं असत्नाम अभावका है यातैं वी येही सिद्ध होय है कि अभाव पदार्थ नहीं है यातैं भेदका दीखणाँ असम्भव है और ज्यो अपणें विचारसैं देखो तो वी भेद दीखता नहीं काहे तैं कि भेद अभाव पदार्थ है अभाव कूँ कोई अधिकरणरूप मानैं है और कोई जुदो मानैं है ये विसम्वाद दीखणें वाली चीजमैं हो सकै नहीं ज्यो दीखणेंवाली चीजमैं वी ये विसम्वाद होय तो जहाँ भूतलमैं घट है तहाँ वी कोई घटकूँ भूतलरूप मानैं और कोई जुदो मानैं ज्यो कहो कि भेद कोई वी आचार्यांकूँ नहीं दीखा तो वी मोकूँ तो दीखै है तो हम कहैंहैं कि जिननैं तपोबलतैं अपणें चरणांमैं दोय नेत्र और पाये केवल पदार्थांका विवेचन करणें के अर्थ ऐसे गौतमजीकूँ तैसैं कण भोजन करिकैं केवल पदार्थां की भावना करणेंवाले कणादऋषिकूँ तैसैं पूर्वमीमांसा के आचार्य और व्यासजी के शिष्य ऐसैं जैमिनि ऋषिकूँ तैसैं साक्षात् विष्णु के अवतार कपिलदेवजीकूँ ज्यो भेद पदार्थ नहीं दीखा वो भेद तुमकूँ दीखता है तो तुमारे अलौकिक दृष्टि खुली है।

ज्यो कहो कि न शब्द का अर्थ अभाव ही होय है ज्यो भेद न मानों तो घट है सो पट नहीं है यहाँ न शब्दका अर्थ और तो बणसकै नहीं यातैं मानणाँ हीं पडैगा कि न शब्दका अर्थ भेद है तो हम कहैं हैं कि न शब्द का अर्थ अभाव ही होय ये नियम नहीं है ज्यो ये नियम मानों तो भूतलमैं घट नहींन है यहाँ दूसरा न शब्दका अर्थ घट ही सिद्ध होय है सो नहीं होगा यातैं ऐसैं कहणाँ पडैगा कि न शब्द का अर्थ भाव वी है और अभाव वी है परन्तु प्रथम न शब्द का अर्थ तो अभाव ही है और दूसरा न शब्दका अर्थ भाव ही है जैसैं भूतलमैं घट नहीं है यहाँ तो न शब्दका अर्थ अभाव ही है और भूतल मैं घट नहीं न है यहाँ दूसरे न शब्द का अर्थ भाव ही है काहेतैं कि दूसरे न शब्दका अर्थ घट है ये सबकै अनुभवसिद्ध है तो हम कहैं हैं कि प्रथम न शब्द का अर्थ अभाव ही है ये वी नियम नहीं है काहेतैं कि पट घट नहीं यहाँ प्रथम न शब्द का अर्थ पट भाव पदार्थ होय है सो नहीं हो सकैगा ज्यो कहो कि पट घट नहीं

इस का अर्थ ये है कि पट ज्यो है सो घटभेद का आश्रय है तो यहाँ न शब्दका अर्थ भेद है सो भेद अभाव पदार्थ है यातैं ये ही नियम रहा कि प्रथम न शब्दका अर्थ अभाव ही है तो हम कहैं हैं कि दूसरा न शब्द का अर्थ भाव ही होय है ये वी नियम नहीं काहेतैं कि घट घट नहीं न है इसका अर्थ ये है कि घटका ज्यो भेद उसका ज्यो आश्रय उसका ज्यो भेद उसका आश्रय घट है तो दूसरा भेद दूसरा न शब्द का अर्थ हुवा सो भेद अभाव पदार्थ है तो ये नियम न रहा कि दूसरा न शब्द का अर्थ भाव ही होय है ज्यो कहो कि जैसैं नील घट है यहाँ नीलरूपवाला ये नील शब्दका अर्थ है तो वी नील शब्द नील गुणकूँ वी कहै है तैसैं न शब्दका भेदवाला ये अर्थ है तो वी न शब्द भेद स्वरूप अभावकूँ वी कहै है यातैं न शब्द का अर्थ भेद सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि शब्दों के अर्थ मैं कोश प्रमाण मान्याँ है यातैं नील शब्द का अर्थ नीलरूप अोर नीलरूपवाला दोनूँ हैं तैसैं न शब्द का अर्थ भेद अोर भेदवाला ये दोनूँ जुदे जुदे कोई कोश मैं नहीं हैं यातैं ये कथन अप्रमाण है ज्यो कहो कि अनुभव सैं न शब्द का अर्थ भेदवाला ऐसैं मालूम होय है यातैं ये नियम करैंगे कि न शब्द का अर्थ भेद अोर उसका आश्रय भाव दोनूँ होणैं तैं अभाव अोर भाव दोनूँ मिले हुए न शब्द का अर्थ है तो वी न शब्दका अर्थ भेद सिद्ध हुवा तो हम कहैंहैं कि न शब्दका अर्थ अभाव अोर भाव दोनूँ मिले हुए हैं तो भूतल मैं घट नहीं है यहाँ नशब्दका अर्थ अनुभव तैं केवल अभाव ही मालूम होय है सो नहीं होणाँचाहिये ज्यो कहो कि मैंनैं नियम किया सो भेद के प्रकरण मैं है अत्यन्ताभाव के प्रकरण मैं नहीं है यातैं भूतल मैं घट नहीं है यहाँ न शब्दके अर्थ मैं मेरा किया नियम न रहा तो कुछ वी हानि नहीं काहेतैं कि यहाँ न शब्दका अर्थ अत्यन्ताभाव है तो हम कहैं हैं कि घटका अभाव पट नहीं है यहाँ पटका भेद घटका अभाव मैं मानते होसो नहीं मानणाँ चाहिये यहाँ तुमारे पट भेदका आश्रय होगा घटका अभाव यातैं न शब्दका अर्थ अभाव अोर भाव नहीं हो सकैगा काहेतैं कि तुमारा मान्याँ नियम ये है कि भेदके प्रकरण मैं न शब्द का अर्थ अभाव अोर भाव दोनूँमिले भये हैं अोर यहाँ न शब्दका अर्थ अभाव अभाव सिद्ध है काहेतैं कि घटका अभाव पट नहीं है यहाँ ये अर्थ होय है कि पटभेद का आश्रय घटका अभाव है तो यहाँ भेद वी अभाव है अोर उसका आ-

अय वी अभाव ही है भाव नहीं अब हम पूछैं हैं कि तुमारे नियम तो कोई वी रहे नहीं यातैं नशब्दका अर्थ भेद सिद्ध न हुवा तो वी भेद मानो हो परन्तु इतना बिचार तो करणाँ चाहिये कि नशब्दका अर्थ भेद है तो जैसैं भूतलमैं घट नहीं है यहाँ नशब्द का अर्थ अत्यन्ताभाव है तैसैं नशब्द का अर्थ केवल भेद कहाँ है ज्यो कहो कि केवल भेद तो कहीं वी नशब्द का अर्थ नहीं है तो ये ही जानो कि भेद पदार्थ नहीं है ज्यो कहो कि मेरै भेदकूं सिद्ध करणैं मैं हठ नहीं है किन्तु भेद नहीं है तो नशब्दका अर्थ भेदका आश्रय कैसैं होय है सो कहो तो इसका समाधान तो हम पहली करि आये कि भेद अलीक पदार्थ है तो वी व्यवहार सिद्ध करै है तहाँ हाथी कौं दृष्टान्त कहा है ज्यो कहो कि आचार्यौंनैं अपणैं मानैं पदार्थोंमैं भेद न लिखा यातैं भेद न माँनणाँ पहिले कहि आये सो कथन ठीक नहीं है काहेतैं कि नलिखणैं तैं न मानणाँ सिद्ध नहीं होता किन्तु निषेध करणैं तैं नमानणाँ सिद्ध होता है सो आचार्योंनैं भेदका निषेध किया नहीं तैसैं भेद का नमानणाँ कैसैं सिद्ध होय तो हम कहैं हैं कि आचार्योंनैं ॰ तैसैं कियाहै देखो गीता के दूसरे अध्याय मैं जगत् के गुरू पूर्णावतार श्री ॰ वो महाराज नैं—

"नासतो विद्यते भावः,,

ऐसैं कहा है इसका अर्थ ये है कि असत् का होणाँ नहीं है, असत् नाम अभावका है यातैं अभाव पदार्थ नहीं ये सिद्ध हुवा तो तुमारा मान्याँ भेद का निषेध हो गया काहेतैं कि तुमनैं भेदकूँ अभाव मान्याँ है ज्यो कहो कि श्रीकृष्ण के वाक्यतैं अभाव का निषेध सिद्ध होय है यातैं हम ऐसैं मानैं गे कि भेद पदार्थ है तो सही परन्तु ये अभाव नहीं है किन्तु भाव है तो हम कहैं हैं कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

इस श्रुति सैं भेद का निषेध सिद्ध है काहेतैं कि यहाँ नाना ये शब्द तो भेदकूँ कहै है और यहाँ नाना कुछ नहीं है इस श्रुतिके अर्थ सैं भेदका निषेध स्पष्ट प्रतीत होय है ज्यो कहो कि भेद माननैंतैं ऐसा

कौन अनर्थ होय है कि श्रुति और स्मृति भेद का निषेध करैं हैं तो हम कहा करैं ।

"द्वितीयाद्वै भयं भवति,,

ये श्रुति ही भेद मानणैं तैं भयरूप अनर्थ वर्णन करै है दूस-रेतैं निश्चय करिकैं भय होय है ये इस श्रुति का अर्थ है ऐसैं जानौं ज्यो कहो कि श्रुति नैं भेद का निषेध किया यातैं हीं भेद सिद्ध होय है काहेतैं ज्यो भेद पदार्थ नहीं है तो श्रुति किसका निषेध करै है तो हम कहैं हैं कि मूर्ख बालकोंके मानें हाबू की तरैंह मूर्खौंका मान्याँ भेद का श्रुति निषेध करै है ज्यो कहो कि वेद का तात्पर्य भेदके न माँनणैं मैं है ये आपकूँ कौंन युक्ति तैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि न जाणीं-हुई चीज के बतलाणैं तैं शास्त्र प्रमाण होय है यातैं ज्यो वेद पामरौं प-र्यन्त प्रसिद्ध भेदकूँ हीं बतलावै तो अप्रमाण हीं हो जाय यातैं भेद मानणाँ सर्वथा अशुद्ध और महाभय का करणैं वाला है ।

अब हम यहाँ ये विचार करैं हैं कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

ये श्रुति नाना का निषेध करै है तो नाना शब्दका अर्थ भिन्न है और भिन्न शब्दका अर्थ भेद का आश्रय ऐसा है तो नाना शब्दका अर्थ भेद और उसका आश्रय दो भये तो ये श्रुति भेद का ही निषेध करै है अथवा उस का आश्रय जे भाव पदार्थ उनका वी निषेध करै है तो इस श्रुति का अ-भिप्राय भेद और उसके आश्रय भाव पदार्थ दोनूँ के निषेधमैं है ये ही जाणौं काहेतैं कि ज्यो कदाचित इस श्रुतिका अभिप्राय केवल भेदके ही निषेध मैं होता तो—

"नेह नानास्ति किञ्चन

यहाँ—

नेह भेदोस्ति किञ्चन,,

ऐसा पाठ होता यातैं दोनूँ का निषेध ही इस श्रुति का सिद्धाँ-त अर्थ है ।

ज्यो कहो कि भेद का निषेध तो पहिलैं कहे भये श्रुति युक्ति और अनुभव इनतैं सिद्ध हो गया परन्तु भाव पदार्थों का निषेध कैसें सिद्ध होय है सो कहो तो हम पूछैं हैं कि तुम भाव पदार्थ कितनें मानौं हो सो कहो और कोन २ भाव कोन कोन मैं किस किस सम्बन्धसैं रहे है सो कहो ज्यो कहो कि द्रव्य १ गुण २ कर्म ३ सामान्य ४ विशेष ५ समवाय ६ ये भाव पदार्थ हैं तिनमैं पृथ्वी १ जल २ तेज ३ वायु४ आकाश ५ काल ६ दिशा ७ आत्मा८ मन ९ ये नौ९ द्रव्य हैं और रूप १ रस २ गन्ध ३ स्पर्श ४ संख्या ५ परिमाण ६ पृथक्त्व ७ संयोग ८ विभाग ९ परत्व १० अपरत्व ११ गुरुत्व १२ द्रवत्व १३ स्नेह १४ शब्द १५ बुद्धि १६ सुख १७ दुःख १८ इच्छा १९ द्वेष २० प्रयत्न २१ धर्म २२ अधर्म २३ संस्कार २४ ये चोवीस गुण हैं और उत्क्षेपण १ अपक्षेपण २ आकुञ्चन ३ प्रसारण ४ गमन ५ ये पाँच कर्म हैं और सामान्य नाम जाति का है जैसें द्रव्य मैं द्रव्यपणों गुणमैं गुणपणों ऐसें जाणौं और नित्य द्रव्यों मैं रह करि उनकूँ जुदे बतावणें वाले विशेष पदार्थ हैं और नित्यसम्बन्धकूँ समवाय कहैं हैं अब ये और समुझो कि आदिके च्यार द्रव्य परमाणु रूप तो नित्य हैं और कार्य रूप अनित्य हैं और पाँचवें द्रव्यतैं अष्टम द्रव्य पर्यन्त व्यापक हैं और नित्य हैं और नवम द्रव्य मन परमाणु रूप है इन नो द्रव्यों मैं पहिले कहे चोवीस गुण रहैं हैं सो द्रव्यों का तो आपसमैं संयोग सम्बन्ध होय है और कार्य रूप द्रव्य अपणें कारण द्रव्य मैं समवाय सम्बन्ध सैं रहैं हैं और गुण कर्म द्रव्यों मैं समवायसम्बन्ध सैं रहैं हैं और जाति द्रव्य गुण कर्म इन तीनों मैं समवाय सम्बन्धसैं रहे है और विशेष नित्य द्रव्यों मैं समवाय सम्बन्ध सैं रहैं हैं तो हम पूछैं हैं कि यह पदार्थ कोई प्रमाण तैं सिद्ध हैं अथवा प्रमाण विना हीं सिद्ध हैं।

ज्यो कहो कि प्रमाण तैं सिद्ध हैं तो ये कहो कि प्रमाण सिद्ध हुए यातैं पदार्थ प्रमेय हुये तो प्रमेय इस पद का अर्थ प्रमा का विषय ऐसा है तो प्रमा प्रमाण सैं पैदा होय है अथवा प्रमाणकूँ पैदा करै है ज्यो कहो कि प्रमाणसैं प्रमा पैदा होय है तो ये सिद्ध हुवा कि प्रमाण तो प्रमाकूँ पैदा करै है और प्रमा पदार्थों कूँ सिद्ध करै है तो हम पूछैं हैं कि प्रमाण और प्रमा ये दोनूँ पदार्थों के अन्तर्गत हैं अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि सोनैं पदार्थों के अन्तर्गत ही है काहेतैं कि

तुमारे इन पहिलैं मानैं पदार्थों तैं जुदा वस्तु कोई वी नहीं है तो तुमारे मानैं पदार्थों के अन्तर्गत होणें तैं प्रमाकूँ वी प्रमेय मानणीं हीं पडैगी तो हम पूछैं हैं कि प्रमा ज्यो प्रमेय हुई तो इस कूँ विषय करणेंवाली प्रमा मानैं पदार्थों सैं जुदी माँनणीं चाहिये ज्यो कहो कि मानैं पदार्थों सैं कोई पदार्थ जुदा नहीं यातैं वो प्रमा वी इन पदार्थों के अन्तर्गत ही है तो उस प्रमाकूँ वी प्रमेय कहणीं हीं पडैगी तो अनवस्था होगी यातैं प्रमाकूँ प्रमेय नहीं मानणी चाहिये तो ये सिद्ध हुआ कि प्रमा तो प्रमेय नहीं और प्रमातैं जुदे सर्व पदार्थ प्रमा के विषय हुये यातैं प्रमेय हैं तो हम पूछैं हैं कि प्रमा प्रमाणतैं पैदा होय है अथवा स्वतस्सिद्धहै अर्थात प्रमाण विनाँ हीं सिद्ध है ज्यो कहो कि प्रमाण विनाँ हीं सिद्ध है तो प्रमाणतैं सिद्ध न हुई यातैं प्रमा अप्रमाणिक हुई तो अप्रामाणिक प्रमातैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रमाणिक हुये ज्यो कहो कि प्रमा प्रमाणतैं पैदा होय है तो हम पूछैं हैं कि प्रमाण तुमारे मानैं पदार्थोंके अन्तर्गत है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि मानैं पदार्थोंके अन्तर्गत ही है तो प्रमाण कूँ प्रमेय वी कहणाँ हीं पडैगा ज्यो प्रमाण कूँ प्रमेय कहा तो प्रमाण प्रमा का विषय है ये सिद्ध हो गया तो प्रमा का विषय होणें तैं प्रमाण कूँ प्रमा का पैदा करणेंवाला मानैं तो सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो जिसका विषय होय सो उसकूँ पैदा नहीं करै है जैसे घट चक्षुका विषय है तो चक्षुकूँ पैदा नहीं करै है ज्यो कहो कि प्रमा तो प्रमाण और विषय इन दोनूँतैं पैदा होय है ये अनुभवसिद्ध है तो हम कहैं हैं कि प्रमाणका प्रमेयपणाँ हीं गया काहेतैं कि प्रमाण कूँ विषय करणें वाली प्रमा तो केवल प्रमाण रूप विषयतैं हीं पैदा भई यातैं प्रमा नहीं ज्यो ये प्रमा नहीं भई तो इसका विषय प्रमाण ज्यो है सो प्रमेय न हुवा यातैं मानैं पदार्थों के अन्तर्गत प्रमाण कूँ प्रमेय सिद्ध करणेंवाली प्रमा का प्रमापणाँ सिद्ध होणें के अर्थ और प्रमाण मानणाँ हीं पडैगा अब इस प्रमाणकूँ वी मानैं पदार्थों के अन्तर्गत ही मानणाँ पडैगा तो अनवस्था होगी यातैं प्रमाणकूँ वी प्रमेय नहीं मानणाँ चाहिये ज्यो प्रमाण प्रमेय न हुवा तो प्रमाण सिद्ध न हुवा यातैं अप्रामाणिक हुआ तो अप्रामाणिक प्रमाणतैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रामाणिक हुये ।

ज्यो कहो कि इस सामान्य कथन सैं तो अर्थ नीकी विधि समुझमैं आवै नहीं यातैं विशेष कथनतैं,समुझाइये तो तुमही कहो कि तुमारे मानैं पदार्थ कौन प्रमाणतैं सिद्ध हैं और तुम प्रमाण कितनैं मानों हो ज्यो कहोकि हम प्रत्यक्ष १ अनुमान २ उपमान ३ शब्द ४ ये च्यार प्रमाण मानैं हैं तहाँ घटादिक पदार्थों का ज्ञान तो प्रत्यक्ष प्रमाणतैं मानैं हैं और धूम हेतु देख करिकैं पर्वतमैं अग्निका ज्ञान अनुमान प्रमाणतैं मानैं हैं और गो के सादृश्य ज्ञानतैं गवयका ज्ञान उपमान प्रमाणतैं मानैं हैं और गोकूँ ल्याव ऐसैं शब्द सुणिकैं ज्यो ज्ञान होय है उस ज्ञानकूँ शब्द प्रमाणतैं मानैं हैं सो घटादिक की तरैंह तो सारे पदार्थों का ज्ञान होय नहीं यातैं तो मानैं पदार्थ प्रत्यक्ष प्रमाणतैं सिद्ध नहीं हैं और कोई बी हेतु देख करिकैं इनका ज्ञान होय नहीं यातैं ये अनुमान प्रमाणतैं सिद्ध नहीं हैं और ये कोई के सदृश नहीं यातैं उपमान प्रमाणतैं बी सिद्ध नहीं हैं अब शेष रहा शब्दप्रमाण तिससैं सारे मानैं पदार्थ सिद्ध हैं शब्द प्रमाणतैं शाब्दी प्रमा होय है सो प्रमा मानैं पदार्थों कूँ विषय करैहै यातैं सारे पदार्थ प्रमेय हैं तो ये सिद्ध हुवाकि शब्द प्रमाणतैं तो शाब्दी प्रमा और शाब्दी प्रमातैं पदार्थों की सिद्धि यातैं मानैं पदार्थ शब्द प्रमाण सिद्ध होणैंतैं प्रामाणिक सिद्ध हैं।

तो हम पूछैं हैं कि मानैं पदार्थोंका सिद्ध करणैंवाला शब्द प्रमाण और मानैं पदार्थोंकूँ विषय करणैंवाली शाब्दी प्रमा ये दोनूँ इन पदार्थों के अन्तर्गत हैं अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि मानैं पदार्थों कै अन्तर्गत ही है तोहम पूछैंहैंकि ये शाब्दी प्रमा मानैं पदार्थोंके अन्तर्गत हुई तो प्रमेय है अथवा नहीं तो ये बी कहणाँ हीं पडैगा कि प्रमेय ही है तो प्रमेय नाम प्रमा के विषयका है यातैं या शाब्दी प्रमाकूँ विषय करणैं वाली एक प्रमा और मानणीं चाहिये तो उस शाब्दी प्रमाकूँ विषय करणैंवाली प्रमाकूँ बी मानैंपदार्थों कै अन्तर्गत ही मानणीं पडैगी तो अनवस्था होगी यातैं इस शाब्दी प्रमाकूँ प्रमेय नहीं मानणीं चाहिये तो ये शाब्दी प्रमा तो प्रमेय नहीं और इससैं जुदे सारे पदार्थ प्रमेय हैं ये सिद्ध हुवा तो तुमारे मतमैं प्रमेय होय तिसकूँ हीं पदार्थ मान्याँ है यातैं शाब्दी प्रमा पदार्थ ही सिद्ध न हुवा तो मानैं पदार्थ इसके विषय नहुए यातैं प्रमेय न हुये ज्यो प्रमेय न भये तो पदार्थ ही न भये अब हम ये पूछैं हैं कि प्रमा

प्रमाण सैं पैदा होय है अथवा प्रमाण विनाँ हीँ सिद्ध है ज्यो कहो कि प्रमाण विनाँ हीँ सिद्ध है तो शाब्दी प्रमा शब्द प्रमाणतैं सिद्ध न भई यातैं अप्रामाणिक भई तो अप्रामाणिक प्रमातैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रामाणिक भये ज्यो कहो कि शाब्दी प्रमा शब्द प्रमाणतैं पैदा होय है तो शब्द प्रमाणकूँ मानैं पदार्थौंके अन्तर्गत ही मानणाँ पडैगा ज्यो पदार्थौंके अन्तर्गत मान्याँ तो शब्द प्रमाणकूँ शाब्दी प्रमा का विषय वी कहणाँ हीँ पडैगा ज्यो विषय हुवा तो शब्द शाब्दी प्रमाकूँ पैदा नहीँ कर सकैगा जैसैं चक्षु का विषय घट चक्षुकूँ पैदा नहीँ करै है और ये वी समुझो कि प्रमा तो प्रमाण और विषय इन दोनूँतैं पैदा होय है और यहाँ तो शाब्दी प्रमा केवल शब्द प्रमाण रूप विषयतैं हीँ पैदा भई यातैं प्रमा ही न भई ज्यो शाब्दी प्रमा प्रमा न भई तो शब्द रूप प्रमाण इसका विषय माँनणैं तैं प्रमेय न हुया इस कारण तैं शब्द प्रमाण कूँ प्रमेय सिद्ध करणैंवाली शाब्दी प्रमा का प्रमापणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ और प्रमाण मानणाँ पडैगा तो अनवस्था होगी यातैं शब्द प्रमाणकूँ वी प्रमेय न मानणाँ चाहिये ज्यो शब्द प्रमाण प्रमेय न हुवा तो प्रमाण सिद्ध न हुवा यातैं अप्रामाणिक हुवा तो अप्रामाणिक शब्द प्रमाण तैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रामाणिक भये यातैं सिद्ध न भये तो यह सिद्ध हो गया कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

ये श्रुति भेद और भेद का आश्रय दोनूँ का निषेध करै है और ये वी विचार करणाँ चाहिये कि सारे प्रमाणौं मैं शिरोमणि वेद है सो वेद नैं द्रव्य गुण इत्यादि नाम करिकैं कहीँ वी पदार्थौं का विभाग नहीँ किया यातैं वी ये कथन सर्वथा अप्रामाणिक है ।

ज्यो कहो कि पदार्थ सामान्य सिद्ध नहीँ भये तो हम पदार्थ विशेष सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये तुमारा कथन तुमारे मत सैं हीँ सर्वथा अशुद्ध है काहेतैं कि तुमनैं हीँ ऐसैं मान्याँ है कि प्रथम सामान्य रूप करिकैं पदार्थौंका ज्ञान होता है पीछैं विशेष जिज्ञासा होती है । अर्थात् पदार्थौं कूँ जुदे जुदे जाननैं की इच्छा होती है पीछैं विशेष रूप करिकैं पदार्थौं का ज्ञान होता है अब ज्यो पदार्थ सामान्य सिद्ध ही न हुये तो उन का ज्ञान होणाँ असम्भव ज्यो सामान्य ज्ञान न हुवा तो विशेष रूप

करिकैं जाणणैंकी इच्छा कहाँ ज्यो विशेष रूप करिकैं जाणणैं की इच्छा नहीं तो विशेष रूप करिकैं जाणणैं का सम्भव ही नहीं तो यो ज्यो तुम कहो हो कि हम पदार्थ विशेष सिद्ध करैंगे तो कहो तुमनैं आदि के च्यार द्रव्य पृथ्वी १ जल २ तेज ३ वायु ४ परमाणु रूप तो नित्य कहे हैं और कार्य-रूप अनित्य कहे हैं तहाँ परमाणु मानणैं मैं कहा प्रमाण है।

ज्यो कहो कि परमाणु का प्रत्यक्ष तो नहीं है यातैं परमाणु मानणैं मैं अनुमान प्रमाण है तो ये वी कहो कि तुम परमाणु किसकूँ मानौं हो ज्यो कहो कि जाली के प्रकाश मैं सर्वतैं सूक्ष्म ज्यो रज मालुम होय है उस के छटे भागकूँ परमाणु मानैं हैं तो हम कहैंहैं कि तुम उस छटे भाग परमाणु कूँ जिस अनुमान तैं सिद्ध करो हो सो अनुमान कहो परन्तु प्रथम प्रकाश मैं ज्यो सर्वतैं सूक्ष्म रज मालुम होय है सो छः परमाणूँन तैं पैदा हुवा द्रव्य है उसका नाम कहा है सो कहो तो त्र्यणुक ऐसैं कहोगे तो उसकी उत्पत्ति तुमारै ऐसैं मानी है कि प्रथम सृष्टि के आदि मैं परमेश्वर की इच्छा तैं परमाणुँन मैं क्रिया होय है पीछैं दोनूँ परमाणुन का संयोग होय है पीछैं द्व्यणुक पैदा होय है पीछैं तीन द्व्यणुकसैं एक त्र्यणुक पैदा होय है उस का प्रत्यक्ष होय है तो हम पूछैं हैं कि तुमारे मत मैं कार्य कितनैं कारणौं सैं पैदा होय हैं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि तीन कारणौं सैं सर्व कार्य पैदा होय हैं तिन मैं एक समवायि कारण है दूसरा असमवायि कारण है तीसरा निमित्त कारण है जैसैं कपाल घट का सम-वायि कारण है और दोनूँ कपालौं का संयोग घट का असमवायि कारण है और कुलाल दण्ड इत्यादि घट के निमित्त कारण हैं तो हम पूछैं हैं कि सृष्टि के आदि मैं परमेश्वर की इच्छा तैं परमाणु मैं ज्यो प्रथम क्रिया पैदा होय है ये तुमनैं मानी है तो वो क्रिया वी पैदा हुई यातैं कार्य ही मानणीं पडैगी ज्यो वो क्रिया कार्य हुई तो उस के कारण तीन हीं होंगे तो परमाणु तो उस क्रिया का समवायि कारण होगा और परमेश्वर की इच्छा उसकी निमित्त कारण होगी और असमवायि कारण यहाँ कोई नहीं बणँ सकै है तो कारण एक वी न्यून होणैं तैं कार्य पैदा होय नहीं तो प-रमाणु मैं प्रथम क्रिया मानणाँ सिद्ध न हुवा ज्यो परमाणु मैं प्रथम क्रिया सिद्ध न हुई तो उस क्रिया सैं दो परमाणुन का संयोग पैदा होय है सो

न हुवा ज्यो वो संयोग न हुवा तो द्व्यणुक पैदा न हुवा द्व्यणुक नहुवा तो तीन द्व्यणुकोँ सैं एक त्र्यणुक होता है सो न हुवा तो ऐसैं कार्य द्रव्य मात्र सिद्ध न हुवा तो कार्य द्रव्योँ की उत्पत्तिके अर्थ परमाणु मान्याँ सो तुमारे मत सैं हीं उसकी कल्पना व्यर्थ भई ओर तुमनैं अनुमान तैं परमाणु की सिद्धि मानी सो वी नहीं बणसके काहेतैं कि तुमारै ऐसा अनुमान है कि जैसैं घट है सो प्रत्यक्ष है यातैं सावयव है तैसैं त्र्यणुक है सो वी प्रत्यक्ष है यातैं सावयव है तो इस अनुमान सैं त्र्यणुक के अवयव सिद्ध किये पीछैं ऐसा अनुमान किया कि जैसैं घट का अवयव कपाल अपणी अपेक्षा महान् घटकूँ पैदा करै है यातैं सावयव है तैसैं त्र्यणुक का अवयव वी अपणी अपेक्षा महान् त्र्यणुक कूँ पैदा करै है यातैं सावयव है तो इस अनुमान सैं त्र्यणुक के अवयव जे द्व्यणुक उन के अवयव परमाणु सिद्ध किये हैं परन्तु इतना तो विचार करणाँ चाहिये कि ऐसैं अनुमान वणायकर परमाणु सिद्ध करै तो परमाणु सिद्ध होयई नसकै काहे तैं कि जैसैं कपल का अवयव कर्पर महान् घट के अवयव का आयवव है यातैं सावयव है तैसैं द्व्यणुक का अवयव वी महान् त्र्यणुक के अवयव का अवयव है यातैं सावयव है इस अनुमान तैं तुमारे मानैं परमाणु का वी अवयव सिद्ध होगा ऐसैं हीं अनुमान धारा तैं अवयव धारा सिद्ध होगी यातैं निरवयव परमाणु मानणाँ असङ्गत ही है ओर विचार करो कि परमाणु मानोंगे तो त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्षपणाँ की आपत्ति होगी काहेतैं कि तुमनैं परमाणु ओर द्व्यणुक ये दोय द्रव्य तो अप्रत्यक्ष मानैं हैं ओर त्र्यणुककूँ आदि लेकैं सारे कार्य द्रव्य प्रत्यक्ष कहे हैं तो यहाँ ऐसा अनुमान हो सकै है कि जैसैं द्व्यणुक अप्रत्यक्ष द्रव्य ज्यो परमाणु तातैं पैदा होय है यातैं अप्रत्यक्ष है तैसैं त्र्यणुक वी अप्रत्यक्ष ज्यो द्व्यणुक तातैं पैदा हुवा है यातैं अप्रत्यक्ष है इस अनुमान तैं त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणाँ की आपत्ति होगी ज्यो कहो कि सर्व प्रमाणोँ मैं प्रत्यक्षप्रमाण प्रबल है यातैं प्रत्यक्ष सिद्ध त्र्यणुक मैं अनुमान तैं अप्रत्यक्ष पणाँ सिद्ध नहीं हो सकै तो हम कहैं हैं कि पूर्व कही अनुमान धारा तैं सिद्ध अवयवधारा रूप अनवस्था दोष प्रवल है। यातैं निरवयव परमाणु वी सर्वथा सिद्ध नहीं हो सकै ज्यो कहो कि अनवस्था दोष न आणैं के अर्थ ही हम नैं परमाणु निरवयव मान्याँ है यातैं परमाणु सिद्ध होगया तो हम कहैं हैं कि त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणाँ की आपत्ति नहीं होणैं के

अर्थ हमनैं परमाणु नहीं मान्याँ है यातैं परमाणु सिद्ध न हुवा ज्यो कहोकि द्व्यणुक ज्यो अप्रत्यक्ष है सो तो अप्रत्यक्ष परमाणुतैं पैदा हुवा है यातैं अप्रत्यक्ष है ये नहीं है किन्तु द्रव्य का ज्यो चक्षु तैं प्रत्यक्ष होय है तहाँ महत्व और उद्भूत रूप ये दोनूँ मिले कारण हैं यातैं जहाँ महत्व और उद्भूत रूप ये दोनूँ होंयँ तहाँ तो चक्षु तैं प्रत्यक्ष ज्ञान होय है जैसैं घट मैं ये दोनूँ हैं यातैं घट का प्रत्यक्ष होय है और जहाँ दोनूँ मैं तैं एक होय और एक न होय तहाँ द्रव्य का प्रत्यक्ष चक्षु तैं होवै नहीं जैसैं महावायु मैं महत्व तो है और उद्भूत रूप नहीं है तो महावायु का प्रत्यक्ष चक्षु तैं नहीं होय है तैसैं हीं परमाणु मैं और द्व्यणुक मैं उद्भूत रूप तो है परन्तु महत्व नहीं है यातैं परमाणु का और द्व्यणुक का प्रत्यक्ष होय नहीं यातैं अनुमान बणाकरिकैं द्व्यणुक के दृष्टान्त तैं त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणें की आपत्ति दिई सो सर्वथा असङ्गत है काहे तैं कि द्व्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणाँ परमाणु के अप्रत्यक्ष होणें तैं न रहा किन्तु महत्व रूप कारण न होणें तैं अप्रत्यक्ष पणाँ रहा यातैं दृष्टान्त सिद्ध न हुवा तो हम कहैं हैं कि द्व्यणुकका वी प्रत्यक्ष होणाँ चाहिये काहे तैं कि द्व्यणुक मैं तुम उद्भूत रूप तो मानों हीं हो और महत्व नहीं मानों हो परन्तु हम कहैं हैं कि द्व्यणुक दोय परमाणुन तैं पैदा हुवा द्रव्य है ऐसैं मानों हो यातैं परमाणु की अपेक्षा द्व्यणुक मैं वडा पणाँ मानणाँहीं पडैगा तो वडा पणाँ महत्व का ही नाम है तो द्व्यणुक मैं महत्व वी रहा यातैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष होणाँ चाहिये काहेतैं कि द्व्यणुक मैं तुमारे मानें भये महत्व और उद्भूत रूप दोनूँ कारण मोजूद हैं ज्यो कहो कि द्व्यणुक ज्यो है सो त्र्यणुक की अपेक्षा अणु है यातैं महत्वस्वरूप कारण के नहीं रहणें तैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष नहीं होय है तो हम कहैं हैं कि त्र्यणुक वी चतुरणुक की अपेक्षा अणु है यातैं त्र्यणुक का वी प्रत्यक्ष नहीं होणाँ चाहिये। ज्यो कहो कि परमाणु और द्व्यणुक इन दोनूँका प्रत्यक्ष नहीं होय है यातैं हम इनमैं महत्व नहीं मानैं हैं याहीतैं महत्व स्वरूप कारण के नहीं रहणें तैं इनका प्रत्यक्ष नहीं होय है तो हम कहैं हैं कि प्रत्यक्ष न होणें तैं द्रव्य मैं महत्व का न मानणाँ कहोगे तो आकाश का वी तुम प्रत्यक्ष नहीं मानों हो यातैं आकाश मैं वी तुमारे महत्व का न म सिद्ध होगा ज्यो आकाश मैं महत्व ही न रहा तो परममहत्व का म तो अत्यन्त ही कठिन हो गया ज्यो कहो कि हम तो परमाणु और

दोनूँकूँ हीं अणु मानैं हैं यातैं इनमैं महत्व न रहा महत्वके नहीं रहणैं तैं इनका तो प्रत्यक्ष नहीं होय है और त्र्यणुक मैं महत्व है यातैं त्र्यणुक का प्रत्यक्ष होय है तो हम कहैं हैं कि तुमारे मत मैं द्व्यणुक तो कार्य है और परमाणु द्व्यणुक का कारण है ऐसैं लिखा है तो वी ज्यो तुमनैं कार्य और कारण दोनूँकूँ अणु शब्द सैं कहै तो हम विश्वास करैं हैं कि कोई समयमैं तुम कपालकूँ और घटकूँ वी एक नाम करिकैं कहोगे तो श्रोता कूँ यथार्थ बोध कैसैं होगा। यातैं ऐसैं बोलणाँ सर्वथा असङ्गत है ज्यो कहो कि कपाल और घट ये दोनूँ महान् हैं यातैं इनका प्रत्यक्ष है इस व्यवहार मैं जैसैं कपालकूँ और घटकूँ महत् शब्द करिकैं कहै हैं तैसैं परमाणुकूँ और द्व्यणुक कूँ अणु नाम करिकैं कहे हैं यातैं हमारे कथन तैं श्रोताके यथार्थ बोध मैं कोई हानि नहीं इस कारण तैं हमारा कथन असङ्गत नहीं तो विचार दृष्टि तैं देखो कि कपाल कूँ और घटकूँ महत् शब्द सैं कहै तो वी घटकी अपेक्षा कपाल तो अल्प है और कपालकी अपेक्षा घट महान् है ऐसैं मानणाँ हीं पड़ैगा तैसैंहीं परमाणु कूँ और द्व्यणुक कूँ अणु नाम करिकैं कहे तो वी द्व्यणुक की अपेक्षा परमाणु तो अल्प है और परमाणु की अपेक्षा द्व्यणुक महान् है ऐसैं यी मानणाँ हीं पड़ैगा तो द्व्यणुक मैं महत्व सिद्ध हो गया यातैं द्व्यणुकका प्रत्यक्ष होणाँ चाहिये परन्तु तुमारे मतमैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष मान्याँ नहीं यातैं द्रव्य का चक्षु तैं प्रत्यक्ष होय तहाँ महत्व कूँ कारण मान्याँ सो सर्वथा नहीं बणँ सकै और विचार करोकि जैसैं महा पदार्थों मैं कपाल की अपेक्षा घटकूँ तो परम महान् कहोगे और कपाल के अवयव कूँ अल्प महान् कहोगे और कपालकूँ महान् कहोगे तो अल्प महान् और परम महान् इन व्यवहारोंका कारण महान् कपाल हुवा तैसैं परमाणु और द्व्यणुक इन व्यवहारोंका कारण एक अणु और मानणाँ चाहिये काहेतैं कि अणु तैं अल्प ये तो परमाणु शब्द का अर्थ है और दोय अणु मिले भये ये द्व्यणुक शब्द का अर्थ है अब ज्यो परमाणु तैं और द्व्यणुकतैं जुदा अणु न मानोंगे तो परमाणु और द्व्यणुक दोनूँहीं सिद्ध नहीं होयँगे ज्यो कहोकि परमाणु और द्व्यणुकतैं जुदा अणु तो कोई वी आचार्य मानैं नहीं यातैं परमाणु और द्व्यणुक तैं जुदा अणु तो हम वी नहीं मान सकैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे मानैं परमाणु और द्व्यणुक हैं हीं नहीं ज्यो परमाणु और द्व्यणुक होते तो इनकी सिद्धि करणैं वाला अणु द्रव्य कूँ तुमारे आचा-

यें मानते और मानते तो लिखते ज्यो कहो कि हमारे आचार्य तो युक्ति सिद्ध पदार्थों कूँ मानैं हैं यातैं परमाणु और द्व्यणुक तैं जुदा अणु मानैं तो कोई वी हानि नहीं इस कारण तैं हम अणु द्रव्य मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुमनैं ज्यो अणु द्रव्य मान्याँ सो परमाणु की अपेक्षा तो वडा और द्व्यणुक की अपेक्षा छोटा मानणाँ पडैगा काहेतैं कि अणुतैं छोटे का नाम परमाणु है और दो अणु मिले भये होवैं ताकूँ द्व्यणुक कहैं हैं तो कहो कि तुमारे मानें अणु द्रव्यकूँ सावयव मानोंगे अथवा निरवयव मानोंगे ज्यो कहो कि सावयव मानैंगे तो कहो कि उस मानें अणु द्रव्य के अवयव परमाणु हीं मानोंगे अथवा और कल्पना करोगे ज्यो कहो कि मानें अणु द्रव्य के अवयव और ही कल्पना करैंगे तो अवयवितैं अवयव छोटा होय है ये अनुभव सिद्ध है तो अणु द्रव्यतैं छोटा परमाणु हीं होगा ज्यो कहो कि परमाणु हीं मानेंगे तो हम कहैं हैं कि परमाणु तो द्व्यणुक का अवयव है यातैं मान्याँ अणु द्रव्य द्व्यणुक रूप सिद्ध होगा यातैं द्व्यणुक का कारण नहीं हो सकैगा ज्यो कहो कि निरवयव मानैंगे तो तुमनैं परमाणु निरवयव मान्याँ है यातैं मान्याँ अणुद्रव्य परमाणुरूप होगा यातैं अणु तैं छोटा होय सो परमाणु इस अर्थ कूँ सिद्ध नहीं करैगा ज्यो कहो कि सावयव निरवयव मानैंगे तो ये कथन विरुद्ध है काहेतैं कि सावयव होय सो निरवयव नहीं हो सकै और निरवयव होय सो सावयव नहीं हो सकै ज्यो कहोकि मानें अणुद्रव्य कूँ सावयवनिरवयवविलक्षण मानैंगे तो ये कथन सर्वथा ही असङ्गत है काहेतैं कि ऐसा पदार्थ कोई है ही नहीं कि ज्यो सावयव वी न होय और निरवयव वी न होय यातैं परमाणु और द्व्यणुक तैं जुदा तुमारा मान्याँ अणु द्रव्य सिद्ध न हुवा तो अणु द्रव्य ज्यो है सो परमाणु और द्व्यणुक इस व्यवहार का कारण है यातैं परमाणु और द्व्यणुक सिद्ध न भये ज्यो कहोकि परमाणु न मानैं तो समवायि कारण विना कार्य द्रव्यों की उत्पत्ति मानणीं पडैगी सो मानणाँ असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि जैसैं असमवायि कारण विना आदि क्रिया ईश्वर की इच्छारूप निमित्त कारण तैं मानों हो तैसैं समवायि कारण विना कार्य द्रव्य की प्रथम उत्पत्ति ईश्वर की इच्छा तैंहीं मानों परमाणु मानणाँ व्यर्थ ही है और विचार करो कि तुम नैं कार्य द्रव्यों की उत्पत्ति के अर्थ निरवयव परमाणु मानैं हैं और परमेश्वर की इच्छा करिकैं उनतैं सृष्टि मानी है

परन्तु ये सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो परमाणु तैं सृष्टि होती तो वेद नैं वी कँहीं वर्णन किई होती सो वेदमैं कँहीं वी परमाणु तैं सृष्टिवर्णन किई नहीं यातैं परमाणु मानणाँ सर्वथा अप्रमाण है ।

अब हम ये वी पूछैं हैं कि तुमनैं कार्य द्रव्याँ की उत्पत्ति के अर्थ परमाणु स्वरूप मूल समवायिकारण की कल्पना किई है तो ये कहो कि तुम कार्य द्रव्य किन कूँ कहो हो ज्यो कहो कि हम घटादिपदार्थाँ कूँ कार्य द्रव्य कहैं हैं तो हम पूछैं हैं कि अवयवि द्रव्य ओर कार्य द्रव्य एक ही है अथवा विलक्षण है ज्यो कहो कि एक ही है तो उस कार्य द्रव्य के उपादान कारण अवयव होंगे तो हम पूछैं हैं कि तुमारा मान्याँ कार्य द्रव्य अवयव रूप कारणाँ का समुदाय है अर्थात् अवयवाँ का समूहरूप है अथवा अवयवाँ तैं ज्यो कार्य होय है सो अवयवाँ तैं विलक्षण पैदा होय है ज्यो कहो कि अवयवाँ का समूह ही कार्य है तो हम पूछैं हैं कि तुम समुदाय पदार्थ किस कूँ कहो हो तो ये ही कहोगे कि समुदाय पदार्थ जुदा तो है नहीं किन्तु प्रत्येक अवयव रूप है तो हम कहैं हैं कि समुदाय ज्यो प्रत्येक रूप होय तो प्रत्येक अवयव मैं समुदाय की बुद्धि होणीं चाहिये यातैं समुदाय कूँ प्रत्येक रूप मानणाँ असङ्गत है ओर दूसरा दोष ये वी है कि समुदाय प्रत्येक रूप होय तो घटका प्रत्यक्ष नहीं होणाँ चाहिये काहेतैं कि तुम घटकूँ परमाणु समुदाय रूप कहोगे समुदाय तुमारे मतमैं प्रत्येक रूप है तो घट प्रत्येक परमाणु रूप हुवा यातैं घटका प्रत्यक्ष होता है सो तो नहीं होणाँ चाहिये ओर प्रत्येक परमाणु बहुत हैं ओर घट प्रत्येक परमाणु रूप हुवा यातैं घटरूप कार्य बहुत मानणैं चाहिये ओर परमाणु रूप हुये यातैं नित्य मानणैं चाहिये ज्यो नित्य हुये तो कार्य द्रव्य मानणाँ असङ्गत हुवा ज्यो कहो कि जैसैं दूरदेशमैं स्थित एक केशका प्रत्यक्ष नहीं होय है तोवी केशाँ के समूह का प्रत्यक्ष होय है तैसैं हीं एक परमाणु का प्रत्यक्ष नहीं होय है तो वी परमाणुनका समूह ज्यो घट उसका प्रत्यक्ष होय है तो हम कहैं हैं कि केशका तो समीप देशमैं प्रयक्ष होय है ओर परमा-णु का तो तुमारे मतमैं प्रत्यक्ष है ही नहीं यातैं दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम होणैं तैं घटका प्रत्यक्ष कहा सो असङ्गत ही है ओर ये वी समुझो कि जिस देश मैं स्थित एक केशका प्रत्यक्ष नहीं होय है उस देश मैं स्थित केशाँ के समूह का प्रत्यक्ष होय है सो नहीं होणाँ चाहिये काहेतैं कि तुम समूह कूँ प्रत्येक

रूप मानों हो तो केशोंका समूह प्रत्येक केशरूप हुवा और प्रत्येक केशका प्रत्यक्ष होय नहीं यातैं केशोंके समूह का बी प्रत्यक्ष नहीं होणाँ चाहिये अथवा उस ही देश मैं केश समूह बहुत दीखणैं चाहिये काहेतैं कि तुम समूह कूँ प्रत्यक्ष मानों हो तो केशोंका समूह प्रत्यक्ष दीखै है सो समूह प्रत्येक केश रूप है और प्रत्येक केश बहुत हैं यातैं केश समूह बहुत दीखणैं चाहिये अब विचार दृष्टितैं देखो कि केश समूह प्रत्येक केश रूप तो हुवा नहीं और तुम समूहकूँ प्रत्येक तैं जुदा मानों नहीं यातैं केश समूह प्रत्येक केशतैं जुदा होसकै नहीं तो केश समूह सिद्ध ही न हुवा यातैं केश समूह रूप दृष्टान्त तैं घटमैं प्रत्यक्षपणाँ सिद्ध किया सो होय ही नहीं सकै।

ज्यो कहोकि कार्यकूँ अवयवसमूह मानणाँ असङ्गत हुवा काहे तैं कि समूह कूँ प्रत्येक रूप मानणें तैं तो हम ऐसैं मानैं गे कि अवयव रूप कारणों तैं ज्यो कार्य पैदा होय है सो अवयव रूप कारणोंतैं विलक्षण पैदा होय है ऐसैं मानणें मैं ये गुण बी है कि कार्य और कारण का लोक मैं जुदा व्यवहार है सो बी बणाँ जायगा तो हम पूछैं हैं कि उपादान कारणतैं कार्य विलक्षण मानों हो तो तुम आरम्भ वाद मानों हो अथवा परिणाम वाद मानों हो ज्यो पूछो कि आरम्भ वाद कहा और परिणाम वाद कहा तो हम कहैं हैं कि आरम्भ वाद मत जिनका है वे तो ऐसैं कहैं हैं कि उपादान कारण अपणें तैं विलक्षण कार्यकूँ पैदा करै है और आप अपणें स्वरूप सैं बणाँ रहै है जैसैं तन्तुस्वरूप उपादान कारण आप तैं विलक्षण पटस्वरूप कार्य कूँ पैदा करैहै और आप तन्तु अपणें स्वरूप तैं बणें रहैं हैं याहीतैं तन्तु पटके शरीर मैं मालुम होय हैं ये आरम्भ वाद मत है इस मतमैं तन्तुवों नैं पटस्वरूप कार्य का आरँभ किया यातैं तन्तु आरम्भी कारण भये और पट कार्य आरब्ध हुवा।

और परिणाम वाद मत जिनका है वे ऐसैं कहैंहैं कि उपादान कारण हीं कार्यस्वरूप परिणाम कूँ प्राप्त हो जाय है और कार्य अवस्था मैं अपणें स्वरूप तैं नहीं रहै है जैसैं दहीका उपादान कारण दूध है सोही दही स्वरूप परिणाम कूँ प्राप्त होय है और दही अवस्था मैं दूध अपणें स्वरूप तैं नहीं रहै है याहीतैं दहीके स्वरूप मैं दूध नहीं मालुम होय है ये परिणाम वाद मत है इस मतमैं दूध रूप कारण दही रूप परिणाम कूँ प्राप्त हुवो यातैं दूध परिणामी कारण हुवा और दही रूप कार्य दूधका

परिणाम हुवा ऐसैं उपादान कारण मात्रकूँ आरम्भ वाद मतमैं आरम्भी कारण मानैं हैं और परिणाम वाद मतमैं परिणामी कारण मानैं हैं और ऐसैं ही कार्य मात्रकूँ आरँभवाद मत मैं आरब्ध मानैं हैं और परिणाम वाद मत मैं परिणाम मानैं हैं।

अब ज्यो कहो कि अवयव रूप कारणौं तैं बिलक्षण कार्य की उत्पत्ति मैं आरम्भवाद मत मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि आरम्भवाद मतमैं अवयव रूपकारण कार्य कूँ पैदा करैं हैं सो कार्य अपणौं कारणौं तैं जुदाही मानणाँ पड़ैगा तो कारण जैसैं कार्यकूँ आपतैं जुदाही पैदा करै है ये मानौंगे तैसैं कारण के गुण कार्य मैं आपतैं जुदे आपके सजातीय गुणौं कूँ पैदा करैं हैं ये बी मानौं हीं गे तो हम कहैं हैं कि घटके अवयव दो कपाल हैं तो ये ही घटके उपादान कारण होंगे अब कहो कि प्रत्येक कपाल घटका कारण है अथवा दोनूँ कपाल मिले कारण हैं ज्यो कहोकि प्रत्येक कपाल घटका कारण है तो हम कहैं हैं कि प्रत्येक कपाल तैं घटरूप कार्य होणाँ चाहिये ज्यो कहो कि प्रत्येक कपालतैं हीं घट होय है तो हम कहैं हैं कि प्रत्येक कपाल दो हैं यातैं घट दो होणैं चाहिये दो घट होवैं तब ही तुमारा ये बी नियम वणैं कि परिमाण का स्वभाव ये है कि आपके समान जातीय और आपतैं अधिक ऐसे परिमाण कूँ कार्य मैं पैदा करै है परन्तु ये नियम तब वणैं कि वे दोनूँ घट अपणैं कारण कपालौं की अपेक्षा कुछ ज्यादा परिमाण वाले होवैं देखो कल्पना करो कि कपाल दश अङ्गुल है उससैं घट पैदा हुवा तो घटमैं वीस अङ्गुल तैं अधिक परिमाण मालुम होणाँ चाहिये काहेतैं कि दश अङ्गुल तैं कुछ अधिक तो होगा घटका परिमाण और आरम्भ वाद मतमैं कारण अपणैं स्वरूप का त्याग नहीं करिकैं कार्य के शरीर मैं मोजूद रहे है यातैं दश अङ्गुल हुवा कपाल का परिमाण ऐसैं घटमैं वीस अङ्गुल तैं कुछ अधिक परिमाण मालुम होणाँ चाहिये परन्तु दो घट होवैं नहीं यातैं प्रत्येक कपाल कूँ कारण मानौं हो सो असङ्गत है ज्यो कहो कि उपादान कारण तो प्रत्येक कपाल ही है परन्तु अवयव संयोग कार्य द्रव्य का असमवायि कारण होय है सो अवयव संयोग एक कपाल मैं वणैं सकै नहीं यातैं दूसरे कपाल सैं अवयव संयोग रूप असमवायि कारण सिद्ध करणाँ तो ऐसैं उपादान कारण तो एक कपाल हुवा यातैं तो एक ही घट कार्य हुवा और द्वितीय कपाल तो केवल

असमवायि कारण सिद्ध करणें के अर्थ अपेक्षित है यातैं दो घट होणें की आपत्ति दिई से असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि द्वितीय शब्द तो सापेक्ष है काहेतैं कि प्रथम की अपेक्षा द्वितीय होय है और विनिगमना अर्थात एक पक्ष कूँ सिद्ध करणें की युक्ति कोई है नहीं यातैं तुमनैं असमवायि कारण सिद्ध करणें के अर्थ जिस कपालकी अपेक्षा किई वस कपाल कूँ तो हम घटका उपादान कारण मानैंगे और तुमारे मानैं उपादान कारण कूँ उसकी अपेक्षा द्वितीय मानि करिकैं अवयव संयोग रूप असमवायि कारण सिद्ध करणें वाला मानैंगे तो एक घट तो प्रथम प्रक्रिया ज्यो तुमनैं कही उससैं सिद्ध हो गया और दूसरा घट हमारी कही दूसरी प्रक्रियातैं सिद्ध होगा तो प्रत्येक कपाल कूँ कारण मानैं दोय कपालौं तैं दोय ही घट होणें चाहिये और पहिलैं कहे तुमारे नियम तैं प्रत्येक घटमैं एक कपाल के परिमाण की अपेक्षा दूणाँ तैं अधिक ही परिमाण मालुम होणाँ चाहिये यातैं प्रत्येक कपाल घटका कारण मानणाँ असङ्गत ही है ॥

ज्यो कहो कि दोनूँ कपाल मिले घटका कारण मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि दोनूँ कपाल मिले घटके उपादान कारण हैं तो दोनूँ कपाल मिले इसका अर्थ कहा है ज्यो कहो कि संयोग वाला कपाल ये अर्थ है तो हम कहैं हैं कि जैसैं कपालैं मैं कपालौंका रूप विशेषण है तैसैं संयोग वी कपालों का विशेषण हुवा तो तुम कपालौं के रूपकूँ घटका कारण नहीँ मानौं हो तैसैं संयोग कूँ वी घटका कारण नहीँ मान सकोगे काहेतैं कि तुमनैं पाँच प्रकारकी अन्यथासिद्धि मानी है वो अन्यथा सिद्धि जिनमैं रहै उनकूँ अन्यथा सिद्ध बता करिकैं कारण नहीँ मानैं हैं तहाँ दूसरा अन्यथासिद्ध कारण के रूपकूँ कहा है तहाँ कारण के रूपकूँ अन्यथा सिद्ध ऐसैं बताया है कि ज्यो अपणें कारण के साथ ही कार्यकै पूर्ववर्त्ती होय और अपणें कारण विना ज्यो कार्यकै पूर्ववर्त्ती नहीँ होय से उस कार्यकै प्रति अन्यथा सिद्ध होय है से रूपके कारण होंगे दण्ड कपाल इत्यादिक उनकी साथ ही रूप घट कार्यकै पूर्ववर्त्ती हो सकै है और उनकै विनाँ घट कार्यकै पूर्ववर्त्ती हो सकै नहीँ यातैं दण्ड कपाल इत्यादिका रूप घट कार्यकै प्रति अन्यथासिद्ध होणें तैं घटका कारण नहीँ है तो हम कहैं हैं कि कपालौं का संयोग वी अपणें उपादान कारण जे कपाल उनके साथ ही

घट कार्यके पूर्ववर्त्ती हो सकै है उनके विना पूर्ववर्त्ती हो सकै नहीं यातैं कपालौं का संयोग घट कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध होणेतैं घटका कारण नहीं मान सकोगे ज्यो कहोकि ये कथन अनुभवविरुद्ध है काहेतैं कि दोनूँ कपालौं का संयोग होतैं हीं घटकी उत्पत्ति प्रत्यक्ष दीखै है यातैं दोनूँ कपालोंका संयोग घटका कारण नहीं मानैं ये नहीं हो सकै तो हम कहैं हैं कि कपालोंके संयोग कूँ हीं घटका कारण मानौं कपाल तो अन्यथा सिद्ध है ज्यो कहो कि कपाल तो घटके कारण हैं ये कौनसा अन्यथा सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि कपालौं कूँ तीसरा अन्यथा सिद्ध मानौं काहेतैं कि जिसकूँ अन्यके प्रति पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं कार्यके प्रति पूर्ववर्त्ती जाणै यो उस कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध है जैसैं आकाश शब्द का समवायि कारण है यातैं आकाशकूँ शब्द के प्रति पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं हीं घट कै पूर्ववर्ती जाणैं है यातैं आकाश घट कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध है तैसैं हीं कपालौं का ज्यो संयोग उसके समवायि कारण कपाल हैं यातैं कपालौंकूँ संयोग के पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं हीं घटके पूर्ववर्त्ती जाणैं हैं यातैं घट कार्य के प्रति कपाल अन्यथा सिद्धहैं यातैं घटके कारण नहीं हो सकैं और जिस प्रक्रियातैं घट कार्यके प्रति कपाल अन्यथासिद्ध भये तिस ही प्रक्रिया तैं दण्ड कुलाल इत्यादिक भी अन्यथासिद्ध ही होंगे तो तुमनैं जिनकूँ घट के कारण कल्पना किये वे अन्यथासिद्ध होणेतैं कारण नहीं होसकैं ज्यो कारण हीं नहीं हो सकैं तो कार्य कूँ कैसैं पैदा करैं यातैं कार्य मानणाँ सिद्ध न हुवा।

और विचार करो कि तुम ऐसैं मानौं हो कि कार्य और कारण एक देशमैं रहैं तव कारण कार्यकूँ पैदा करै है और ज्यो एक देशमैं न रहैं तो कारण कार्यकूँ पैदा नहीं करसकै याहीतैं वनमैं कहीं पड़ा हुआ ज्यो दण्ड उससैं कार्य पैदा नहीं होय है और घट जहाँ रहै तहाँ हीं दण्डरहै तव ही दण्ड घटकूँ पैदा करैहै यातैं दण्ड और घट इन दोनूँकूँ एक जगैं रखणें के अर्थ ऐसैं कहा है कि कपालौं मैं घट तो समवाय सम्बन्ध करिकैं रहै है और दण्ड स्वजन्यभ्रमिजन्यकपालद्वयसंयोगवत्व सम्बन्ध करिकैं कपालौं मैं रहै है तो दण्ड और घट एक देशमैं रह गये यातैं दण्डस्वरूप कारण सैं घट कार्य हुवा परन्तु इतनाँ तो विचार करो कि ये सम्बन्ध तो वृत्यनियामक है अर्थात् इस सम्बन्ध का ये सामर्थ्य नहीं है कि दण्ड कूँ

कपाल मैं रख देवै ऐसे ऐसे सम्बन्धौं मैं कारण और कार्यांकूँ एक जगैं रखोगे तो परमेश्वर और उसके ज्ञान इच्छा यत्न और दिशा काल जीवौं के अदृष्ट घटका प्रागभाव और प्रतिबन्धकका अभाव ये नवसङ्ख्य तो साधारण कारण और कुलाल दण्ड सूत्र जल चक्र इत्यादिक निमित्त कारण और कपाल समवायि कारण और दोनूँ कपालौं का संयोग असमवायि कारण ये सर्व कपालौं मैं स्थित मानणाँ पड़ैंगे तो घट कार्य होगा ही नहीं काहेतैं कि कुलाल चक्र दण्ड इत्यादिक के भारतैं कपालौं का चूर्णहीं होगा अब ज्यो कपाल ही न रहे तो घट कैसैं होय यातैं कार्य मानणाँ असङ्गत ही है और ज्यो पहिलैं कही कि कपालौं का संयोग होतैं हीं घट दीखे है यातैं कपालौंके संयोगकूँ कारण न मानोगे तो अनुभवविरोध होगा तो हम कहा कहैं तुमकूँ तो वहाँ कुलाल चक्र दण्ड इत्यादि पर्यन्त कपालौं मैं दीखैं हैं और हमकूँ दीखैं नहीं यातैं तुमारी दिव्यदृष्टि के समान हमारी चर्मदृष्टि कैसैं होय इस ही कारण तैं हम तुमसैं अनुभव का विचार नहीं कर सकैं परन्तु इतनाँ तो तुम हीं विचारो कि कपालौं तैं घट पदार्थ जुदा होय तो आरम्भवाद मतसैं दोय सेर के दोय कपालौं का बणाया घट चार सेर होय काहेतैं कि दोय सेर भार तो कारणौं का और दोय सेर भार होगा घटका ऐसैं घट चार सेर होणाँ चाहिये सो होवै नहीं यातैं उपादान कारणतैं विलक्षण कार्य मानणाँ असङ्गत ही है।

ज्यो कहो कि आरम्भवाद मतसैं घट स्वरूप कार्य सिद्ध न हुवा तो हम परिणामवादमत मानि करिकैं घट कार्यकूँ कारणतैं जुदा सिद्ध करैंगे काहेतैं कि परिणामवाद मतमैं दूधरूप उपादान कारण हीं दही रूप परिणामकूँ प्राप्त होय है यातैं कार्य और कारण के गुण जुदे नहीं होणैं तैं घट कार्यमैं द्विगुण होणैं की आपत्ति नहीं क्योंकि कपाल रूप उपादान कारण हीं घट अवस्थाकूँ प्राप्त हुवा है अब जैसैं कपाल घट अवस्था कूँ प्राप्त हुवा तो आपतैं जुदा ही द्रव्यकूँ पैदा कर दिया और आप अपणैं स्वरूपसैं न रहा तैसैंहीं कपाल के गुण वी घट कार्यमैं अपणैं तैं जुदे ही गुणौंकूँ पैदा कर दिये और आप अपणैं स्वरूपतैं न रहे यातैं घटमैं द्विगुण होणैं की आपत्ति नहीं है ज्यो कहो कि ऐसैं मानोंगे तो कारण और कार्य जुदे कैसैं हो सकैंगे काहेतैं कि कारण तो है दूधऔर कार्यहै दही वह दूध ही

दहीअवस्थाकूँ प्राप्त हुवा है तो हम कहैं हैं कि हमारे कारणकूँ कार्यतैं जुदा करणैं तैं कुछ प्रयोजन नहीं कार्यकी सिद्धिसैं प्रयोजन है सो कार्य सिद्ध हो गया हम तो अवस्थाभेदसैं हीं कार्य और कारण इनकूँ जुदे मानैं हैं और प्रकारतैं जुदे मानैं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऐसैं परिणामवाद मतसैं कार्य सिद्ध करो हो तो ये विचार तो करो कि इस मतमैं दही दूधका परिणाम है दूध कारण है और दही कार्य है तो जैसैं दूधतैं दही होय है तैसैं दहीतैं छाछ और माँखन तो होय है परन्तु दूध होवे नहीं तैसैं हीं ज्यो घट वी कपालों का परिणाम होय तो कपालोंतैं जैसैं घट होय है तैसैं घटतैं कपाल होवैं नहीं परन्तु जब कपालौं का संयोग नष्ट होय है तव घटकी तो प्रतीति होय नहीं और कपालौं की प्रतीति होय है यातैं परिणाम वाद मत मानणाँ वी अशुद्ध ही है ज्यो ये मत अशुद्ध हुवा तो इस मत सैं वी कार्य मानणाँ असङ्गत ही हुवा ।

अब हम ये और पूछैं हैं कि परिणामवाद मतमैं दूधतो उपादान कारण है और दही उसका परिणाम है सो कार्य है तो ये कहो कि जब दूधकी दही अवस्था होय है तब प्रथम दूध के सूक्ष्म अवयवोंका ही दहीरूप परिणाम होय है अथवा स्थूल दूध ही दही रूप परिणामकूँ प्राप्त होय है ज्यो कहो कि दूधके सूक्ष्म अवयवोंका प्रथम दही रूप परिणाम होय है तो हम कहैं हैं कि दूधके अवयवौं का ज्यो संयोग उसका नाश प्रथम मानणाँ पडैगा काहेतैं कि परिणामवादमैं कार्य की अवस्था भयें कारण अपणें स्वरूपतैं रहै नहीं यातैं पीछैं सूक्ष्म अवयवौं मैं दही रूप परिणाम मानणाँ पडेगा पीछैं सूक्ष्म अवयवौं के नाना संयोग मानणें पडैं गे पीछैं महादधि रूप कार्य मानोंगे तो जब सूक्ष्म अवयवौं का संयोग नष्ट हुवा तब अवयवौं के मध्य मैं जहाँ तहाँ अवकाश मानौं ज्यो अवकाश मान्याँ तो ये तुम निश्चय करिकैं जानौं पूर्ण पात्रसैं दूध का कुछ भाग वाहिर निकलनाँ चाहिये सो निकलै नहीं यातैं दूध के सूक्ष्म अवयवौं का दही रूप परिणाम मानणाँ असङ्गत है ज्यो कहो कि स्थूल दूध ही दही रूप परिणामकूँ प्राप्त होय है तो हम पूछैं हैं कि दूधकूँ सावयव मानौं हो अथवा निरवयव मानौं हो ज्यो कहो कि सावयव मानैं हैं तो कहो कि अवयवौं मैं परिणाम होकर अवयवी दूधमैं परिणाम होय है अथवा अवयवी दूधमैं परिणाम हो कर अवयवोंमैं परिणाम मानौं हो अथवा अवयव और अवयवी इन दोनूँ मैं एक ही समयमैं परि-

णाम मानो हो ज्यो कहो कि अवयवौं मैं परिणाम होकर अवयवी दूधमैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अवयवोंमें परिणाम मान कर अवयवी दूधमैं दही रूप परिणाम मानणाँ असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो प्रथम अवयवौं का दही रूप परिणाम हुवा तो क्रमतैं हुवा अथवा क्रम बिना हौं हुवा ज्यो कहो कि क्रमतैं हुवा तो प्रथम कोनसे अवयवसैं परिणाम का प्रारम्भ होगा तो विनिगमना नहीं होणैं तैं कोईवी अवयवसैं प्रारम्भ नहीं मान सकोगे तो अवयवौं मैं क्रमसैं परिणाम मानणाँ सिद्ध न हुवा ज्यो कहो कि क्रम विना हीं अवयवौं मैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे कोई विनिगमना तो है नहीं यातैं अवयवी दूधमैं परिणाम मान करिकैं हीं अवयवौं मैं परिणाम मानों ज्यो कहो कि ऐसैं हीं मानैंगे तो यहाँ वी विनिगमना नहीं होणैं तैं इससैं विपरीत ही मानों हम ऐसैं कहैंगे ज्यो कहो कि हम अवयव और अवयवी इन दोनूं मैं एक समयमैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि परिणाम वाद मतमैं अवयवी रूप कार्यावस्थामैं अवयव रूप कारण अपणैं स्वरूपतैं रहैं नहीं यातैं ये कथन वी असङ्गत है ज्यो कहो कि ये कथन असङ्गत हुवा तो हमारा पहिलैं मान्याँ हुवा स्थूल दूधमैं दही रूप परिणाम सिद्ध हो गया तो हम कहैं हैं दूधमैं निरवयव होणैं तैं नित्य पणाँ की आपत्ति भई और परमाणु तथा आकाश इनकी तरैंहं अप्रत्यक्ष होणैं की आपत्ति भई यातैं परिणामवादसैं वी कार्य मानणाँ असङ्गतही है।

अब न तो परमाणुस्वरूप मूल उपादान कारण सिद्ध हुवा और नै घटादि स्वरूप कार्य सिद्ध हुवा यातैं नित्य और अनित्य रूप करिकैं मानैं पृथ्वी १ जल २ तेज३ वायु ४ सिद्ध न हुये देखो शिरोमणि भट्टाचार्यनैं ज्यो पदार्थतत्व नाम करिकैं ग्रन्थ बणाया है उसमैं वी परमाणु नहीं मान्याँ है ज्यो कहो कि शिरोमणि भट्टाचार्यनैं परमाणु तो न मान्याँ परन्तु कार्य तो मान्याँ है यातैं कार्य सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि जैसैं परमाणु का विवेचन किया तैसैं उननैं कार्यका विवेचन न किया ज्यो कार्य का वी विवेचन करते तो कार्य वी नहीं मानते।

अब कहो तुम आकाशकूँ कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि आकाश नित्य है और व्यापक है और नीरूप है यातैं आकाश का प्रत्यक्ष तो नहीं यातैं अनुमानतैं आकाश सिद्ध होय है तो तुम वो अनुमान कहो

कि जिससैं आकाश सिद्ध होय है ज्यो कहो कि जैसैं स्पर्श ज्यो है सो चक्षुसैं जाणणें के अयोग्य होता हुवा वाहिर के इन्द्रिय करिकैं जाणीं जाय ऐसी ज्यो जाति उस जाति वाला है यातैं गुण है तैसैं शब्दबी ऐसा है अर्थात् स्पर्श जैसा है यातैं गुण है ऐसैं अनुमान तैं तो शब्द ज्यो है सो गुण सिद्ध हुआ और पीछैं जैसैं संयोग ज्यो है सो गुण है यातैं द्रव्यमैं रहै है तैसैं शब्दबी गुण है यातैं द्रव्यमैं रहै है इस अनुमानसैं शब्द का द्रव्यमैं रहणाँ सिद्ध हुवा और पीछैं निर्णय किया तो ये शब्द पृथ्वी जल तेज वायु इनका गुण सिद्ध न हुवा और दिशा काल आत्मा मन इनका बी गुण सिद्ध न हुवा यातैं इस शब्द गुणका आधार आकाश सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि ऐसैं आकाश की सिद्धि विश्वनाथपञ्चानन भट्टाचार्यनैं अपणें वणाये मुक्तावली नाम ग्रन्थमैं लिखी है सो ही तुमनैं मानी है परन्तु विचार करो कि स्पर्श के दृष्टान्तसैं शब्दकूँ गुण मानों तो स्पर्श कूँ किसके दृष्टान्तसैं गुण मानैंगे ज्यो कहो कि रसके दृष्टान्तसैं स्पर्शकूँ गुण मानैंगे तो हम रसमैं ऐसैंही पूछैंगे अन्तमैं मूल दृष्टान्तकूँ गुण सिद्ध करणेंका सामर्थ्य होगा ही नहीं ज्यो मूल दृष्टान्त ज्यो है सो गुण सिद्ध न हुवा तो परम्परा दृष्टान्तो सैं शब्द ज्यो है सो गुण सिद्ध न हुवा ज्यो शब्द गुण न हुवा तो उसके रहणें के अर्थ आकाश का मानणाँ असङ्गत हुवा ।

ज्यो कहो कि शब्द सैं गुणपणाँ सिद्ध न हुवा तो शब्द तो श्रोत्रसैं प्रत्यक्ष सिद्ध है यातैं शब्द का आश्रय आकाश सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि तुम कर्णके छिद्र मैं वर्त्तमान आकाश कूँ श्रोत्र कहो हो और शब्दका आश्रय मानि करिकैं आकाश कूँ सिद्ध करो हो तो शब्द कूँ तो प्रत्यक्ष सिद्ध करणें के अर्थ श्रोत्र रूप आकाश की अपेक्षा होगी और आकाशकूँ सिद्ध करणें के अर्थ शब्दकी अपेक्षा होगी यातैं आकाश और शब्द दोनूँ अन्योन्य सापेक्ष होणें तैं इनमैं एक बी सिद्ध नहीं हो सकै ज्यो कहो कि शब्दकूँ तो मीमांसक द्रव्य मानैं हैं यातैं स्पर्शके दृष्टान्ततैं हम शब्दकूँ गुण सिद्ध करैं हैं काहेतैं कि हमारे मतमैं शब्द ज्यो है सो गुण है और स्पर्शकूँ गुण मानणें मैं तो किसीकै बी विवाद नहीं यातैं स्पर्शकूँ गुणसिद्ध करणाँ आवश्यक नहीं तो हम कहैं हैं कि तुम ज्यो गुणमानों हो सो व्यवहारसैं मानों हो अथवा सङ्केतसैं मानों हो ज्यो कहो कि व्यवहार सैं मानैं हैं तो ये कथन तो असङ्गत है काहेतैं कि व्यवहारसैं तो

सत्य भाषण धीरपणाँ उदारपणाँ दया इत्यादिकोंकूँ गुण मानै हैं और मद्यका गन्ध वेश्या के कुचोंका स्पर्श चुम्बन समयमैं उसके अधर का संयोग इत्यादिकोंकूँ गुण नहीं मानै हैं ज्यो कहो कि हम सङ्केतसैं गुण मानैं हैं तो तुम हीं कहो तुमारा सङ्केत श्रुति सिद्ध है अथवा नहीं ज्यो कहो कि श्रुति सिद्ध है तो वेदमैं कहीं वी रूपादिकों कूँ गुण नाम करिकैं कहे नहीं ज्यो कहो कि श्रुति सिद्ध नहीं है तो अप्रामाणिक होणैं तैं शब्द मैं गुणपणाँ मानणाँ असङ्गत हुवा यातैं शब्द का आश्रय आकाश स्वरूप द्रव्य मानणाँ असङ्गत है।

और देखो कि लोक मैं वी ये पृथ्वी का शब्द है ये जलका शब्द है ये वायुका शब्द है ये अग्नि का शब्द है ऐसैं व्यवहार है और ये आकाश का शब्द है ऐसा व्यवहार वी नहीं यातैं वी शब्द आकाश का गुण नहीं हो सकै जैसैं ये पृथ्वीका स्पर्श है ये जलका स्पर्श है ये तेज का स्पर्श ये वायुका स्पर्श है इस लोक व्यवहार सैं स्पर्श पृथिव्यादिक का गुण सिद्ध है यातैं आकाश का गुण सिद्ध नहीं हो सकै है और कहो कि तुम आकाश कूँ नित्य मानों हो सो नित्यपणाँ कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि निरवयव है यातैं आकाश नित्य है जैसैं निरवयव है यातैं आत्मा नित्य है और घट नित्य नहीं है यातैं निरवयव वी नहीं है. ऐसैं अनुमान तैं आकाश कूँ नित्य सिद्ध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि आत्मा का तो सर्व कूँ अनुभव है यातैं आत्मा मैं तो निरवयव पणाँ जाणैं सकोगे यातैं नित्य पणाँ सिद्ध हो सकैगा परन्तु आकाश का तो तुमारे मत मैं प्रत्यक्ष नहीं यातैं आकाश मैं निरवयव पणाँ का ज्ञान होयही नहीं सकै तो इससैं नित्य पणाँ कैसैं सिद्ध होसकै ज्यो कहो कि आकाश का धर्म अवकाश है सो सर्वत्र प्रतीत होय है कँहीं प्रत्यक्ष प्रतीत होय है कहीं अनुमान तैं प्रतीत होय है तो सर्वत्र अवकाश की प्रतीति होणैं तैं आकाश मैं व्यापक पणाँ सिद्ध होगा व्यापक पणाँ सिद्ध होणैं तैं निरवयव पणाँ सिद्ध होगा निरवयव पणाँ सिद्ध होणैं तैं नित्यपणाँ सिद्ध होगा तो हम कहैंहैं कि अवकाश की प्रतीति सर्वत्र नहीं है देखो सुषुप्ति अवस्था मैं अवकाश की प्रतीति नहीं है तो अवकाश की सर्वत्र प्रतीति नहीं होणैं तैं आकाश व्यापक सिद्ध नहीं होगा किन्तु परिच्छिन्न सिद्ध होगा परिच्छिन्न सिद्ध होणैं तैं सावयव सिद्धहोगा सावयव होणैं तैं घटकी तरैंह कार्य मानणाँ

पड़ैगा तो कार्य न तो अवयव समुदाय रूप सिद्ध हो सकै और नैं कारण-तैं विलक्षण सिद्ध होसकै और नैं कारण का परिणाम सिद्ध होसकै ये पहिलें कहिआये हैं तहाँ युक्ति बी कही ही है यातैं आकाश सिद्ध होय ही नहीं सकै ।

ज्यो कहो कि सुषुप्ति मैं तो ज्ञान नहीं है यातैं अवकाश की प्रतीति नहीं है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान नहीं होय तो अज्ञान का अनुभव नहीं हो सकैगा अज्ञानका अनुभव नहीं होगा तो जाग करिकैं अज्ञान का स्मरण होय है सो नहीं हो सकैगा ज्यो कहो कि इस मैं दृष्टान्त कहा है तो तुम हीं दृष्टान्त हो ज्यो सुषुप्ति मैं ज्ञान नहीं होता तो तुम सुषुप्ति मैं अज्ञान कहते ही नहीं काहे तैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं अज्ञान का अनुभव नहीं होय तो जागृत् अवस्था मैं अज्ञान का स्मरण होय नहीं ज्यो स्मरण नहीं होय तो सुषुप्ति मैं अज्ञान रहै है ये कथन बणैं हीं नहीं सकै और विवेक करिकैं देखो तो अवकाश तो दीखै ही नहीं ज्यो कहो कि हमकूँ तो अवकाश प्रत्यक्ष दीखै है तो हम पूछैं हैं कि प्रकाश और अन्धकार के विना तुमनैं अवकाश का स्वरूप कहाँ देखा है यातैं आकाश का मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब जैसैं आकाश सिद्ध न हुवा तैसैं काल और दिशा बी सिद्ध नहीं होगे काहेतैं कि तुमनैं काल और दिशा इन कूँ बी नित्य व्यापक और निरूप मानैं हैं तो जिस युक्ति तैं आकाश नित्य व्यापक सिद्ध न हुवा उस ही युक्ति तैं तैसैं हीं काल और दिशा बी सिद्ध नहीं हो सकैंगे देखो शिरोमणि भट्टाचार्य नैं बी पदार्थतत्व नाम ग्रन्थ मैं—

"दिक्कालौ नेश्वरादतिरिच्येते,,

ऐसैं लिखा है इस का अर्थ ये है कि दिशा और काल ये ईश्वर तैं जुदे नहीं हैं और ये बी लिखा है कि—

" शब्दनिमित्तकारणत्वेन कल्पितस्य ईश्वर-स्यैव शब्दसमवायिकारणत्वम्,,

इसका अर्थ ये है कि शब्द का निमित्त कारण मान्याँ ज्यो ईश्वर सो ही शब्द का समवायि कारण है इस तैं ये सिद्ध हुवा कि आकाश बी

ईश्वर तैं जुदा नहीं है इस मैं विशेष विचार देखणैं की इच्छा होय तो पण्डित रघुदेव की किई पदार्थतत्व की टीका है उस मैं देखो यातैं आकाश काल ओर दिशा इन का मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब कहो तुम आत्मा किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि हम आत्मा-दोय प्रकार के मानैं हैं तहाँ एक तो परमात्मा है ओर दूसरा जीवात्मा है तहाँ परमात्मा तो एक ही है ओर जीवात्मा प्रति शरीर जुदा है ओर व्यापक है ओर नित्य है ओर परमात्मा वी व्यापक है ओर नित्य है पर-मात्मा मैं सङ्ख्या १ परिमाण २ पृथक्त्व ३ संयोग ४ विभाग ५ ज्ञान ६ इच्छा ७ यत्न ८ ये गुण रहैं हैं ओर जीव मैं आठ तो परमात्मा मैं गुण बताये वे रहैं हैं ओर सुख १ दुःख २ द्वेष ३ धर्म ४ अधर्म ५ भावना नाम संस्कार ६ ये छै गुण ऐसैं चतुर्दश गुण रहैं हैं ओर परमात्मा मैं ज्ञान इच्छा यत्न नित्य हैं ओर जीव मैं ये गुण अनित्य हैं ओर परमात्मा कर्त्ता है ओर भोक्ता नहीं है ओर जीवात्मा कर्त्ता वी है ओर भोक्ता वी है तो हम पूछैं हैं कि ईश्वरकूँ तुम कोन प्रमाण तैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष प्रमाण तैं सिद्ध करैं हैं तो हम पूछैं हैं कि बाह्य इन्द्रियों सैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है अथवा मन तैं ज्यो कहो कि बाह्य इन्द्रियों तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि तुम बाह्य इन्द्रियाँ सैं सावयव द्रव्य का प्रत्यक्ष मानौं हो ईश्वर तो तुमारे मत मैं निरवयव द्रव्य है ज्यो कहो कि मन तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है तो ये वी कथन असङ्गत है काहे तैं कि ज्यो मन तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय तो ईश्वर मैं सुखादिककी तरैंह अनित्यपणाँ मानणाँ पडैगा तुमारे मत मैं सुख अनित्य है ओर मन तैं जाणयाँ जाय है ज्यो कहो कि अनुमान तैं ईश्वर कूँ सिद्ध करैं हैं तो तुमारै अनुमान ऐसा है कि जैसैं घट ज्यो है सो कार्य है यातैं कर्त्ता सैं पैदा हुवा है तैसैं पृथिव्यादिक वी कार्य हैं यातैं कर्त्तातैं पैदा भये हैं इस अनुमान तैं पृथिव्यादिक मैं कर्त्ता सैं पैदा होणाँ सिद्ध करो हो तो ओरतो कर्त्ता पृथिव्यादिक का कोई बणाँ सकै नहीं यातैं इन का कर्त्ता ईश्वर मानौं हो तो हम पूछैं हैं कि तुम कर्त्ता किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि कृतिका अर्थात् यत्न का आश्रय होय सो कर्त्ता तो हम पूछैं हैं कि जीव का यत्न तुम अनित्य मानौं हो तो उस यत्न की तुम उत्पत्ति वी मानौं होंगे तो वो यत्न वी कार्य ही होगा

ज्यो यत्न कार्य हुवा तो यत्न कर्त्ता जीवकूँ हीँ मानोगे ज्यो जीव कर्त्ता हुवा तो जीवमैं कर्त्तापणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ इस यत्नतैं जुदा और ही यत्न मानोगे अथवा उस यत्न सैं हीँ जीवकूँ कर्त्ता सिद्ध करोगे ज्यो कहो कि और ही यत्न मानैंगे तो उस यत्नकूँ वी कार्य ही मानणाँ पडैगा तो अनवस्था होगी यातैं जीवकूँ कर्त्ता मानणाँ सिद्ध न हुवा ज्यो कहो कि उस हीं यत्नसैं जीवकूँ कर्त्ता सिद्ध करैंगे तो वो यत्न तो कार्य है और कर्त्ता कार्यतैं पूर्व सिद्ध होय तब कार्यकूँ पैदा करै है ये तुमारा नियम है और यत्न विना कर्त्ता हो सकै नहीँ यातैं जीव कर्त्ता सिद्ध न हुवा ज्यो जीव कर्त्ता न हुवा तो ईश्वर मैं कर्त्तापणाँ सिद्ध करणैं का दृष्टान्त सिद्ध न हुवा दृष्टान्त सिद्ध नहीँ होणैंतैं ईश्वरकूँ कर्त्ता सिद्ध करणैं का अनुमान सिद्ध न हुवा ।

और कहो कि तुम ईश्वर मैं यत्न मानि करिकैं कर्त्ता पणाँ मानौं हो तो यत्न एक मानौं हो अथवा नाना यत्न मानौं हो ज्यो कहो कि एक ही यत्न मानैं हैं तो सृष्टि स्थिति प्रलय इनमैंतैं एक ही निरन्तर सिद्ध होणाँ चाहिये ज्यो कहो कि नाना यत्न मानैं हैं तो सृष्टियत्न स्थितियत्न प्रलययत्न ये नित्य मानणैं पडैंगे तो ये परस्पर बिरुद्ध होणैंतैं सृष्टि स्थिति प्रलय इनमैं तैं एक वी सिद्ध नहीँ हो सकैगा ज्यो कहो कि यत्न तो एक ही मानैं हैं परन्तु जिस क्रमतैं सृष्टि स्थिति प्रलय होयँ हैं उनके अनुकूल उस यत्न का स्वरूप मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ देखि करिकैं ईश्वर मैं उनकै अनुकूल यत्न कल्पना करो हो अथवा ईश्वर मैं वैसा यत्न है यातैं उसकै अनुकूल सृष्टि स्थिति प्रलय मानौं हो ज्यो कहो कि सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ देखि करिकैं इनकै अनुकूल यत्न कल्पना करैं हैं तो हम कहैं हैं कि परमेश्वर के अचिन्त्य अलौकिक ज्ञाननैं जिस प्रकारतैं सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ विषय किये हैं तैसैं हीँ सृष्टि स्थिति प्रलय होयँ हैं ऐसैं हीँ कल्पना करो तो कहा हानि है ज्यो कहो कि हानि नहीँ तो गुण वी तो नहीँ कि जातैं ऐसैं कल्पना करैं तो हम कहैं हैं कि देखो ईश्वर मैं यत्न वी नहीँ मानणाँ पडा और सृष्टि स्थिति प्रलय वी सिद्ध हो गये लाघव वी हुवा और कार्य वी हो गया और ईश्वरकूँ कर्त्ता वी नहीँ मानणाँ पडा और ईश्वर विना कार्य हुये वी नहीँ इसके सिवाय अर्थात् इससैं अधिक तुम कोनसा गुण चाहो हो सो कहो जो कहो कि इस कल्पना मैं गुण तो

बहुत हैं परन्तु हमारे मतमैं ईश्वर मैं नित्य यत्न होनें तैं कर्त्तापणाँ मान्याँ है सो सिद्ध न हुवा इतनीं सी हानि है तो हम कहैंहैं कि बहुगुण लाभमैं अल्प हानिकी दृष्टि कोई बी विवेकी मनुष्य करै नहीं यातैं ये दृष्टि तुमारै बी नहीं होणीं चाहिये ज्यो कहो कि इस कल्पना सैं तो हमारा मत नष्ट होय है यातैं ऐसैं मानैंगे कि ईश्वर मैं जैसा यत्न है उसके अनुकूल सृष्टि स्थिति प्रलय होयँ हैं तो हम कहैं हैं कि उस यत्न का प्रत्यक्ष तो होय नहीं यातैं जीवकूँ दृष्टान्त बणाय करिकैं ईश्वर मैं यत्न सिद्ध करोगे सो जीवमैं कर्त्तापणाँ पहिलैं कही युक्तितैं सिद्ध नहीं यातैं ऐसैं मानणाँ असङ्गत है ।

और विचार करो कि जीवकूँ कर्त्ता मानि बी लेवो तो बी जीवके दृष्टान्त तैं ईश्वर मैं कर्त्तापणाँ मानणाँ तुमारे मतसैं हीं सिद्ध हो सकै नहीं काहेतैं कि तुमनैं हीं ऐसैं मान्याँ है कि जीवमैं प्रथम इष्टसाधनता ज्ञान अर्थात् ये मेरा सुखसाधन है ऐसा ज्ञान होय है पीछैं इच्छा होय है पीछैं यत्न होय है पीछैं कार्य होय है अब ज्यो ईश्वर मैं जीवके दृष्टान्त सैं कर्त्तापणाँ सिद्ध करोगे तो प्रथम इष्टसाधनताज्ञान ईश्वर मैं मानणाँ पड़ैगा सो ज्ञान ईश्वर मैं बण सकै नहीं काहेतैं कि ईश्वर मैं तुम सुख मानों नहीं और इष्ट नाम सुखका है तो ईश्वर मैं सुखसाधनताज्ञान कैसैं हो सकै अब ज्यो ईश्वर मैं इष्टसाधनताज्ञान नहीं तो इच्छा कहाँ और इच्छा नहीं तो यत्न कहाँ ज्यो यत्न नहीं तो ईश्वर तुमारे मतसैं हीं कर्त्ता कैसैं सिद्ध होसकै ।

और कहो कि तुम ईश्वर मैं जे ज्ञान इच्छा यत्न हैं तिनकूँ समुदित कारण मानों हो अथवा व्यस्त अर्थात् अलग अलग कारण मानों हो ज्यो कहोकि अलग अलग कारण मानैं हैं तो ज्ञान इच्छा यत्न इनमैं तैं एकसैं हीं जगत् हो जायगा तो दोय व्यर्थ होयँगे अर्थात् ज्ञानसैं हीं जगत् सिद्ध होगा तो इच्छा और यत्न ये व्यर्थ होयँगे और इच्छा तैं हीं जगत् होगा तो ज्ञान और यत्न ये व्यर्थ होंगे और ज्यो यत्न सैं हीं जगत् होगा तो ज्ञान और इच्छा ये व्यर्थ होंगे ज्यो कहो कि दोय व्यर्थ होते हैं तो हो हम एकतैं हीं जगत् की उत्पत्ति मानैंगे तो ईश्वर कर्त्ता सिद्ध हो गया तो हम कहैं हैं कि विनिगमना नहीं होनें तैं इन ज्ञान इच्छा यत्नों मैं किसी बी एक सैं जगत्

की उत्पत्ति नहीं हो सकै ज्यो कहो कि ईश्वर के ज्ञान इच्छा यत्न ये समुदित कारण हैं तो हम पूछैं हैं तुम हीं कहो इनकूँ समुदित कैसैं मानौं हो ज्ञान इच्छा यत्न ऐसैं समुदित मानौं हो अथवा इच्छा यत्न ज्ञान ऐसैं समुदित मानौं हो अथवा यत्न ज्ञान इच्छा ऐसैं समुदित मानौं हो अथवा इच्छा ज्ञान यत्न ऐसैं समुदित मानौं हो अथवा ज्ञान यत्न इच्छा ऐसैं समुदित मानौं हो अथवा यत्न इच्छा ज्ञान ऐसैं समुदित मानौं हो तो विनिगमना नहीं होणैं तैं इनमैं तैं कोई प्रकार सैं वी समुदित नहीं मान सकोगे यातैं ज्ञान इच्छा यत्न इनकूँ समुदित कारण मानणाँ नहीं वणैं सकै तो ईश्वर कर्त्ता कैसैं हो सकै।

ज्यो कहो कि—

" सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ,,

ऐसैं तैत्तिरीय उपनिषद् मैं श्रुति है तो सत्य नाम नित्य का है और ज्ञान नाम चैतन्य का है अनन्त शब्द व्यापककूँ कहै है तो इस श्रुति का अर्थ ये हुवा कि ब्रह्म ज्यो परमात्मा सो नित्य है और चैतन्य है और व्यापक है सो परमात्मा मैं ज्ञान सिद्ध हो गया और ऐतरेय उपनिषद् मैं—

" स ईक्षत लोकान्नु सृजा ,,

ऐसैं लिखा है इसका अर्थ ये है कि वो देखता हुवा लोकाँकूँ रचणैं की इच्छा करिकैं तो परमात्मा मैं इच्छा सिद्ध हो गई और तैत्तिरीय उपनिषद् मैं लिखा है कि—

"स तपोऽतप्यत स तपस्तप्त्वा सर्वमसृजत यदिदं किंञ्चन ,,

इसका अर्थ ये है कि वो तप करता हुवा वो तप करिकैं सर्वकूँ पैदा करता हुवा ज्यो ये कुछ है तो परमात्मा मैं यत्न सिद्ध हो गया यातैं परमात्मा मैं ज्ञान इच्छा यत्न मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ऐसैं श्रुति के कथन तैं ईश्वर मैं ज्ञान इच्छा यत्न मानौं तो हमारै कुछ वी विवाद नहीं काहे तैं कि उन हीं उपनिषदों मैं श्वेताश्वतर शाखा है तहाँ ऐसैं लिखा है कि—

" तस्मान्मायी सृजते विश्वमेतत् ,,

इसका अर्थ ये है कि माया करिकैं युक्त परमात्मा इस विश्वकूँ पैदा करे है तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि परमात्माके निज रूप मैं कर्त्तापणाँ नहीँ है मायारूप उपाधि की दृष्टितैं परमात्मा मैं कर्त्तापणाँ है और तैत्तिरीय उपनिषद् मैं लिखा है कि—

" सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेय ,,

इस का अर्थ ये है कि वो इच्छा करता हुवा बहुत होवूँ पैदा होवूँ तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि परमात्मा हीँ बहुत हुवा है जगत् रूप करिकैं और मुण्डकोपनिषद् मैं लिखा है कि—

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलिङ्-
गाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपास्तथाऽक्षराद्विवि-
धाः सौम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवाऽपि-
यन्ति ,,

इसका अर्थ ये है कि सो ये सत्य है जैसैं प्रज्वलित अग्नि तैं विस्फुलिङ्ग अर्थात् तणँगारा हजारौं पैदा होँयँ हैं सदृश तैसैं परमात्मा तैं नाना प्रकार के हे सौम्य भाव अर्थात् पदार्थ पैदा होँयँ हैं उस ही मैं प्रवेश कर जायँ हैं तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि जैसैं अग्नि तैं उत्पन्न अग्नि के कणँ जे हैं ते अग्नि हीँ हैं तैसैं परमात्मा तैं उत्पन्न ज्यो जगत् सो परमात्माहीँ है और उन हीँ श्रुतियौं मैं ऐसैं लिखा है कि वो परमात्मा हीँ जीव हो करिकैं देहमैं प्रवेश किया है जीव शब्द का अर्थ प्राणौंका धारण करणैं वाला ऐसा है यातैं शरीर मैं प्रवेश किया परमात्मा जीव नामकूँ पाया है अब ज्यो श्रुतिके कथन तैं परमात्मा मैं ज्ञान इच्छा यत्न मानौं तो श्रुतिवैं हीँ जीव और जगत् इनकूँ परमात्माहीँ मानौं तो सारे विवाद मिट जावैं और परमानन्द तैं पूर्ण हो जावो परन्तु जिनके भेदके संस्कार दृढ़ हैं तिनके ऐसैं मानणाँ कठिन है और ज्यो कदाचित् कोई प्रकार तैं मानि वी लेवैं तो ऐसैं जाणणाँ अत्यन्त ही कठिन है।

अब कहो तुम नैं श्रुति के मेलवैं परमात्मा मैं ज्ञान इच्छा यत्न मानैं सो तो ठीक है परन्तु इनकूँ नित्य कैसैं कहो हो ज्यो कहो कि

जीव के ज्ञान इच्छा यत्न अनित्य हैं यातैं परमेश्वर मैं जीव की अपेक्षा ये ही विलक्षणपणाँ है कि उस मैं ये गुण नित्य हैं तो हम कहैं हैं कि तुम ईश्वर बणाँवो हो अथवा ईश्वर जैसा है तैसा वर्णन करो हो ज्यो कहो कि हम तो ईश्वर बणावैं नहीं किन्तु ईश्वर है तैसा वर्णन करैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुम ही विचार करो एक मैं बहुत हो जावूँ ये इच्छा ईश्वर मैं प्रलय समय मैं कैसैं बणँ सकै ज्यो प्रलय समय मैं ये इच्छा परमेश्वर मैं रहै तो प्रलय होवै ई नहीं काहेतैं कि श्रुति परमेश्वरकूँ सत्यसङ्कल्प वर्णन करै है यातैं प्रलय काल मैं सृष्टि हो जाय ज्यो कहो कि प्रलयकाल मैं सारे पदार्थों के अभाव रहैं हैं यातैं अभावों की सृष्टि मानि लेवैंगे तो हम कहैं हैं कि प्रलय काल मैं तो अभाव ओर भाव तुमारे मानैं दोनूँ ही रहैं नहीं काहेतैं कि सृष्टि का पूर्वकाल ओर सृष्टि का उत्तर काल इनका नाम प्रलय है तो सृष्टि के आदि की ये श्रुति है कि—

"सदेव सौम्येदमग्र आसीत्,,

इसका अर्थ ये है कि पूर्व काल मैं हे सौम्य ये जगत् सत् नाम परमात्मा ही हुवा तो इस श्रुति मैं एव शब्द है इसका अर्थ भाषा के माँहिं ही ऐसा है तो इस शब्द का ये स्वभाव है कि ये शब्द जिस शब्द कै अगाडी होय उस शब्द का ज्यो अर्थ उससैं जुदे पदार्थों के निषेधकूँ कहै है जैसैं यहाँ घट ही है इस वाक्य मैं ही शब्द घट शब्द कै अगाडी है तो घट पदार्थ तैं जुदे पदार्थों के निषेधकूँ कहै है तैसैं सृष्टि के आदि की श्रुति मैं ये शब्द अर्थात् ही इस अर्थ का कहणें वाला एव शब्द सत् शब्द कै अगाडी है तो सत् तैं जुदे सर्व पदार्थों के निषेधकूँ कहैगा तो प्रलय मैं अभावों की सृष्टि कैसैं हो सकै ओर—

"सर्वे आत्मानः समर्पिता निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति,,

ये प्रलयकाल की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि सारे आत्मा अर्पण किये परमात्मा का परम साम्य अर्थात् परमात्मा का अभेद प्राप्त होय है ज्यों कहो कि साम्य शब्द तो सदृश पणेंकूँ कहै है आप इस का अभेद अर्थ कैसैं कहो हो तो हम कहैं हैं कि हम तो साम्य शब्द का अर्थ अभेद

नहीं कहैं किन्तु परमसाम्य शब्द का अर्थ अभेद कहैं हैं उस सैं भिन्न और उसके बहुत धर्मों करिकैं युक्त होय सो तो सम और ज्यो यो ही होय सो परम सम ज्यो कहो कि ये अर्थ आप कोन अनुभवतैं करो हो तो हम कहैं हैं कि सृष्टि के आदि की श्रुति के अर्थ के अनुभव तैं करैं हैं ज्यो ऐसा अर्थ न करैं तो सृष्टि के आदि की श्रुति और प्रलय की श्रुति इन दोनूँ श्रुतियों की एक वाक्यता अर्थात् एकार्थकता होय नहीं ज्यो कहो कि ये दोनूँ श्रुति तो भिन्न समय की हैं यातैं एकार्थकता करणाँ निष्फल है तो हम कहैं हैं कि सृष्टि का आदि और सृष्टि का अन्त सृष्टि के न होणों मैं बराबर हैं ज्यो कहो कि आदि और अन्त बराबर कैसैं हो सकै तो हम कहैं हैं कि आदि अन्त व्यवहार तो आपेक्षिक है सृष्टि के न होणैं के काल तो दोनूँ हीं हैं ज्यो कहो कि आदि अन्त व्यवहार आपेक्षिक है तो आदि अन्त मैं अन्त आदि व्यवहार भी होणाँ चाहिये तो हम कहैं हैं कि देखो सृष्टि का पूर्व काल पूर्व सृष्टि की अपेक्षा प्रलयकाल है और इस सृष्टि की अपेक्षा सृष्टि का आदि काल है ऐसैं हीं भविष्यत् प्रलय मैं समुझो. ज्यो कहो कि इस सृष्टि के पूर्व भी सृष्टि रही इस मैं कहा प्रमाण तो हम कहैं हैं कि—

"धाता यथापूर्वमकल्पयत्,,

ये श्रुति प्रमाण है इस का अर्थ ये है कि परमेश्वर नैं जैसैं पहिलैं जगत् रचा तैसैं ही जगत् रचदिया ज्यो कहो कि भविष्यत् प्रलय के पीछैं भी सृष्टि होगी इस मैं कहा प्रमाण तो हम कहैं हैं कि भूत प्रलय के पीछैं ये सृष्टि भई तैसैं ही सृष्टि भविष्यत् प्रलय के पीछैं भी होगी ये अनुभव ही प्रमाण है अब विचार करि कैं देखो कि प्रलय काल मैं परमात्मा मैं इच्छा सिद्ध न भई तो ईश्वर की इच्छा नित्य कैसैं मानी जाय ईश्वर की इच्छा नित्य सिद्ध न भई तैसैं ईश्वर का यत्न भी नित्य सिद्ध नहीं होगा ज्यो कहो कि ईश्वर का ज्ञान भी इच्छा और यत्न इन की सरीखैं अनित्य मानणाँ पड़ैगा तो हम कहैं हैं कि परमात्मा का ज्ञान अनित्य नहीं है किन्तु नित्य है ज्यो कहो कि न्यायशास्त्र का मत ये है कि विषय के नहीं होणैं तैं ज्ञान का ज्ञानपणाँ रहै नहीं तो प्रलय काल मैं कोई भी भाव अभाव नहीं होणैं तैं ईश्वर का ज्ञान नित्य कैसैं मान्याँ जाय तो हम कहैं हैं कि ईश्वर का ज्ञान प्रलय काल मैं ईश्वरकूँ हीं विषय करैगा यातैं विषय का न होणाँ न हुया यातैं ईश्वर का ज्ञान नित्य है ज्यो कहो

कि परमात्मा का ज्ञान परमात्माकूँ विषय करै है यामैं प्रमाण कहा तो हम कहैं हैं कि गीता के दशम अध्याय मैं अर्जुन नैं कही है कि—

"स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम,,

इस का अर्थ ये है कि हे पुरुषोत्तम आप ही आप सैं आपकूँ जानैं हो ज्यो कहो कि इस कथन तैं तो परमात्मा ज्ञानरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि इस कथन मैं जाणणाँ और जाणणैंवाला और जाण्याँ गया ये तीनूँ एक मालुम होय हैं तो ईश्वर मैं ज्ञान सिद्ध न हुवा किन्तु ईश्वर ज्ञानरूप सिद्ध हुवा तो न्याय शास्त्र मैं ईश्वरकूँ नित्य ज्ञान का आश्रय कहा है सो कैसैं हो सकै इसका उत्तर कहा तो हम कहैं हैं कि इसका उत्तर तो न्यायशास्त्र के आचार्यौंकूँ पूछो उननैं हीं ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय कहा है देखो उननैं इतना वी विचार न किया कि ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय मानैंगे तो ईश्वर जड़ सिद्ध होगा काहेतैं कि उननैं ज्ञानकूँ गुण मान्याँ है और ईश्वरकूँ द्रव्य मान्याँ है तो ईश्वर चैतन्य तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जड ही सिद्ध होय जैसैं उन के मत मैं ज्ञान तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जीव ज्यो है सो जड़ है याहीतैं मुक्तावस्था मैं जीव की जडरूप करिकैं स्थिति न्यायशास्त्र मैं मानी है ऐसैं परमात्मा ज्ञान रूप तो सिद्ध होगया।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुम परमात्मा मैं सुख नहीं मानैं हो सो कोन प्रमाण तैं नहीं मानैं हो ज्यो कहो कि—

"असुखम्,,

ये श्रुति है इस का अर्थ ये है कि परमात्मा मैं सुख नहीं है तो हम कहैं हैं कि—

"प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म,,

ये ब्रहदारण्यक की श्रुति है इस का अर्थ ये है कि ब्रह्म जो परमात्मा सो ज्ञान रूप है और आनन्द रूप है तो परमात्मा मैं आनन्द सिद्ध हो गया ज्यो कहो कि—

"असुखम्,,

इस श्रुत की कहा गति होगी तो हम कहैं हैं कि इस श्रुति की एक गति तो ये है कि सुख नाम विषय सुख का है तो असुख शब्द करिकैं

श्रुति परमात्मामैं विषय सुख का निषेध करै है ज्यो कहो कि सुख आनन्द ये दोनूँ शब्द तो पर्याय हैं अर्थात् एक ही अर्थ के कहणैं वाले हैं तो इस श्रुति की दूसरी गति ये है कि परमात्मामैं सुखके आधारपणाँका निषेध करै है अर्थात् परामात्माकूँ सुखरूप कहैहै ऐसैं परमात्मा सच्चिदानन्द रूप सिद्ध हुवा।

ज्यो कहो कि परमात्मा सच्चिदानन्दरूप हुवा तो जीव सच्चिदानन्द कैसैं होय ये तो अनित्यज्ञानवाला है और नानाप्रकार के दुखोंकूँ भोगणैंवाला है तो हम पूछैं हैं कि तुम जीव का स्वरूप जड मानौं हो तो तुमनैं जीव का जडपणाँ देखा है अथवा नहीं ज्यो कहो कि जीव का जडपणाँ हमनैं देखा है तो हम पूछैं हैं कि तुमनैं जीव का जडपणाँ किस समय मैं देखा है ज्यो कहो कि सुषुप्तिमैं देखा है तो हम कहैं हैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान सिद्ध होगया काहेतैं कि ज्यो सुषुप्तिमैं ज्ञान न होता तो जडपणाँकूँ कैसैं जाणँते ज्यो कहो कि नहीं देखा है तो सुषुप्तिमैं जीवकूँ जड कहणाँ असङ्गत हुवा काहेतैं कि जागणैं के पीछैं तुमकूँ ऐसा ज्ञान होय है कि मैं जड होकर सूता रहा तो ये ज्ञान अनुभव है अथवा स्मरण है सो कहो ज्यो कहो कि अनुभव है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि अनुभव तो विषय मौजूद होय तब होय है सो जीव का जडपणाँ जागृत अवस्थामैं मौजूद नहीं यातैं मैं जड होकर सूता रहा ये ज्ञान अनुभव होसकै नहीं ज्यो कहो कि स्मरण है तो हम पूछैं हैं कि स्मरण अनुभव होय तिसका ही होय है अथवा जिसका अनुभव न होय उसका भी स्मरण होय है ज्यो कहो कि जिसका अनुभव न होय उसका भी स्मरण होय है तो हम कहैं हैं कि तुमकूँ सारे जगत् के पदार्थों का स्मरण होणाँ चाहिये काहेतैं कि तुमकूँ सारे जगत् के पदार्थों का अनुभव नहीं है ज्यो कहोकि अनुभव होय उसका ही स्मरण होयहै तो तुमारा जडपणाँ सुषुप्ति मैं नहीं दीखा है ये कथन असङ्गत हुवा काहेतैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं जडपणाँ का अनुभव न होय तो जागृत् अवस्था मैं जडपणाँ का स्मरण कैसैं हो सकै यातैं सुषुप्तिसमय मैं तुमारे कथन तैं हीं जीवमैं ज्ञान सिद्ध होगया।

अब कहो तुम जीवके ज्ञानकूँ अनित्य मानौं हो तो जीवमैं ज्ञानकी उत्पत्ति भी मानौं होंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम ज्ञानके कारण किनकूँ

मानौं हो ज्यो कहो कि ज्ञानका समवायि कारण तो जीव है और असमवायि कारण जीवका और मनका संयोग है और ईश्वरकूं आदि लेकैं ज्ञान के निमित्त कारण हैं तो हम कहैं हैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान होणाँ चाहिये काहेतैं कि सुषुप्ति मैं सारे कारण मोजूद हैं ज्यो कहो कि और कारण तो सर्व मोजूद हैं परन्तु चर्म का और मनका संयोग ज्ञानसामान्य का अर्थात् सर्वज्ञानौंका कारण है सो सुषुप्ति मैं बणाँ सकै नहीं काहेतैं कि उस समय मैं मन पुरीतति नाम ज्यो नाडी तामैं प्रवेश कर जाय है उस नाडीमैं चर्म नहीं है तो हम पूछैं हैं कि जब मन पुरीतति मैं प्रवेश कर जाय है तब ज्ञान होवै नहीं तो अज्ञान रहेगा तो अज्ञान का प्रत्यक्ष तो तुम सुषुप्ति मैं मानोंगे नहीं काहेतैं कि बाह्य प्रत्यक्ष मैं तुम इन्द्रिय और मन इन के संयोगकूं कारण मानौं हो और मानस प्रत्यक्ष मैं आत्मा और मन इनका संयोग और चर्म और मन इन का संयोग ऐसैं दोय संयोगोंकूं कारण मानौं हो तो अज्ञान बाह्य पदार्थ तो है नहीं यातैं इन्द्रिय और मन इनके संयोग की अपेक्षा तो अज्ञान के प्रत्यक्ष मैं है नहीं तो अज्ञान के प्रत्यक्ष मैं मानसप्रत्यक्षकी ज्यो सामग्री उसकी अपेक्षा होगी सो बणाँ सकै नहीं काहेतैं कि यद्यपि पुरीतति मैं मन प्रवेश कर गया तब आत्मा का और मनका संयोग तो है परन्तु चर्म का और मन का संयोग नहीं है काहेतैं कि तुम पुरीतति मैं चर्म नहीं मानौं हो तो कहो तुम सुषुप्ति मैं अज्ञान कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष सामग्री नहीं है तो सुषुप्ति मैं अनुमान तैं अज्ञान सिद्ध करैंगे तो हम पूछैं हैं तुम बी अनुमान कहो परन्तु दृष्टान्त ऐसा कहो कि ज्यो तुमारे और हमारे दोनूंकै सम्मत होय अर्थात् जिस दृष्टान्तकूं तुम बी मानौं और हम बी मानैं ज्यो कहो कि जैसैं मूर्छा मैं द्वैत की प्रतीति नहीं है यातैं मूर्छामैं अज्ञान है तैसैं सुषुप्ति मैं बी द्वैतकी प्रतीति नहीं है यातैं अज्ञान है इस अनुमान तैं सुषुप्ति मैं अज्ञान सिद्ध होगया तो हम पूछैं हैं कि तुम मूर्छा मैं ज्यो अज्ञान है उसका बी प्रत्यक्ष तो मानोंगे नहीं यातैं मूर्छा मैं अज्ञानकूं किसके दृष्टान्त तैं सिद्ध करोगे ज्यो कहो कि सुषुप्ति के दृष्टान्त तैं सिद्ध करैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुमारी सुषुप्तिकूं दृष्टान्त करोगे अथवा अन्यकी सुषुप्तिकूं दृष्टान्त करोगे ज्यो कहोकि हमारी सुषुप्ति मैं तो बिवाद है यातैं अन्य की सुषुप्तिकूं दृष्टान्त करैंगे तो हम कहैं कि

तुमारा अनुभव विलक्षण है कि अपणीं सुषुप्तिकूं तो जाणें नहीं और अन्य की सुषुप्तिकूं जाणें है ज्यो कहो कि अन्य की सुषुप्ति का प्रत्यक्ष अनुभव तो है नहीं यातें ऐसा अनुमान करेंगे कि जैसें चेष्टा करिकैं रहित हूं यातें मैं सुषुप्तिवाला हूं तैसें अन्य पुरुष वी चेष्टा करिकैं रहित है यातें सुषुप्ति वाला है ऐसे अनुमान तैं अन्य पुरुष मैं सुषुप्तिकूं सिद्ध करेंगे तो हम कहैं हैं कि तुमारी सुषुप्ति का तुम अनुभव मानों ज्यो सुषुप्ति का तुम अनुभव नहीं मानोंगे तो इसके दृष्टान्त तैं अन्य की सुषुप्तिकूं कैसें सिद्ध करोगे यातें अपणीं सुषुप्ति मैं अनुभव मानणां हीं पडैगा ज्यो सुषुप्तिमैं अनुभव मान्यां तो उसकूं नित्य वी मानणां हीं पडैगा काहेतैं कि तुमनैं ज्यो ज्ञान की उत्पत्ति का कारण माना है वो सुषुप्ति मैं नहीं है अर्थात् चर्म का और मनका संयोग सुषुप्ति मैं नहीं है अब ज्यो सुषुप्तिका अनुभव नित्य सिद्ध हुवा तो जिसकूं जीव मान्यां सो परमात्मा हीं सिद्ध हुवा काहेतैं कि परमात्मा पहिलैं नित्यज्ञान रूप सिद्ध होगया है।

ज्यो कहो कि जीव नित्य ज्ञानरूप हुवा तो वी परमात्मा तैं तो भिन्न हीं है ऐसें मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम भेद कितनैं प्रकार के मानों हो ज्यो कहो कि भेद हम तीन प्रकार के मानैं हैं तिनमैं एक तो स्वगत भेद है जैसें वृक्ष मैं पत्र पुष्पादिक के कमती ज्यादा होणें तैं भेद मालुम होय है और दूसरा सजातीय भेद है सो एक वृक्ष मैं दूसरे वृक्षका भेद है और तीसरा विजातीय भेद है सो वृक्ष मैं पाषाणादिक का भेद है सो जीव सावयव नहीं यातें तो जीवमैं स्वगत भेद बणें सकै नहीं और जीव परमात्मा सें विजातीय नहीं यातें जीव मैं विजातीय भेद नहीं है किन्तु सजातीय भेद है तो हम कहैं हैं कि ये कथन तुमारा असङ्गत है काहेतैं कि किञ्चित् विलक्षणता विना भेद हो सकै नहीं ज्यो किञ्चित् विलक्षणता विना वी भेद होय तो आपका भेद आपमैं वी रहणां चाहिये यातें जीव परमात्मा हीं है।

ज्यो कहो कि जीव नित्यज्ञान रूप है तो वी जन्यज्ञानका आश्रय है ये ही जीव मैं परमात्मा तैं विलक्षणता है तो हम पूछैं हैं कि तुम जन्य ज्ञान किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि पुरीतति नाडी मैं तैं जव मन बाहिर आवै है तव आत्मा का और मनका ज्यो संयोग होय है उससैं ज्यो ज्ञान पैदा होय है सो जन्य ज्ञान है तो हम कहैं हैं कि आत्मा का और मनका

संयोग तो वर्णेंहीं नहीं काहेतैं कि आत्मा और मन इन दोनूँ द्रव्योंकूँ तुम निरवयव मानों हो और संयोगकूँ तुम अव्याप्यवृत्ति मानों हो अर्थात् संयोग का ये स्वभाव है कि ये जहाँ होवै उसके एक देशमैं तो आप रहै है और उस ही के अन्य देशमैं संयोग का अभाव रहै है जैसैं वृक्ष मैं वानर का संयोग है तो शाखा देशमैं है और मूल देशमैं नहीं है अब ज्यो आत्मा और मन इनका संयोग मानोंगे तो संयोग अव्याप्यवृत्ति नहीं हो सकैगा काहेतैं तुमारे मतमैं आत्मा और मन इनकूँ निरवयव मानैं हैं यातैं इनमैं देश वर्णे सके नहीं अब ज्यो आत्मा का और मनका संयोग नहीं होसका तो मनका माननाँवी असङ्गत हुवा काहेतैं तुमनैंमनके संयोग तैं आत्मा मैं ज्ञानकी उत्पत्ति मानी है सो मनका संयोग आत्मा मैं वर्णे सके नहीं यातैं मनका मानाणाँ व्यर्थ है।

ज्यो कहोकि इस समयमैं कितनैं हीं मनुष्य ऐसैं कहैं हैं कि संहिता ही वेद है सो संहिता मैं कहीं वी जीव और परमात्मा का अभेद वर्णन है नहीं यातैं इनका अभेद माननाँ असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि वाजसनेय संहिता मैं पुरुष सूक्त है जिसका पाठ परमात्माके नैवेद्य अर्पण करणैं के समय मैं सकल ब्राह्मण करैं हैं उसमैं ये मंत्र है कि—

“ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति „

इसका अर्थ ये है कि ये ज्यो दीखता है सो और ज्यो होगया सो और ज्यो होगा सो सर्व पुरुष ही अर्थात् परमात्मा हीं है ज्यो अन्न करिकैंअर्थात् अन्नका विकार ज्यो शरीर ता करिकैं ढका है सो अमृतत्वका अर्थात् मोक्षका स्वामी है तो इस श्रुतिका तात्पर्य ये हुवा कि भूत भविष्यत् वर्त्तमान ज्यो सर्व है सो परमात्मा हीं है मोक्षका स्वामी वो शरीर सैं ढका है अर्थात् शरीर के होणें तैं अपणें निज सच्चिदानन्दरूप करिकैं नहीं दीखै है तो ये सिद्ध हुवा कि संहितावों मैं वी अभेद प्रतिपादन है ऐसे अर्थ के प्रतिपादक मन्त्र संहितावों मैं बहुत हैं हमनैं यहाँ ग्रन्थके विस्तरभयतैं नहीं लिखे हैं यातैं ज्यो ये कहै है कि संहिता मैं अभेद वर्णन नहीं है सो मूर्ख है और ज्यो ये कहै है कि उपनिषद् वेद नहीं हैं वो वी मूर्ख है काहेतैं कि उपनिषदोंकूँ वेदान्त नाम करिकैं सकल शिष्ट व्यवहार करते चले आवैं हैं

वेदान्त शब्द का वेद का अन्त भाग ये अर्थ है यातैं उपनिषद्‌ सर्व वेदही हैं।

ज्यो कहो कि सुषुप्ति मैं ज्यो आप मैं ज्ञान नित्य सिद्ध किया उसका वर्णन न्यायशास्त्र मैं नहीं है इसका कारण कहो अपि तो शारे सर्वज्ञ रहे तो हम कहैंहैं कि न्याय शास्त्र मैं उस ज्ञानकूँ अनुव्यवसाय नाम ज्ञान कहैंहैं देखो अनुव्यवसाय ज्ञानकूँ स्वप्रकाश * कहा है और हम बी सुषुप्ति

---

* ज्यो कहो कि न्याय मतवाले तो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश मानैं नहीं जब घटादिक का प्रकाश घटादिक के ज्ञान तैं होय है उस काल मैं घटादिक का प्रकाश भयें बी घटादिक का ज्ञान और इसका आश्रय आत्मा इन दोनूँ का प्रकाश होवै नहीं और जब अनुव्यवसाय ज्ञान होय है तब घटादि विषय सहित और आत्म सहित घटादि ज्ञान का प्रकाश होवै है परन्तु अनुव्यवसाय का प्रकाश होवै नहीं और जब अनुव्यवसाय गोचर अनुव्यवसाय होय है तब प्रथम अनुव्यवसाय का प्रकाश होवै है और द्वितीय अनुव्यवसाय अप्रकाशित ही रहै है न्याय मत मैं घट का प्रकाश हो करिकैं "अयं घटः" ये व्यवहार होय है घट व्यवहार मैं घट ज्ञान के प्रकाश की अपेक्षा नहीं और जब घट ज्ञान का व्यवहार इष्ट होय तब अनुव्यवसाय सैं घट ज्ञान का प्रकाश हो करिकैं घट ज्ञान का व्यवहार होय है और अनुव्यवसाय के प्रकाश की अपेक्षा नहीं जो ज्ञानान्तर प्रकाशित ज्ञान सैं विषय का प्रकाश होवै तो न्याय मत मैं अनवस्था दोष होवै यातैं अप्रकाशित ज्ञान सैं ही विषय का प्रकाश होवै है ऐसैं न्याय मत मैं ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है—

तो हम कहैं हैं कि न्याय की ये प्रक्रिया है कि जब घटादिक का प्रत्यक्ष होय है तिस के पूर्व घट और घटत्व एतदुभयविषयक निर्विकल्पक ज्ञान होय है तदनन्तर "अयं घटः" इत्याकारकसविकल्पक ज्ञान होय है निर्विकल्पक ज्ञान का प्रत्यक्ष होवै नहीं ये अतीन्द्रिय है अतीन्द्रिय शब्द का अर्थ अप्रत्यक्ष है अर्थात् ये ज्ञान अनुमेय है तो इस कथन तैं ये अर्थ सिद्ध हुवा कि इस के अनन्तर जायमान सविकल्पक ज्ञान अतीन्द्रिय नहीं है अर्थात् इसका प्रत्यक्ष होय है तो हम पूछैं हैं कि प्रत्यक्षात्मक जितनैं सविकल्पक ज्ञान हैं उनका सर्व का प्रत्यक्ष होय है अथवा यत्कि-

ज्थित् ज्ञानौं का अर्थात् अयावज्ज्ञानौं का तो तुम ये ही कहोगे कि अ-यावज्ज्ञानौंका काहेतैं कि तुमनैं पूर्व ये कही है कि जव घटज्ञान का व्यव-हार इष्ट होय तव अनुव्यवसाय सैं घटज्ञान का प्रत्यक्ष होय है सो जिन जिन ज्ञानौं का व्यवहार इष्ट नहीँ होगा उन ज्ञानौं कोँ विषय करनैं वाले अनुव्यवसाय वी नहीँ होंगे ज्यो तत्तद्विषयक अनुव्यवसाय नहीँ भये तो वे वे ज्ञान अप्रत्यक्ष होंगे ओर उन ज्ञानौं सैं विषयोँ का प्रकाश मानौं हो तो उन मैं तो स्वप्रकाशता सिद्ध हो गई काहे तैं कि जो ज्ञान ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित हुवा विषय का प्रकाशक होय सो ही स्वप्रकाश ज्ञान है यातैं ही वेदान्त ग्रन्थौं मैं साक्षीकूँ स्वप्रकाश कहा है तो ये ज्ञान साक्षि रूप ही सिद्ध भये यातैं न्याय मत मैं कोई वी ज्ञान स्वप्रकाश नहीँ है ये कथन असङ्गत हुवा जो कहो कि स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ त्यागि करि कैं पारिभाषिक अर्थ करणैं का तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि यौगिक अर्थ करणैं मैं कर्मकर्तृ विरोध होय है यातैं इस अर्थ का त्याग किया है—

ओर देखो कि विद्यारण्य स्वामी नैं "अवेद्यत्वे सति अपरोक्षत्वम्" ये स्वप्रकाश का लक्षण कहा है इसका अर्थ ये है कि ज्ञानान्तर का अविषय हुवा प्रत्यक्ष होय सो स्वप्रकाश तो ये लक्षण वी अनिष्टव्यवहार जो घट ज्ञान तामैं न्यायमत सैं बणैं है काहे तैं कि न्याय मत मैं घट ज्ञानकूँ प्रत्यक्षात्मक तो मान्याँ हीँ है ओर जिन घट ज्ञानौं का व्यवहार इष्ट नहीँ न्याय की प्रक्रिया तैं वे घटज्ञान ज्ञानान्तर के विषय वी नहीँ हैं तो वे स्वप्रकाश सिद्ध हो गये जो कहो कि ज्ञान स्वप्रकाश है तो न्याय मैं इसका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश कैसैं मान्याँ है स्वप्रकाश वस्तु तो अपणैं प्रकाश मैं ज्ञानान्तर की अपेक्षा नहीँ करै है तो हम कहैं हैं कि स्वप्रकाश वस्तु अ-पणैं प्रकाश मैं ज्ञानान्तर की अपेक्षा करै है देखो वेदान्त मत मैं साक्षी स्व-प्रकाश है तो वी वृत्तिज्ञान सैं साक्षी का प्रकाश मान्याँ है यातैं हीँ ऐसैं कहैं हैं कि साधनसंपन्न पुरुष कूँ जब तत्वदर्शि पुरुष तत्वंपदार्थशोधन पूर्वक महावाक्योपदेश करै है तब उस जिज्ञासुकै "अहंब्रह्मास्मि" इत्या-कारक वृत्तिज्ञान का उदय होय है उससैं साक्षीका भान होय है अब तुम

कूँ स्वप्रकाश तो कहाहै परन्तु नित्य कहा नहीं तोहम कहैंहैं कि स्वप्रकाश

हीं पक्षपात रहित होइ करिकैं देखो ज्यो ज्ञानान्तरसैं प्रकाशित भयें स्वप्रकाशताकी असिद्धि होय तो वेदान्ती वृत्तिज्ञानसैं साक्षीका प्रकाश कैसैं मानैं यातैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

और देखो कि न्यायवालोंकी वचनभङ्गीतैं हीं ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होय है देखो न्यायके ग्रन्थोंमैं ऐसैं लिखा है कि जब ज्ञान का व्यवहार इष्ट होय तब ज्ञानान्तरसैं ज्ञानका प्रकाश होय है तो इस कथनका ये तात्पर्य हुवा कि ज्ञानमैं ज्ञानान्तरप्रकाश्यता व्यावहारिक है तो ये अर्थसिद्ध हो गया कि ज्ञानमैं परमार्थ सैं ज्ञानान्तरप्रकाश्यता नहीं है ज्ञान स्वप्रकाश है जो कहो कि विद्यारण्यस्वामीनैं पञ्चदशीके कूटस्थदीपमैं ऐसैं लिखा है कि "चैतन्यं द्विगुणं कुम्भे ज्ञातत्वेन स्फुरत्यतः अन्येऽनुव्यवसायाख्यमाहुरेतद्यथोदितम्" १ इस श्लोक के पूर्वार्द्ध मैं तो वेदान्तमतसैं स्वप्रकाश साक्षी का प्रतिपादन है और उत्तरार्द्ध सैं अपरौं निर्णय मैं शास्त्रान्तर की संमति दिखाई है—उत्तरार्द्ध का व्याख्यान रामकृष्ण ऐसैं करै है कि " यथोदितं यथोक्तमेतदेव ब्रह्मचैतन्यमन्ये तार्किका अनुव्यवसायाख्यं ज्ञानान्तरं प्राहुः" तो इस कथन तैं तो अनुव्यवसाय स्वप्रकाश सिद्ध होय है और पूर्वोक्त निर्णय सैं व्यवसाय ज्ञान हीं स्वप्रकाश सिद्ध हो गया तो स्वामी नैं व्यवसाय को त्याग करिकैं अनुव्यवसायकूँ स्वप्रकाश कहा इस का तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि वेदान्तसिद्धान्त मैं तो ज्ञान मैं औपाधिक भेद है स्वरूप तैं भेद नहीं है यातैं परमार्थतः ज्ञान एक ही है और ज्ञानान्तर सैं ज्ञान का प्रकाश नहीं है "अयं घटः" ये ज्ञान तो इदन्ताविशिष्ट घटत्वविशिष्ट घटविषयक है और "ज्ञातो घटः" ये ज्ञान ज्ञातत्वविशिष्टघटत्वविशिष्ट घटविषयक है तो जैसैं "ज्ञातो घटः" ये ज्ञान घट की इदन्ता का प्रकाशक नहीं है तैसैं "अयं घटः" ये ज्ञान घट की ज्ञातता का प्रकाशक नहीं है वृत्तिजितनैं अंश का आवरण नष्ट करै है ज्ञान विषय मैं उतनैं अंश का ही प्रकाश करै है शेष अंश आवृत ही रहै है विषय भेद तैं ज्ञान मैं भेद आरोपित है ये सिद्धान्त है परन्तु वेदान्तमत मैं वृत्ति मैं ज्ञानत्व का उपचार मान्याँ है और वृत्ति साक्षी सैं प्रकाशित होय है यातैं वृत्ति कूँ न्याय के मत मैं उक्त व्यवसाय के स्थान मैं मानि करि कैं साक्षी कूँ अनुव्यवसाय रूप कहा है।

जो कहो कि हमारे स्वप्रकाश शब्द का अर्थ अभिमत है कि प्रकाशरूप होय सो स्वप्रकाश तो ज्ञान यद्यपि विषय का प्रकाशक है तथापि प्रकाश रूप नहीं है यातैं स्वप्रकाश नहीं है तो हम कहैंहैं कि इस अर्थका श्रवण करिकैं तो पामर पुरुष वी हसित मुख होवै विद्वानौं की तो कथाही कहा है विचार तो करो देखो जगत् मैं ऐसे पदार्थ वी हैं कि आप प्रकाशरूपहैं और अन्य का प्रकाश करैं हैं जैसैं सूर्य अग्नि विद्युत्। और ऐसे पदार्थ वी हैं कि अपणैं स्वरूप का प्रकाश करैं हैं और अन्य के प्रकाशक नहीं हैं जैसैं अन्धकार मैं रत्न। और ऐसे पदार्थ वी हैं कि अन्य प्रकाशसैं प्रकाशित भयैं प्रकाशक होय हैं जैसैं दर्पण। और ऐसे पदार्थ वी हैं कि अन्यप्रकाश सैं प्रकाशित वी प्रकाशक नहीं होय है जैसैं घटादिक। परन्तु ऐसापदार्थ तो है ही नहीं कि अन्य के प्रकाश सैं अप्रकाशित और अप्रकाशरूप ऐसो वी प्रकाशक होवै यातैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

अत्र हम ये और पूछैं हैं कि अप्रकाशरूप ज्ञानसैं घटका प्रकाश मानौं हो तो वो प्रकाश ज्ञानरूप है अथवा घटरूप है अथवा दोनूँ तैं भिन्न है। ज्यो कहो कि ज्ञानरूप है तो हम कहैं हैं कि ज्ञानकूँ अप्रकाश रूप मान्याँ सो असङ्गत हुवा। ज्यो कहोकि घटरूप है तो हम कहैंहैं कि घट प्रकाशरूप नहीं है ये सर्वानुभव सिद्ध है तो प्रकाश अप्रकाश है ऐसैं कहणाँ होगा तो ये कथन विरुद्ध है। ज्यो कहो कि दोनूँ तैं भिन्न है तो हम कहैं हैं कि ज्ञान और अप्रकाशरूप घट इनतैं भिन्न घट प्रकाश तो अलीक है। ज्यो कहोकि घटका प्रकाश घट निष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता तद्रूप है तो हम कहैं हैं कि इस ज्ञानविषयताकूँ ज्ञानरूपा मानौं अथवा विषयरूपा मानौं अथवा दोनूँ तैं विलक्षण मानौं परन्तु अप्रकाशरूपा ही मानणीं होगी तो प्रकाश अप्रकाश है येही कथन सिद्ध होगा सो विरुद्ध है यातैं ज्ञानकूँ अथवा घटकूँ अथवा दोनूँतैं विलक्षण मानी ज्यो ज्ञान-विषयता ताकूँ प्रकाशरूपा मानणीं होगी अब घट और घटनिष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता इनकूँ तो प्रकाशरूप नहीं मान सकोगे काहेतैं कि घट तो पार्थिव है और घटनिष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता सो धर्म है यातैं ये तो प्रकाश रूप हो सकैं नहीं तो परिशेषसैं ज्ञानकूँ प्रकाशरूप मान्याँ जायगा तो

नित्य पणाँ कैसैं सिद्ध होय तो हम पूछैं हैं कि तुम नित्य किसकूँ कहो

ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया काहेतैं कि तुम नैं प्रकाशरूप होय सो स्व-प्रकाश ऐसैं कहा है—

और देखो कि ज्ञानका प्रकाशक ज्ञानान्तर नहीं है यातैं बी ज्ञान स्वप्रकाशरूप ही है यहाँ "विज्ञातारमरे केन विजानीयात्,, ये श्रुति बी प्रमाण है । ज्यो कहोकि ये श्रुति तो प्रकाश के करण का निषेध करे है ज्ञानमैं स्वप्रकाशता का वोधन करे नहीं तो हम कहैंहैं कि "न तत्र सूर्यः,, इस श्रुति मैं ज्ञानप्रकाश साधनों का निषेध करिकैं "तमेव भान्तमनुभाति सर्वम्,, ऐसैं कहा है तो "भान्तम्,, इसका "प्रकाशम्,, ये अर्थ है तो ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया । ज्यो कहोकि "भान्तम्,, ये विशेषण तो विज्ञाता का है तो विज्ञाता ज्यो है सो स्वप्रकाश सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि वेदान्त मत मैं ज्ञानहीं परमार्थतः ज्ञाताहै यातैं कोई दोष नहीं परंतु न्यायमत मैं ज्ञान विशिष्ट का नाम ज्ञाता है तो ज्ञाताके स्वरूप मैं दो भाग हैं तिनमैं ज्ञान तो विशेषण है और आत्मा विशेष्य है और विद्भिन्न होणें तैं आत्माकूँ जड मान्याँ है ज्ञाताके विशेष्य भागसैं तो स्वप्रकाशता वाधित है यातैं विशेषण ज्यो ज्ञान तामैं स्वप्रकाशता मानी जायगी तो ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया । और श्रुतिनैं ज्यो विज्ञाताकूँ स्वप्रकाश कहा तो जैसैं "घटाकाशो ध्वस्तः,, ये व्यवहार विशेषण धर्मका विशिष्ट मैं आरोप करिकैं संभवै है तैसैं ज्ञानरूप विशेषण मैं स्वप्रकाशता है तिसका ज्ञातामैं आरोप है ऐसैं मानों । और आरोप इष्ट नहीं होवै तो विशिष्ट के अधिकरण मैं विशेषण और विशेष्य उभय की अधिकरणता रहै है ऐसैं मानों जैसैं "नीलघटवद्भूतलम्,, यहाँ भूतल मैं नीलरूपाधिकरणता और घटाधिकरणता दोनूँ हैं भूतल मैं नीलरूप तो स्वसमवायिसंयोग सैं रहै है और घट संयोग सवन्ध सैं रहै है तैसैं आत्मा मैं स्वप्रकाशता तो स्वाश्रयसमवाय संबन्ध सैं रहै है और ज्ञान समवाय संवन्ध सैं रहैहै ऐसैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

और देखो कि न्यायमत सैं ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है ये व्यवहार ही संभवै नहीं यातैं बी ज्ञान स्वप्रकाश है देखो ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है ये व्यवहार ज्ञानमैं स्वप्रकाशत्वाभावका बोधक है और अभाव का लक्षण न्याय मैं प्रतियोगिज्ञानाधीनज्ञानविषयत्व है और ज्ञान का कारण विषय बी

है। ज्यो कहो कि निरवयव होय सो नित्य तो हम कहैं हैं कि रूपा

है तो प्रतियोगि ज्ञानके होणैं मैं प्रतियोगिसत्व की अपेक्षा होगी तो यहाँ प्रतियोगी है स्वप्रकाशत्व तिसका सत्व न्यायमत मैं कहीं प्रसिद्ध करणाँ चाहिये। और तुम ये कहो हो कि न्यायमत मैं कोई वी वस्तु स्वप्रकाश नहीं है तो स्वप्रकाशत्वकी अलीकतासैं तद्विषयक ज्ञानका असत्व होगा ज्यो ऐसा हुवा तो स्वप्रकाशत्व विषयक ज्ञान स्वप्रकाशत्वाभाव विषयक ज्ञानका कारण है तो कारण के नहीं होणैं तैं स्वप्रकत्वाभावज्ञान वी नहीं होगा ज्यो ये ज्ञान नहीं हुवा तो ये ज्ञान ज्ञानमैं स्वप्रकात्वाभाव वोधक व्यवहार का कारण है तो इसके नहीं होणैं तैं इस व्यवहार का असंभव ही है ज्यो ये व्यवहार असिद्ध हुवा तो ये व्यवहार ज्ञान स्वप्रकाश है इस व्यवहार का प्रतिवन्धक है तो इस प्रति वन्धक के अभाव सैं ज्ञान स्वप्रकाश है ये व्यवहार निर्वाध सिद्ध होगा ज्यो येव्यवहार सिद्ध हुया तो इसका कारण है ज्ञानमैं स्वप्रकाशत्वानुभव ज्यो ये अनुभव सिद्ध हुया तो तुम अनुभव मैं विषयकूँ कारण मानों हो तो इसका विषय होणैं तैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व सिद्ध हुवा—

ज्यो कहो कि स्वप्रकाशत्व की अप्रसिद्धि होणैं तैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभाव असिद्ध हुवा तो हम अग्निकूँ स्वप्रकाश मानैं गे काहेतैं कि अग्नि स्वप्रकाश है ये सर्व के अनुभव सिद्ध है तो अग्नि मैं स्वप्रकाशत्व रूप प्रतियोगी की प्रसिद्धि सैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभावकूँ सिद्ध करैं गे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो हमारे पक्ष का वी साधक है देखो तुम तो ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभाव सिद्ध करणैं के अर्थ अग्निकूँ स्वप्रकाश मनोंगे और हम ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व सिद्ध करणैं के अर्थ अग्निकूँ दृष्टान्त मानैं गे तो उभय पक्ष सिद्धि सैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभाव संदिग्ध होगा यातैं एतद्भिन्न वस्तु मैं स्वप्रकाशत्वकू प्रसिद्ध करणाँ चाहिये।

ज्यो कहो कि अलीक पदार्थ के अभाव का व्यवहार वी लोक मैं देखैं हैं जैसैं "शशशृङ्गं नास्ति" ये व्यवहार लोक मैं होय है तो यहाँ ये व्यवहार तो शशशृङ्गाभाव का वोधक है और शशशृङ्ग अलीक है तो वी ये व्यवहार होय है तैसैं स्वप्रकाशत्व अलीक है तो वी इस के अभाव का व्यवहार होय है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानणाँ तो न्याय मत सैं विरुद्ध है काहेतैं कि न्याय मैं इस व्यवहार कूँ शशाधिकरणकशृङ्गाधिकरण-

दिक गुणौंकूँ तथा क्रियाकूँ तुम निरवयव मानौं हो तो गुण क्रिया द्दन

त्वाभाव वोधक मानि करिकैं गोमहिष्यादिकन मैं शृङ्गाधिकरणत्व रूप प्रतियोगी की प्रसिद्धि किई है ये अभाव अलीकप्रतियोगिक नहीं है और "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार तो अलीकप्रतियोगिक ही है काहेतैं कि न्याय के आचार्यौं के तात्पर्य की अनवगति सैं न्यायमत मैं कोई वी वस्तु स्वप्रकाश नहीं है ऐसैं मानणैं तैं स्वप्रकाशत्व अलीक है।

ज्यो कहो कि न्याय मत मैं स्वप्रकाश वस्तु नहीं मान्या है यातैं "ज्ञानंस्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार हो सकै नहीं परन्तु हमने तो तुमारे कथन का अनुवाद करिकैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ऐसैं कहा है यातैं हमारा कथन निर्दोष है तो हम कहैं हैं कि अप्रकाशित ज्ञान सैं विषय का प्रकाश होय है ऐसैं कहि करिकैं ऐसैं न्याय मत मैं ज्ञान स्व-प्रकाश नहीं है ये कथन किया सो असङ्गत हुवा काहे तैं कि ये कथन तो व्यवहार रूप है और अव तुमने ये कही कि न्याय मत मैं स्वप्रकाश वस्तु मान्याँ नहीं यातैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार हो सकै नहीं। ज्यो कहो कि पूर्व का कथन तो न्याय के ग्रन्थौं के लेख तैं हीं है और अव ज्यो मेरा कथन है सो विवेचन तैं है तो हम कहैं हैं कि ग्रंथौं के लेख का वी तो विवेचन करणाँ चाहिये ज्यो कहो कि ग्रंथौं के लेख तैं तो ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और स्वप्रकाशत्वाभाव और विषय प्रकाशकत्व ये ग्रन्थकारौं के अभिमत है ऐसैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और विषयप्रकाशकत्व ये तो वेदान्ती कै वी अभिमत हैं परन्तु स्वप्रकाशत्वाभाव अभिमत नहीं है और न्यायवालौं के स्वप्रकाशत्वाभाव वी अभिमत है तो इस के तात्पर्य का विचार करणाँ चाहिये और पण्डितौंकूँ भ्रान्त मानणाँ उचित नहीं है। ज्यो कहो कि इस का विवेचन तुम हीं कहो जातैं दोनूँके कथन का ता-त्पर्य अवगत होय तो हम कहैं हैं कि न्याय वालौं नैं ज्यो स्वप्रकाशत्व का निषेध किया है सो तो स्वप्रकाश शब्द के यौगिक अर्थ की दृष्टि तैं किया है। और वेदान्तियौं नैं ज्यो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश मान्याँ है सो स्व-प्रकाश शब्दका पारिभाषिक अर्थ करिकैं मान्याँ है सो न्याय वालौं कै वी अभिमत है देखो न्यायवालौं नैं ज्ञान कूँ ज्ञानान्तराप्रकाशित और विषयप्रकाशक कहा और वेदान्त वालौं नैं वी स्वप्रकाश शब्द का येही

कूँ वी नित्य मानणें चाहिये ज्यो कहो कि जिसका नाश न होय सो

अर्थ किया है सो हम पूर्व कहि आये हैं तो न्याय और वेदान्त मैं विरोध कहाँ है। और स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ मानणाँ वी दोनूँ के अभिमत नहीं यातैं वी न्याय और वेदान्त इन मैं विरोध नहीं। तो इस पूर्वोक्त निर्णय का ये निष्कर्ष हुआ कि स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ करो तो कर्म कर्तृ विरोध होय है यातैं ये व्यवहार दोनूँके इष्ट नहीं है। और स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ करो तो कोई वी दोष नहीं यातैं " ज्ञानं स्वप्रकाशम् " ये व्यवहार दोनूँ के इष्ट है। ऐसैं न्याय मत मैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

और ज्यो तुमनैं ये कही कि हमनैं तो तुमारे कथन का अनुवाद करिकैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति " ऐसैं कहा है यातैं हमारा कथन निर्दोष है तो हम पूछैं हैं कि हमनैं जो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश कहा उसकूँ संमत करिकैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशता का निषेध करो हो अथवा असंमत करिकैं निषेध करो हो ज्यो कहो कि संमत करिकैं निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ये तो अपणैं मत का ही निषेध हुवा तुमनैं ज्ञान ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित हुवा प्रकाशक है ऐसैं मान्याँ है सो ही हमनैं मान्याँ है यातैं निषेध असङ्गत है ज्यो कहो कि नहीं मानि करिकैं निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ज्यो तुमनैं ज्ञान का स्वभाव कहा है सो ही हमनैं मान्याँ है यातैं इस का तो निषेध संभवै नहीं और ज्यो ये कहो कि तुमनैं हमारे कहे ज्ञान स्वभाव कूँ स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ मान्याँ सो असंगत है तो तुमारा किया निषेध संभवै है ज्यो कहो कि ऐसैं हीं कहैंगे तो हम पूछैं हैं कि हमनैं तुमारे कहे ज्ञान के स्वभावकूँ स्वप्रकाश शब्दका पारिभाषिक अर्थ मान्या तिस मैं तो दोष कहा है सो कहो और अपणैं मतमैं स्वप्रकाश शब्दका अर्थ कैसा अभिमत है सो कहो—

ज्यो कहो कि ज्ञान स्वव्यवहार इष्ट होय तब ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व की अपेक्षा करै है यातैं स्वप्रकाश नहीं है ऐसैं न्यायवाले ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व का निषेध करैं हैं यातैं उन का ये अभिप्राय प्रतीत होय है कि ज्यो ज्ञान ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व की अपेक्षा नहीं करै सो स्वप्रकाश जैसैं कोई कहै कि जिस मैं गुण नहीं होय सो द्रव्य नहीं है तो उस का ये अभिप्राय सिद्ध होय है कि वो गुणवान् पदार्थकूँ द्रव्य मानैं है परंतु वे इस

नित्य तो हम कहैं हैं कि ध्वंसकूं वी नित्य मानणाँ चाहिये काहे तैं

स्वप्रकाशत्वकूं कहाँ प्रसिद्ध करि कैं इष्ट व्यवहार ज्यो ज्ञान तामैं इसको अभाव कहैं हैं ये हम नहीं जानैं हैं तो हम कहैं हैं कि न्याय मत मैं प्रतियोगी की प्रसिद्धि विना तो अभाव की सिद्धि होवै नहीं यातैं ये ही जानौं कि वे कोई ज्ञानकूं स्वप्रकाश वी मानैं हैं सो अनुव्यवसाय ज्ञान है काहे तैं कि ये ज्ञान अव्यवहार्य है और ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित है—

ज्यो कहोकि ये कथन तो न्यायमतसैं विरुद्ध है काहेतैं कि हमनें न्याय केग्रन्थोंमैं अैसा लेख देखा है कि अनुव्यवसाय गोचर वी ज्ञान होय है तो अनुव्यवसाय मैं व्यवहार्यता और ज्ञानान्तरप्रकाशितत्व ये दोनूं धर्म रहे तो हम बूझैं हैं कि अैसैं मानैं अनवस्था दोष होय है तिसकी तो निवृत्ति कैसैं किई है और युक्ति कहा दिखाई है और अनुभव कहा बताया है और प्रमाण कहा लिखा है । ज्यो कहो कि वहाँ तो इस विषयमैं कुछ लेख देखा नहीं परंतु एक पण्डिततैं मैनैं ये ही प्रश्न किये तब उसनैं युक्ति और प्रमाण तो बताये नहीं और ये कही कि जैसैं पुत्रका कारण पिता है और उसका कारण पितामहहै और उसका कारण प्रपितामह है ऐसैं उत्तरोत्तरकूं कारण मानणैं मैं अनवस्था नहीं है तैसैंहीं यहाँ वी अनवस्था नहीं है सर्व ज्ञानोंके प्रकाशक ज्ञानान्तर मानौं कितनैं मानणैं ये नियम नहीं है तो हम कहैं हैं कि ऐसा उत्तर देने वाला पुरुष न्याय मतका अनभिज्ञहै काहे तैं कि न्याय दर्शन अध्याय २ आन्हिक १ सूत्र १९ "न प्रदीपप्रकाशवत्तत्सिद्धेः" इस सूत्रकै भाष्य मैं वात्स्यायन मुनि लिखै है कि "प्रत्यक्षं मे ज्ञानमानुमानिकं मे ज्ञानमौपमानिकं मे ज्ञानमागमिकं मे ज्ञानमिति संवित्तिमित्तं चोपलभमानस्य धर्मार्थं सुखापवर्गप्रयोजनस्तत्प्रत्यनीकपरिवर्जन प्रयोजनश्च व्यवहार उपपद्यते सोऽयं तावत्येवनिवर्त्तते नचाऽस्ति व्यवहारा न्तरमनवस्थासाधनीयस्येन प्रयुक्तोऽनवस्थामुपाददीतेति" यातैं उस पंडित-म्मन्यका कथन सर्वथा अप्रमाणिक है देखो वात्स्यायनमुनिके लेखतैं ये अर्थ सिद्ध होय है कि प्रत्यक्ष अनुमिति उपमिति शाब्द ये जे ज्ञान इनका व्य-वहार होय है सो उपलभमानकी ज्यो संवित् तन्निमित्त है ये विशेषण मीमाँसक ज्ञानका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश नहीं मानैं है उसके पास ज्ञानका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश सिद्ध करणैं के अर्थ है और धर्मार्थ इत्यादिक तथा तत्प्रत्यनीक इत्यादिक दोय विशेषण व्यवहार मैं फलवत्ता दिखाणैं के अर्थ

कि तुमारे मत मैं ध्वंसकूँ अनन्त मान्याँ है अर्थात् ध्वंस का नाश नहीं है और ज्ञानान्तर का ज्ञानान्तर विषयक ज्ञानसैं प्रकाश मानैं अनवस्थाहोय है यातैं ज्ञानान्तर विषयक ज्ञान साधक व्यवहार का निषेध है अब तुमही कहो वात्स्यायन मुनिके लेखतैं विरुद्ध होणैं तैं उस पंडित का लेख प्रामाणिक कैसैं हो सकै ऐसे २ शास्त्र हृदयानभिज्ञ पुरुषों नैं हीं सकल सर्वज्ञ मुनि संमत वेदान्तोपदिष्टतत्वकूँ अन्य शास्त्रोंतैं विरुद्ध कहाहै और व्यामोह कराय करिकैं लोकोंके कल्याणकूँ पाताल तल मैं पहुँचाया है—

ज्यो कहो कि उसनैं अनुव्यवसाय का व्यवहार इष्ट होय तो इसका यो ज्ञानान्तर सैं प्रकाश होय है ऐसैं प्रामाण्यवाद मैं लेख बताया है तो हम कहैं हैं कि इस लेख का तात्पर्य उसकूँ अवगत हुवा नहीं इसका तात्पर्य ये है कि वात्स्यायन मुनि नैं निषेध लिखा है यातैं अनुव्यवसायका व्यवहार इष्ट नहीं है ज्यो अनुव्यवसायका व्यवहार इष्ट होय तो इसका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश होय इतना विचार तो तुम यो करो प्राचीन ग्रन्थकार ऋषि लेख तैं विरुद्ध कैसैं लिखै। ज्यो कहो कि तात्पर्य तो अपणाँ आप ही जान सकै है यातैं आप किसी ग्रन्थ मैं ऐसा लेख बतावो कि न्याय मत मैं ज्ञान प्रकाश रूप है तो हम कहैं हैं कि आप ऐसा लेख बतावो कि न्यायमत मैं ज्ञान प्रकाशरूप नहीं है। और हम नैं तो विद्यारण्य स्वामी का लेख वी बताया है। ज्यो अनुव्यवसाय प्रकाशरूप नहीं होता तो स्वामी ऐसैं नहीं कहते कि इस साक्षीकूँ तार्किक अनुव्यवसाय कहैं हैं—

ज्यो कहो कि ऋषियों के ग्रंथोंका नाम स्मृति है सो वेद मूलक होणैं तैं प्रमाण होय हैं तो वात्स्यायन नैं ज्यो अनुव्यवसाय के व्यवहार का निषेध किया उसकी मूल भूत श्रुति कहो तो हम कहैंहैं कि माण्डूक्यउपनिषद् मैं ये श्रुति है कि " नान्तः प्रज्ञं न बहिः प्रज्ञं नोभयतः प्रज्ञं न प्रज्ञानघनं न प्रज्ञं नाऽप्रज्ञमदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणम चिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्मप्रत्ययसारं प्रपंचोपशमं शान्तं शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः „ इसमैं आदिके च्यार विशेषणों सैं तो तैजस और विश्व और जाग्रत्स्वप्नन की आन्तरालावस्था और सुषुप्ति इन को निषेध है और न प्रज्ञम् इससैं सर्व विषयज्ञातृत्व को निषेध है और नाप्रज्ञम् इससैं जडत्व निषेध है और अदृष्टम् तथा अव्यवहार्यम् तथा अग्राह्यम् इन विशेषणों सैं ज्ञानेन्द्रियविषयता तथा व्यवहारविषयता तथा

मान्या है ज्यो कहो कि जिस की उत्पत्ति न होय सो नित्य तो हम कहैं हैं कि प्रागभावकूँ वी नित्य मानणाँ चाहिये काहे तैं कि तुम प्रागभाव की उत्पत्ति नहीँ मानौँ हो ज्यो कहो कि जिसके उत्पत्ति और नाश दोनूँ न होँयँ सो नित्य तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थकूँ नित्य मानणाँ चाहिये काहेतैं कि तुम सुस्सा के सीँग के उत्पत्ति और नाश नहीँ मानौँ हो ज्यो कहो कि ज्यो अलीक न होय और जिसके उत्पत्ति और नाश न होँयँ सो नित्य तो हम पूछैं हैं कि तुमकूँ उत्पत्ति और नाश दीखैं हैं यातैं उत्पत्ति और नाश इनकूँ मानौँ हो अथवा नहीँ दीखैं हैं तो वी उत्पत्ति और नाश मानौँ हो ज्यो कहो कि नहीँ दीखैं हैं तो वी उत्पत्ति और नाश मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थ के उत्पत्ति और नाश दीखैं नहीँ यातैं अलीक पदार्थ के वी उत्पत्ति और नाश मानणैं चाहिये ज्यो कहोकि दीखैं हैं यातैं उत्पत्ति और नाश इनकूँ मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि तुमकूँ दीखैं हैं अथवा अन्यकूँ दीखैं हैं अथवा तुम और अन्य इनमैंतैं कोईकूं दीखैं हैं अर्थात् तीनौंमैंतैं किसके देखणैं तैं तुम उत्पति और नाश इनकूँ मानौँ हो ज्यो कहो कि हम देखते हैं यातैं उत्पत्ति और नाश इनकूँ मानैं हैं तो तुमनैं असङ्ख्य घट पटादिकौं के उत्पत्ति और नाश

कर्मेन्द्रियविषयता इनको निषेध है और अलक्षणम् तथा अचिन्त्यम् तथा अव्यपदेश्यम् इनसैं अनुमितिविषयता तथा मनोविषयता और शब्दविषयता इनको निषेध है और एकात्मप्रत्ययसारम् तथा प्रपंचोपशमम् इनसैं स्वप्रकाश है तथा संसार धर्म रहित है और शान्तम् शिवम् अद्वैतम् इनसैं अविकारी निर्दोष और भेदरहित है और चतुर्थम् इससैं तुरीय है एैसैं ज्ञानी मानैं हैं सो आत्मा है सो जाननैं योग्य है तो इस श्रुतिमैं इस ज्ञानकूँ अव्यवहार्य कहा है यातैं न्यायदर्शन भाष्य में इस के व्यवहार का निषेध किया है और चतुर्थ कहा है तो ये ज्ञान ज्ञाता और ज्ञेय इन तीनूँ तैं भिन्न है यातैं चतुर्थ है ऐसैं न्याय मत मैं अनुव्यवसाय ज्ञान स्वप्रकाश है। इस लेखकूँ देखि करिकैं अल्प श्रुत और निरनुभव पुरुष तो उत्कर्ण और उद्विग्न होंगे और जे गुरुचरणानुग्रहतैं लब्धतत्व पुरुष हैं वे आनंद मग्न होंगे। विशेष लेख ज्यो है सो अज्ञ और विज्ञ इन दोनूँ प्रकार के पुरुषौं के पास अप्रयोजक है यातैं हम इस विषय मैं उपरत होय हैं—

इत्यलम्

नहीं देखे हैं यातैं उनकूँ नहीं मानणें चाहिये ज्यो कहो कि अन्य पुरु-षाँ के देखणें तैं उत्पत्ति और नाश इनकूँ मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति और नाश अन्य पुरुषाँ नैं देखे नहीं यातैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति और नाश नहीं मानणें चाहिये ज्यो कहो कि हम अथवा अन्य इनमैं तैं किसी के वी देखणें तैं उत्पत्ति और नाश मानैं हैं तो हम पूछैं हैं तुम हीं कहो तुमारे अनुव्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाश मानों हो अथवा नहीं ज्यो कहो कि मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि अन्य के देखणें तैं मानों हो अथवा तुमारे देखणें तैं मानों हो ज्यो कहो कि अन्य के देखणें तैं मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि यहाँ अन्य शब्द करिकैं तुमतैं भिन्न जीवकूँ लेवो हो अथवा अनुव्यवसाय तैं भिन्न ज्ञान मानोंगे तो तुमकूँ ये ही कहणाँ पड़ैगा कि हम तैं भिन्न जीव तो हमारे अनुव्यव-साय के उत्पत्ति विनाशोंकूँ देख सकैं नहीं यातैं अनुव्यवसाय तैं भिन्न ज्ञान तैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशोंका प्रत्यक्ष मानैं गे तो हम कहैं हैं कि उस ज्ञानकूँ वी तुम अनित्य ही मानोंगे तो उस के वी उत्पत्ति विनाशाँ के प्रत्यक्ष होणें के अर्थ और ही ज्ञान मानणाँ पड़ैगा तो अन-वस्था होगी यातैं अनुव्यवसाय तैं भिन्न अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशाँ का प्रकाश करणें वाला ज्ञान मानणाँ असङ्गत हुवा।

ज्यो कहो कि अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशों का प्रत्यक्ष उसही अनुव्यवसाय तैं मानैं गे तो हम कहैं हैं कि तुमारा अनुव्यवसाय मानणाँ हीं असङ्गत हुवा काहे तैं कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशाँ का प्रत्यक्ष व्यवसाय ज्ञान तैं हीं मानों अनुव्यवसाय मानणाँ व्यर्थ है ज्यो कहो कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशोंका प्रत्यक्ष अनुव्यवसाय तैं नहीं मानैं हैं किन्तु व्यवसाय ज्ञान का प्रत्यक्ष अनुव्यवसाय तैं मानैं हैं यातैं अनुव्य-वसाय मानणाँ व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि तुम अनुव्यवसाय ज्ञानकूँ स्वप्रकाश मानों हो तो व्यवसाय ज्ञानकूँ हीं स्वप्रकाश मानों। ऐसैं अ-नुव्यवसाय ज्ञान मानणाँ व्यर्थ हुआ ज्यो कहो कि प्रथम तो यह घट है ऐसैं व्यवसाय ज्ञान होय है और पीछैं मैं घट का ज्ञान वाला हूँ ऐसैं अनुव्यवसाय ज्ञान होय है प्रथम ज्ञान मैं घट विषय है और द्वितीय ज्ञान मैं घट का ज्ञान विषय है ये सकल विद्वानों का अनुभव है यातैं अनुव्य-वसाय ज्ञान का विषय होणें तैं व्यवसाय ज्ञान स्वप्रकाश नहीं हो सकै

और अनुव्यवसाय ज्ञान कोई वी ज्ञान का विषय नहीं और मालूम होय है यातैं स्वप्रकाश अनुव्यवसाय ज्ञान मानैं हैं यातैं स्वप्रकाश अनुव्यवसाय ज्ञान मानणाँ व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि अनुव्यवसाय तुमारे कथन तैं स्वप्रकाश सिद्ध हुवा ये हम नैं वी अङ्गीकार किया परन्तु व्यवसायज्ञान जैसैं अनुव्यवसाय करिकैं ज्याणयाँ जाय है तैसैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति नाश किससैं जाणैं जाय हैं सो कहो ज्यो कहो कि इसका विचार तो कहीं वी मेरी दृष्टि मैं आया नहीं तो हम कहैं हैं कि न्याय की प्रक्रिया तैं कल्पना करि कैं निर्णय करो ज्यो कहो कि मैं घट का ज्ञान वाला हूँ इस अनुभव तैं घट के ज्ञानकूँ विषय करणैं वाला अनुव्यवसाय ज्ञान सिद्ध होय है और घटका ज्ञान इस अनुव्यवसाय का विषय सिद्ध होय है तैसैं मोकूँ घटका ज्ञान नहीं है इस अनुभव तैं घट के ज्ञान का ज्यो अभाव तिसकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय ज्ञान सिद्ध होय है और घट के ज्ञान का ज्यो अभाव तिस का ज्ञान अनुव्यवसाय का विषय सिद्ध होय है अर्थात् जैसैं घट का ज्ञान व्यवसाय है और घट के ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय है तैसैं घट ज्ञान के अभाव का ज्ञान व्यवसाय है और घट ज्ञान के अभाव के ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय है तैसैं हीं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं का ज्ञान व्यवसाय ज्ञान है और व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं के ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय है तो ये सिद्ध हुवा कि व्यवसाय ज्ञान तो अनुव्यवसाय तैं जाणयाँ जाय है और व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति नाश व्यवसाय ज्ञान तैं जाणैं जाय हैं ये व्यवस्था मैं नैं अनुभव तैं नहीं कही है काहे तैं कि यहाँ का अनुभव अति सूक्ष्म है किन्तु ये व्यवस्था न्याय की प्रक्रिया तैं कल्पना करिकैं कही है तो हम कहैं हैं कि तुमारा अनुभव वहुत ही शुद्ध है तुमकूँ आत्मज्ञान होगा इस मैं कुछ वी सन्देह नहीं है।

अब कहो तुमने ज्यो व्यवस्था कही सो सर्व न्याय की प्रक्रिया तैं हीं है अथवा इस मैं कुछ अंश अनुभवकूँ लेकरिकैं वी है ज्यो कहो कि घट ज्ञान रूप व्यवसाय ज्ञान और इस ज्ञानकूँ विषय करणैं वाला अनुव्यवसाय ज्ञान और व्यवसायज्ञानके उत्पत्ति विनाशौंका ज्ञान ये ज्ञान तो मैंनैं अनुभव तैं मानैं हैं और अनुव्यवसाय ज्ञान स्वप्रकाश है ये वी मैंनैं अनुभव तैं मान्याँ है परन्तु अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश जे पहिलैं

कहे वे और व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं के ज्ञान का ज्ञान और इस ज्ञान तैं जाययाँगया यातैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौंका ज्ञान व्यवसाय ज्ञान है ये तीनूं कथन तो मैंनैं न्याय शास्त्रकी प्रक्रिया तैं हीं किये हैं ये कथन अनुभव तैं नहीं किये हैं काहेतैं कि आज के दिन तक व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं का ज्ञान व्यवसाय ज्ञान है अथवा नहीं और इस ज्ञानका वी ज्ञान होय है अथवा नहीं और अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाश होय हैं अथवा नहीं इस विचारका प्रसङ्ग तो आज पर्यन्त आया नहीं यातैं ये कथन तो केवल न्याय की प्रक्रिया तैं हीं है अनुभव तैं नहीं है तो हम कहैं हैं कि अब इसविचार का प्रसङ्ग है यातैं अब निर्णय करिकैं अनुभव करो।

ज्यो कहो कि निर्णय का प्रकार कहा है जातैं अनुभव होय तो हम कहैं हैं कि जहाँ पदार्थ का प्रत्यक्ष न होय तहाँ अनुमान तैं निर्णय होय ये तुम मानौं हो तो यहाँ अनुमान करो ज्यो कहो कि जैसैं व्यवसाय ज्ञान ज्यो है सो ज्ञान है यातैं उत्पत्ति विनाश वाला है तैसें अनुव्यवसाय ज्यो है सो वी ज्ञान है यातैं उत्पत्ति नाश वाला है और ज्यो उत्पत्ति विनाश वाला नहीं है सो ज्ञान नहीं है जैसैं आकाश उत्पत्ति विनाशवाला नहीं है तो ये आकाश ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ऐसैं अनुमान तैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाश सिद्ध होय हैं तो हम कहैं हैं कि ये अनुमानतो अशुद्ध है काहेतैं कि तुम परमात्मा के ज्ञानकूं नित्य मानौं हो तो विचार तैं देखो कि वो वी ज्ञान है और उत्पत्तिनाश वाला नहीं है और घट ज्यो है सो उत्पत्तिनाश वाला नहीं है ये नहीं है और ज्ञान नहीं हैं ये है अर्थात् तुमारी अन्वयव्याप्ति का व्यभिचार परमात्मा के ज्ञान मैं है और व्यतिरेकव्याप्ति का व्यभिचार घट मैं है यातैं ये अनुमान असङ्गत है ज्यो कहो कि इस अनुमान तैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश सिद्ध न हुये तो हम ऐसा अनुमान करैंगे कि जैसैं व्यवसाय ज्ञान ज्यो है सो लौकिक ज्ञान है यातैं उत्पत्ति नाश वाला है तैसैं अनुव्यवसाय ज्यो है सो वी लौकिक ज्ञान है यातैं उत्पत्ति विनाश वाला है ऐसैं अनुमान करणें तैं ईश्वर के ज्ञान मैं हेतु का व्यभिचार नहीं है काहे तैं कि ईश्वर का ज्ञान अलौकिक है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं व्यवसाय ज्ञानकूं दृष्टान्त वर्णां करिकैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशौंकौं अनुमान तैं सिद्ध किये तो

व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौंकूँ किस के दृष्टान्त तैं सिद्ध करोगे ज्यो कहो कि अनुव्यवसायकूँ दृष्टान्त वणा करिकैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौंकूँ सिद्ध करैं गे तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानौं गे तो अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाश सिद्ध करणैं मैं व्यवसायकी अपेक्षा और व्यवसाय के उत्पत्ति विनाशौंकूँ सिद्ध करणैं मैं अनुव्यवसाय की अपेक्षा ऐसैं अन्योन्य सापेक्ष होणैं तैं दोनूँ हीं ज्ञानौं के उत्पत्ति विनाश सिद्ध नहीं होसकैं गे।

ज्यो कहो कि दृष्टान्त ज्यो व्यवसाय उसके उत्पत्ति विनाशौंकूँ दूसरा व्यवसायकूँ दृष्टान्त वणाँ करि कैं सिद्ध करैं गे तो हम कहैं हैं कि तुमारी बुद्धि विलक्षण है कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौंकूँ व्यवसाय ज्ञान के दृष्टान्त तैं हीं सिद्ध करोहो ज्यो कहो कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाश तो प्रत्यक्ष सिद्ध हैं यातैं यहाँ अनुमान की अपेक्षा नहीं तो हम पूछैं हैं कि जिस ज्ञानकूँ तुमनैं अनुव्यवसाय मान्याँ है उस सैं हीं व्यवसाय के उत्पत्ति विनाशौंका ज्ञानरूप ज्यो व्यवसाय उस को प्रत्यक्ष मानौं हो अथवा उस अनुव्यवसाय तैं जुदा ही ज्ञान की कल्पना करो हो ज्यो कहो कि यहाँ तो बुद्धि व्याकुल हैं काहे तैं कि प्रथम क्षण मैं तो व्यवसाय ज्ञान उत्पन्न होय है और द्वितीय क्षण मैं रहै है और तृतीय क्षण मैं उसका नाश होय है और व्यवसाय ज्ञान के रहणैं के समय मैं व्यवसाय ज्ञानकूँ विषय करणैं वाला अनुव्यवसाय ज्ञान उत्पन्न होय है और व्यवसाय ज्ञान के नाश क्षण मैं अनुव्यवसाय ज्ञान रहै है और व्यवसाय ज्ञान के नाशकूँ उत्पन्न करैहै और नाशकी उत्पत्तिकूँ विषय करणैं-वाला ज्ञान होय है और व्यवसाय ज्ञान के नाश के द्वितीय क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान के नाशकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान पैदा होय है और अनुव्यवसाय ज्ञान के नाशकूँ उत्पन्न करै है इस प्रक्रिया तैं ज्ञानौं के उत्पत्ति स्थिति नाश मानैं हैं अब यहाँ ये विचार है कि जिस क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान की उत्पत्ति भई उस क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान बी है और आदि क्षण सम्बन्ध रूप उसकी उत्पत्ति बी है और अनुव्यवसाय का प्रागभाव बी है और द्वितीय क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान बी है और अनुव्यवसाय का ज्यो प्रागभाव उसका नाश बी है और व्यवसाय की स्थिति क्रिया बी है और अनुव्यवसाय बी है और उसकी उत्पत्ति बी है और तृतीय क्षण मैं व्यव-

साय का ध्वंस वी है और इसकी उत्पत्तिकूँ विषय करणैं वाला ज्ञानवी है और अनुव्यवसाय वी है और इसकी स्थिति क्रिया वी है और चतुर्थ क्षणमैं व्यवसायका ध्वंस वी है और उसकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान वी है और अनुव्यवसाय का नाश वी है ऐसैं च्यार क्षणमैं चतुर्दश अर्थात् चोदह विषय हैं अब जितनैं विषय हैं उतनैं ज्ञान मानैं सो तो वणसकै नहीँ काहेतैं कि न्यायका मत ये है कि एक क्षण मैं दो ज्ञान होवैं नहीँ और ज्यो च्यार क्षण मैं च्यार ज्ञान मानैं तो उनके विषय चोदह हो सकैं नहीँ और ज्यो वे च्यारौं ज्ञान समूहालम्बन मानैं अर्थात् वहुतौंकूँ विषय करणैं वाले मानैं तो प्रथम क्षण मैं तो व्यवसाय ज्ञान उत्पन्न होगया यातैं दूसरा ज्ञान तो होसकै नहीँ और दूसरा ज्ञान नहीँ होय तो व्यवसाय ज्ञानकी उत्पत्ति और अनुव्यवसायका प्रागभाव ये किससैं जाणैं जायँ और द्वितीय क्षण मैं अनुव्यवसाय ज्ञान होगया यातैं दूसरा ज्ञान होसकै नहीँ और ज्यो दूसरा ज्ञान नहीँ होय तो व्यवसाय ज्ञान तो अनुव्यवसाय तैं जाण्याँ जायगा और अनुव्यवसाय स्वप्रकाश है यातैं इसकूँ जाणणैं के अर्थ दूसरे ज्ञानकी अपेक्षा नहीँ परन्तु अनुव्यवसाय के प्राग भावका नाश और व्यवसाय की स्थिति और अनुव्यवसाय की उत्पत्ति ये किससैं जाणैं जाँयँ और तृतीय क्षणमैं व्यवसाय ज्ञान के ध्वंसकी उत्पत्तिकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान हुवा है यातैं दूसरा ज्ञान होसकै नहीँ और दूसरा ज्ञान नहीँ होय तो अनुव्यवसाय तो स्वप्रकाश है यातैं इसके जाणणैं के अर्थ तो दूसरा ज्ञानकी अपेक्षा नहीँ परन्तु व्यवसाय का ध्वंस और अनुव्यवसाय की स्थिति ये कैसैं जाणैं जाँयँ और चतुर्थ क्षणमैं अनुव्यवसाय के नाशकी उत्पत्ति का ज्ञान हुवा है यातैं दूसरा ज्ञान होसकै नहीँ और दूसरा ज्ञान नहीँ होय तो व्यवसायका ध्वंस और अनुव्यवसाय का नाश ये कैसैं जाणैं जाँयँ इस विचार तैं वुद्धि व्याकुल है यातैं व्यवसायके उत्पत्ति विनाशौं का ज्ञान अनुव्यवसाय ही है अथवा इससैं जुदा है ये अनुभव नहीँ होसकै और न्याय के ग्रन्थौं मैं ये विचार न लिखा इसका कारण वी अनुभव मैं नहीँ आवै है यातैं आप ही ऐसा निर्णय करो जिसतैं मोकूँ इस विषय के सन्देह मिट करिकैं यथार्थ निश्चय होय तो हम कहैं हैं तुम हीँ अनुभवतैं देखो तुमारे अनुव्यवसायका आकार ये है कि मैं घटके ज्ञानवाला हूँ तो इस ज्ञानका विषय केवल व्यवसाय ज्ञान हीँ नहीँ है किन्तु व्यवसायमैं विशेषण ज्यो

घट और मैं शब्दका अर्थ ज्यो आत्मा सो ये वी विषय हैं तो ये नियम नहीं रहा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो केवल ज्ञानकूँ हीं विषय करै है और अनुव्यवसायके उत्पत्ति विनाश दीखैं नहीं और अनुमानतैं वी सिद्ध होवैं नहीं यातैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश नहीं हैं यातैं ये ज्ञान नित्य है और अनुव्यवसाय का प्रत्यक्ष दूसरे ज्ञानतैं होवै नहीं यातैं ये स्वप्रकाश है तो ये सिद्ध हुवा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो ज्ञान और अज्ञान इनका प्रकाश करणैं वाला नित्य स्वप्रकाश ज्ञान है और यहाँ अनुमानतैं वी अनुव्यवसाय नित्य ही सिद्ध होय है जैसैं परमात्मा का ज्ञान स्वप्रकाश है यातैं नित्य है तैसैं अनुव्यवसाय वी स्वप्रकाश है यातैं नित्य है ये अनुमान का आकार है।

और देखो कि न्यायके मतसैं हीं सुषुप्तिमैं ज्ञान रहै है ये सिद्ध होय है काहेतैं कि न्यायका मत ये है कि प्रत्यक्ष योग्य जे विभुके विशेष गुण उनका नाश उनके पीछैं होणैं वाला ज्यो विशेष गुण उससैं होय है ये नियम है तो सुषुप्ति के अव्यवहित पूर्व क्षण मैं ज्यो ज्ञान उत्पन्न होगा उसका नाश सुषुप्तिके अव्यवहित उत्तर क्षणमैं ज्यो ज्ञान होयहै उससैं होगा तो सुषुप्ति मैं ज्ञानका रहणाँ सिद्ध होगया परन्तु ये कथन अनुभवसैं विरुद्ध है काहेतैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं व्यवसाय ज्ञान रहै तो जाग्रत् मैं जैसैं सुषुप्तिके अज्ञान का स्मरण होय है तैसैं इस व्यवसाय का वी स्मरण होय यातैं सुषुप्ति मैं व्यवसाय ज्ञान माँनणाँ असङ्गत है।

ज्यो कहो कि अनुव्यवसायकूँ नित्य मानोंगे तो वी इसकूँ सुषुप्तिका ज्ञान नहीं मान सकोगे काहेतैं कि ज्ञानके ज्ञानका नाम अनुव्यवसाय है सुषुप्तिका ज्ञान केवल अज्ञानकूँ विषय करै है यातैं ये अनुव्यवसाय हो सकै नहीं यातैं सुषुप्तिका ज्ञान अनुव्यवसाय तैं विलक्षण है तो हम कहैं हैं कि तुमनैं ऐसा सङ्केत कर लिया है कि ज्ञानका ज्ञान अनुव्यवसाय है और ज्ञानका विषय ज्यो ज्ञान सो व्यवसाय है और हम तो ज्ञानकूँ नित्य स्वप्रकाश परमात्मा कहैं हैं सो ही सुषुप्तिके अज्ञानका प्रकाश करै है और सो ही जाग्रत् के ज्ञानका प्रकाश करै है और सो ही जाग्रतके अज्ञानका प्रकाश करै है तुम इस ही ज्ञानकूँ अनुव्यवसाय कहो हो इससैं विषयभेदतैं भेद कल्पना है स्वरूप तैं भेद नहीं है ज्यो कहो कि ज्ञान मैं स्वरूप तैं भेद नहीं है तो इस अनुव्यवसायका विषय ज्यो व्यवसाय ज्ञान उत्पत्तिविनाश

वाला प्रतीत होय है सो कहा है तो हम कहैं हैं कि न्यायका पाषाण जैसा कल्पना किया ज्यो आत्मा द्रव्य उसमैं चकमक जैसा कल्पना किया ज्यो मन उसके संयोगतैं अग्नि का कण जैसा कल्पना किया कुछ होगा परन्तु पाषाण मैं तो अग्नि है ये सर्वकूँ निश्चय है ओर आत्मा मैं मनके संयोग तैं पहिलैं ज्ञान है ये निश्चय तुमकूँ नहीं है ये आश्चर्य है ज्यो कहो कि पाषाण मैं अग्नि नहीं है चकमक के संयोग तैं हीं अग्नि पैदा होय है तैसैं आत्मा मैं वी मनके संयोगतैं पहिलैं ज्ञान नहीं है पीछैं हीं ज्ञान हुवा है तो हम कहैं हैं कि न होय सोवी हो जाय तो तुमारा जैसा न्यायका पंडित ही हो जाय तो तुमकूँ प्रश्न करणैं मैं सहाय वी मिल जाय ओर तुमारे साथ ही उसकूँ ज्ञान वी हो जाय ज्यो कहो कि महाराज मैं तो मूर्ख हूँ यातैं मेरै सन्तोष होय तैसो यथार्थ उत्तर कहो तो हम कहैं हैं कि तुमकूँ अवही ऐसैं कहि आये हैं कि ज्ञान मैं स्वरूप तैं भेद नहीं है इसकूँ स्मरण करिकैं सन्तोष करो ।

ज्यो कहोकि व्यवसाय के उत्पत्ति नाश तो दीखैं हैं तो हम पूछैं हैं कि तुम उत्पत्ति किसकूँ कहोहो ज्यो कहो कि आदि क्षण के सम्बन्ध-कूँ उत्पत्ति कहैं हैं तो हम कहैं हैं कि आदि क्षण ओर व्यवसाय ज्ञान इनका सम्वन्ध उत्पत्ति पदार्थ हुवा तो सम्वन्धकी सिद्धि मैं सम्वन्धि-यों की सिद्धि कारण है यातैं सम्वन्ध के आदि क्षणमैं सम्वन्ध के कारण जे क्षण ओर ज्ञान इनकूँ सिद्ध मानौं ज्यो सम्वन्ध के आदि क्षणमैं सम्वन्ध के कारण क्षण ओर ज्ञान सिद्ध हुये तो उत्पत्ति मानणाँ व्यर्थ हुवा काहेतैं कि ज्यो पदार्थ पूर्व क्षण मैं न होय उसकी तुम उत्तर क्षण मैं उत्पत्ति मानौं हो ये तो पूर्व क्षण मैं सिद्ध हैं ज्यो कहो कि इस स्थल मैं ज्ञान ओर क्षण ओर ज्ञान ओर क्षण का सम्वन्ध इनकूँ एक ही काल मैं सिद्ध मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ज्ञानकी उत्पत्ति तो आदिक्षणसम्वन्ध रूप होगी परन्तु सम्वन्ध की उत्पत्ति ओर आदिक्षणकी उत्पत्ति ये किंरूप होगी ज्यो कहो कि सम्वन्धका वी सम्वन्ध ओर मानैंगे तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानौंगे तो उस सम्वन्धका वी सम्वन्ध ओर मानणाँ पडैगा काहेतैं कि उसकूँ वी उत्प-न्न मानणाँ पडैगा तो अनवस्था होगी यातैं ऐसैं मानणाँ असङ्गत है तो आदिक्षणका सम्वन्ध सिद्ध न हुवा ओर ज्यो तुमनैं आदि क्षण मान्याँ है वो वी उत्पन्न हीं मानौंगे काहेतैं कि वो क्षण द्वितीय क्षणमैं नहीं है ये

तुम मानौं हो तो उस आदि क्षण मैं उस आदि क्षणतैं जुदा एक आदि क्षण और मानौं और प्रथम आदि क्षणका उस आदि क्षण सैं सम्बन्ध और मानौं तब वो आदि क्षण सिद्ध होय सो तुम ऐसैं मानौं नहीं यातैं आदिक्षण सिद्ध हुवा नहीं अब न तो आदिक्षणका सम्बन्ध सिद्ध हुवा और नै आदि क्षण सिद्ध हुवा तो ज्ञानकी उत्पत्ति कैसैं मानी जाय ज्यो ज्ञानकी उत्पत्ति सिद्ध न भई तो इसका नाश वी सिद्ध नहीं होगा काहेतैं कि तुमारा ही ये नियम है कि भाव पदार्थ ज्यो उत्पन्न होय है उसका ही नाश होय है अब तुम हीं विचार करो ज्ञानके उत्पत्ति विनाश कैसैं मानें जाँयँ।

ज्यो कहोकि ज्ञान ज्यो है सो शरीर मैं प्रतीत होय है वाह्य देश मैं प्रतीत होवै नहीं तो परिछिन्नपरिमाणवाला होणें तैं अनित्य है तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो तुमारे मतसैं हीं अशुद्ध है काहे तैं कि गुण मैं गुण रहै नहीं ये तुमारा नियम है तो तुमारे मतमैंज्ञान वी गुण है और परिमाण वी गुण है तो ज्ञानमैं परिमाण कैसैं रह सकै ज्यो कहो कि ज्ञान के उत्पत्ति विनाश दीखैं हैं यातैं इनका न मानणाँ कैसैं मान्याँ जाय तो हम कहैं हैं कि जैसैं आकाश मैं नीलरूप दीखै है और नहीं मानौं हो तैसैं ज्ञान के उत्पत्ति विनाश दीखैं हैं यातैं इनका न मानणाँ मानौं ज्यो कहो कि ज्ञान के उत्पत्ति नाश सिद्ध नहीं होणें तैं ये नित्य सिद्ध हुवा और अनुभय तैं ये वी निश्चय होय है कि ये ही जीवात्मा का निज रूप है परन्तु सुषुप्तिमैं ये प्रतीत होवै नहीं और आप ऐसैं कहो हो कि सुषुप्ति मैं रहैहै तो इस के रहणें मैं प्रमाण कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि कठोपनिषद् मैं।

य एषसुप्तेषु जागर्त्ति कामं कामं पुरुषोनिर्म्मिमाणः तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृत मुच्यते ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि सूते जे हैं तिनके विषैं ज्यो ये पुरुष जागैहै सो विषयाँ का पैदा करणें वाला है वोही शुद्ध है वोही ब्रह्म है सो ही अविनाशी है यातैं ये सिद्ध हुवा कि प्राणादिकौं के शयन समय मैं ये ज्ञान रूप आत्मा अपणें स्वभाव का त्याग नहीं करै है ज्यो कहो कि इसके दर्शन तैं कहा होय है तो उस ही उपनिषद् मैं ये श्रुति है कि।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं रूपं वहुधा यः करोति तमात्मस्थंयेऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो एक है और जगत् जिसके वश है और ज्यो सर्व भूतन को अन्तरात्मा है और ज्यो एक रूपकूँ वहुत प्रकार करै है उसकूँ अपणैं स्वरूप करिकैं स्थित देखैं हैं धीर पुरुष उनकै नित्य सुख होय है और कै नहीं ज्यो कहो कि चराचर मैं आत्मभाव होय है इसमैं कहा प्रमाण है तो हम कहैं हैं कि ईशावास्य उपनिषद् की ये श्रुति है कि

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाऽभूद्विजानतः तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्ञानवान् कै जिस समयमैं सारे भूत आत्माहीं भये उस समय में ऐकपणैं देखणैं वाला ज्यो है उसकैं शोक कहा और मोह कहा ज्यो कहो कि जगत् परमात्मा हीं है तो हम परमात्माकूँ हीं जाणैं हैं तो परमात्म वुद्धि न भई तो कहा हानि है तो हम कहैं हैं कि तवलकारोपनिषद् की ये श्रुति है कि

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति नचेदिहावेदीन्महती विनष्टिः भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्याऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो यहाँ जाणँगया तो सत्य रूप है ज्यो यहाँ न जाणँगया तो वड़ा नाश हुवा ज्ञानवान पुरुष सर्व भूतोँ मैं आत्मभाव जाणँ करिकैं जन्म मरण भ्रम रूप इस लोककूँ छोड़ि करिकैं अमर होय हैं ज्यो कहो कि इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

नतत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मो न विजानीमो यथैतदनुशिष्यादन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि ॥

इसका अर्थ ये है कि वहाँ चक्षु नहीं पहुँचे है वाणी नहीं पहुँचे है मन नहीं पहुँचे है नहीं जाणैं हैं कि परमात्मा ऐसा है जिस प्रकार करिकैं शिष्यकूं उपदेश करै उस प्रकारकूं नहीं जाणैं हैं वो जाण्याँ हुवातैं ओर न जाण्याँ हुवातैं ऊपर है ज्यो इस श्रुतिका ये अर्थ हुवा तो मैं उसकूं कैसैं जाण सकूं ओर न जाणूं तो पहिलैं ज्यो श्रुति आपनैं कही उसमैं न जाणणें वालेकी बड़ी हानि बताई है ओर ज्यो वो नहीं हीं जाण्याँ जाता तो श्रुति ऐसैं न कहती कि

तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

इसका अर्थ ये है कि उस परमात्माकूं जाणैं हीं मोक्षकूं प्राप्त होय है ओर मार्ग मोक्ष मैं गमन का नहीं है ओर श्रीकृष्ण महाराजनैं बी अर्जुनकूं ऐसैं आज्ञा किई है कि

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

इसका अर्थ ये है कि नम्र हो करिकैं कोमल भावसैं प्रश्न करिकैं सेवा करिकैं ज्ञानके स्वरूपकूं जाणँ तत्व के देखणैंवाले ज्ञानी पुरुष तोकूं उपदेश करैंगे ओर कठोपनिषद् की ये श्रुति है कि

नैषा तर्केण मतिरापनेया ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्म ज्ञान केवल अपणीं बुद्धितैं विचार करिकैं प्राप्त करवे योग्य नहीं है ओर केवल अपणैं तर्क करि कैं ये आत्म ज्ञान नाश करवे योग्य नहीं है तात्पर्य ये है कि तार्किक पुरुष वेदकूं नहीं जाणैं है कुछ ही कहै है ओर इस ही उपनिषद् की ये श्रुति है कि

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयन्धीराः पण्डितम्मन्यमानाः दन्द्रम्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ॥

इसका अर्थ ये है कि अविद्या के मध्य मैं वर्त्तमान और आप मैं हम धीर हैं हम पण्डित हैं ऐसैं अभिमान करैं वे अन्त्यन्त कुटिल और अनेक प्रकार की ज्यो गति उसकूँ प्राप्त होते भये दुःखौं करि कैं व्याप्त होय हैं जैसैं अन्ध के आश्रय तैं चले हुये अन्ध और इस ही उपनिषद् की ये श्रुति है कि

श्रवणायाऽपि वहुभिर्यो न लभ्यः श्रण्वन्तोऽपि वहवो यन्न विद्युः आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलाऽनुशिष्टः॥

इसका अर्थ ये है कि वहुत ऐसे हैं कि जिनकूँ इसका श्रवण हीं होय नहीं और बहुत ऐसे हैं कि सुणैं हैं और इस आत्माकूँ नहीं जाणैं हैं ओर इसका कहणैं वाला आश्चर्य है अर्थात् हजारौं मैं कोई ही कहणैं वाला है और निपुण आचार्य तैं उपदेश लिया हुआ इस आत्माका जाननैं वाला आश्चर्य है अर्थात् कोई ही जाणैं हैं और श्री कृष्ण महाराज नैं वी ऐसैं आज्ञा किई है कि

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः॥

इसका अर्थ ये है कि हजारौं मनुष्यौं मैं कोई पुरुष ज्ञान के होणैं को यत्न करै है ओर यत्न वाले जे बहुत तिन मैं कोई पुरुष मेरेकूँ तत्व रूप तैं जाणैं है तो

न तत्र चक्षुः॥

ये ज्यो श्रुति सो तो आत्मा नेत्रवाणी मन इनका विषय नहीं है ऐसैं कहै है ओर

इह चेदवेदीत्॥

ये श्रुति ज्ञान भयैं के विना अति ही हानि वतावै है ओर

तमेव विदित्वा॥

ये श्रुति ज्ञानकूँ ही परम कल्याणका मार्ग वतावै है ओर

तद्विद्धि ॥

ये स्मृति ज्ञान होवे है ऐसैं कहै है ओर

नैषा तर्केण ॥

ये श्रुति अपणीं बुद्धि तैं ज्ञानकी प्राप्तिका निषेध करै है ओर

अविद्यायामन्तरे ॥

ये श्रुति अज्ञानीके किये उपदेश तैं ज्ञान होवे नहीं ऐसैं कहै है ओर

श्रवणायापि बहुभिः॥

ये श्रुति ज्ञानके उपदेश कर्त्ता ओर उपदेश करिकैं जिनकूँ ज्ञान होवै उन पुरुषोंकूँ दुर्लभ बतावे है तो मोकूँ आत्म ज्ञानकी प्राप्ति कैसैं होय मोकूँ तो ज्ञानकी प्राप्ति असाध्य दीखै है यातैं मैं अति ही व्याकुल हूँ सो कृपा करिकैं ऐसो उपदेश करो कि जिस तैं आत्मज्ञान हो करिकैं मैं कृतार्थ होवूँ ।

तो हम कहैं हैं कि

नाऽविरतो दुश्चरितात् नाऽशान्तो नाऽसमाहितः
नाऽशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ॥

ये कठोपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ज्यो पाप कर्म को त्याग न करै जिसके इन्द्रिय चञ्चल होंयँ जिसका मन एकाग्र न होय जिसका मन विषयों तैं हटै नहीं वो इस आत्माकूँ नहीं जाणँ सकै है ओर ज्यो इन दोषूँ करिकैं रहित होय वो इसकूँ जाणैं है यातैं ज्यो ज्ञान-की इच्छा होय तो इन दोषूँका त्याग करै ओर इस ही उपनिषद्की ये दोय श्रुति हैं कि

सत्वं प्रियान् प्रियरूपा ँश्च कामानऽभिध्यायन्
नचिकेतोऽत्यस्राक्षीः नैता ँ सृङ्कां वित्तमयीमवाप्तो
यस्यां मज्जन्ति बहवो मनुष्याः १ दूरमेते विपरीते विषूची

अविद्या या च विद्येति ज्ञाता विद्याभीप्सिनं नचिकेतसं मन्ये न त्वा कामा वहवो लोलुपन्तः २॥

इनका अर्थ ये है कि पुत्रादिकोंकूँ ओर देवाङ्गनादिकोंकूँ अनित्यतादि दोषूँ करिकैं युक्त चिन्तन करता हुवा हेनचिकेतः तैनैं त्याग किये ज्यो तू धन रूप ज्यो अधम मार्ग ताकूँ प्राप्त न हुवा जिसमैं वहुत मनुष्य दुःख पावैं हैं १ जे ये अविद्या ओर विद्या हैं ते तम ओर प्रकाश की तरँह विपरीत स्वभाव वाली हैं ओर संसार ओर मोक्ष ये इन के भिन्न फल हैं तू ज्यो नचिकेता है तिसकूँ विद्याकी कामना वाला मानूँ हूँ काहेतैं कि वहुत विषयौं नैं तेरै लोभ पैदा न किया २ तो इन श्रुतियौंका ये तात्पर्य हुवा कि विषयौंकी कामना वाला ज्यो पुरुष सो ज्ञानका अधिकारी नहीं है यातैं ज्यो ज्ञान होय ऐसी इच्छा होवै तो विषयौंकी आसक्ति को त्याग करै ओर इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

न नरेणाऽवरेण प्रोक्त एष सुविज्ञेयो वहुधा चिन्त्यमानःअनन्य प्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीयान् ह्यतर्क्यमणु प्रमाणात् ॥

इसका अर्थ ये है कि ओर पुरुष करिकैं कहा हुवा ये आत्मा नहीं जाणयाँ जाय है काहे तैं कि वादी पुरुष आत्मा है आत्मा नहीं है आत्मा शुद्ध है आत्मा अशुद्ध है आत्मा कर्त्ता है आत्मा अकर्त्ता है ऐसैं वहुत प्रकार करिकैं चिन्तन करै है ओर आत्मा तैं भिन्न दृष्टि जिसकी नहीं ऐसे आचार्यका कहा ज्यो आत्मा उसमैं है नहीं है इत्यादिक अनेक प्रकारकी चिन्ता गति नहीं है काहेतैं कि आत्मा सर्व विकल्पौं करिकैं रहित है ये आत्मा तो अणुपरिमाणतैं वी अणु है अर्थात् ज्यो अणुपरिमाण कोई वादी कल्पित करै है तो अन्य वादी उससैं वी अन्य अणुकी कल्पना करै है यातैं आत्मा अणुतैं वी अणुहै इस कथनका तात्पर्य ये है कि आत्मा अतर्क्य है तो इस श्रुतिसैं ये सिद्ध हुवा कि अनात्मज्ञानीके उपदेश करिकैं आत्म ज्ञान नहीं होय है आत्म ज्ञानीके उपदेश करिकैं आत्मज्ञान होय है यातैं तर्कका त्याग करिकैं अद्वैतदृष्टि आचार्यके उपदेश करिकैं आत्मज्ञान सिद्ध करणाँ ओर इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनूँस्वाम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्मा बहुत वेदके पठन तैं नहीं जाणयाँ जाय है और बहुत ग्रन्थोंके धारणकी शक्ति तैं नहीं जाणयाँ जाय हैं और बहुत शास्त्रोंके पठनतैं नहीं जाणयाँ जाय है ये पुरुष साधक ज्यो इसकी ही उपासना करै है उसकूँ इसका ज्ञान होय है ये आत्मा अपणैं स्वरूपका प्रकाश उसकै करैहै इसका तात्पर्य ये हुवा कि आत्मज्ञानकी इच्छा होय तो इस आत्माकी ही उपासना करै तो इन श्रुतियोंका ये तात्पर्य हुवा कि पहिलैं कहे दोषूँका त्याग करिकैं अनात्मज्ञानियोंकी सङ्गति छोडि करिकैं आत्मज्ञानीतैं उपदेश ग्रहण करै और आत्माकी ही उपासना करै उसकूँ आत्मज्ञानकी प्राप्ति होय है अन्यकूँ आत्मज्ञान नहीं होय है

ज्यो कहोकि हम आत्मज्ञानीकूँ जाणैं कैसैं तो हम कहैं हैं कि इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

नित्योऽनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधाति कामान् तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम् ॥

इसका अर्थ ये है कि अनित्यों मैं,ज्यो नित्य है और ब्रह्मादिकोंकूँ भी ज्यो चेतन करै है और ज्यो एक है और बहुतोंके काम पूर्ण करै है उसकूँ जे आत्मरूप करिकैं स्थित देखैं हैं उनकै नित्य शान्ति होय है और कै नहीं तो इसका तात्पर्य ये हुवा कि पूर्ण शान्ति जिनमैं प्रतीत होय तिन कूँ ज्ञानी जाणँ करिकैं उपदेश ग्रहण करो ज्यो कहो कि

समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठमुपगच्छेत् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि पूजन सामग्री हाथमैं ले करिकैं और सन्देह दूर करणैं मैं समर्थ आत्मज्ञान मैं जिनकी निष्ठा ऐसे जे पुरुष

तिनके पास जाय तो आपके उपदेश करिकैं मेरे हृदयके सन्देह दूर होय हैं यातैं आप ही उपदेश करो तो प्रारम्भ मैं उपदेश किया उसकूँ स्मरण करो ज्यो कहो कि पूर्व आपनैं ज्ञातताका प्रकाशक चैतन्य अपणाँ निज रूप बताया सो तो स्मरण मैं हैं परन्तु

न तत्र चक्षुः ॥

ये श्रुति आत्माके जाणणैंका सर्वथा निषेध करै है यातैं सन्देह होय है तो हम कहैं हैं कि ये श्रुति सर्वथा जाणणैंका निषेध नहीं करै है विचार करो कि ये ही श्रुति

अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि ॥

ऐसैं कहै है तो इसका अर्थ ये है कि वो आत्मवस्तु जाणयाँ गया और न जाणयाँ गया तैं ऊपर है तो इसका तात्पर्य ये हुवा कि जाणयाँ-गयापणाँ और न जाणयाँगयापणाँ ये जिससैं जाणैं जाय हैं सो अपणाँ निज रूप है।

ज्यो कहो कि इस निज रूपका अनुभव कहाँ करूँ तो हम कहैं हैं कि इस ही उपनिषद्की ये दोय श्रुति हैं कि

इन्द्रियेभ्यः परं मनो मनसः सत्वमुत्तमम् सत्वा-दधि महानात्मा महतोऽव्यक्तमुत्तमम् १ अव्यक्तात्तु परः पुरुषो व्यापकोऽलिंग एव च यज्ज्ञात्वा मुच्यते जन्तुरमृतत्वंच गच्छति २ ॥

इनका अर्थ ये है कि इन्द्रियोंतैं उत्कृष्ट मन है मनतैं उत्तम बुद्धि है बुद्धितैं उत्तम अन्तःकरण है अन्तःकरणतैं उत्तम प्रकृति है १ प्रकृतितैं उत्तम आत्मा है सो व्यापक है और अलिङ्ग है अर्थात् बुद्ध्यादिक जे सकल संसार धर्म तिन करिकैं रहित है इस आत्माकूँ जाणँ करिकैं जीता हुवा ही मुक्त होय है २ तो इन श्रुतियोंका ये तात्पर्य्य हुवा कि अज्ञानका प्रकाशक अपणाँ निज रूप है यातैं अज्ञानतैं परैं इसकूँ जाणों ज्यो कहो कि इसकूँ किससैं जाणैं तो इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥

इसका अर्थ ये है कि तहाँ सूर्य नहीँ प्रकाश करै है चन्द्रमा औरतारा नहीँ प्रकाश करैँ हैँ ये विजली नहीँ प्रकाश करै है ये अग्नि तो कैसैं प्रकाश करै वो आप प्रकाश रूप है उसके पीछैं सर्व प्रकाश करैँ हैँ अर्थात् जैसैं अग्निके जलणैं तैं सर्व जलैं हैँ तैसैं इसके प्रकाश करणैं तैं सर्व प्रकाशैं हैँ तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि आत्मा अपणैं तैं हीँ जाण्याँ जाय है इसके जाणणैं मैं अन्यकी अपेक्षा नहीँ ज्यो कहो कि आत्मा अन्य करिकैं नहीँ जाण्याँ जाय है स्वप्रकाश है तो ये सिद्ध हुवा कि आत्मा नजाण्याँगयापणाँ करिकैं जाण्याँ जाय है तो हम कहैं हैँ कि आत्माका जाणणाँ ये ही है ये नजाण्याँगयापणाँ ज्यो है सो स्वप्रकाशपणाँ है देखो तवलकारोपनिषद् की श्रुति यहाँ प्रमाण वो है कि

यस्याऽमतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥

इसका अर्थ ये है कि जिसकै ब्रह्म न जाण्याँ हुवा है ये निश्चय है उसनैं हीँ जाण्याँ है ये निश्चय है और जिस कै मैंनैं ब्रह्म जाण्याँ है ये निश्चय है वो ब्रह्मकूँ नहीँ जाणैंता है ये ब्रह्म न जाणैंणैं वाले कै जाण्याँ हुवा है और जाणैंणैं वाले कै न जाण्याँ हुवा है परन्तु ये ब्रह्म इस आत्मातैं जुदा नहीँ है यातैं इस ही उपनिषद्की ये श्रुतियाँ प्रमाण हैँ कि

यद्वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते १ यन्मनसा न मनुतेयेनाहुर्मनोमतम् तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते २ यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यन्ति तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ३ यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ४ यत्प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ५ ॥

इन श्रुतियोंका ये तात्पर्यार्थ है कि ज्यो वाणीका मनका चक्षुका श्रोत्रका प्राणका प्रकाश करै है सो ब्रह्म है ऐसैं जाणँ श्रोर ज्यो तू इससैं भिन्न-की उपासना करै है सो ब्रह्म नहीं है ।

ज्यो कहो कि मैं ज्यो यहाँ प्रश्न करूँ हूँ ताके उत्तर मैं श्राप श्रुति ही पढो हो इसका कारण कहा है तो हम कहैं हैं कि इस विषय मैं न्याय-के पढे हुये पण्डित कै अनुभव नहीं है यातैं श्रुतियों करिकैं कथनकूँ प्रमाण बताया है ज्यो कहो कि मेरा अनुभव शुद्ध कैसैं होगा तो हम कहैं हैं कि ब्रह्माभ्यास तैं अनुभव शुद्ध होगा यातैं ब्रह्माभ्यास करो ज्यो कहो कि ब्रह्माभ्यासका स्वरूप कहा है तो हम कहैं हैं कि

तच्चिन्तनं तत्कथनमन्योन्यं तत्प्रबोधनम् एत-
देकपरत्वं च ब्रह्माभ्यासं विदुर्बुधाः ॥

ऐसैं वेदान्त ग्रन्थों मैं लिखा है इसका अर्थ ये है कि उसहीका चिन्तन करै उसहीका कथन करै उसहीका आपस मैं विचार करै उसही मैं चित्तकूँ एकाग्र राखै इसकूँ ज्ञानी पुरुष ब्रह्माभ्यास कहैं हैं ।

अब कहो तुम नैं जिनकूँ द्रव्य मानैं उनमैं तैं एक बी सिद्ध न हुवा यातैं इनका मानणाँ व्यर्थ हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि परमात्मा तो सिद्ध हुवा यातैं सर्वका मानणाँ व्यर्थ न हुवा किन्तु आत्मा तैं व्यतिरिक्त जे द्रव्य उनका मानणाँ व्यर्थ हुवा तो हम कहैं हैं कि परमात्मा ज्यो है सो द्रव्य सिद्ध न हुवा यातैं द्रव्योंका मानणाँ व्यर्थ ही हुवा ज्यो कहो कि परमात्मा इस शब्दका अर्थ ये है कि परम कहिये उत्कृष्ट ऐसा ज्यो आ-त्मा सो परमात्मा तो इस प्रकार अर्थ के होणैं तैं ये सिद्ध होय है कि अनुत्कृष्ट आत्मा कोई श्रोर है सो कोन है ये कहो तो हम कहैं हैं कि तुम हीं कोई कल्पना करिकैं अनुत्कृष्ट आत्मा बणाय लेवो ज्यो कहो कि अनुव्यवसाय जिसकूँ मान्याँ सो तो नित्यज्ञान रूप परमात्मा सिद्ध हो गया श्रोर व्यवसाय ज्ञान जिसकूँ मान्याँ सो अनुव्यवसाय रूप सिद्ध हो गया श्रोर इनतैं जुदा ज्ञान कोई है नहीं तो मैं किसकूँ अनुत्कृष्ट आत्मा कल्पना करूँ तो हम कहैं हैं कि मन जब पुरीतति मैं तैं बाहिर आया तब मनका श्रोर चर्मका संयोग तो तुम मानों हीं गे काहेतैं कि तुम पुरीतति मैं हीं चर्म नहीं मानों हो उसके बाहिर तो चर्म मानों हीं हो तो उस समय मैं ज्यो

चर्ममनका संयोग होगा सो जब तक जाग्रत् अवस्था रहैगी तब तक रहैगा काहेतैं कि पुरीतति के वाहिर इस शरीर मैं तुम कोई वी देश ऐसा नहीं मानौं हो कि जहाँ चर्म न होय अब विचार करो कि न्यायके मतमैं चर्म मनका संयोग ज्ञानसामान्यका कारण है तो जब तक जाग्रत् अवस्था रहैगी तब तक ज्ञान सामान्य रहैगा और जब विषयका सन्निधान होगा तब विशेष ज्ञान होगा तो ज्यो तुम ज्ञान रूप आत्मा मानौं तब तो इस ज्ञान सामान्यकूँ आत्मा मानौं और ज्यो तुम ज्ञानका आश्रय आत्मा मानौं तो जिसमैं इस ज्ञान सामान्यकूँ रक्खो वो आत्मा कल्पित करि लेवो सो ही अनुत्कृष्ट आत्मा हो जायगा।

ज्यो कहो कि जैसैं घटसामान्यके प्रति दण्डसामान्य कारण है और घटविशेषके प्रति दण्डविशेष कारण है तैसैं हीं ज्ञानसामान्य के प्रति चर्ममनःसंयोगसामान्य कारण है और ज्ञान विशेषके प्रति चर्ममनःसंयोगविशेष कारण है तो सामान्य ज्यो है सो विशेष तैं भिन्न नहीं है यातैं ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेष तैं भिन्न न हुवा तो ज्ञान विशेष व्यवसाय ज्ञान ही है उसका अनुव्यवसाय सैं अभेद सिद्ध हो गया है यातैं जिसकूँ आपनैं ज्ञान सामान्य कहा उसकी सिद्धि नहीं होणैं तैं उस सामान्यज्ञानकूँ अथवा उसका आश्रय कल्पित करैं उसकूँ अनुत्कृष्ट आत्मा कैसैं मानैं तो हम कहैं हैं कि चर्ममनःसंयोगविशेष ज्यो तुम मानौं हो सो इन्द्रिय देशमैं चर्ममनका संयोग होय है उसकूँ मानौंगे वो ही विशेषज्ञानका कारण होगा जैसैं चक्षुर्देश मैं ज्यो चर्म है उससैं ज्यो मनका संयोग सो तो चाक्षुष ज्ञानका कारण होगा और रसनदेश मैं ज्यो चर्म उससैं मनका संयोग ज्यो होगा सो रासन प्रत्यक्षका कारण होगा ऐसैं बाह्य प्रत्यक्ष जे होय हैं तिनमैं जुदे जुदे इन्द्रियोंके देशौं मैं जुदे जुदे मनः संयोग कारण होंगे और सुखादिकोंके प्रत्यक्ष मैं जे चर्म मनः संयोग होंगे वे सुखादिकों के प्रत्यक्षों मैं कारण होंगे अब पुरीतति के वहिर्देश मैं अब मन आवैगा तो जाग्रत् अवस्था जब तक वणाँ रहैगी तब तक चर्ममनःसंयोग वणाँ हीं रहैगा तो विषय जब कोई वी नहीं होंगे उस समयमैं कोई वी ज्ञान नहीं है ऐसैं कहणाँ तो वणैं नहीं काहेतैं कि ज्ञान न होय तो शरीर सुषुप्ति भयें गिर जाय है तैसैं गिर जाय सो शरीर गिरै नहीं यातैं ये वी कोई विलक्षण ज्ञान है ऐसैं मानौं इसकूँ हमनैं ज्ञान सामान्य नाम

करिकैं कहा है ये ज्ञान तुमारे मानें सामान्य ज्ञान और विशेषज्ञानतैं विलक्षण है ज्यो कहो कि न्याय के मतमैं निर्विषयक ज्ञान मान्याँ नहीं यातैं विशेष ज्ञानोंके अभावोंकूँ इस ज्ञान के विषय मानि लेवैंगे तो ये विशेष ज्ञान हीं होगा ये विलक्षण ज्ञान कैसैं मान्याँ जाय तो हम कहैं हैं कि ये ज्ञान अभावोंकूँ विषय नहीं करे है और भावोंकूँ वी विषय नहीं करै है ये तूष्णीम्भाव नाम ज्यो अवस्था होय है उस समयका ज्ञान है देखो न्यायके मतमैं कितनी भूल है कि जिस ज्ञानका मानणाँ न्यायके मतसैं हीं अशुद्ध है ऐसे व्यवसायज्ञानकूँ तो मानैं है और जिस ज्ञानका मानणाँ न्यायके मतसैं वर्णँ सकै है ऐसे तूष्णीम्भाव नाम अवस्थाके ज्ञानकूँ नहीं मानैं है।

ज्यो याहो कि व्यवसाय ज्ञानका मानणाँ कैसैं असङ्गतहै तो हम कहैं हैं कि व्यवसाय ज्ञान नाम करिकैं रूप रसादिकोंके ज्ञानोंकूँ न्याय शास्त्र मैं मानैं हैं और चर्ममनःसंयोगकूँ तो ज्ञानसामान्यका कारण मान्याँ है और जुदे जुदे इन्द्रियोंके संयोगकूँ ज्ञानविशेषोंके कारण मानैं हैं और ज्ञानविशेषकी उत्पत्ति सामान्यज्ञानके कारण और विशेष ज्ञानके कारण इन दोनूँ तैं मानैं हैं तो जब चक्षु तैं घटका ज्ञान होगा तब चक्षु और मन इनका संयोग और चर्म और मनका संयोग ये दोनूँ कारण होंगे सो वणैं नहीं काहेतैं कि न्यायके मतमैं मन सावयव नहीं है ज्यो मन सावयव होता तब तो कोई अवयव सैं चर्म संयुक्त हो जाता और कोई अवयव सैं चक्षु तैं संयुक्त हो जाता और न्यायके मतमैं चर्म और चक्षु निरवयव नहीं हैं ज्यो चर्म और चक्षु ये निरवयव होते तो निरवयवका संयोग देशका अवरोधक नहीं होय है यातैं चर्मका और मनका तथा चक्षुका और मनका संयोग हो जाता तो विशेष ज्ञान जिसकूँ मान्याँ उसकी उत्पत्ति हो जाती परन्तु न तो एक काल मैं मनका संयोग चर्म और चक्षु तैं हो सकै और नैं चर्मका और चक्षुका संयोग मनतैं हो सकै तो विशेष ज्ञानके कारण नहीं होणैं तैं विशेष ज्ञानकी उत्पत्तिका मानणाँ असङ्गत ही है और तूष्णींभाव अवस्था मैं ज्यो ज्ञान वो केवल चर्ममनके संयोग तैंहीं होय है यातैं इसका मानणाँ असङ्गत नहीं है और ज्यो तुमनैं ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेषतैं भिन्न न हुवा ऐसा कथन किया सो असङ्गत है काहेतैं कि ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेषरूप

होय तो ज्ञान विशेषका नाश भयेँ तैं ज्ञानसामान्यनाशका व्यवहार हो जाय ओर ज्ञानविशेष ज्यो है सो ज्ञानसामान्यरूप ही है काहेतैं कि ज्ञान सामान्यके नाश भयेँ ज्ञान विशेष रहै नहीँ ज्यो कहो कि ज्ञान विशेष ज्ञान सामान्यरूप है तो इसमैं ज्ञानसामान्य व्यवहार होणाँ चाहिये तो हम कहैं हैं कि विषयके सन्निधान सैं ज्ञानसामान्य मैं विशेषपणाँ आरोपित है सो सामान्यपणाँका आवरण कर राख्या है यातैं ज्ञान विशेष मैं ज्ञानसामान्यपणाँका भान होवै नहीँ।

विचार दृष्टि तैं देखो कि ज्ञान रूप परमात्माका कैसा अलौकिक महिमा है कि जिसके निज रूपका आवरणकरणेँका सामर्थ्य कोई वी नहीँ राखै है देखो वेदान्तियों नैं वी जिस अज्ञानकी कल्पना किई है वो वी इसके आवरण करणेँका सामर्थ्य नहीँ राखै है ज्यो अज्ञान इस ज्ञान रूप परमात्माका आवरण करि लेवै तो आकारवालापणाँ तो किसमैं कल्पित करै ओर आप कैसैं सिद्ध होय ओर ये ज्ञान रूप परमात्मा कैसा है कि आपतैं विरुद्ध ज्यो अज्ञान ताकूँ वी सिद्ध करै है ओर इसके सम्बन्ध तैं आप आकारवाला दीखै है ओर इसके सम्बन्ध विना आप निराकार रहै है ज्यो कहो कि इसमैं दृष्टान्त कहा है तो हम कहैं हैं कि स्वाज्ञान शब्द ही दृष्टान्त है देखो ये पद स्व ओर अज्ञान इन दोय शब्दोँका बणाया हुवाहै तो अज्ञान शब्द ज्ञान शब्द विना सिद्ध होवै नहीँ तो वाच्यवाचकके अभेद मत सैं ज्ञान शब्द परमात्मा हीँ है तो इसनैं हीँ अज्ञानकूँ सिद्ध किया है ज्यो अज्ञानशब्द मैं ज्ञान शब्द न रहै तो अज्ञान शब्द बणैँहीँ नहीँ ओर स्व शब्द ज्यो है सो परमात्माका वाचक है तो वाच्यवाचक के अभेद मततैं ये स्व शब्द परमात्माहीँ है तो देखो स्वशब्द निराकार है अर्थात् स्वशब्द मैं आकार नहीँ है किन्तु अकार है तो स्वशब्द निराकार हैं ओर अज्ञान शब्दका इससैं सम्बन्ध होय है तब ये स्वशब्द आकार वाला दीखै है देखो स्वाज्ञान इस शब्द मैं स्वशब्द आकार वाला है अकार वाला नहीँ है ओर स्वाज्ञान इस शब्द मैं तैं अज्ञान शब्दकूँ दूर कर देवैं तो स्व शब्द निराकार रहिजावै है अर्थात् स्वशब्द आकारवाला नहीँ रहै है ये दृष्टान्त साहित्य विद्याके जाणँवे वाले जे पुरुष तिनके हृदय मैं अत्यन्त ही चमत्कार करैगा ओर ऊषर भूमि की तरैँह जिनकी तर्ककर्कश बुद्धि है उनमैं ये दृष्टान्त बीज आनन्दाङ्कुरकूँ करै नहीँ।

अब कहो तूष्णीम्भाव नाम अवस्था मैं विशेष ज्ञानतैं विलक्षण ज्ञान सामान्य सिद्ध हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति और अनुभवतैं येज्ञानसामान्य सिद्ध हुवा और विशेष ज्ञानतैं विलक्षण वी हुआ परन्तु न्यायशास्त्र मैं व्यवसाय ज्ञान और अनुव्यवसाय ज्ञान इनतैं विलक्षण ज्ञानमान्याँ नहीं यातैं हम इसकूँ नित्य स्वप्रकाश ज्ञान ज्यो आपनैं पूर्व सिद्ध किया है तद्रूप मानैं गे और अवस्था भेद तैं इस मैं भेद है स्वरूप तैं भेद नहीं ऐसैं मानैं गे तो हम कहैं हैं कि मनका मानणाँ व्यर्थ हुवा काहे तैं कि आत्मा मैं ज्ञानकी उत्पत्तिके अर्थ तुमनैं मनकूँ मान्याँ है सो ज्ञान तो नित्य सिद्ध हो गया आत्मा इस सैं जुदा सिद्ध हुवा नहीं और ज्यो इस ज्ञान मैं हीं मनका संयोग मानि करि कैं कोई अनित्य ज्ञानकी कल्पना करि लेवो सो वणैं नहीं काहे तैं कि मन तो तुमारे मत मैं द्रव्य है और ज्ञान ज्यो है सो गुण है इनका संयोग वणैं सकै नहीं द्रव्योंका ही संयोग होय है ये न्यायवालोंका नियम है यातैं मनका मानणाँ व्यर्थ ही है ।

और कहो कि तुम चर्म और मनके संयोग करिकैं आत्मा मैं ज्ञान की उत्पत्ति मानौं हो तो ये कहो कि सुषुप्तिके अव्यवहित उत्तर क्षण मैं प्रथम चर्म सैं मनका संयोग कोन से देश मैं होय है चर्म तो पुरीतति के विना सर्व शरीर मैं है ज्यो कहो कि मनके प्रथम संयोगका देश तो लिखा नहीं तो हम कहैं हैं कि कोई देश मानि लेवो तो मन तुमारे मत मैं परमाणु रूप है तो ये मन जिस देश मैं चर्म सैं संयुक्त होगा उस ही देश मैं आत्मा मैं ज्ञानकूँ पैदा करैगा अथवा अन्य देश मैं वी ज्ञानकूँ पैदा करैगा ज्यो कहो कि उस ही देश मैं ज्ञानकूँ पैदा करैगा तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानणाँ तो असङ्गत है काहे तैं कि ज्ञानकी प्रतीति सर्व शरीर मैं होय है ज्यो कहो कि अन्य देश मैं वी ज्ञानकूँ पैदा करै है तो हम कहैं हैं कि आत्मा तुमारे मत मैं व्यापक है यातैं घटदेश मैं वी ज्ञानकी प्रतीति होणीं चाहिये ज्यो कहो कि जितने देश मैं चर्म है उतने मैं ज्ञानकूँ पैदा करै है जैसैं पृथ्वी घटके पैदा करणैंके योग्य है परन्तु जितने देश मैं स्निग्ध है अर्थात् चिकणीं है उस मैं हीं घट होय है तो हम कहैं हैं कि पृथ्वीकूँ तो तुम सावयव मानौं हो यातैं कोई देश तो घट होणैं के योग्य मान सकोगे और कोई देश घट होणैं के अयोग्य

मान सकोगे आत्मा तो तुमारे मत मैं निरवयव है इसके देश स्वभाव कैसैं हो सकैं यातैं ऐसैं मानणाँ वी असङ्गत ही है ।

ज्यो कहो कि आत्मा मैं आरोपित देश मानैं गे तो हम कहैं हैं कि आरोपित नाम तो मिथ्याका है ज्यो आत्मामैं देश मिथ्या हुवा तो उस देशमैं ज्ञानका मानणाँ वी मिथ्या ही होगा जैसैं रज्जु मैं सर्प आरोपित है तो उस मैं नील पणाँ आदि ले करि कैं सारे धर्म आरोपित ही हैं अब कहो आत्मा मैं ज्ञान ओर देश इनका आरोप कोन करैगा अर्थात् आत्मा आरोप करैगा अथवा मन ज्यो कहो कि दोनूँ मैं तैं चाहे जिसकूँ आरोप-का कर्त्ता मानि लेवैं गे तो हम कहैं हैं कि न्यायके मत मैं तो आत्मा ओर मन दोनूँ हीं जड हैं ये आरोपके कर्त्ता कैसैं हो सकैं अब ज्यो आ-रोपका कर्त्ता कोई सिद्ध न हुवा तो आत्मा मैं आरोपित देश मानणाँ असङ्गत हुवा ज्यो आरोपित देश मानणाँ असङ्गत हुवा तो उस देश मैं ज्ञानकी उत्पत्तिके अर्थ मनका मानणाँ असङ्गत हुवा ऐसैं पृथ्वीकूँ आदि लेकैं मन पर्यन्त द्रव्योंका मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब हम ये ओर पूछैं हैं कि तुमनैं जिनकूँ द्रव्य मानैं हैं उनकूँ देख करि कैं मानैं हैं अथवा देखैं विना हीं मानैं हैं ज्यो कहो कि पृथ्वी जल तेज वायु जे कार्य रूप हैं उनकूँ ओर जीवकूँ तो देख करि कैं मानैं हैं ओर परमाणु रूप जे पृथ्वी जल तेज वायु इनकूँ ओर आकाश काल दिशा परमात्मा मन इनकूँ देखैं विना हीं मानैं अर्थात् अनुमान तैं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि कोई द्रव्यका प्रत्यक्ष तो हमकूँ वी कराणाँ चाहिये ज्यो कहो कि घट ज्यो है सो पृथ्वी द्रव्य है उसकूँ आप नैं देखा है मैं आपकूँ घटका प्रत्यक्ष कहा करावूँ ऐसैं हीं जल तेज वायु इनकूँ देखि लेओ तो हम कहैं हैं कि जिसकूँ तुम घट नाम करि कैं व्यवहार करो हो सो ये घट मोजूद है परन्तु यहाँ रूपस्पर्श गन्ध सङ्ख्या परिमाण पृथक् संयो-ग परत्व अपरत्व गुरुत्व इत्यादिक ज्यो तुमनैं गुण मानैं हैं वे ही दीखैं हैं अथवा पृथ्वी वी दीखै है ये तुम हीं कहो तो तुमकूँ ये ही कहणाँ पडैगा कि पृथिव्यादिक तो अपणैं निज स्वरूप तैं दीखैं नहीं किन्तु इन के गुण हीं दीखैं हैं गुणोंके दीखणैं तैं हीं इन पृथिव्यादिकोंका प्रत्यक्ष मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो आचार्योंके अभिप्रायतैं विरुद्ध है काहेतैं कि ज्यो गुणके प्रत्यक्षतैं पृथिव्यादिकोंका प्रत्यक्ष आचार्योंकैं सम्मत होता तो

न्यायके आचार्य आकाशका बी प्रत्यक्ष मानते काहे तैं कि शब्द आकाश-का गुण है इसका प्रत्यक्ष श्रोत्रतैं होय है यातैं गुणके प्रत्यक्षतैं द्रव्यका प्रत्यक्ष मानणाँ ये आचार्योंका अभिप्राय नहीँ हो सकै ज्यो कहो कि मैं पृथ्वी जल तेज इनकूँ चक्षुतैं जाणूँ हूँ वायुकूँ त्वक्तैं जाणूँ हूँ ये व्यवहार होय है तैसैं आकाशकूँ श्रोत्रसैं जाणूँ हूँ ऐसैं व्यवहार होवै नहीँ यातैं आकाशका प्रत्यक्ष होवै नहीँ तो हम कहैं हैं कि व्यवहारसैं पृथिव्यादिकोंका प्रत्यक्ष मानौं हो तो नील अन्धकार चलता है ऐसा वी लोक मैं व्यवहार होय है यातैं अन्धकार मैं वी नीलरूप मानौं और चलनरूप क्रियामानौं परन्तु तुमारे मतमैं अन्धकारकूँ तेजका अभाव मान्याँ है और इसमैं नीलरूप-की तथा क्रियाकी प्रतीति भ्रम मानी है यातैं व्यवहारतैं वी पृथिव्यादि-कोंका प्रत्यक्ष मानणाँ असङ्गत ही है।

ज्यो कहो कि हमकूँ पृथिव्यादिक द्रव्य अपणैं निज स्वरूपतैं दीखैं नहीँ परन्तु गौतमादि ऋषि सर्वज्ञ योगी रहे उननैं इन पृथिव्यादिकोंकूँ निज स्वरूपतैं देखे हैं यातैं हम इनकूँ मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि बडाही आश्चर्य है कि गौतमजी तर्कशास्त्रके आचार्य भये उनकूँ तो द्रव्य दीखे और साक्षात् शेषावतार और योगके आचार्य पतञ्जलि महाराजकूँ न दीखे जिननैं गुणोंके समुदायमैं द्रव्य व्यवहार किया।

ज्यो कहो कि आप गौतमजीकूँ सर्वज्ञ योगी मानौं हो अथवा नहीँ तो हम तो सारे ऋषियोंकूँ सर्वज्ञ योगी मानैं हैं और इनके सिद्धान्तोंमैं परस्पर विरोध नहीँ मानैं इन सर्वका अभिप्राय केवल परमात्माके निज रूपके निर्णयमैं तथा परमात्मातैं जुदी चीज के न मानणैं मैं है केवल इनकी प्रक्रियावों मैं भेद है इनके अभिप्रायकूँ समुझैं नहीँ वे इनके कथनमैं विरोधकी कल्पना करैं हैं।

ज्यो कहो कि परमातैं व्यतिरिक्त वस्तु है ही नहीँ ये गौतमजीका अभिप्राय है ये आपकूँ कसैं मालुम होय है तो हम कहैं हैं तुम चित्त मैं तैं विरोधकूँ त्यागि करिकैं एकाग्र हो करिकैं श्रवण करो देखो गौतमजीनैं मूल उपादान कारण परमाणु मान्याँ है तो वेदमैं परमाणुरूप पृथ्वी जल तेज वायु तो मानैं हैं नहीँ और वेद सकल प्रमाणों मैं शिरोमणि है ये सकल आस्तिक मानैं हैं यातैं गौतमजी वेदतैं विरुद्ध मान सकैं नहीँ तो

ये देखो कि वेदमैं परमाणु किसकूँ कहा है ज्यो वेदकूँ देखते हैं तो कठोपनिषद्की ये श्रुति है कि

अणोरणीयान् महतोमहीया नात्मास्ति जन्तोर्निहितो गुहायाम् तमक्रतुऽ पश्यतिवीतशोको धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्मा ज्यो है सो अणुतैं अणु है महान्तैं महान् है ब्रह्माकूँ आदि लेकरिकैं तृण पर्यन्त ज्यो है ताके हृदयमैं स्थित है अर्थात् सर्व को आत्मा है जब पुरुष निष्काम होय है और शोक करिकैं रहित होय है तब इन्द्रियोंके प्रसादतैं इस आत्माकूँ जाणैं है आत्माके महिमाकूँ जाणैं है और अन्य उपनिषदों की ये दोय श्रुतियें हैं कि

एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः ॥

और

सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं नित्यम् ॥

इनका अर्थ ये है कि ये अणु आत्मा चित्तैं जाण्याँ जाय है ये सूक्ष्मसैं अति सूक्ष्म है नित्य है तो परमाणु आत्मा हुवा अब विचार करो कि गौतमजीनैं मूल उपादान कारण परमाणु मान्याँ है तो आत्मा मूल उपादान कारण हुवा तो इससैं हीं कार्यद्रव्योंकी उत्पत्ति मानीं है अब विचार करो कि कार्य ज्यो है सो अपणैं उपादान कारणतैं विजातीय होवै नहीं जैसैं कपालतैं घट होय है तो कपाल उपादान है सो पृथ्वी है तो घट कार्य है सो वी पृथ्वी ही होय है तैंसैं परमाणु परमात्मा उपादान हुवा तो कार्य इससैं विजातीय कैसैं होसकैं यातैं कार्य द्रव्य मात्र परमात्मा हीं भये और

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि यहाँ नाना कुछ नहीं है तो इस श्रुति सैं कार्योंका निषेध सिद्ध होय है और गौतमजीका असत्कार्यवाद मत है इसका तात्पर्य ये है कि कारण सैं नहीं वर्त्तमान हीं कार्य पैदा होय है अर्थात् कपालादिक जे हैं उन सैं घटादिक कार्य नहीं हैं वे ही उत्पन्न होय हैं तो जैसैं मृत्तिका ज्यो है सो घट हुवा है तो घट मृत्तिका ही है तैसैं उपादान मैं असत् अर्थात् नहीं है सो कार्य हुवा है तो कार्य असत

ही है अर्थात् कार्य नहीं रूप ही है तो गौत्तमजी महाराजके मत तैं ये सिद्ध हुवा कि जैसैं सामान्य उपादान ज्यो मृत्तिका तातैं जे कार्य भये हैं ते मृत्तिका रूप ही हैं तैसैं ही सारे कार्यौंका सामान्य उपादान कारण परमाणु है अर्थात् परमात्मा हीं है तो सारे कार्य सामान्य उपादान रूप ही हैं अर्थात् परमात्मा हीं हैं अब तुम अपणैं अनुभव तैं देखो सामान्य उपादानका ये स्वभाव है कि अपणैं स्वरूप तैं वणाँ हीं रहै है जैसैं घटादिक जे कार्य द्रव्य हैं उनका सामान्य उपादान मृत्तिका है तो घटादिकोंके आदि मध्य अन्त मैं मृत्तिका वणीं हीं रहै है तैसैं कार्य द्रव्य मात्रका सामान्य उपादान परमाणु है अर्थात् परमात्मा है तो कार्य द्रव्योंके आदि मध्य अन्त मैं परमात्मा वणाँ हीं रहै है और जैसैं घटादि कार्यावस्था मैं मृत्तिका रूप सामान्य उपादान हीं घटादि रूप प्रतीत होय है तैसैं हीं कार्यद्रव्य मात्रावस्था मैं परमाणु कहिये परमात्म रूप ही सामान्य उपादान कार्यद्रव्यमात्र रूप करि मैं प्रतीत होय है तो गौत्तमजीका मत और श्रुति इनकी ऐकार्थकता तैं ये सिद्ध होगया कि कार्य द्रव्य सारे परमात्मा हीं हैं ये ही गौत्तमजीका अभिप्राय है सो ये अभिप्राय तो परमाणुकूँ मूल उपादान मान्याँ यातैं सिद्ध हुवा।

और गौत्तमजी नैं असत्कार्यवाद मान्याँ तो ये सिद्ध हुवा कि जैसैं मृत्तिका घट होय है तो घट मृत्तिका ही है तैसैं असत् कार्य होय हैं तो कार्य असत् ही हैं ज्यो कहो कि ऐसैं गौत्तमजीका अभिप्राय मानणैं तैं तो ये अर्थ सिद्ध होय है कि सद्रूप घटादिक कार्य जे हैं ते असत् हैं काहेतैं कि

अणोरणीयान् ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं मूल उपादान सद्रूप हुवा तो कार्यद्रव्य जे हैं ते उपादानतैं विलक्षण होवैं नहीं यातैं कार्यद्रव्य सारे सद्रूप भये और

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं नानाका निषेध हुवा तो कार्यद्रव्य सारे असद्रूप हुये तो जैसैं उष्ण अग्नि शीतल है ऐसैं मानणाँ विरुद्ध है तैसैं सद्रूप कार्यद्रव्य असत् हैं ऐसैं मानणाँ वी विरुद्ध ही है तो हम कहैं कि इस उपालम्भके योग्य तो वेद है देखो वेद ही कार्यद्रव्योंकूँ सद्रूप और

असद्रूप कहै है ज्यो कहो कि महाराज मैं तो उपालम्भ देवूँ नहीं किन्तु आपके कथन तें जैसें समुझूँ हूँ तैसें कहूँ हूँ यातें मेरे सन्देह नहीं रहै तैसो उत्तर करो तो हम पूछैं हैं तुम कहो गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणैं तें ये अर्थ सिद्ध हुवा कि सद्रूप कार्य असत् है इसमैं तुमारे सन्देह कहा है ज्यो कहो कि है जिसका होणाँ कैसें होसकै जैसें घट है तो इसका होणाँ नहीं है अर्थात् ज्यो घट है सो होय है ऐसें किसीकूँ वी अनुभव होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि नहीं है जिसका होणाँ कैसें होसकै जैसें सुस्साका सींग नहीं है तो इसका होणाँ नहीं है अर्थात् ज्यो सुस्साका सींग नहीं है सो होय है ये अनुभव किसीकूँ वी होवै नहीं।

ज्यो कहो कि असत् तीन प्रकारके हैं स्वपूर्वकालासत्१ स्वोत्तरकालासत्२ और त्रिकालासत्३ तो भावी पदार्थ तो सर्व स्वपूर्वकालासत् हैं अर्थात् भावी पदार्थ सारे आपके पूर्वकालमैं असत् हैं और जे भूतपदार्थ हैं ते स्वोत्तरकाला-सत् हैं अर्थात् भूतपदार्थ सारे आपके उत्तरकाल मैं असत् हैं और त्रिका-लासत् वे हैं जे तीनूँकालमैं न होंयँ तो गौतमजी ज्यो असत् कार्यवाद-मानैं हैं सो स्वपूर्वकालासत्कार्यवाद है तो कार्यद्रव्य अपणैं पूर्वकालमैं हीं असत होंगे ज्यो पूर्वकाल मैं कार्यद्रव्य असत् भये तो वर्त्तमान कालमैं सत् सिद्ध होगये ऐसैं गौतमजी असत्कार्यवाद मानैं हैं तो हम पूछैं हैं गौतमजी स्वोत्तरकालासत्कार्य मानैंगे अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि स्वो-त्तरकालासत् कार्य मानैंगे परन्तु इस कार्यकी उत्पत्ति नहीं मानैंगे का-हेतैं कि जब कार्यका ध्वंस होगा तब कार्य द्रव्य स्वोत्तरकालासत् कहावैगा सो ध्वंस न्यायके मतमैं अनन्त है अपणैं प्रतियोगीका विरोधी है तो विरोधीके होतैं कार्य होवै नहीं यातैं स्वोत्तरकालासत् कार्य उत्पन्न होवै नहीं तो हम पूछैं हैं गौतमजी त्रिकालासत् वी किसीकूँ मानैंगे अथवा नहीं तो तुम येवी कहोइंगे कि सुस्साँका सींग वाँझका पुत्र आकाशका पुष्प इनकूँ त्रिकालासत् मानैंगे तो तुम येवी कहो कि कार्य द्रव्य अपणाँ स्थिति के कालमैं सत् हैं अथवा नहीं तो कार्य द्रव्य स्थिति कालमैं सत् हैं ऐसें हीं कहोगे तो ये वी कहो कि कार्य द्रव्य अपणीं स्थितिके कालमैं स्वपूर्व-कालासत् और स्वोत्तरकालासत् वी हैं अथवा नहीं तो हैं ऐसें हीं कहोगे तो अब हम पूछैं हैं वर्त्तमान कालमैं सत् ऐसा ज्यो कार्य द्रव्य सो उन ही कालमैं स्वपूर्वोत्तरकालासत् कैसें कहावैगा सत्

और असत् ये व्यवहार तो विरुद्ध हैं ज्यो कहो कि ये व्यवहार कालापेक्ष है यातैं विरुद्ध नहीं तो हम कहैं हैं कि गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करिकैं ज्यो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि सद्रूप कार्य द्रव्य असत् हैं ये बी विरुद्ध नहीं है काहेतैं कि सामान्य उपादानकी दृष्टितैं तो कार्य द्रव्य सारे सत् हैं और कार्यपणैंकी दृष्टि तैं सारे कार्य द्रव्य असत् हैं ।

ज्यो कहो कि मूल उपादानकी दृष्टितैं कार्य द्रव्य सत् हैं और कार्यपणैंकी दृष्टितैं असत् हैं तो स्वरूप तैं ये द्रव्य कहा हैं तो हम कहा कहैं तुम हीं गौतमजीके बणाये जे सूत्र हैं तिनमैं देखो ज्यो कहो कि स्वरूपदृष्टि तैं तो कार्य द्रव्योंकूँ कुछ बी कहे नहीं तो हम कहैं हैं कि कुछ बी कहे नहीं तो कुछ बी नहीं हैं ज्यो कार्य द्रव्य कुछ होते तो गौतमजी कुछ कहते ज्यो कहो कि कार्य द्रव्य कुछ बी नहीं हैं ऐसैं बी गौतमजी बोले नहीं तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्तन्ते ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिससैं वाणी निवृत्त होय है अर्थात् ज्यो वाणीका विषय नहीं है सो ही हैं जिनकूँ तुम कार्य द्रव्य मानों हो ये अर्थ गौतमजीके नहीं वोलणैं तैं प्रतीत होय है ।

ज्यो कहोकि

तंत्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामि ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि उपनिषद् जिसका वर्णन करैं हैं उस परमात्माकूँ मैं पूछूँ हूँ तो परमात्मा वाणीका विषय नहीं है तो उपनिषद् उसकूँ कैसैं कहैं हैं तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्त्तन्ते ॥

इस श्रुतिका तात्पर्य ये है कि परमात्मा उपनिषदों तैं भिन्न ज्यो वाणी ताका विषय नहीं है तो तुमनैं जिनकूँ कार्यद्रव्य मानैं वे तो परमात्म रूप हैं और न्याय सूत्र उपनिषद् हैं नहीं याही तैं तुमारे मानें कार्य द्रव्योंकूँ स्वरूप दृष्टितैं गौतमजीनैं अपणैं सूत्रों मैं कुछ बी कहे नहीं यातैं तुमनैं जिनकूँ कार्य द्रव्य मानैं से परमात्मा हीं हैं ।

ज्यो कहो कि कार्य द्रव्य पूर्व काल और उत्तर कालमैं असत् हैं तो वर्त्तमान कालमैं वी असत् ही हैं जैसैं घट ज्यो है सो पूर्वकाल और उत्तर काल मैं पृथ्वी है तो वर्त्तमान काल मैं वी पृथ्वी ही है ऐसैं कार्य द्रव्य त्रिकालासत् हुये यातैं ये परमात्मा नहीं हो सकैं ऐसैं मानणें मैं श्रीकृष्ण का वचन वी प्रमाण है देखो उननैं अर्जुनकूं कही है कि

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥

इसका अर्थ ये है कि सारे कार्य आदि मैं अव्यक्त हैं और मध्य मैं व्यक्त हैं और अन्त मैं वी अव्यक्त हैं इनमैं सोच कहा है यहाँ अव्यक्त शब्दका अर्थ असत् है ज्यो कहो कि अव्यक्त शब्दका अर्थ असत् है तो व्यक्त शब्दका अर्थ सत् हुवा तो श्रीकृष्णके कथन तैं कार्य द्रव्य मध्य मैं सत् सिद्ध हुये यातैं त्रिकालासत् कैसैं होसकैं तो हम कहैं हैं कि श्रीकृष्ण नैं ज्यो ये कही कि इसमैं सोच कहा है तो इसका तात्पर्य ये है कि तेरेकूं सत् दीखैं हैं उस समय मैं वी असत् ही हैं ये सोच करणैं के योग्य नहीं ज्यो कार्य द्रव्य होवैं तो इनका सोच करणाँ वी उचित होवै और अनुमान तैं वी ये कार्य द्रव्य त्रिकालासत् सिद्ध होय हैं जैसैं अलीक पदार्थ पूर्वोत्तर कालासत् हैं यातैं वर्त्तमान कालासत् हैं तैसैं हीं कार्य द्रव्य वी पूर्वोत्तर कालासत् हैं यातैं वर्त्तमान कालासत् हैं यातैं ये सिद्ध हुवा कि त्रिकालासत् होणें तैं कार्य द्रव्य परमात्मा नहीं हैं परमात्मा तो त्रिकालसत् है तो हम कहैं हैं कि कार्य द्रव्य परमात्मा हीं हैं काहे तैं कि जैसैं घट वर्त्तमान काल मैं पृथ्वी है तो पूर्वोत्तर काल मैं वी ये पृथ्वी ही है तैसैं हीं सारे कार्य द्रव्य वर्त्तमान काल मैं सत् हैं तो पूर्वोत्तरकाल मैं वी सत् ही हैं ज्यो कहो कि श्रीकृष्ण के वाक्यकी कहा गति होगी तो हम कहैं हैं कि श्री कृष्ण-के वाक्य मैं अव्यक्त शब्द का अर्थ सत् है ज्यो कहो कि अव्यक्त शब्दका अर्थ सत् हुवा तो व्यक्त शब्दका अर्थ असत् होगा सो श्रीकृष्णके वाक्य तैं कार्य द्रव्य मध्य मैं असत् सिद्ध हुये तो ये त्रिकालासत् कैसैं होसकैं तो हम कहैं हैं कि श्रीकृष्ण नैं ज्यो ये कही कि इसमैं सोच कहा है तो इसका तात्पर्य ये है कि तेरेकूं सद्रूप आत्मा तैं भिन्न दीखैं हैं यातैं असत् दीखैं हैं उस समय मैं वी सत् ही हैं यातैं ये सोचके योग्य नहीं ज्यो ये न होवैं तो

इनका सोच करणाँ वी उचित होवे ओर यहाँ ऐसा अनुमान वी वणाँ जा-
यगा कि जैसैं परमात्मा पूर्वोत्तरकाल सत् है तो वर्त्तमानकालसत् वी है
तैसैं हीं कार्य द्रव्य पूर्वोत्तरकालसत् हैं यातैं वर्त्तमानकालसत् हैं तो
ये सिद्ध हुया कि त्रिकालसत् होणैं तैं कार्य द्रव्य सद्रूप हैं यातैं परमा-
त्मा हीं हैं ।

ज्यो कहोकि अव्यक्त शब्दका अर्थ सत् है ये आपनैं कहाँ देखा है तो
हम कहैं हैं कि

अव्यक्तोयमचिन्त्योयम् ॥

इस गीताके श्लोक मैं अव्यक्त शब्द करिकैं आत्माकूँ कहा है सो
आत्मा सत् है ओर गीताका सप्तम अध्याय मैं श्रीकृष्ण नैं कही है कि

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ॥

इसका अर्थ ये है कि अव्यक्त ज्यो मैं तिसकूँ मूर्ख पुरुष व्यक्त मानैं
हैं यहाँ वी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा हीं है सो सत् है ओर व्यक्त
कहिये असत् ऐसैं मानवेवाले जे पुरुष तिनकूँ निर्बुद्धि कहे हैं ओर अष्टम
अध्याय मैं असैं कही है कि

अव्यक्तोक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ॥

इसका अर्थ ये है कि जिसकूँ अव्यक्त ओर अक्षर कहा है उसकूँ प-
ण्डित परम गति कहैं हैं तो यहाँ वी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा है
सो सत् है ऐसैं गौतमजीके मततैं कार्य द्रव्य परमात्मरूप सिद्ध भये ओर
मूल उपादान परमाणु परमात्मा सिद्ध हुवा ओर कार्यपणैं की दृष्टि तैं सारे
कार्य द्रव्य असत् सिद्ध भये ज्यो कहो कि सद्रूप होणैं तैं कार्य द्रव्य परमात्म
रूप हुये तैसैं असद्रूप होणैं तैं परमात्मा तैं भिन्न सिद्ध होंगे तो हम कहैं
हैं कि गीताके नवम अध्याय मैं श्रीकृष्ण नैं कही है कि

सदसच्चाहमर्जुन ॥

इसका अर्थ ये है कि हे अर्जुन सत् ओर असत् ज्यो है सो मैं हूँ
तो गौतमजीके मततैं कार्य द्रव्य सत् ओर असत् सिद्ध हुये हैं यातैं परमा-
त्मा हीं हैं ओर देखो कि गौतमजी आकाश काल दिशा ओर जीवात्मा इन-
कूँ व्यापक कहे हैं ओर श्रुति परमात्माकूँ व्यापक कहे है तो आकाश काल-

दिशा और जीवात्मा ये परमात्मरूप सिद्ध भये और वेद में मनका स्वरूप परमाणु कहीं वी लिखा नहीं और गौतमजी नैं मनकूं परमाणु कहा है तो परमाणु नाम परमात्माका है यातैं मन परमात्म रूप सिद्ध हुवा।

ज्यो कहो कि आपनैं पूर्व गौतमजीके मानैं सारे द्रव्योंका मानणाँ व्यर्थ बताया है अब इनकूं आप कैसैं परमात्मरूप करिकैं मानों हो जैसें घट पृथ्वीरूप सिद्ध होणें तैं अपणैं स्वरूप तैं असिद्ध नहीं है तैसें द्रव्य परमात्म रूप सिद्ध भये तो वी अपणैं स्वरूपतैं असिद्ध नहीं होंगे तो द्रव्यों-का मानणाँ व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि पृथ्वी तैं जुदा घटका स्वरूप कुछ वी नहीं है ज्यो घटका स्वरूप जुदा है तो पृथ्वीकूं दूर करिकैं अपणैं अनुभवतैं देखो घटका स्वरूप कहा है ज्यो कहो कि पृथ्वी दूर करणें तैं तो घटका स्वरूप कुछ है ही नहीं तो हम कहैं हैं कि सद्रूप परमात्माकूं जुदा करणें तैं द्रव्योंका स्वरूप कुछ है ही नहीं ज्यो कहो कि पृथ्वीके होणें तैं तो घटका स्वरूप कुछ है तो घट सिद्ध होगया तैसें सद्रूप परमात्माके होणें तैं द्रव्योंका स्वरूप कुछ है तो द्रव्य सिद्ध होगये इनका मानणाँ व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि पृथ्वीके होणें तैं घटका स्वरूप कुछ मानों हो तो वी घट पृथ्वी है इसमैं तुमारे कुछ वी सन्देह नहीं है तैसें सद्रूप परमात्माके होणें तैं द्रव्योंका स्वरूप कुछ मानों हो तो वी द्रव्य सारे सद्रूप परमात्मा हीं हैं ऐसैं वी निःसन्देह हो करिकैं मानों ज्यो कहो कि जैसें घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है तैसें पृथ्वी घट है ये व्यवहार होवै नहीं यातैं घट पृथ्वी तैं विलक्षण है तैसें द्रव्य सद्रूप परमात्मा हैं तो वी सद्रूप परमात्मा द्रव्य नहीं यातैं द्रव्य सद्रूप परमात्मातैं विलक्षण हैं तो द्रव्य परमात्मा तैं जुदे सिद्ध भये तो हम कहैं हैं कि यद्यपि पृथ्वी घट है ये व्यवहार घटतैं जुदे देशमैं होवै नहीं तो वी घट देश मैं पृथ्वी घट है ये व्यवहार होय है यातैं घट पृथ्वी ही है तैसें द्रव्यों तैं जुदे देश मैं सद्रूप परमात्मा द्रव्य नहीं तो वी द्रव्य देशमैं सद्रूप परमात्मा द्रव्य है यातैं द्रव्य परमात्मा हीं हैं ज्यो कहो कि घट देशमैं वी घट और पृथ्वी जुदे हैं यातैं कोई घट व्यवहार करै है और कोई पृथ्वी व्यवहार करै है यातैं घट पृथ्वी तैं विलक्षण है तैसें हीं द्रव्य देश मैं वी द्रव्य और सद्रूप परमात्मा जुदे हैं यातैं कोई द्रव्य व्यवहार करै है और कोई सद्रूप परमात्म व्यवहार करै है यातैं द्रव्य सद्रूप परमात्मा तैं विलक्षण हैं तो हम पूछैं हैं कि घट देश

मैं घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है तो तुमकूँ ये वी कहणाँ हीं पडैगा कि द्रव्यदेश मैं द्रव्य सद्रूप परमात्मा हीं हैं ज्यो कहो कि द्रव्य सद्रूप परमात्मा हैं ऐसैं तो कोई वी व्यवहार करै नहीं तो हम पूछैं हैं कि द्रव्य हैं ऐसैं तुम व्यवहार करो हो अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि द्रव्य हैं ऐसैं हम व्यवहार करैं हैं तो हम कहैं हैं कि द्रव्य हैं यहाँ हैं शब्दका अर्थ सत् है तो द्रव्य हैं इस वाक्यका अर्थ द्रव्य सद्रूप हैं ये हुवा अथ सत् तैं जुदे द्रव्य सिद्ध करोगे तो है तैं विलक्षण सिद्ध होंगे तो तुम हीं कहो है तैं विलक्षण कहा है ज्यो कहो कि है तैं विलक्षण तो नहीं है तो हम कहैं हैं द्रव्योंकूँ सद्रूप नहीं मानों तो सारे तुमारे मानैं द्रव्य नहीं रूप सिद्ध होंगे यातैं द्रव्योंकूँ सद्रूप ही मानों और सद्रूप परमात्मा तैं जुदे मानों तो नहीं रूप मानों ये ही गौतमजीका अभिप्राय है ज्यो कहो कि न तो सारे द्रव्य प्रत्यक्ष तैं सिद्ध भये और नैं गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणैं तैं द्रव्य सिद्ध भये तो हम द्रव्योंकूँ अनुमानतैं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि द्रव्य सामान्यका आधार कोई न्यायके मत मैं है नहीं यातैं जिसकूँ हेतु बणावोगे वो आश्रयासिद्ध हेतु होगा यातैं द्रव्य सर्वथा सिद्ध हो सकै नहीं ।

ज्यो कहो कि न्यायके मत तैं द्रव्य सिद्ध न भये तो हम योगके मत तैं गुण समुदायकूँ द्रव्य मानैंगे तो हम पूछैं हैं तुम ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानोंगे अर्थात् जैसैं धान्यराशि ज्यो है सो धान्य समुदाय है तो ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं धान्योंका समुदाय है ऐसैं मानोंगे अथवा पङ्क्तिक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानोंगे अर्थात् जैसैं माला मैं मणिनका समुदाय है तो पङ्क्तिक्रम करिकैं है तैसैं गुणोंका समुदाय मानोंगे ज्यो कहो कि ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानैंगे तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानणाँ तो असङ्गत है काहे तैं कि ज्यो ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय घट द्रव्य होय तो ऊर्ध्वगत गुण करिकैं अन्य गुणोंका आवरण होणाँ चाहिये जैसैं ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं समुदित किये जे पट तिनमैं ऊर्ध्वगत ज्यो पट ता करिकैं अधोगत जे पट तिनका आवरण होय है अर्थात् जैसैं ऊपर नीचैं ज्यो क्रम ता करिकैं इकट्ठे किये जे वस्त्र तिनमैं ऊपरके वस्त्र करिकैं नीचैं के वस्त्र ढकि जाय हैं परन्तु गुणसमुदायरूप ज्यो घट

द्रव्य तामैं यदि गुण निराश्रय होवैं हैं अर्थात् वे गुण इक दूसरे गुणमैं रहता है ये व्यवहार होवै नहीं यातैं पर्यायरूप करिके गुणोंका समुदाय द्रव्य मानणां असद्व्यवहार है ।

जो कहो कि यदि गुण स्वरूप तैं निरवयव हैं निरवयव वस्तु आवरण करनेका स्वभाव रखै नहीं जैसें न्यायके मतमैं आकाशकूं निरवयव मान्यां है तो आकाशका आवरण करनेका स्वभाव नहीं मान्यां है यातैं गुणोंका समुदाय पर्यायरूप करिके हुवा है तो भी एक गुण दूसरे गुणका आवरण करै नहीं इस ही कारण तैं घटमैं यदि गुण होवै है तो हम कहैं हैं कि गुण यदि निरवयव हैं तो इनकूं नित्य मानणें चाहियें जैसें न्याय के मतमैं आकाशकूं निरवयव मान्यां है यातैं नित्य मान्यां है जो कहो कि नित्य मानणेमैं निरवयवपणां कारण नहीं है किन्तु व्यापकपणां कारण है आकाश व्यापक है यातैं न्याय के मतमैं नित्य मान्यां है तो हम कहैं हैं कि व्यापकपणां होणेतैं नित्य मानणेमैं न्यायके मतका अभिप्राय होता तो न्यायके मतमैं परमाणुकूं नित्य नहीं मानते काहेतें कि न्याय के मतमैं परमाणु व्यापक नहीं है जो कहो कि मध्यम परिमाणका न होणां नित्य मानणेमैं कारण है आकाशमैं मध्यम परिमाण नहीं यातैं न्यायके मतमैं आकाशकूं नित्य मान्यां है तो हम कहैं हैं कि मध्यम परिमाण के न होणेतैं नित्य मानो तो भी गुणोंकूं नित्य मानने चाहियें काहेतें कि गुणोंमैं मध्यम परिमाण नहीं है न्यायके मतमैं गुणोंमैं गुण रहैं नहीं ऐसें मानैं हैं जो कहो कि जो हमनें गुण समुदायकूं द्रव्य मान्यां है उस समुदायमैं जैसें और गुण हैं तैसें मध्यम परिमाण नाम जो गुण सो भी है यातैं गुण समुदायरूप द्रव्य अनित्य है तो हम पूछैं हैं कि समुदायमैं रहणें वाला गुण प्रत्येकमैं भी रहै है अथवा नहीं जो कहो कि समुदायमैं रहणें वाला गुण प्रत्येकमैं भी रहै है काहेतैं हम गुणोंकूं अनित्य मानैं हैं जैसें गुणसमुदायरूप जो घट द्रव्य तामैं मध्यम परिमाण है यातैं घट अनित्य है तैसेंही प्रत्येक गुण भी अनित्य है काहेतें कि समुदायमैं रहणें वाला जो मध्यम परिमाण गुण सो प्रत्येक गुणमैं भी रहै है जैसें द्वित्व सङ्ख्या तथा बहुत्व सङ्ख्या समुदायमैं रहै है तो प्रत्येकमैं भी रहै है तो हम कहैं हैं कि प्रत्येक घटमैं दो घट हैं ऐसें व्यवहार होणां चाहियें काहेतें कि द्वित्व सङ्ख्या जैसें दोय घटोंमैं रहै तैसें

प्रत्येक घट मैं वी न्यायके मतसैं रही ऐसैं हीं बहुत्व मैं समुझो ज्यो कहो कि एक घट है तहाँ दो घट हैं ये प्रतीति तो होवै नहीं परन्तु जहाँ दोय घट हैं तहाँ प्रत्येक घट मैं द्वित्व सङ्ख्यावाला घट है ये प्रतीति न्यायवाले मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि न्यायवाले मानैं हैं यातैं हीं इस प्रतीतिकूँ तुम मानों हो अथवा तुमकूँ वी ये प्रतीति होय है ज्यो कहो कि मोकूँ तो प्रत्येक घट मैं ये प्रतीति होवै नहीं परन्तु न्यायवाले कैसैं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि न्यायवाले धान्यसमुदायकूँ देखि करिकैं विचार करणैं लगे कि यहाँ समुदाय पदका अर्थ कहा है तो उनकूँ कुछ वी मालुम हुवा नहीं तव उस धान्यसमुदाय मैं तैं एक एक धान्यकूँ अलग अलग किया तो धान्यसमुदाय दीखा नहीं तव उननैं विचार किया कि प्रत्येक धान्य एक देश मैं रहे तव तो लोकूँ नैं समुदाय व्यवहार किया और प्रत्येक धान्य एक देश मैं न रहे तव समुदाय व्यवहार लोकूँ नैं किया नहीं तो समुदाय प्रत्येकरूप है ऐसैं उन नैं नियम कर लिया पीछैं विचार किया कि समुदायके गुण प्रत्येक मैं रहैं हैं अथवा नहीं तो ज्यो श्वेत रूप समुदा मैं दीखा उसकूँ प्रत्येक मैं देखा तो उन नैं नियम कर लिया कि समुदाय मैं ज्यो गुण रहै है सो प्रत्येक मैं वी रहै है परन्तु धान्यकूँ प्रत्येक और समुदित अर्थात् इकट्ठे करणैं मैं ज्यो उनकूँ श्रम हुवा तातैं ये विचार न किया कि समुदायकी सङ्ख्या प्रत्येक मैं कैसैं रहैगी समुदाय मैं तो द्वित्व बहुत्व रहैंगे प्रत्येक मैं एकत्व रहैगा यातैं द्वित्व और बहुत्व जे सङ्ख्या समुदाय मैं रहैं हैं तिनकूँ न्यायवाले प्रत्येक मैं वी मानैं हैं ज्यो कहो कि द्वित्व और बहुत्व की प्रतीति प्रत्येक मैं कैसैं मानैं हैं ज्यो द्वित्वबहुत्वकी प्रतीति प्रत्येक मैं वी होती तो मोकूँ वी होती परन्तु मोकूँ तो द्वित्वादिककी प्रतीति समुदाय मैं होय है प्रत्येक मैं होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि न्यायवाले तो नियमके अनुकूल अनुभवकी कल्पना करैं हैं अनुभवकै अनुकूल नियमकी कल्पना करैं नहीं और अपणैं हीं अनुभवकूँ ठीक मानैं हैं और युक्ति कै और यथार्थ अनुभवके विरोध होय तहाँ अनुभवकूँ अशुद्ध मानि लेवैं हैं यातैं इनके सारे अनुभव शुद्ध नहीं हैं कितनैं अनुभव अशुद्ध वी हैं।

इसमैं एक दृष्टान्त कहैं हैं सो सुणोँ एक न्यायका पण्डित तेलीकै घर गया तो उस समय मैं वो तेली तेलकूँ तिलों मैं तैं निकालता रहा तव वो पण्डित तेल निकालनैं के साधनोंकी सार्थकताका विचार करणैं लगा तो

और साधन तो अपणाँ युक्ति तैं सार्थक मानैं परन्तु वृषभाँके कण्ठाँकी घण्टा पण्डितकूँ व्यर्थ मालुम हुई तो तेलीतैं प्रश्न किया कि भाई तैनैं वृषभाँके कण्ठाँ मैं घण्टाबन्धन काहेकूँ किया है तो तेली नैं उत्तर दिया कि तैलयन्त्रके भ्रमणतैं आनन्दकूँ प्राप्त हो करिकैं जब निद्रित जैसा हो जावूँ तब घण्टानादतैं वृषभाँके गमनका अनुमान होता रहै है तब पण्डित नैं कही कि भाई तेरी ये कल्पना तो व्यर्थ है काहेतैं कि ये दोनूँ वृषभ गमन न करैं और शिराँकूँ कम्पित करिकैं घण्टा नाद करैं तो तेरा अनुमान व्यर्थ होजाय तब तेलीनैं उत्तर दिया कि ये न्यायके पण्डित नहीं हैं कि ऐसे प्रकार करिकैं मेरे अनुमानकूँ व्यर्थ करि देवैं तो ऐसा वचन सुणि करिकैं पण्डित चुप्प हो रहा ये कथा लोक मैं प्रसिद्ध है यातैं अर्थात् पहिले किये हुये नियमके अनुकूल अनुभवकी कल्पना किई है यातैं न्यायवाले प्रत्येक मैं द्वित्वकी तथा वहुत्वकी प्रतीति मानैं हैं।

अब कहो समुदायके गुणाँकूँ प्रत्येक मैं मानणाँ और प्रत्येक मैं समुदायके गुणाँकी प्रतीति मानणीं ये दोनूँहीं असङ्गत हुये अथवा नहीं ज्यो कहो कि नियमके अनुरोध तैं ये दोनूँ कल्पना जे न्यायवालोंनैं किई वे असङ्गत हुई परन्तु आप मोकूँ इन दोनूँ कल्पनावोंकूँ असङ्गत बता करिकैं कहा समुझावो हो सो कहो तो हम कहैं हैं कि ये दोनूँ कल्पना असङ्गत भई यातैं समुदाय मैं वर्त्तमान जे द्वित्व वहुत्व सङ्ख्या उनकूँ प्रत्येक मैं मानणाँ असङ्गत हुवा तो इसके दृष्टान्त तैं समुदाय मैं रहणैं वाले परिमाणकूँ प्रत्येक मैं मान्याँ सो असङ्गत हुवा यातैं गुणाँमैं मध्यम परिमाण मानि करिकैं अनित्यपणाँ मान्याँ सो असङ्गत हुवा तो गुणाँकूँ नित्य ही मानणाँ चाहिये।

ज्यो कहो कि मध्यम परिमाणका ज्यो आश्रय उसमैं न रहणाँ नित्य मानणैं मैं कारण है तो मध्यम परिमाणका आश्रय होगा घट द्रव्य उस मैं गुण रहैं हैं यातैं गुणाँकूँ अनित्य मानैंगे तो हम कहैं हैं कि ज्ञानादिक जे गुण तिनकूँ न्याय मैं अनित्यमानैं हैं सो नित्य मानणैं चाहिये काहे तैं कि ज्ञानादिकका आश्रय होगा आत्मा सो न्यायके मतमैं मध्यम परिमाण का आश्रय नहीं है और देखो कि मध्यम परिमाणके आश्रय मैं रहणे तैं अनित्यपणाँ मानों तो मध्यम परिमाणकूँ नित्य मानणाँ चाहिये काहेतैं कि घट द्रव्य मैं एक मध्यम परिमाण ज्यो तुम मानों हो उस सैं जुदा दूसरा

मध्यम परिमाण नहीं है कि ज्यो घट द्रव्यकूँ मध्य परिमाणका आश्रय सिद्ध करै ओर जो उसही मध्यम परिमाणसैं घट द्रव्यकूँ मध्यम परिमाणका आश्रय सिद्ध करोगे ओर उसही मध्यम परिमाणकूँ रक्खोगे तो आत्माश्रय दोष होगा यातैं मध्यम परिमाणके आश्रय मैं न रहणाँ नित्य मानणैं मैं कारण कहा सो असङ्गत हुवा ।

ज्यो कहो कि इन्द्रियोंके विषय होणैं के योग्य न होणाँ नित्य मानणैं मैं कारण है तो हम कहैं हैं कि इन्द्रियाँ इन्द्रियोंके विषय नहीं यातैं इनकूँ नित्य मानणैं चाहिये अन्त मैं येही मानणाँ पडैगा कि नित्य मानणैं मैं निरवयवपणाँ हीं कारण है देखो न्यायके मतमैं परमाणु आकाश काल दिशा आत्मा मन जाति विशेष इनकूँ नित्य मानैं हैं सो ये सारे निरवयव हैं ज्यो कहो कि गुणाँ मैं अनित्यपणाँ सिद्ध करणेंकी कोई वी युक्ति न भई तो मत हो ये तो अप्रकृत है निरवयवपणाँ तो सिद्ध रहा यातैं ऊर्ध्वगत गुण करिकैं अधोगत गुणोंके आवरणकी आपत्ति दिई सो तो न भई तो हम कहैं हैं कि गुणोँ मैं निरवयवपणाँ तो तुम मानोँ हीं हो ओर अनित्यपणाँ कोई वी युक्ति तैं सिद्ध हुवा नहीं तो गुण नित्य सिद्ध भये ज्यो नित्य सिद्ध भये तो नित्य ओर सत्य ये पर्याय हैं अर्थात् एकार्थक हैं तो गुण सत्य सिद्ध भये ज्यो सत्य सिद्ध हुये तो परमात्म रूप सिद्ध हुये काहेतैं कि

सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म ॥

इस श्रुति मैं सत्यनाम परमात्माका है ब्रह्म ज्यो परमात्मा सो सत्य है ज्ञान रूप है ओर अनन्त है ये इस श्रुतिका अर्थ है ओर

नित्यो नित्यानाम् ॥

इस श्रुति मैं नित्य शब्द परमात्माकूँ कहै है ।

ज्यो कहो कि हम गुणोँ कूँ सावयव मानैंगे ओर इनका आवरण करणेंका स्वभाव नहीं मानैंगे जैसैं दर्पण सावयव है ओर आवरण करणेंका स्वभाव नहीं राखै है तो हम कहैं हैं कि गुण सावयव भये तो अवयवी भये ज्यो अवयवी भये तो कार्य भये ज्यो कार्य भये तो इनके अवयवाँकूँ वी गुणहीं मानोंगे उन अवयवोंके समुदायरूप होंगें कार्यरूप गुण तो कार्यरूपगुण गुण समुदायरूप भये तो प्रत्येक गुणकूँ द्रव्य मानणाँ चाहियें ज्यो प्रत्येक गुण द्रव्य भये तो घटादिक द्रव्योंकूँ तुमनैं योगका मत मानि-

करिकैं गुण समुदायरूप मानैं हैं सो मानना असङ्गत हुवा काहेतैं कि घटा-
दिक द्रव्य तो द्रव्य समुदायरूप भये ज्यो कहो कि योगके मततैं हमनैं
द्रव्य गुणसमुदायरूप मानैं हैं तहाँ गुण शब्दका अर्थ विजातीय गुण है
तो घट द्रव्य ज्यो है सो विजातीय गुण जे रूप रस इत्यादिक गुण तिनका
समुदायरूप है और प्रत्येक गुण जे हैं तिनके जे अवयव हैं वे तो सजातीय
गुण हैं उनके समुदायरूप हैं प्रत्येक गुण यातैं प्रत्येक गुणोंकूँ गुणसमुदाय
मानि करिकैं द्रव्य नहीं मान सकैं काहेतैं कि हम तो विजातीय गुणसमु-
दायकूँ द्रव्य मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथन तैं ये सिद्ध हुवा कि
सजातीयगुणसमुदाय तो कार्य गुण हैं ये द्रव्य नहीं हैं और विजातीय
गुण समुदाय द्रव्य हैं ये गुण नहीं हैं तो हम पूछैं हैं कि कार्यरूप जे गुण
उनके अवयवरूप जे गुण उनकूँ सावयव मानोंगे अथवा निरवयव मानोंगे ज्यो
सावयव मानोंगे तो अनवस्था होगी यातैं निरवयव ही मानोंगे ज्यो निरव-
यव मानैं तो वे परमाणु हीं सिद्ध होंगे ज्यो परमाणु सिद्ध होंगे तो वेद
परमाणु शब्द करिकैं परमात्माकूँहीं कहै है यातैं अवयवरूप गुण जिनकूँ
मानैं वे परमात्मरूप सिद्ध हुये तो वेही कार्य गुणोंके उपादान होंगे तो
उपादानतैं बिलक्षण कार्य होवै नहीं यातैं कार्यगुण परमात्मरूप सिद्ध होंगे
ज्यो कार्य गुण परमात्मरूप सिद्ध भये तो कार्य गुणोंके समुदायकूँ तुम द्रव्य
मानों हो और समुदाय प्रत्येकरूप मानों हो तो घटादि द्रव्य प्रत्येक कार्य
गुणरूप होनेतैं परमात्मरूप ही सिद्ध होंगे ।

और ज्यो तुमनें दर्पणके दृष्टान्त तैं गुणोंमें आवरणकरणेका स्वभाव
नहीं बताया सो असङ्गत है काहेतैं कि तुम पाषाणादिकमैं अनुद्भूत गन्ध
मानों हो और तेजःसंयोग करिकैं उसकूँ उद्भूत मानों हो तो ये सिद्ध होगया
कि तेजःसंयोगतैं पहिलैं पाषाणादिकमैं गन्धकैं आवरण रहे हैं तेजः
संयोग भयें तैं उस गन्धका आवरण नष्ट होजाय है तब वो गन्ध उद्भूत
होजाय है अब तुमहीं विचारतैं देखो ज्यो उस गन्धकै आवरण नहीं रहा
तो अनुद्भूत कैसैं हुवा और ज्यो आवरण हुवा तो वहाँ जे गुण हैं तिनके
विना और किसीसैं वी आवरण होसकै नहीं तो गुणोंका आवरण करणें-
का स्वभाव सिद्ध होगया तो ऊर्ध्वगत गुणों करिकैं अधोगत गुणोंका आव-
रण होणाँ हीं चाहिये ज्यो कहो कि वहाँ तो तेजःसंयोगके होनें तैं पाषा-
णरूप द्रव्यका नाश हो करिकैं दूसरा द्रव्य पैदा हुवा है उसका गन्ध उद्भूत

है तो हम कहैं हैं ऐसैं मानौं तो वी आवरण तो सिद्ध ही रहा काहेतैं कि पाषाणमैं अनुद्भूत गन्धके रहणौंतैं अब हम कहैं हैं कि तुम गुणौंका आवरण करणौंका स्वभाव नहीं है ऐसैं हीं मानौं परन्तु ये कहो कि सर्व गुणौंमैं अधोगत गुण तो कोन है और ऊर्ध्वगत गुण कोन है और इन दोनूं गुणौंके मध्यमैं कोन कोन गुण किस किस गुणके अधोगत है और कोन कोन गुण किस किस गुणके ऊर्ध्वगत है तो विनिगमना नहीं होणैंतैं ये ही कहणाँ पड़ैगा कि इस प्रश्नका उत्तर तो मैं देसकूं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणौंका समुदाय मानणाँ असङ्गत हुवा।

ज्यो कहो कि पङ्क्तिक्रम करिकैं हम गुणौंका समुदाय मानैंगे तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानणाँ वी असङ्गत ही है काहेतैं कि सारे घटमैं प्रत्येक गुणकी प्रतीति होवै है यातैं द्रव्यौंकूं गुणसमुदायरूप मानणाँ वी असङ्गत ही है अब कहो द्रव्यौंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि द्रव्यौंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा परन्तु गुणौंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा है ही नहीं यातैं हम गुणौंकूं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो तुमारा असङ्गत है काहेतैं कि गुणौंके आधार हैं द्रव्य वे सिद्ध हुये नहीं तो निराधार गुण कैसैं सिद्ध होंगे ज्यो कहो कि जैसैं न्याय वाले नित्य द्रव्यौंकूं मानैं हैं उन सारे द्रव्यौंका आधार कोईकूं वी नहीं मान्याँ है तैसैं हम गुणौंकूं मानैंगे और इनका आधार कोईकूं वी नहीं मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि गुणौंकूं निराधार और वी किसी नैं मान्याँ है अथवा तुमहीं मानोगे ज्यो कहो कि गुणौंकूं निराधार योगवाले मानैं हैं देखो उन नैं गुणसमुदायकूं द्रव्य मान्याँ है तो समुदाय पदार्थ गुणौंतैं विलक्षण नहीं तो गुणरूप ही हुवा तो उस समुदायका आधार उननैं कोई वी बताया नहीं तो गुणौंकूं निराधार मानणाँ सिद्ध होगया तैसैं ही हम वी गुणौंकूं निराधार मानैंगे तो हम कहैं हैं कि न्यायवालौं नैं नित्यद्रव्यौंकूं निराधार मानैं हैं तो गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणैंतैं वे द्रव्य परमात्मरूप सिद्ध हुये हैं तैसैं ही ज्यो तुम गुणौंकूं निराधार मानौँ हो तो इनकूं वी परमात्मरूप ही मानौँ काहेतैं कि श्रुति निराधार परमात्माकूं कहै है देखो कठोपनिषद्मैं लिखा है कि

तस्मिँल्लोकाः श्रिताः सर्वे तदु नात्येति कश्चन ॥

इसका अर्थ ये है कि सारे लोक उस में आश्रय कर राख्यो है उसका उल्लङ्घन कोई वी नहीँ करै है तो इसका तात्पर्य ये है कि यो सर्वका आधार है उसका आधार कोई वी नहीँ है और निरालम्बोपनिषद् में निरालम्ब शब्द करिकैं परमात्माकूँ कह्या है तो निरालम्ब नाम निराधार का है ।

और ज्यो तुम नैं कही कि योगवाले गुणाँकूँ निराधार मानैं हैं सो कथन असङ्गत है काहितैं कि योगवालोंका अभिप्राय गुणाँकूँ निराधार मानणें में होता तो गुणसमुदायकूँ द्रव्य नहीँ मानते देखो विचार करो कि न्यायवालाँनैं द्रव्य मानैं हैं तो उनका अभिप्राय ये ही है कि गुण निराधार नहीँ हैं गुणाँके आधार द्रव्य हैं तैसैं हीँ योग वालाँ नैं गुणसमुदायकूँ द्रव्य मान्याँ है तो इनका अभिप्राय वी ये ही है कि गुण निराधार नहीँ हैं गुणाँके आधार द्रव्य हैं ज्यो कहो कि योग वालाँके मतमें तो द्रव्य गुणसमुदायरूप है और समुदाय प्रत्येक रूप है तो समुदायका प्रत्येक तैं अभेद होयाँ तैं आधारपणाँ और आधेयपणाँ कैसैं सिद्ध होगा आधारपणाँ और आधेयपणाँ तो भेद होय तहाँ वणैं है तो हम कहैं हैं कि जैसैं धान्यराशि ज्यो हैं सो धान्यसमुदायरूप है और धान्यसमुदाय प्रत्येकधान्यरूप है तो समुदायका प्रत्येकतैं अभेद सिद्ध हुवा तो वी धान्यराशि धान्यवाला है इस लोक व्यवहार सैं धान्य तो आधेय सिद्ध होय है और धान्यराशि आधार सिद्ध होय है तैसैं हीँ घट द्रव्य ज्यो है सो गुणसमुदायरूप है और गुणसमुदाय प्रत्येक गुण रूप है तो गुणसमुदायका प्रत्येक गुणतैं अभेद सिद्ध हुवा तो वी घट द्रव्य गुणवाला है इस व्यवहार सैं गुण तो आधेय सिद्ध होय हैं और घट द्रव्य आधार सिद्ध होय है यातैं समुदायका प्रत्येक तैं अभेद है तो वी योगवाले समुदायकूँ आधार मानैंहैं और प्रत्येककूँ आधेय मानैं हैं तो योगके मतसैं गुणाँकूँ निराधार मानणाँ सिद्ध न हुवा ज्यो कहोकि गुणाँकूँ निराधार हम हीँ मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि गुणाँकूँ परमात्मातैं भिन्न मानौं हो अथवा अभिन्न मानौंहो ज्यो परमात्मातैं अभिन्न मानौं तव तो विवाद ही नहीँ और ज्योपरमात्मातैं भिन्न मानों हो तो गुणाँकूँ गगनमें गन्धर्वनगर मानौंहो अर्थात् जैसैं ऐन्द्रजालिक पुरुष निराधार गन्धर्व नगरकी कल्पना करै है तैसैंहीँ तुमवी निराधाराँ गुणाकी कल्पना करोहो ।

ज्यो कहो कि जे पण्डित आधार मानैं हैं वे भी मूल आधारकूँ निराधार मानैं हैं और उस मूल आधारकूँ गन्धर्वनगरके तुल्य नहीं मानैं हैं तैसैं हीं हम गुणोंकूँ निराधार मानैंगे और गन्धर्वनगरके तुल्य नहीं मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम गुण किनकूँ कहो हो ज्यो कहो कि द्रव्य और कर्म इनतैं तो भिन्न होंयँ और जिनमैं जाति रहै वे गुण तो हम कहैं हैं कि द्रव्य तो सिद्ध हुये नहीं और कर्मका तथा जातिका अब ही निर्णय हुवा नहीं और भेद पूर्व अलीक सिद्ध हुवा है तो हम गुणोंकूँ कैसैं जाणैं यातैं गुणोंका स्वरूप लक्षण कहो जातैं हम गुणोंकूँ जाणैं ज्यो कहो कि गुणोंका स्वरूप लक्षण तो नहीं है तो हम कहैं हैं कि जिनकूँ तुम गुण मानों हो वे स्वरूप तैं नहीं हैं ज्यो गुण स्वरूपतैं होते तो इनका स्वरूप लक्षण होता अब तुमहीं विचार करो नैं तो गुणोंका कोई आधार है और नैं स्वरूप है तो गुण गन्धर्व नगरके तुल्य नहीं हैं तो कहा हैं ज्यो कहो कि गन्धर्वनगर भी कुछ है ज्यो गन्धर्वनगर कुछ भी नहीं होता तो जैसैं सुस्साका सींग नहीं दीखै है तैसैं नहीं दीखता तैसैं हीं गुण भी कुछ हैं ज्यो गुण कुछ भी नहीं होते तो येभी सुस्साके सींगकी तरैंह नहीं दीखते यातैं हम गुणोंकूँ मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि कुछ शब्दका अर्थ कहा है अर्थात् कुछ शब्दका नहीं ये अर्थ है अथवा है ये अर्थ है ज्यो कहो कि नहीं ये कुछ शब्दका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि गुण भी कुछ हैं इसका अर्थ ये हुवा कि गुण भी नहीं हैं तो ये सिद्ध होगया कि जैसैं द्रव्य नहीं हैं तैसैं गुण भी नहीं हैं ज्यो कहो कि है ये कुछ शब्दका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि गुणभी है है तो ये सिद्ध होगया कि गुण भी सद्रूप हैं तो इस कथन तैं भी गुण कार्यपणैं की दृष्टितैं असत् हैं और मूल उपादान की दृष्टितैं सत् हैं येही सिद्ध होय है ज्यो कहो कि हमनैं तो गुणोंकूँ निराधार मानैं हैं यातैं मूल उपादानकी दृष्टितैं गुण सत् हैं ये आपका कथन असङ्गत हुवा तो हम कहैं हैं कि मूल उपादानकी दृष्टि विनाहीं गुण सत् हैं ऐसैं समुझो ज्यो कहो कि गुणोंकूँ मैंनैं अब ही कार्य कहे नहीं यातैं गुण कार्यपणैंकी दृष्टितैं असत् हैं ये आपका कथन असङ्गत हुवा तो हम कहैं हैं कि गुण कार्यपणैंकी दृष्टि विना हीं असत् हैं ऐसे समुझो ज्यो कहो कि उपादानकी दृष्टि और कार्यपणैंकी दृष्टि इनकै विना गुणोंकूँ सत् और असत् कहोगे तो आपका कथन विरुद्ध होगा काहेतैं कि सापेक्ष विरुद्ध व्यवहार तो लोक मैं होयहै निरपेक्ष

विरुद्ध व्यवहार लोकमैं होवै नहीं देखो उपादानकी दृष्टि और कार्यपनैं की दृष्टि बिना आपका किया सत् असत् व्यवहार निष्फल है तो हम कहैं हैं कि कुछ शब्दके नहीं और है इन दोनूं अर्थोंकी दृष्टितैं हमनैं असत् और सत् व्यवहार किया है यातैं हमारा किया व्यवहार निष्फल नहीं है ज्यो कहो कि गुण नहीं हैं तो दीखैं कैसैं हैं तो हम कहैं हैं कि नहीं हैं और दीखैं हैं यातैं ही गुण गन्धर्व नगरके तुल्य हैं ज्यो कहो कि गन्धर्वनगर तो आज पर्यन्त देखा नहीं और आपभी दिखा सकते नहीं यातैं हम इस दृष्टान्तकूं नहीं मानैंगे तो हम कहैं हैं कि जैसैं तुमारे मानैं आकाश मैं तम्बूका तथा कटाहका आकार नहीं है और दीखै है तैसैं गुणभी नहीं हैं और दीखैं हैं ऐसैं मानों ज्यो कहो कि आकाश मैं तो तम्बूका तथा कटाहका आकार दीखै है और नहीं है ये बुद्धि होय है परन्तु गुण दीखैं हैं और नहीं हैं ये बुद्धि होवै नहीं यातैं गुण नहीं हैं ये नहीं है तो हम कहैं हैं कि न्यायके संस्कार नहीं थे तब तुमारे आकाश मैं तम्बूके तथा कटाहके आकारका संस्कार दृढ रह्या सो न्यायके संस्कारोंसैं निवृत्त हुवा है तैसैंही अब अध्यात्म विद्याके संस्कार दृढ होंगे तब गुण हैं ये भी संस्कार निवृत्त होगा ऐसैं जाणों ज्यो कहो कि अध्यात्मविद्याके संस्कारतैं ये संस्कार निवृत्त होगा इसमैं अनुभव कहा है तो हम कहैं हैं कि जैसैं तुमारे द्रव्योंका संस्कार निवृत्त हुवा तैसैं ही गुणोंका संस्कार भी निवृत्त हो जायगा।

ज्यो कहो कि द्रव्य तो दीखैं नहीं यातैं द्रव्योंका संस्कार निवृत्त होगया परन्तु गुण तो दीखैं हैं यातैं इनका संस्कार निवृत्त होणा कठिन है तो हम कहैं हैं कि गुणपनेका संस्कार निवृत्त होणा तो कठिन नहीं है ये कहो कि दीखणा निवृत्त होणा कठिन है ज्यो कहो कि ऐसैं ही कहैं थे तो हम कहैं कि दीखणा नाम ज्ञानका है सो नित्य स्वप्रकाश सिद्ध हुवा है इसकी निवृत्ति कैसैं होय ऐसैं जाणों ज्यो कहो कि विशेष ज्ञानकी निवृत्ति बिना अखण्ड आनन्द रहै नहीं तो हम कहैं हैं कि विशेष ज्ञान सिद्ध हुवा नहीं यातैं इसकी तो निवृत्ति ही सिद्ध है ज्यो कहो कि विषयके सन्निधान मैं नित्यज्ञान रूप आत्मा मैं विशेषज्ञानपणा आरोपित है ये भी निवृत्ति होणा चाहिये तो हम कहैं हैं कि ज्यो विषयोंकूं सद्रूप आत्मातैं भिन्न मानों तब तो विषय नहीं रूप हैं तो इन करिकैं कैसैं विशेषज्ञानपणा आरोपित हो सकै और ज्यो विषय सद्रूप हैं तो आत्मरूप ही हैं तो आपही अपनैं-

मैं विशेष ज्ञानपणाँका आरोप कैसैं करै यातैं ये समुझो कि विशेषज्ञान तो है ही नहीं ज्यो कहो कि नहीं है और है ये व्यवहार निवृत्त होय तव जीवन्मुक्तिका आनन्द होय यातैं इस व्यवहारकी निवृत्तिका उपाय कहो तो हम कहैं हैं कि व्यवहार ज्यो है सो निर्व्यवहार है यातैं व्यवहारकूँ जीवन्मुक्त मानणाँ चाहिये ज्यो कहो कि व्यवहारकी निवृत्तिके उपायके प्रश्न मैं व्यवहार मैं जीवन्मुक्तपणाँकी आपत्ति कहणाँ ज्यो है सो उत्तर नहीं है तो हम कहैं हैं कि नित्य सच्चिदानन्दरूप निर्व्यवहार आत्मा है इस मैं व्यवहारकी निवृत्तिका उपाय पूछणाँ ज्यो है सो प्रश्न नहीं है अब यहाँ गुणोंके विचारमैं ऐसे अप्रकृत प्रश्न करणाँ उचित नहीं यातैं ये कहो कि गुण स्वरूपतैं सिद्ध भये अथवा नहीं ।

ज्यो कहो कि गुणसामान्य स्वरूपतैं सिद्ध भये नहीं यातैं गुण विशेष जे हैं तिनका विचार करणाँ उचित तो है नहीं तथापि मैं गुणविशेष जे हैं तिनका विचार करणेंकी इच्छा करूँहूँ तो हम पूछैं हैं तुम रूप किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि केवल चक्षु तैं जाण्या जाय ऐसा जो गुण सो रूप तो हम कहैं हैं कि गुण सामान्य सिद्ध हुये नहीं यातैं सामान्यवाचक गुणशब्दका लक्षण मैं प्रवेश करणाँ असङ्गतहै और चक्षुकूँ न्यायके मत मैं तेज मान्याँ है सो तेज द्रव्य है तो द्रव्योंकी सिद्धि हुई नहीं यातैं चक्षुःशब्द का लक्षण मैं प्रवेश अनुचित है और जाणणाँ नाम ज्ञानका है सो ज्ञान तो नित्य स्वप्रकाश सिद्ध होगया है और केवल चक्षु करिकैं जाण्याँ जाय इसका अर्थ तुमारे ये है कि केवल चक्षुतैं पैदा हुवा ज्यो ज्ञान उसका ज्यो विषय यातैं लक्षण मैं जाण्याँ जाय इस पदका प्रवेश असङ्गत है ऐसैं केवल चक्षुतैं जाण्याँ जाय ऐसा ज्यो गुण ये कथन असङ्गत है ज्यो कहो कि ये रूप है इस प्रतीतिका विषय होय सो रूप तो हम कहैं हैं कि न्यायके मतमैं ज्ञानके विषय तीन मानैं हैं विषय मैं रहणेंवाला धर्म १ और विषय २ और उस धर्मका विषयसैं सम्बन्ध ३ तो ये रूप है इस प्रतीतिका विषय होय सो रूप ऐसैं मानोंगे तो तुमारे मानैं जाति और सम्बन्ध इनकूँ वी रूप ही मानणें चाहिये यातैं ये रूप है इस प्रतीतिका विषय होय सो रूप ऐसैं मानणाँ वी असङ्गत ही है ज्यो कहो कि लक्षणके नहीं होणें तैं पदार्थकी असिद्धि नहीं होय है तो हम कहैं कि रूप अलक्षण हीं सिद्ध है ऐसैं कहो तो लक्षण शब्दका अर्थ ये है कि जिससैं जाण्याँ जाय और अलक्षण शब्दका

अर्थ ये है कि जिसका लक्षण नहीं तो रूप अलक्षण हीं सिद्ध है ऐसैं कहणैं तैं ये तुमारा मान्याँ रूप परमात्मरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि कठोपनिषद् मैं परमात्माकूँ अलिङ्ग कहा है सो अलिङ्ग शब्द और अलक्षण शब्द समान अर्थकूँ कहै हैं ज्यो कहो कि रूप शब्द करिकैं कह्या जाय सो रूप तो हम कहैं हैं कि रूप शब्द करकैं तो रूप शब्द बी कह्या जाय है यातैं रूप शब्दकूँ रूप मानणाँ चाहिये ज्यो कहो कि रूप शब्द तैं भिन्न और रूप शब्द करिकैं कह्या जाय सो रूप तो हम कहैं हैं कि रूप शब्द करिकैं तो रूप नाम ज्यो पुरुष सो बी कह्या जाय है और वो रूप शब्द सैं भिन्न बी है यातैं उस पुरुषकूँ बी रूप मानणाँ चाहिये और विचार करो कि व्यवहार और लक्षण तो पदार्थ होय तब होय हैं सो रूपके उपादान कारण तो हैं पृथ्वी जल तेज और असमवायि कारण है उपादानोंके अवयवों का रूप सो नै तो उपादान कारण सिद्ध हुये और नै उपादानों के अवयव सिद्ध भये तो कारणोंके विना रूपकी सिद्धि कैसैं मानी जाय यातैं रूपका मानणाँ असङ्गत है ।

ऐसैं हीं रसन इन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो रस और घ्राण इन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो गन्ध और केवल त्वगिन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो स्पर्श इन लक्षणों करिकैं इन रस गन्ध स्पर्शोंका मानणाँबी असङ्गत ही है अब कहो तुम सङ्ख्या किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक जे व्यवहार तिनका ज्यो असाधारण कारण सो सङ्ख्या तो हम पूछैं हैं कि तुम असाधारण कारण किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि ज्यो एक कार्यका कारण होय सो असाधारण कारण तो हम पूछैं हैं कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक जे ज्ञान उनका कारण सङ्ख्या है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पड़ैगा कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक जे ज्ञान तिनकी कारण सङ्ख्या है तो हम कहैं हैं कि सङ्ख्याकूँ ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक व्यवहारोंकी असाधारण कारण नहीं मानणीं चाहिये काहेतैं कि ये तो अपणें ज्ञानकी बी कारण भई यातैं ये एककी कारण न भई किन्तु व्यवहार और ज्ञान इन दोनूँकी कारण भई ज्यो कहो कि व्यवहार और ज्ञान इन दोनूँकी कारण भई तो बी व्यवहारकी कारण भई यातैं ये व्यवहारकी असाधारण कारण है तो हम कहैं हैं कि तुमनैं परमेश्वर काल इत्यादिककूँ बी असाधा-

रण कारण क्यों नहीं मानें सो कहो ये परमेश्वर श्रोर काल इत्यादिक वी सर्व कार्योंके कारण हैं तो वी एक एक के कारण होंगे ज्यो कहो कि एक एक कार्यकी दृष्टि तैं साधारण कारणोंकूँ वी असाधारण कारण कहैंगे तो हम कहैं हैं कि सर्व कार्योंकी दृष्टितैं साधारण कारण मानैंगे श्रोर एक कार्यकी दृष्टितैं असाधारण कारण मानैंगे तो स्वरूपतैं कारण नहीं हैं ऐसें वी कहणाँ हीं पडैगा तो सङ्ख्या वी स्वरूपतैं कारण नहीं है ऐसें वी कहणाँ पडैगा तो सङ्ख्याकूँ स्वरूपतैं मानणाँ असङ्गत हुवा ज्यो कहो कि स्वरूपतैं कारण नहीं होणें तैं सङ्ख्याका मानणाँ असङ्गत होगा तो परमात्माका मानणाँ वी असङ्गत होगा काहेतैं कि परमात्मा वी स्वरूपतैं कारण नहीं है तो हम कहैं हैं कि परमात्माकूँ तो श्रुति सत्यरूप वर्णन करै है यातैं परमात्मा तो है श्रोर सङ्ख्याकूँ स्वरूप तैं कुछ वी कही नहीं यातैं सङ्ख्याका मानणाँ असङ्गत ही है ।

ऐसे हीं ये इतनें परिमाणवाला है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण कारण सो परिमाण श्रोर ये इस सैं जुदा है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण कारण सो पृथत्क श्रोर ये इससैं संयुक्त है इस व्यवहार का ज्यो असाधारण कारण सो संयोग श्रोर ये इससैं पर है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण कारण सो परत्व श्रोर ये इससैं अपर है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण कारण सो अपरत्व इनका मानणाँ वी असङ्गत ही है श्रोर विभागका मानणाँ वी असङ्गत ही है काहेतैं कि संयोगका नाश करणें वाला ज्यो गुण सो विभाग है ज्यो संयोग ही नहीं तो इस संयोगका नाश करणेंवाला गुण मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब कहो तुम गुरुत्व किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि प्रथम ज्यो पतन क्रिया तिसका ज्यो असमवायि कारण सो गुरुत्व तो हम पूछैं हैं कि तुम असमवायि कारण किसकूँ कहो हो तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि कार्यके समवायि कारण मैं समवाय सम्बन्ध करिकैं रहै श्रोर उस कार्यका कारण होय सो असमवायि कारण तो हम कहैं हैं कि कार्य तो भई तुमारी पतन क्रिया उसके उपादान कारण होंगे पृथ्वी श्रोर जल वे सिद्ध भये नहीं यातैं आधार विना गुरुत्व गुणका मानणाँ असङ्गत हुवा ऐसैंहीं द्रवत्वका मानणाँ वी असङ्गत ही है काहे तैं कि आद्यस्यन्दनका अर्थात् प्रथम झरणेंका ज्यो असमवायि कारण सो द्रवत्व ये द्रव्यत्वका लक्षण है तो झरणाँ-

रूप ज्यो क्रिया सो यहाँ कार्य मानीं आयगी उसके उपादान होंगे पृथ्वी जल तेज वे सिद्ध भये नहीं यातैं आधार विना द्रवत्वका मानणाँ असङ्गत है ऐसैं हीं चूर्णके पिण्ड होणेंका कारण गुण स्नेह मान्याँ है और जलमैं उसकी स्थिति मानीं है सो जल सिद्ध हुवा नहीं यातैं स्नेहका मानणाँ वी असङ्गत ही है और शब्दके गुणपणेंका खण्डन आकाशके खण्डनमैं विस्तारतैं लिखा है यातैं शब्दगुणका मानणाँ असङ्गत है और ज्ञान जो है सो परमात्मरूप सिद्ध हुवा है यातैं ज्ञानकूँ गुण मानणाँ असङ्गत है और सुख वी परमात्मरूप ही सिद्ध हुवा है यातैं इसकूँ वी गुण मानणाँ असङ्गत है और आत्मा नित्य सुखरूप है यातैं इसमैं दुःख और द्वेष ये बणँ सकैं नहीं और पहिलैं आत्मामैं इच्छा और यत्न इनके नहीं सिद्ध होणेंतैं कर्त्तापणाँ सिद्ध हुवा नहीं यातैं इसमैं धर्म और अधर्म मानणाँ असङ्गत है और सँस्कार तुमनैं तीन मानें हैं वेग१ भावना २ और स्थितिस्थापक ३ इनमैं वेग तो तुमनैं पृथ्वी जल तेज वायु और मन इनमैं मानों हो सो ये सिद्ध भये नहीं और स्थितिस्थापकक तुम पृथ्वीमैं मानों हो सो सिद्ध भई नहीं और भावना तुम अनुभवतैं जन्य मानों हो और अनुभवकूँ तुम जन्य मानों हो सो अनित्यज्ञान सिद्ध हुवा नहीं और विषय कोई वी सिद्ध हुवा नहीं यातैं इन तीनों प्रकारके सँस्कारोंका मानणाँ वी असङ्गत ही है ।

अब कहो गुणोंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि गुणोंका मानणाँ असङ्गत हुवा तो हम कर्मकूँ अर्थात् क्रियाकूँ सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि तुमारे क्रियाका लक्षण ये है कि संयोगसैं भिन्न और संयोगका असमवायि कारण होय सो कर्म तो ज्यो संयोग ही सिद्ध न हुवा तो उसका कारण कर्म मानणाँवी असङ्गत ही है ।

अब हम ये और कहैं हैं कि पहिलैं गैातमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करिकैं द्रव्योंकूँ सद्रूप सिद्ध किये इसमैं कणाद ऋषिका सूत्रवी प्रमाण है देखो वैशेषिक दर्शनके प्रथम अध्याय के द्वितीय आह्निक का ये सप्तम सूत्र है कि

सदिति यतो द्रव्यगुणकर्मसु सा सत्ता ॥

इसका अर्थ ये है कि जिससैं द्रव्य और गुण और कर्म इनमैं सत् ऐसा व्यवहार होय है सो सत्ता है तो इससैं ये सिद्ध होगया कि कणाद

ऋषिनैं वी द्रव्य गुण कर्म इन तीनूँकूँ सत् कहे हैं ओर श्रुतिनैं सत् परमात्माकूँ कहाहि तो कणाद ऋषिका कथन ओर श्रुति इनकी एक वाक्यता करणैं तैं द्रव्य गुण कर्म परमात्मरूप सिद्ध हुये ओर गौतम ऋषि ओर कणाद ऋषि दोनूँहीं न्यायके आचार्य हैं यातैं कणाद ऋषिका वी असत्कार्यवाद मत है तो इनके मततैं वी कार्यपणैं की दृष्टितैं कार्य असत् हैं ये ही सिद्‌ध होय है ।

ओर देखो कि ये कठोपनिषद्‌की श्रुति है कि

मृत्योः स मृत्यु माप्नोति य इह नानेव पश्यति ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो नाना जैसा देखता है सो मरण सैं मरण कूँ प्राप्त होय है अर्थात् वारम्वार मरता है तो इस श्रुति सैं ये सिद्‌ध होय है कि जिसकूँ अभेदज्ञान है ओर ऐसैं देखे है कि सर्व ज्यो है ब्रह्म ही है सो ही नाना जैसा दीखे है तो उसकूँ वी अनर्थ की प्राप्ती होय है तो गौतमकणाद इत्यादिक ऋषि सर्वज्ञ रहे उनका तात्पर्य भेद मानणैं मैं है ये कैसैं मान्याँ जाय यातैं सर्व ऋषियोंका तात्पर्य अभेद मैं हीं है ओर विचार करिकैं देखो कि द्रव्य गुण कर्म जे कार्य हैं उनका ही मूल उपादान परमाणु हो सकै है ओर उनकूँ हीं कणाद ऋषि नैं सत् शब्द करिकैं कहे तो परमाणु शब्दका अर्थ परमात्मा हीं है ज्यो कहो कि परमाणु मूल उपादान होणैं तैं हीं द्रव्य गुण कर्म सद्रूप सिद्ध होगये तो कणाद ऋषि नैं द्रव्य गुण कर्मोंकूँ ज्यो फेर कहे कि ये सत् हैं तो इसका तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि नित्य द्रव्य ओर नित्य गुण जे न्याय मैं मानैं हैं उनका मूल उपादान परमाणु नहीं मान्याँ है तो किसी कूँ ऐसा भ्रम न होजावे कि नित्य द्रव्य ओर नित्य गुण ये सद्रूप परमात्मा नहीं हैं यातैं कणाद ऋषिनैं द्रव्य गुण कर्म इनकूँ सत् कहे हैं ।

ज्यो कहो कि द्रव्य गुण कर्म इन मैं सत्ता जातिके रहणैं तैं कणाद ऋषिनैं इन कूँ सत् कहे हैं तो हम कहैं हैं कि द्रव्य गुण कर्म इनकूँ सत् कहे यातैं ये सिद्‌ध होय है कि जाति विशेष समवाय ये असत् हैं यातैं सत्ता जातिके रहणैं तैं द्रव्य गुण कर्म इनकूँ सत् कहे हैं ऐसैं मानणाँ असङ्गत है ।

ज्यो कहोकि न्यायके आचार्यों नैं जिन पदार्थोंकूँ प्रमाण सिद्ध बताये हैं उनका आप अपलाप कैसैं करो हो तो हम कहैं हैं कि हमनैं तो इनकूं परमात्म रूप सिद्ध किये हैं अपलाप तो गौतमजीनैं हीं किया है देखो न्याय दर्शन मैं ये सूत्र है कि

स्वप्नमिथ्याभिमानवदयं प्रमाणप्रमेयाभिमानः

इसका अर्थ ये है कि प्रमाण और प्रमेय इनका ज्यो अभिमान है सो स्वप्नका झूंटा ज्यो अभिमान ताकी तरँह सैं है अर्थात् जैसैं स्वप्न का अभिमान झूँटा है तैसैं प्रमाण ओर प्रमेय जे हैं तिनका अभिमान ज्यो है सो वी झूँटा है अब विचार दृष्टि तैं देखो स्वप्न का ज्यो अभिमान सो ज्यो झूँटा है सो स्वप्न के विषय झूँटे हैं यातैं झूँटा है तैसैं हीं प्रमाण ओर प्रमेय जे हैं तिनका अभिमान ज्यो झूँटा है सो प्रमाण ओर प्रमेय जे हैं ते झूँटे हैं यातैं झूटा है ये गौतमजीके सूत्रका तात्पर्य है तो तुमहीं कहो गौतमजी नैं पदार्थोंका अपलाप किया है अथवा हम अपलाप करैं हैं।

ज्यो कहो कि ये मिथ्याभिमान मिटै कैसैं तो हम कहैं हैं कि गौतम जी ही कहैं हैं कि

मिथ्योपलब्धिविनाशस्तत्वज्ञानात् स्वप्नविषयाभिमानवत्प्रतिबोधे ॥

इसका अर्थ ये है कि मिथ्या ज्ञानकी निवृत्ति तत्वज्ञान तैं होय है जैसैं जागैं तैं स्वप्न के विषयोंका अभिमान निवृत्त होय है।
ज्यो कहो कि तत्व ज्ञान का स्वरूप कहा है तो इसका स्वरूप कहैं हैं

दोहा ॥

वासुदेवमय सकल ये श्रुतियाँ कहत पुकार।
ज्ञान साधि इमि तात तू सहज उतरि भवपार १ ॥
कारण भव तारण अमल वारण पति रिछपाल।
गिरिधारण जारण कुमति दुखदारण नँदलाल २॥
सीस मुकुट करमैं लकुट जिहि कटि तट पट पीत।
लटपट ज्यौं सुवरन कटक रटि तिहिं झट भव जीत३॥

प्रेम लाय नँदलाल सोँ ज्यो टपकावै नैन ।
हृदय तिमिर ताको मिटै या विध उपजत वैन४ ॥

इति श्री जयपुरनिवासि दधीचिवंशोद्भव डेरोल्यावटङ्क पण्डित
गोपीनाथविरचिते स्वानुभवसारे वेदान्त मुख्यसिद्धान्ते
श्रीज्ञानसिद्धगुरूपदेशे न्यायमतविवेचने
प्रथमो भागः १ ॥

॥ श्रीकृष्णो जयति ॥

द्वितीय भागः ॥

दोहा ॥

गोपी मण्डल वृत्ति सब साक्षी कृष्ण सरूप ।
सन्धिन मैं भासत रहै ये है रास अनूप १ ॥
गोपी हरिकी प्राण है हरि गोपिन के प्राण ।
भेद वेद मानै नहीं या विध समझि सुजान२ ॥

चोपाई ॥

सुनि उपदेश विमल मति हरख्यो । रोम उठे परमानँद वरख्यो ।
नैनन दोऊ नीर वहायो । वासुदेवमय जगत लखायो ३
तनकी गयो सकल सुधि भूली । दई भेद सिर दो कर धूली ।
भई समाधि विकलप न लेख्यो । आप आपकूँ हरिहींदेख्यो ४
महुरत दोय माँहि सुधि पाई । गुरुपद दीन्हो सीस नवाई ।
गुरु कर दे सिर लियो उठाई । अपणे कण्ठ लियो लपटाई ५
पुनि वैठाइ वाच इमि वोली । ह्वै सन्देह फेरि यों खोली ।
कठिन पन्थ ये कृष्ण वतायो । सो मैं तात तोइ दरसायो ६

दोहा ॥

या विध गुरु को वचन सुणि शिष्य विमलमति नास ।
कहन लग्यो यों जोरि कर पुनि कीन्हों परणाम ७

कीन्हों प्रभु उपदेश ज्यो करि करुणा की दृष्टि।
भेद अग्नि नाश्यो सहज भई अमृतकी वृष्टि ८
अब मैं पूरणकाम हूँ नाहिँ मेरै सन्देह।
तउ मत ले वेदान्तको पूछों कछु रुचि येह ९
पुनि पुनि आँनद लाभतैं को धापै जग माँहिँ।
यातें मो मन हटत है प्रश्नपन्थतैं नाँहिँ १०
याविधि शिषको वचन सुणिँ ज्ञानसिद्ध मुसकाय।
कहन लगे सो कहत हूँ सुनिये चित्तलगाय ११

अब हम पूछैँ हैं कि ज्यो हमनैं न्यायके मतको विवेचन तुमकूँ कह्यो तिससैं तुम कहा समुझे सो कहो ज्यो कहो कि न्यायके आचार्योंका अभिप्राय

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुतिके अनुसार सर्वकूँ ब्रह्मरूपत्वप्रतिपादनमैं है और पदार्थोंके वर्णनमैं नहीँ है जयो पदार्थोँ के वर्णन मैं इनका अभिप्राय होता तो न्याय के आचार्य द्रव्य गुण कर्म इनमैं सत् ऐसा व्ययहार नहीँ करते काहेतैं कि द्रव्य गुण कर्म इन मैं सत् ऐसैं व्यवहार करणैंतैं उनका अभिप्राय ये सिद्ध होय है कि वे जाति विशेष और समवाय इनकूँ असत् मानैं हैं और विशेष तो नित्य द्रव्योँ मैं समवाय सम्बन्ध तैं रहैं हैं और जाति ज्यो है सो द्रव्य गुण कर्म इनमैं समवाय सम्बन्ध तैं रहै है और कार्य द्रव्य अवयवोँ मैं समवायसम्बन्ध करिकैँ रहैं हैं और गुण तथा क्रिया ये द्रव्योँ मैं समवायसम्बन्ध करिकैँ रहैं हैं ऐसैं न्यायके आचार्य मानैं हैं तो इस सैं ये सिद्ध होय है कि द्रव्य गुण कर्म जाति और विशेष इनका ज्यो सम्बन्ध सो असत् है अर्थात् मिथ्या है अब ज्यो इनका अभिप्राय भेद मानणैं मैं होय तो इनके सम्बन्धकूँ असत् कैसैं कहैं तो इनका अभिप्राय ये ही है कि द्रव्य गुण और कर्म जिनकूँ कहे ये सद्रूप एक परमात्मा हीँ हैं सम्बन्ध तो भेद होय तहाँ होय ये तो सत् हैं आपका आपतैं सम्बन्ध कहणाँ बणैं नहीँ । और द्रव्य गुण तथा कर्म इनमैं ज्यो जाति और विशेष इनका समवायसम्बन्ध कहा तो सत् मैं

असत् जे हैं तिनको असत् सम्बन्ध है ये कहा तो न्यायवालोंका ये तात्पर्य सिद्ध होगया कि सद्रूप परमात्मामैं जाति विशेष समवाय ये मिथ्या हैं ये तात्पर्य मैंनैं आपके चरणारविन्दोंकी कृपातैं समुझ्या है ज्यो आपके चरणारविन्दोंकी कृपा नहीं होती तो न्यायके आचार्योंका ये गूढ अभिप्राय मैं कैसैं जाणता ॥ ओर आपका दर्शन हुवा सो न्यायके आचार्योंकी कृपाका फल है काहेतैं कि गौतमजी महाराजनैं ये सूत्र लिखा है कि

ज्ञानग्रहणाभ्यसस्तद्विद्यैश्च सह सम्वादः ॥

ज्ञानविद्यावाले जे हैं तिन करिकैं साथ ज्यो सम्वाद है सो ज्ञानग्रहणाभ्यास है ये इस सूत्र का अर्थ है तो यत्न करतैं करतैं आपका दर्शन हुवा मैंनैं ये विचार किया कि न्यायविद्या ज्यो है सो ज्ञानविद्या नहीं है ॥ ओर श्री कृष्ण महाराज नैं वी अर्जुनकूं कही है कि

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

इसका अर्थ ये है कि तत्वसाक्षात्कार वाले ज्ञानी तोकूं ज्ञान को उपदेश करैंगे सो वे पुरुष आप हैं ज्यो कहो कि न्यायविद्या ज्यो है सो ज्ञान विद्या नहीं है ये तुम कैसैं जाणौं हो तो हम कहैं हैं कि गौतमजीनैं हीं ये सूत्र लिखा है कि

तत्वाध्यवसायसंरक्षणार्थं जल्पवितण्डे वीजप्ररोहसंरक्षणार्थं कण्टकशाखावरणवत् ॥

इसका अर्थ ये है कि तत्वनिश्चयकी रक्षाके अर्थ जल्प ओर वितण्डा हैं जैसैं वीज ओर अङ्कुर इनकी रक्षाके अर्थ कण्टकशाखा जे हैं तिनका आवरण होय है ओर वात्स्यायन ऋषिके किये प्रमाण प्रमेय सूत्रके भाष्य मैं लिखा है कि

तेषांपृथग्वचनमन्तरेणाध्यात्मविद्यामात्रमियं स्यात् यथोपनिषदः ॥

इसका अर्थ ये है कि संशयादिकका जुदा कथन न होय तो ये केवल अध्यात्म विद्या होय जैसैं उपनिषद् जे हैं ते केवल अध्यात्म विद्या हैं यातैं मैं ये जाणूं हूं कि न्याय विद्या अध्यात्म विद्या नहीं है उपनिषद् जे हैं

ते अध्यात्म विद्या हैं ।। ज्यो कहो कि ऐसैं हमारा कथन विरुद्ध होगा का-हेतैं कि हमनैं कहीहै कि न्यायका तात्पर्य केवल परमात्माके माननैं मैं है पदार्थौंकूं माननैं मैं नहीं है तो हम कहैं हैं कि आपका कथन विरुद्ध नहीं है काहे तैं कि आपनैं तो आज पर्यन्त कोई बी ग्रन्थकारनैं लिखा नहीं सो न्यायका गूढ तात्पर्य वेदकै अनुकूल कहा है ।। ज्यो कहो कि ग्रन्थ कारौंकूं ये तात्पर्य मालुम रहा और नहीं लिखा है अथवा ये तात्पर्य नहीं मालुम रहा यातैं नहीं लिखा है ये कहो तो हम कहैं हैं कि इसका निर्ण-य हम नहीं कर सकैं काहेतैं कि नहीं मालुम होणैं तैं जैसैं नहीं लिखणां वणैं है तैसैं मालुम होणैं तैं बी नहीं लिखणां वणैं है काहेतैं कि इस ता-त्पर्यकूं गूढ जाणिं करिकैं ग्रन्थकार गूढ ही राखैं तो बी आश्चर्य नहीं है ॥ महाराज न्यायमतके विवेचन तैं जैसा समुझा तैसैं आपतैं मालुम किया इसमैं ज्यो कुछ न्यूनता होय तो आप कृपा करिकैं फेरि उपदेश करि देवो॥ तो हम कहैं हैं कि तुमारी बुद्धि निर्मल और निर्विक्षेप है और अति ती-क्ष्ण है ऐसे बुद्धिमान् पुरुष अध्यात्मविद्याके उपदेश लेणैंके अधिकारी होय हैं ॥

अब तुमनैं ज्यो कही कि मैं वेदान्तका मत लेकरिकैं पूछणैंकी इ-च्छा करूं हूं सो कहो तुमारा प्रश्न कहा है परन्तु प्रथम ये कहो कि तुम नैं वेदान्तके कौन कौन ग्रन्थ देखे हैं ।। ज्यो कहो कि वेदान्तके ग्रन्थ तो मैं नैं सँस्कृत मैं तथा भाषा मैं बहुत देखे हैं परन्तु विचारसागर और वृत्ति-प्रभाकर नाम जे दोय सङ्ग्रह ग्रन्थ हैं उनकूं बहुत ही देखे हैं कारण ये है कि इन ग्रन्थौं मैं बहुत ग्रन्थौं मैं तैं अर्थ सङ्ग्रह किया है अब मैं ये पूछूं हूं कि आपनैं पूर्व ये कही कि आत्मा मैं ज्यो न जाणयाँगयापणां है सो स्वप्र-काशपणां है तो न जाणयाँगयापणां ज्यो है सो अज्ञातता शब्दका अर्थ है और जाणयाँगयापणां ज्यो है सो ज्ञातताशब्दका अर्थ है अर्थात् अज्ञातता-कूं तो भाषामैं न जाणयाँगयापणां कहैं हैं और जाणयाँगयापणां भाषा मैं ज्ञाततांकूं कहैं हैं और अज्ञातता शब्दका अर्थ तो ये है कि अज्ञानविषयता और ज्ञातता शब्दका अर्थ है ज्ञानविषयता तो ज्यो आत्मा न जाणयाँ-गयापणां करिकैं जाणयाँ गया तो अज्ञातता करिकैं जाणयाँगया ज्यो अज्ञा-तता करिकैं जाणयाँ गया तो अज्ञानविषयता करिकैं जाणयाँ गया तो अ-ज्ञानविषयता करिकैं ज्यो जाणणां उसका आकार ये है कि आत्मा मेरे नं

जाण्याँ हुवा है अब ज्यो ज्ञानीकूँ आत्मा मेरै न जाण्याँ हुवा है ऐसा ज्ञान हुवा तो ज्ञानी पुरुष मैं अज्ञानीतैं विलक्षणता कहा भई अर्थात् ज्ञानी पुरुष अज्ञानीतैं विलक्षण न हुवा काहेतैं कि अज्ञानीकूँ बी ऐसा ही ज्ञान होवै है कि आत्मा मेरै न जाण्याँ हुवा है अर्थात् मैं आत्माकूँ नहीं जाणता हूँ ॥ तो हम पूछैं हैं कि अज्ञातता शब्दका अर्थ ज्यो तुमनें ये कहा कि अज्ञानविषयता तो ये कहो कि अज्ञानविषयता ज्यो है सो किंरूपा है अर्थात् वेदान्तमत वाले इसका स्वरूप कहा मानैं हैं तो इस प्रश्नका ये तात्पर्य है कि जैसें न्याय में ये घट है इस ज्ञानके विषय तीन मानें हैं एक तो घट और दूसरी घटत्व जाति और तीसरा घट द्रव्य और घटत्व जाति इनका सम्बन्ध तो इनमैं ज्यो विषयता है तिसकूँ विशेष्यतारूपा प्रकारतारूपा संसर्गतारूपा मानी है अर्थात् घटमैं ज्यो ज्ञानकी विषयता है तिसकूँ तो विशेष्यतारूपा मानीं है और घटत्व मैं ज्यो ज्ञानकी विषयता है सो प्रकारतारूपा है और घट घटत्व जे हैं तिनका ज्यो सम्बन्ध है तिसमैं ज्यो ज्ञानकीविषयता है सो संसर्गतारूपा है ऐसैं मानी है तैसें मेरै घट अज्ञात है इस प्रतीतिसैं ज्यो घटमैं अज्ञातता मानी जाय है अर्थात् अज्ञान विषयता मानीं जाय है सो विशेष्यतारूपा है अथवा प्रकारतारूपा है अथवा संसर्गतारूपा है अथवा विशेष्यतादित्रितयरूपा है अथवा इन च्यारौंतैं विलक्षण है तो विशेष्यतादित्रितय मैं कोई एक रूपा तो नहीं मान सकोगे काहेतैं कि विनिगमना नहीं है और ज्यो विशेष्यतादित्रितयरूपा मानोंगे तो त्रितय शब्द तीनके समुदायकूँ कहै है और तीनका समुदाय षट् प्रकार करिकैं होसकै है तो विनिगमना नहीं होणें तैं किसी बी प्रकारके समुदायरूप नहीं मान सकोगे और ज्यो च्यारौंतैं विलक्षण मानौं तो उस अज्ञानकी विषयताका स्वरूप कहो परन्तु प्रथम ये कहो कि विषयविषयि भाव ज्यो है ताकूँ पदार्थका ज्ञान होय तहाँ हीं मानौं हो अथवा पदार्थका अज्ञान होय तहाँ बी मानौं हो ज्यो कहो कि पदार्थका ज्ञान होय तहाँ हीं विषयविषयिभाव होय है तो हम कहैं हैं कि अज्ञातताका मानणाँ असङ्गत हुवा काहे तैं कि अज्ञान विषयकूँ अज्ञात कहा है तो अज्ञानकूँ तुम जड मानौं हो ज्यो अज्ञान जड हुवा तो ये पदार्थौंकूँ विषय कैसें करै देखो वेदान्तमत वाले बी ज्ञान दो प्रकारके मानैं हैं एक तो स्वरूप भूत ज्ञान है और दूसरा अन्तःकरणकी ज्यो वृत्ति तद्रूप ज्ञान है स्वरूप

भूत ज्ञानके विषय तो अन्तःकरण और अन्तःकरणकी वृत्तियाँ हैं और वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान ताके विषय अन्य पदार्थ हैं तो वेदान्तमतवाले वी पदार्थोंका ज्ञान होय तहाँ हीं विषयविषयिभाव मानैं हैं अब ज्यो अज्ञान जड हुवा सो पदार्थोंके साथ इसका विषयविषयिभाव कैसैं होय ॥ ज्यो कहो कि न्यायवाले वी कोई ज्ञानविषयताकूँ विषयरूपा मानैं हैं और कोई ज्ञानरूपा मानैं हैं और कोई ज्ञाततारूपा मानैं हैं परन्तु या ज्ञातताकूँ ज्ञानरूपा नहीं मानैं हैं किन्तु ज्ञानजन्य मानैं हैं तैसैं हम वेदान्त मतसैं ज्ञान विषयताकूँ ज्ञाततारूपा मानैं हैं परन्तु इस ज्ञातताकूँ ज्ञानरूपा मानैं हैं काहेतैं कि वेदान्तमतवाले अन्तःकरणावच्छिन्न चेतनकूँ प्रमाता मानैं हैं और अन्तःकरणकी वृत्तिकूँ प्रमाण मानैं हैं और जहाँ प्रमाण करिकैं पदार्थका प्रत्यक्ष होय है तहाँ ऐसैं मानैं हैं कि आभास सहित अन्तःकरणकी वृत्ति विषयतैं मिल करिकैं विषयाकार होय है तहाँ वृत्ति तो विषयके अज्ञानकूँ दूर करै है और वृत्ति मैं जगे आभास है सो विषयका प्रकाश करै है वो विषय मैं आभासका प्रकाश है उसकूँ हम ज्ञान मानैं हैं और उस विषयकूँ ज्ञात मानैं हैं और उस विषय मैं ज्ञानकी विषयता है उसकूँ ज्ञाततारूपा मानैं हैं तो वो ज्ञातता ज्ञानतैं विलक्षण नहीं काहेतैं कि ज्ञातता जगे है सो ज्ञात जगे विषय ताका धर्म है तो ज्ञात जगे विषय ताका धर्म ज्ञान हीं है और जगे वो ज्ञानतैं विलक्षण होय तो विषय मैं आभासका प्रकाश न होय तव वी विषय मैं ज्ञात व्यवहार होणाँ चाहिये ऐसैं ज्ञातता ज्ञानरूपा है ॥ तैसैंहीं विषय मैं जगे अज्ञातता है उसकूँ अज्ञानरूपा मानैं हैं जगे कहो कि अज्ञातता शब्दका अर्थ अज्ञान विषयता है और अज्ञान जगे है सो जड है तो पदार्थोंके साथ इसका विषयविषयि भाव कैसैं होय ॥ तो हम कहैं हैं कि जड पदार्थों मैं वी विषयविषयि भाव होय है देखो लोक मैं शस्त्रविद्यावाले जे हैं तिनकूँ ऐसैं कहते देखैं हैं कि ये लक्ष्य अर्थात् निसाँणाँ हमारे वाणका विषय है तो वाण वी जड है और लक्ष्य वी जड है इनका विषयविषयिभाव होय है और देखो कि वृत्ति वी जड है और अज्ञान वी जड है इनका विषयविषयिभाव है ज्यो अज्ञान वृत्तिका विषय न होय तो वृत्ति अज्ञानका नाश कैसैं करै जैसैं लक्ष्य ज्यो है सो वाणका विषय न होय तो वाण उसका नाश नहीं करै है ऐसैं हम जड पदार्थों मैं वी विषयविषयिभाव मानैं हैं ॥ परन्तु इतनाँ भेद है

कि ज्ञेय और वाणी इनका ज्यो विषयविषयिभाव है सो तो आभासका विषय है और अज्ञान तथा वृत्ति इनका ज्यो विषयविषयिभाव है तिसकूँ ब्रह्म चेतन प्रकाशै है अर्थात् शुद्ध चेतनका विषय है और अज्ञात पदार्थोंका और अज्ञानका ज्यो विषयविषयिभाव है सो वी शुद्ध चेतनका ही विषय है ॥ तो हम पूछैं हैं कि ये जडपदार्थोंके विषयविषयिभावकी व्यवस्था तुमनैं कोन से ग्रन्थ मैं तैं कही है ज्यो कहो कि न तो निश्चलदासजी नैं अपणैं किये संग्रहों मैं लिखी और मैंनैं अन्य ग्रन्थोंमैं वी देखी नहीं परन्तु वेदान्त मत वाले ऐसैं मानैं हैं कि अज्ञान ज्यो है सो शुद्ध चेतन के आश्रित रहै है और उसहीकूँ विषय करै है और विद्यारण्यस्वामीनैं पञ्चदशी के कूटस्थदीपमैं कही है कि

चिदाभासान्तधीवृत्तिर्ज्ञानं लोहान्तकुन्तवत्
जाड्यमज्ञानमेताभ्यां व्याप्तः कुम्भो द्विधोच्यते ॥ १ ॥

इसका अर्थ ये है कि चिदाभास सहित अन्तःकरण की वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान है जैसैं लोह करिकैं युक्त भाला होय है और जडता ज्यो है सो अज्ञान है इन करिकैं व्याप्त ज्यो घट सो ज्ञात और अज्ञात कहावै है॥१॥ तो ये सिद्ध हुवा कि वेदान्तमतवाले अज्ञानका विषय चेतनकूँ वी मानैं हैं और जडकूँ वी मानैं हैं यातैं मैंनैं कल्पना करिकैं अज्ञात पदार्थ और अज्ञान इनके विषयविषयिभावकी व्यवस्था कही है ॥ तो हम पूछैं हैं कि अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव किसके मतसैं कहा है वेदान्तमतवाले तो वृत्ति और अज्ञान इन दोनूँकूँ केवल साक्षिभास्य मानैं हैं अब ज्यो अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव मानोंगे तो अज्ञान और वृत्ति इनमैं केवलसाक्षिभास्यता कैसैं बणैंगी सो कहो ॥ ज्यो कहो कि अज्ञानमैं ज्यो केवलसाक्षिभास्यता है सो तो प्रकाश्यतारूपा है और अज्ञानमैं वृत्तिविषयता ज्यो है सो नाश्यतारूपा है अर्थात् अज्ञान ज्यो है सो साक्षी सैं प्रकाशित होय है और वृत्ति सैं नष्ट होय है और वृत्ति मैं ज्यो साक्षिभास्यता है सो वी प्रकाश्यतारूपा ही है अर्थात् वृत्ति वी साक्षी सैं हीं प्रकाशित होय है तो अज्ञान और वृत्ति इनमैं केवल साक्षिभास्यता वी है और अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव वी बणँगया ॥ तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथन तैं ये सिद्ध हुवा कि साक्षीतैं प्रकाशि-

त वृत्ति साक्षीतैं प्रकाशित अज्ञानकूँ नष्ट करै है तो ये बी कहो कि वृत्ति मैं ज्यो आभास है उसका बी प्रकाश अज्ञानमैं होय है अथवा नहीँ ज्यो कहो कि अज्ञानका प्रकाश चिदाभास नहीँ करै है काहेतैं कि वेदान्तमत-वालोंका ये क्रम है कि प्रथम तो वृत्ति ज्यो है सो अज्ञानका नाश करैहै ओर पीछैं विषयाकार होय है ओर पीछैं आभास विषयका प्रकाश करै है तो आभासका जयो प्रकाश ताके पूर्वकालमैं हीँ वृत्ति नैं अज्ञानका नाश कर दिया अब अज्ञान रहा ही नहीँ तो आभास अज्ञानका प्रकाश कैसैं करै यातैं आभासका प्रकाश अज्ञानमैं नहीँ होय है ओर साक्षी चेतन सर्वका साधक है किसीका बी वाधक नहीँ ओर नित्यप्रकाशरूप है उससैं वृत्ति ओर अज्ञान ओर आभास समान प्रकाशित होवैं हैं॥ तो ये ओर कहो कि वृत्ति ओर अज्ञान इनका जयो साक्षी प्रकाश करै है सो निरावरण साक्षी प्रकाश करै है अथवा सावरण साक्षी प्रकाश करैहै जयो कहो कि निरावरण साक्षी प्रकाश करै है तो हम कहैं हैं कि वे वेदान्तमतवाले धन्य हैं जयो साक्षी परमात्माकूँ अज्ञानका आश्रय ओर विषय मानैं हैं इनकी अपेक्षातैं ता भेद वादी ही परम उत्तम हैं जयो परमात्म रूप जयो साक्षी है तिसमैं अज्ञान नहीँ मानैं हैं देखो उनकै जीव ओर परमात्मा इनका भेद मानणैं मैं ये प्रधान श्रुति है कि

> द्वासुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्योऽभि चाकशीति॥

इसका अर्थ ये है कि दोय पक्षी हैं साथ रहैं हैं समान धर्मवाले हैं समानवृक्षके ऊपर वैठे हैं उन मैं एक तो स्वादु जयो फल तिसकूँ भोजन करै है ओर दूसरा जयो है सो भोजन नहीँ करैहै ओर साक्षी हो करिकैं देखै है तो ये श्रुति रूपकातिशयोक्ति अलङ्कार करिकैं उपदेश करै है यहाँ दोय पक्षी इस कथन तैं द्वैतवादी जीव ओर ईश्वर इनकूं लेवैं हैं तिन मैं जीव तो कर्मफलकूँ भोगै है ओर ईश्वर साक्षी हो करिकैं देखै है ऐसैं मानैं हैं ओर वेदान्तमतवाले दोय पक्षी इस कथनतैं आभास ओर साक्षी ऐसैं अर्थ करैं हैं ओर साक्षीकूँ शुद्ध परमात्मरूप मानैं हैं॥ तो देखो द्वैतवादी साक्षीमैं अज्ञान नहीँ मानैं हैं ओर वेदान्त मतवाले साक्षी परमात्मा मैं अज्ञान मानैं हैं तो धन्य ही हैं परन्तु तुम ये कहो कि साक्षी-

कूँ निरावरण तुम हीँ कहो हो अथवा और वी कोई वेदान्ती मानैं हैं ॥ जयो कहो कि एक वाचस्पति मिश्रका मत ये है कि साक्षी मैं अज्ञान नहीँ है इस मतसैं हम साक्षीकूँ निरावरण कहैं हैं तो हम पूछैं हैं कि वाचस्पति मिश्र अज्ञानका आश्रय किसकूँ मानैं हैं जयो कहो कि वाचस्पति मिश्र अज्ञानका आश्रय तो जीवकूँ मानैं हैं और परमात्माकूँ उस अज्ञानका विषय मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि जीवाश्रित जयो अज्ञान सो इनके मतसैं जीवका आवरण करैगा जयो जीव अज्ञान करिकैं आवृत हुवा तो जैसैं घट अज्ञानावृत होणैं तैं अज्ञात कहावै है तैसैं जीव जयो है सो अज्ञात होणाँ चाहिये परन्तु मैं अज्ञानी हूँ ऐसी प्रतीति होय है यातैं मैं शब्दका अर्थ जयो जीव सो अज्ञान करिकैं युक्त मालुम होय है सो कैसैं ॥ जयोकहो कि जैसैं घट अज्ञात है इस प्रतीति मैं अज्ञान करिकैं युक्त घट सिद्ध होय है सो अज्ञान और घट ये दोनूँ हीँ साक्षी परमात्माके विषय हैं तैसैं हीँ मैं अज्ञानी हूँ इस प्रतीति मैं अज्ञान और अहं शब्दका अर्थ जीव ये दोनूँ साक्षीके विषय हैं तो हम पूछैं हैं कि मैं अज्ञानीहूँ ऐसी जयो प्रतीति सोही साक्षी है अथवा साक्षी इससैं भिन्न है तो तुमकूँ कहणाँहीँ पडैगा कि ये ज्यो प्रतीति सोही साक्षी है काहेतैं कि मैं शब्दका अर्थ जीव और अज्ञान ये दोनूँ इस प्रतीति के विषय हैं और अज्ञान और अज्ञानावृत विषय इनका प्रकाश करै सो साक्षी ऐसैं अविद्यावादी मानैं हैं अब कहो ये प्रतीतिरूप साक्षी अज्ञान करिकैं आवृत है अथवा नहीँ ज्यो कहोकि आवृत है तो हम कहैं हैं कि मैं शब्दका अर्थ ज्यो जीव और अज्ञान और जगत् इनमैं तैं कोई वी प्रतीत नहीँ होणाँ चाहिये काहे तैं कि दीपकै आवरण भयैं गृहके कोई वी पदार्थ दीखैं नहीँ तैसैंहीँ विश्वदीप जयो ये साक्षी परमात्मा इसकै आवरण होजाय तो विश्व अन्ध हो जाय ज्यो कहो कि साक्षी निरावरणहीँ प्रकाश करै है तो हम कहैं हैं कि साक्षीकूँ अज्ञानका विषय मानणाँ असङ्गत हुवा काहेतैं कि अज्ञानके विषयकूँहीँ अज्ञानावृत कहैं हैं देखो अज्ञात घट अज्ञानका विषय है तो अज्ञानावृत है ॥ जयो कहो कि साक्षी मेरै अज्ञात है इस प्रतीतिकी कहा गति होगी तो हम कहैं हैं कि दीप जयो है सो घट करिकैं अप्रकाशित है इस प्रतीतिकी जयो गति होय सो गति होगी ॥ जयो कहोकि काव्य प्रकाशकारनैं ये श्लोक लिखा है कि

उपकृतं बहु तत्र किमुच्यते सुजनता प्रथिता भवता परम् विदधदीदृशमेव सदा सखे सुखितमास्व ततः शरदां शतम् ॥ १ ॥

इसका वाच्य अर्थ ये है कि कोई पुरुष अपणीं हानि करणें वाले पुरुष सैं कहै है कि तैनें मेरा बड़ा उपकार किया कहा कहूं तैनें केवल सज्जनपणाँ विख्यात किया है मित्र ऐसाही सदा करता हुया सुख सैं सौ वर्ष पर्यन्त जीवता रहे तो इसका तात्पर्यार्थ ये है कि तैनें मेरी बडी हानि किई कुछ नहीं कहूं तैनें केवल दुर्जनपणाँ विख्यात किया ऐसा ही सदा करणेंवाला तू हे शत्रो अब ही मृत्युकूं प्राप्त हो १ तो लक्षणा वृत्तिसैं इस श्लोकका विपरीत अर्थ होय है तैसें हीं दीपक घट सैं अप्रकाशित है इसका अर्थ ये है कि घट दीपक सैं प्रकाशित है तो हम कहैं हैं कि साक्षी मेरै अज्ञात है अर्थात् साक्षी मेरे अप्रकाशित है इसका अर्थ ये है कि मैं साक्षीसैं प्रकाशित हूं अर्थात् स्वप्रकाश साक्षी मेरा प्रकाश करै है ये मेरै साक्षी अज्ञात है इसका अर्थ है ॥ अब कहो अज्ञान वादियोंकी मानी हुई आवरणरूपा अज्ञानविषयता नैं तो साक्षी नैं सिद्ध भई और नैं अहं शब्दका अर्थ ज्यो जीव तानैं सिद्ध हुई तो आवरणकूं सिद्ध करणैंके अर्थ ही अज्ञान वादियोंनैं अज्ञान मान्याँ है तो आवरण सिद्ध नहीं होणैं तैं अज्ञानका माननाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ॥

ज्यो कहो कि अज्ञानवादी आवरण दो प्रकारके मानैं हैं एक तो असत्वापादक और दूसरा अभानापादक तो असत्वापादक ज्यो आवरण तिसका नाश तो परोक्ष ज्ञानतैं मानैं हैं और अभानापादक ज्यो आवरण तिसका नाश अपरोक्ष ज्ञानतैं मानै हैं और अवान्तर वाक्यों करिकैं तो परोक्ष ज्ञान मानैं हैं और महावाक्यों करिकैं अपरोक्ष ज्ञान मानैं हैं और परोक्ष ज्ञानमैं तो श्रद्धाकूं सहकारिकारण मानैं हैं और अपरोक्ष ज्ञान मैं विचारकूं सहकारिकारण मानैं हैं ये ज्ये श्रद्धा और विचार हैं तिनकूं सहकारिकारण माननैं मैं विद्यारण्य स्वामी नैं ध्यानदीप मैं कही है कि

परोक्षज्ञानमश्रद्धा प्रतिबध्नाति नेतरत्
अविचारोऽपरोक्षस्य ज्ञानस्य प्रतिबन्धकः ॥ १ ॥

इसका अर्थ ये है कि अश्रद्धा ज्यो है सो परोक्ष ज्ञानकी प्रतिवन्धक है और अविचार ज्योहै सो अपरोक्ष ज्ञानका प्रतिवन्धक है १ ते। अश्रद्धा और अविचार इनकूँ दोय ज्ञानोंके प्रतिवन्धक कहणे तैं इनके अभाव जे श्रद्धा और विचार ते कारण सिद्ध होय हैं और असत्वापादक ज्यो आवरण सो तो विषयाश्रित होय है और अभानापादक ज्यो आवरण सो प्रमाता मैं रहै है और इनका मूल कारण ज्यो अज्ञान सो शुद्ध चेतन मैं रहै है तो ये सिद्ध हुवा कि शुद्ध चेतनाश्रित ज्यो अज्ञान ताके किये जे असत्वापादक और अभानापादक आवरण ते विषय और प्रमाता मैं क्रमतैं रहैं हैं तो जहाँ आप्तवाक्य करिकैं विषयाश्रित असत्वापादक आवरण नष्ट हो जाय है तहाँ अभानापादक आवरण प्रतीत होय है जैसैं घट है इस आप्तवाक्य करिकैं जिस घटमैं असत्वापादक आवरण नष्ट होय तहाँहीं घट अज्ञात है ये प्रतीति होय है सो ये असत्वापादक अज्ञान अज्ञाततारूप नहीँ है काहेतैं कि ज्यो ये अज्ञाततारूप होय ते। इसके रहतैं वी मेरे घट अज्ञात है ऐसैं प्रतीति होणी चाहिये सो होवे नहीँ अव ज्यो अज्ञातता स्वप्रकाशतारूपा सिद्ध किई ते। ये असत्वापादक अज्ञान किंरूप होगा सो कहो । ते। हम कहैं हैं कि अज्ञानवादी ऐसैं मानैं हैं कि असत्वापादक अज्ञानके रहते हुयैं अभानापादक अज्ञान रहै है और असत्वापादक अज्ञानके नहीँ रहतैं वी अभानापादक अज्ञान रहै है और अभानापादक अज्ञानके रहतैं असत्वापादक अज्ञान रहै वी है और नहीँ वी रहै है और अभानापादक अज्ञानके नहीँ रहतैं असत्वापादक अज्ञान रहै ही नहीँ ते। ये विचार करो कि अज्ञानकी निवृत्ति किंरूपा है तो ज्ञानके अभावका नाम अज्ञान है और निवृत्ति नाम वी अभावका ही है ते। अज्ञानकी निवृत्ति ज्यो है सो ज्ञानके अभावका अभाव हुवा ते। अज्ञानकी निवृत्ति ज्ञानरूपा भई ते।अभानापादक अज्ञानके रहतैं ज्यो असत्वापादक अज्ञान निवृत्त होगा तहाँ तो अज्ञानकी निवृत्ति परोक्षज्ञानरूपा होगी और जहाँ अभानापादक अज्ञानकी निवृत्ति होगी तहाँ अज्ञानकी निवृत्ति अपरोक्षज्ञानरूपा होगी परन्तु जहाँ अभानापादक अज्ञानकी निवृत्ति होगी तहाँ असत्वापादक अज्ञानकी निवृत्ति वी होगी सो किंरूपा होगी तो विचार दृष्टितैं देखैं ये वी अपरोक्ष ज्ञानरूपा होगी काहे तैं कि अज्ञान निवृत्ति ज्ञानरूपा होय है ये ते। अनुभव सिद्ध है और यहाँ अपरोक्षज्ञानतैं भिन्न कोई ज्ञान है नहीँ अव वि-

चार करो कि असत्यापादक ज्यो अज्ञान सो अभानापादक अज्ञान के रहतैं-हीं रहे है ये अज्ञानवादियौंकै अनुभवसिद्ध है यद्यपि अभानापादक अ-ज्ञानके रहतैं असत्वापादक अज्ञान नष्ट वी होजाय है परन्तु रहै तो अभा-नापादक अज्ञानके रहतैं हीं रहै तो ये सिद्ध हुवा कि असत्वापादक अज्ञान का और अभानापादक अज्ञान के नाशक जे परोक्ष ज्ञान और अपरोक्ष ज्ञान तिनके नहीं होणेके समय मैं अभानापादक अज्ञान ज्यो है सो असत्वापादक अज्ञानका साधक है अब ज्यो अभानापादक अज्ञान स्वप्र-काशतारूप होणें तैं स्वरूपतैं असिद्ध हुवा तो असत्वापादक अज्ञान कैसैं सिद्ध होय यातैं असत्वापादक अज्ञान किं रूप होगा ये प्रश्न हीं अस-ङ्गत है ॥

और ज्यो ये कही कि शुद्ध चेतनाश्रित ज्यो अज्ञान ताके किये जे असत्वापादक और अभानापादक आवरण ते विषय और प्रमातामैं क्रमतैं रहैं हैं ये कथन तो अत्यन्त ही असङ्गत है काहेतैं कि इस कथनतैं तो ये सिद्ध होय है कि शुद्ध ब्रह्मरूप परमात्मा तो परम अज्ञानी है और प्रमाता ज्यो है सो अज्ञानी है और विषय जे हैं ते अज्ञानी हैं काहेतैं कि देखो अज्ञानवादी शुद्ध चेतन मैं अज्ञान मानैं हैं और उस अज्ञानका विषय वी उसही चेतनकूँ मानैं हैं यातैं ये ब्रह्मचेतन तो परम अज्ञानी हुवा और प्र-माता अज्ञानी हुवा काहेतैं कि प्रमाता मैं तो अज्ञान रहाही अज्ञान नैं प्रमाताका आवरण नहीं किया और विषयौं मैं असत्वापादक अज्ञान रहा यातैं अज्ञानी भये और ज्यो कहो कि असत्वापादक और अभानापादक दोनूँ हीं अज्ञान प्रमाता मैं रहैं हैं प्रमाताकूँ विषय नहीं करैं हैं मैं अज्ञा-नी हूँ इस प्रतीतिसैं तो प्रमातामैं अज्ञान रहै है और मैं नहीं हूँ और नहीं मालुम होवूँ हूँ ये दोनूँ प्रतीति होवैं नहीं यातैं असत्वापादक और अभानापादक इन दोनूँ अज्ञानौंका विषय प्रमाता नहीं है अन्य पदार्थ जे हैं ते इन अज्ञानौंके विषय हैं यातैं आपनैं ज्यो ये क-ही कि विषय जे हैं ते अज्ञानी हैं ये आपका कथन असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि विषय अज्ञानी नहीं हैं ऐसैं मानों परन्तु ये विचार तो करो कि नित्य ज्ञान रूप ब्रह्म तो जिनके मतमैं परम अज्ञानी और प्रमाता अज्ञानी और विषय अज्ञानी नहीं उनका मत कैसा उत्तम है ।

अजी देखो तो सही इस मतमैं सच्चिदानन्दरूप ब्रह्मकूँ कैसी आपत्ति है कि आप अज्ञानी ओर आपके अज्ञानका विषय ओर जीवके अज्ञानका विषय ओर जीवके ज्ञान तैं जिसका अज्ञान मिटै देखो इनकी अपेक्षातैं तो वाचस्पतिका कथन हीं उत्तम है कि परमात्मा मैं परम अज्ञानी होणेंकी आपत्ति नहीं है ये तो कहो इस विषय मैं सङ्क्षही निश्चलदासजीनैं कोन-सा मत अङ्गीकृत किया है ॥ ज्यो कहो कि सङ्क्षही नैं तो विचारसागरके पंचम तरङ्ग मैं ऐसैं लिखा है कि सङ्क्षेपशारीरक विवरण वेदान्तमुक्ताव-ली अद्वैतसिद्धि अद्वैतदीपिका आदि ग्रन्थों मैं स्वाश्रयस्वविषयक ही अ-ज्ञानका अङ्गीकार किया है ओर वाचस्पतिका मत वी लिखा है परन्तु इसकूँ खण्डित कर दिया है तो हम कहैं हैं कि यातैं तो ये सिद्ध होय है कि स-ङ्क्षही वी अज्ञानकूँ शुद्ध चेतनकै आश्रित ओर उनकूँ हीं विषय करणें वाला मानैं है परन्तु ये कहो कि उसनैं वहाँ प्रमाण तो कहा कहा है ओर वा-चस्पति नैं ज्यो ये कही है कि मैं अज्ञानी हूँ ब्रह्मकूँ नहीं जाणूँ हूँ इस अनुभवसैं अज्ञान जीवाश्रित है ओर ब्रह्मकूँ विषय करैहै तैसैं सङ्क्षहीनैं ब्रह्माश्रित ओर ब्रह्मविषयक अज्ञानके मानणें मैं अनुभव कहा कहा है ज्यो कहोकि वहाँ प्रमाण ओर अनुभव तो कुछ वी कहा नहीं परन्तु एक तो ये युक्ति कहीहै किजीव ज्यो है सो अज्ञानका कार्यहै ओर अज्ञान निराश्रय रहै नहीं यातैं ब्रह्माश्रित है ओर ये कही है कि शुद्ध चेतनाश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है ॥ तो हम पूछैं हैं कि ब्रह्माश्रित अज्ञानका जी-वकूँ अभिमान होय है तो ईश्वरकै आश्रित ज्यो ज्ञान ताका जीवकूँ अभि-मान नहीं होवै है यामैं कारण कहा है सो कहो देखो ब्रह्माश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान हुवा तो अन्यके आश्रित वस्तुका अन्यकूँ अभिमान हुवा यातैं ईश्वराश्रित ज्ञानका वी जीवकूँ अभिमान होणाँहीं चाहिये इसका समाधान सङ्क्षहीनैं कहा लिखा है सो कहो ॥

ज्यो कहो कि उननैं तो इसका समाधान कुछ वी लिखा नहीं परन्तु हम इसका समाधान ये कहैं हैं कि जीव ज्यो है सो परमार्थ ब्रह्मरूप ही है यातैं ब्रह्माश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है ओर जीव ज्यो है सो परमार्थ ईश्वररूप नहीं यातैं ईश्वर के ज्ञानका जीवकूँ अभिमान होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि ये उत्तर तो अज्ञानवादियों के मततैं विरुद्ध है काहेतैं कि इनके मतमैं जीव ओर ईश्वर इनमैं व्यष्टि ओर समष्टि इन क-

रिकैँ भेद मान्याँ है समष्टि नाम समुदायका है और व्यष्टि नाम प्रत्येकका है और दृष्टान्त लिखा है कि जैसैं वृक्ष समुदाय ज्यो है सो वन है तैसैं तो ईश्वर है और जैसैं प्रत्येक ज्यो है सो वृक्ष है तैसैं जीव है तो ये सिद्ध हुवा कि प्रत्येक जीवौंके जे अविद्या उपाधि तिनका समुदाय सो ईश्वरकी उपाधि है तो समुदाय ज्यो है सो प्रत्येक तैं भिन्न होवै नहीँ तो ईश्वर प्रत्येक जीव रूप हुवा तो प्रत्येक जीव सर्वज्ञ होणैँहीँ चाहिये ॥ और देखो कि ये दोष वाचस्पतिके मतसैं नहीँ है काहेसैं कि वाचस्पतिनैं तो अनन्त जीवौं मैं अनन्त अज्ञान मानैं हैं और अनन्त अज्ञानौं के कल्पित अनन्त ईश्वर मानैं हैं यातैं हमनैं इनकी अपेक्षातैं वाचस्पतिका मत उत्तम कहा है ॥ ज्यो कहोकि वनका ज्यो आकाश सो वनकी दृष्टि करिकैं वनाकाश कहावै है और वो ही आकाश प्रत्येक वृक्षकी दृष्टि करिकैं वृक्षाकाश कहावै है और वो ही आकाश वन और वृक्ष इनकी दृष्टि विना केवल आकाश है तैसैं हीं ब्रह्म ज्यो है सो अविद्याकी दृष्टितैं जीव कहावै है और वोही ब्रह्म मायाकी दृष्टि करिकैं ईश्वर कहावै है और वो ही दोनूँकी दृष्टि विना शुद्ध ब्रह्म कहावै है तो जैसैं वनोपाधिक आकाश वनाकाश है तैसैं अविद्या समष्टयुपाधिक ब्रह्म ईश्वर है वो ईश्वर अविद्या समष्टिका प्रकाशक है यातैं उसकूँ सर्वज्ञ मानैं हैं और अविद्या व्यष्टयुपाधिक ज्यो जीव सो अविद्याव्यष्टिका प्रकाशक है यातैं अल्पज्ञ है और ब्रह्म ज्यो है सो ईश्वर और जीव इनका परमार्थ स्वरूप है तो जीव और ईश्वर ये अविद्याके आश्रय हैं यातैं तो ब्रह्मकूँ अविद्याका आश्रय कहा है और ब्रह्म ज्यो है सो जीव और ईश्वर इनकूँ अपणाँ स्वरूप तैं जुदा दीखै नहीँ यातैं अविद्याका विषय है और ईश्वरकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये अखण्ड ज्ञान है यातैं ईश्वरकी दृष्टि मैं तो ब्रह्म कै आवरण नहीँ है और जीवकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये ज्ञान है नहीँ और मैं ब्रह्मकूँ नहीँ जाणूँ हूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्याभिमानी है तो ये सिद्ध होगया कि ब्रह्माश्रित और ब्रह्मविषयक ज्यो अज्ञान ताका अभिमान जीवकूँ होय है ॥ तो हम कहैं हैं कि ये व्यवस्था तो हमनैं आज पर्यन्त नैं तो कोई अज्ञानवादीके ग्रन्थ मैं देखी और नैं किसीके मुख तैं सुणीं तुमनैं किस ग्रन्थ मैं ये कल्पना देखी है सो कहो ॥

ज्यो कहो कि ये कल्पना तो मैंनैं किई है तो हम कहैं हैं कि ये कल्पना परम उत्तम है और तुम परम बुद्धिमान् हो ज्यो ऐसी

कल्पना किई है ।। अब तुम ही तुमारी कल्पनाका विचार करो देखो ज्यो तुमनैं ये कही कि अविद्यासमष्टिका प्रकाशक होणौं तैं ईश्वर सर्वज्ञ है तो इससैं ये सिद्ध होय है कि ब्रह्म हीं अविद्यासमष्टिकी कल्पना तैं ईश्वर है तो ये सिद्ध होय है कि वस्तुगत्या ब्रह्म तैं जुदा ईश्वर नहीं है और ज्यो तुमनैं ये कही के अविद्याव्यष्ट्युपाधिक जीव है तो अविद्या व्यष्टि-की कल्पना तैं ब्रह्म हीं जीव है तो वस्तुगत्या ब्रह्म तैं जुदा जीव नहीं है और ज्यो ये कही कि ईश्वर और जीव ये अविद्याके आश्रय हैं यातैं ब्रह्मकूं अविद्याका आश्रय कहा है तो इस सैं ये सिद्ध होय है कि ब्रह्मतैं जुदे अलीक जे ईश्वर और जीव इन के आश्रित ज्यो अविद्या ताका आश्रय ब्रह्म है तो ये सिद्ध हुवा कि ब्रह्म जयो है सो वस्तुगत्या अविद्याका आ-श्रय नहीं है और ज्यो ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो जीव और ईश्वर इनकूं अपणीं स्वरूपतैं जुदा दीखै नहीं यातैं अज्ञानका विषय है ।। तो हम पूछैं हैं कि ये अज्ञानकी विषयता किंरूपा अर्थात् अज्ञानका विषय है इसका अर्थ ये है कि ब्रह्म जयो है सो अपणाँ स्वरूप भूत जयो ज्ञान तातैं भिन्न जयो ज्ञान ताका विषय नहीं है अथवा अज्ञान करिकैं ढका है ये अज्ञानका विषय है इस वाक्य का अर्थ है ।। जयो कहो कि स्वरूपभूत ज्ञानतैं भिन्न ज्ञानका विषय नहीं है ये अज्ञानका विषय है इसका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि इस कथन तैं तो अज्ञानविषयता स्वप्रकाशतारूपा सिद्ध होय है सोही हम कहैं हैं तो ब्रह्मकूं अज्ञान करिकैं आवृत मानणाँ असङ्गत हुवा तो अ-ज्ञानका मानणाँ व्यर्थ है ।।

और जयो ये कहो कि अज्ञान करिकैं ढका ये अज्ञानविषय इसका अर्थ है तो हम पूछैं हैं कि अज्ञान अन्य मैं रह करिकैं उससैं अन्यका आ-वरण करै है अथवा जिसमैं रहै उसका आवरण करै है अथवा अपणाँ आ-श्रय और अपणाँ आश्रय तैं जयो अन्य इन दोनूँका आवरण करै है जयो कहो कि अन्य मैं रह करिकैं उससैं अन्यका आवरण करै है तो हम कहैं हैं कि अज्ञानवादी ऐसैं मानैं हैं कि अज्ञान जयो है सो ब्रह्म मैं रहै है और ब्रह्मकूंहीं विषय करै है ये कथन असङ्गत हुवा ।। और जयो ये कहो कि जिसमैं रहै उसका आवरण करै है तो हम कहैं हैं कि मैं शब्दका अर्थ जयो जीव तिसका वी अविद्या सैं आवरण होणाँ चाहिये काहेतैं कि मैं अज्ञानी हूँ ये प्रतीति होय है तो इस प्रतीतिके विषय अज्ञान और मैं

शब्द का अर्थ जीव ये दोनूँ हैं तिनमैं अज्ञान तो विशेषण है और मैं शब्द का अर्थ विशेष्य है तो विशेषण ज्यो है सो विशेष्य मैं रहै है ये नियम है यातैं अविद्या करिकैं तुमारा मान्याँ ज्यो जीव तिसका आवरण होणाँहीं चाहिये ।। ज्यो कहो कि ये तो केवल अविद्याका अभिमानी है अविद्याका आश्रय तो ब्रह्म है यातैं अविद्या करिकैं जीवका आवरण नहीं होय है जैसैं राजापणाँका ज्यो अभिमानी तिससैं प्रजादण्डादिक जे राजापणेंके कार्य ते नहीं होय हैं तो हम कहैं हैं कि आत्मज्ञान करिकैं जीवका ब्रह्म होणाँ मानैं हैं सो असङ्गत हुवा काहेतैं कि जैसैं राजापणेंका अभिमान विवेकसैं मिटजाय तो पुरुष राजा नहीं हो जाय है ॥ ज्यो कहो कि पुरुष और राजा ये तो परस्पर भिन्न हैं यातैं राजापणेंका अभिमान मिटैं पुरुष ज्यो है सो राजा नहीं होय है और जीव तो वस्तुगत्या ब्रह्महीं है यातैं आत्मज्ञान करिकैं जीवका ब्रह्म होणाँ असङ्गत नहीं तो हम कहैं हैं कि जीव जगो है सो वस्तुगत्या ब्रह्म है तो अज्ञान वादी ब्रह्मसैं अज्ञान और अज्ञानकी विषयता इनकूँ मानैं हैं तो जीव मैं बी ये दोनूँ मानों जगो जीवसैं अज्ञान और अज्ञानकी विषयता मानी तो अज्ञान जिससैं रहै उसका आवरण करै है तो जीवका आवरण होणाँ हीं चाहिये ।।

जगो कहो कि जीवसैं अविद्याका किया आवरण है याहीतैं मैं ब्रह्म हूँ ऐसैं जीवकूँ ज्ञान नहीं है तो हम पूछैं हैं तुम ब्रह्म किसकूँ कहो हो अर्थात् तुम ब्रह्मका स्वरूप कहा मानोंहो जगो कहो कि हम ब्रह्मका स्वरूप सत् चित् और आनन्द मानैं हैं तो हम पूछैं हैं तुमहीं कहो मैं असत् जड दुःखहूँ ये प्रतीति तुमकूँ होवै है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि ये प्रतीति तो मोकूँ होवै नहीं परन्तु मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति बी होवै नहीं तो हम पूछैं हैं स्वरूपभूत जगो अनुभव तातैं भिन्न ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है अथवा स्वरूप भूत ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है ज्यो कहो कि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न अनुभवका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये इस वाक्यका अर्थ है तो हम पूछैं हैं स्वरूपभूत अनुभवतैं भिन्न अनुभव मानि करिकैं

उसकी विषयताका निषेध अपणें सच्चिदानन्द रूपमें करो हो अथवा स्वरूपभूत अनुभवतैं भिन्न अनुभव नहीं मानि करिकैं उस अनुभवकी विषयताका निषेध अपणैं सच्चिदानन्दरूप में करो हो। ज्यो कहोकि भिन्न अनुभव मानि करिकैं उसकी विषयताका निषेध अपणैं स्वरूपमें करैं हैं तो हम पूछैं हैं ये अनुभव ज्यो तुम मानौं हो सो ब्रह्मरूप अनुभव है अथवा ब्रह्म तैं विलक्षण है ज्यो कहोकि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न मान्याँ हुवा अनुभव ब्रह्मरूप है तो हम कहैं हैं कि

अयमात्मा ब्रह्म ॥

ये महा वाक्य ज्यो आत्माकूं ब्रह्मरूप वर्णन करैहै तो स्वरूपभूतअनुभव तैं भिन्न अनुभव मानणाँ अयुक्त है॥ज्यो कहो कि विलक्षण है तो हम कहैं हैं कि स्वरूप भूत अनुभव तैं भिन्नओर ब्रह्मतैं विलक्षण तो अनुभव वेदमें कहीं वी वर्णन किया नहीं यातैं ये तुमारा मान्याँ हुवा अनुभव तो अलीक है॥ज्यो कहो कि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न अनुभव नहीं मानि करिकैं अनुभव की विषयताका अपणैं मैं निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ये कथनतो बहुत ही ठीक है काहेतैं कि स्वरूपभूत अनुभवतैं भिन्न कोई अनुभव नहीं है यातैं अपणाँ सच्चिदानन्दरूप अन्य अनुभवका विषय नहीं है ये ही हम कहैं हैं॥ ज्यो कहो कि स्वरूपभूत ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है तो हम पूछैं हैं तुम सत् चित् आनन्द हो अथवा नहीं ज्यो कहो कि मैं सत् चित् आनन्द नहीं हूँ तो तुमारे कथन तैं ये सिद्ध होय है कि मैं असत् जड दुःख हूँ सो कहो तुम असत् जड दुःख हो अथवा नहीं तो तुम ये ही कहोगे कि मैं असत् जड दुःख नहीं हूँ तो ये सिद्ध हो गया कि मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये तुमकूं अनुभव है ॥ ज्यो कहो कि जैसे घट पट आदि पदार्थ जाणैं जाय हैं तैसैं ये सच्चिदानन्द जाण्याँ जावै नहीं तो हम कहैं हैं कि

विज्ञातारमरे केन विजानीयात् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जाणँवे वालेकूं किससैं जाणै तो इसका तात्पर्य ये है कि इसके जाणणैं मैं अन्य साधन नहीं है अर्थात् ये आप सैं ही जाण्याँ जाय है यातैं ही

विज्ञातम विजानताम् ॥

ये श्रुति वाक्य इसका अज्ञातता करिकैं ज्ञान वर्णन करै है सो ये अज्ञातता स्वप्रकाशतारूपा है काहे तैं कि वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान ताके विषयकूँ तो लोक मैं ज्ञात कहैं हैं ओर वृत्तिरूपज्ञानका विषय नहीं होय तिसकूँ अज्ञात कहैं हैं सो ये आत्मा वृत्तिरूपज्ञानका विषय नहीं अर्थात् वृत्तिरूप ज्ञान इसका विषय है यातैं अज्ञात है ओर मैं असत् जड दुःख हूँ ये प्रतीति होवै नहीं यातैं सच्चिदानन्द रूप करिकैं सर्व के ज्ञात है यातैं जीव मैं अज्ञानका किया आवरण मान्याँ सो असिद्ध हुवा तो अज्ञान जिस मैं रहै उस मैं आवरण करै है ऐसैं मानणाँ असङ्गत हुवा ॥

ओर ज्यो कहो कि अज्ञान ज्यो है सो अपणाँ आश्रय ओर अपणैं आश्रय तैं ज्यो अन्य इन दोनूँका आवरण करै है तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो अज्ञान वादियोँका मान्याँ अज्ञान अपणैं आश्रयका ओर अपणैं आश्रय तैं ज्यो अन्य इन दोनूँका आवरण करता तो परमात्मा ओर जीव ओर जगत् इनमैं तैं कुछ वी प्रतीत नहीं होता यातैं आवरण सिद्ध नहीं होणैं तैं आवरणका हेतु अज्ञान मानणाँ सर्वथा असङ्गत है ॥ अब कहो तुमनैं जयो पूर्व ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो जीव ओर ईश्वर इनकूँ अपणैं स्वरूप तैं जुदा दीखै नहीं यातैं अविद्याका विषय है ये कथन असङ्गत हुवा अथवा नहीं जिसकूँ तुम नैं अविद्या मानीं सो तो स्वप्रकाशतारूपा भई काहेतैं कि तुम अज्ञाततांकूँ अज्ञान कहो हो ओर अविद्या ज्यो है सो अज्ञानका पर्याय है तो अविद्या अज्ञान हीं है अब ज्यो परमात्मरूप साक्षी मैं अज्ञातता स्वप्रकाशता रूपा भई तो ज्ञाततारूपा हुई ज्यो अज्ञातता ज्ञाततारूपा भई तो ज्ञानरूपा भई तो ज्ञान ज्यो है सो परमात्म रूप है तो अज्ञातता परमात्म रूपा भई तो अज्ञातता नाम अज्ञानका है ओर अविद्या ज्यो है सो अज्ञान का पर्याय है तो अविद्या परमात्मरूपा भई तों अविद्याकूँ तमकी तरैंहँ आवरण करणैंका स्वभाव वाली मानीं सो मानणाँ असङ्गत ही है ।

ओर ज्यो ये कही कि ईश्वरकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये अखण्ड ज्ञान है ओर जीवकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये ज्ञान है नहीं ओर मैं ब्रह्मकूँ नहीं जाणूँ हूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्याभिमानी है तो हम पूछैं हैं कि तुम जीव समष्टिकूँ हीं ईश्वर मानौं हो अथवा जीव समष्टि तैं विलक्षण ईश्वर मानौं हो

ज्यो कहो कि जीव समष्टि ज्यो है सो ईश्वर है तो हम पूछैं हैं कि जीव समष्टि ज्यो है सो ईश्वर है तो जीवसमष्टिकूँ सर्वज्ञ मानोगे ज्यो जीव समष्टिकूँ सर्वज्ञ मानो तो ये सर्वज्ञता कहा है अर्थात् प्रत्येक जीव मैं तो सर्वज्ञता नहीं है ये अनुभवसिद्ध है परन्तु जीवसमष्टि मैं सर्वज्ञता हो सकै है जैसैं एक एक शास्त्र के पढे भये छै पुरुष हैं तहाँ प्रत्येक पुरुष षटशास्त्रज्ञ नहीं है तो बी षट्समुदाय ज्यो है सो षट्शास्त्रज्ञ कहावैहै तैसैंहीं सर्वज्ञता ईश्वर मैं है ऐसैं मानौं हो अथवा ये सर्वज्ञाता कोई विलक्षण है सो कहो ज्यो कहो कि जैसैं छै पुरुषों मैं षट्शास्त्रज्ञता है तैसैं हीं जीवसमष्टिरूप ज्यो परमेश्वर तामैं सर्वज्ञता है तो हम कहैं हैं कि धन्य हैं अज्ञानवादी जे मूर्खमण्डलकूँ परमेश्वर मानैं हैं अजी विचार तो करो एक ही मूर्ख अनन्त अनर्थोंका हेतु होय है तो मूर्खमण्डलरूप ईश्वर कितनैं अनर्थोंका हेतु होगा ऐसा परमेश्वर माननेंका दण्ड इनकूँ ये ही है कि ये पूर्व ज्यो स्वप्रकाशतारूपा अज्ञातता ब्रह्मरूपा अनुभवतैं सिद्ध भई सो इनकूँ इनके कल्पित अज्ञानरूप करिकैं प्रतीत रहैगी यातैं जीवन्मुक्तिका आनन्द इनकूँ आजन्म होवै नहीं ।। ज्यो कहो कि ईश्वर मैं ज्यो सर्वज्ञता है सो विलक्षण है तो हम कहैं हैं कि मायाकी वृत्तिरूप कहोगे माया ज्यो है सो अविद्यासमष्टिरूप मानौं हो तो अविद्यासमष्टिकी वृत्तिरूपा ही होगी ईश्वरकी सर्वज्ञता तो पूर्व कही सर्वज्ञतातैं ये सर्वज्ञता विलक्षण न भई किन्तु तद्रूप ही भई ।। ज्यो कहो कि ईश्वरकै उपाधि तो माया है सो शुद्ध सत्वप्रधाना है और जीवकै उपाधि अविद्या है सो मलिनसत्वप्रधाना है माया मैं ज्यो आभास सो तो ईश्वर है और अविद्या मैं ज्यो आभास सो जीव है वो शुद्धसत्वप्रधाना माया ईश्वरकी उपाधि है तो उस उपाधिकी शुद्धतातैं ईश्वर सर्वज्ञ है और मलिनसत्वप्रधाना अविद्या जीवकी उपाधि है तो उस उपाधिकी मलिनतातैं जीव अल्पज्ञ है तो ईश्वर मैं ज्यो सर्वज्ञता है सो शुद्धसत्वप्रधाना ज्यो माया ताकी वृत्तिरूपा है यातैं पूर्व कही ज्यो सर्वज्ञता तातैं विलक्षण है और माया और अविद्या इन मैं सत्वकी शुद्धि और अशुद्धि इन करिकैं हीं भेद है और वस्तुगत्या ये दोनूँ एक ही हैं प्रत्येक अंशकी दृष्टितैं इसकूँ अविद्यावादी अविद्या मानैं हैं और अंशसमुदाय की दृष्टितैं माया मानैं हैं ।। तो हम कहैं हैं कि देखो तुम इनके कथनका विचार तो करो प्रत्येक अंश मलिन होय तो उनका समुदाय शुद्ध कैसैं

हो सकै जैसैं घट के प्रत्येक अवयव मलिन होवैं तो उनका समुदाय ज्यो घट सो शुद्ध नहीं होय है इसकी व्यवस्था विचारसागरमैं अथवा वृत्तिप्रभाकरमैं सङ्ग्रही मैं कहा लिखी है सो कहो ।। ज्यो कहो कि इसका विचार तो इन ग्रन्थोँ मैं कहीं देखा नहीं श्रोर ये वी निश्चय है कि अन्य ग्रन्थोँ मैं वी ये विचार नहीं है ज्यो अन्य ग्रन्थोँ मैं ये विचार होता तो निश्चलदासजी अवश्य लिखते तो हम पूछैं हैं तुमहीं कल्पना करिकैं इस विषय मैं कुछ कहो ।।

ज्यो कहो कि

ईश्वरासिद्धेः॥

ये साङ्ख्यसूत्र है इसका अर्थ ये है कि ईश्वर कोई वी युक्ति तैं सिद्ध नहीं है अर्थात् श्रुतिसिद्ध है यातैं मैं इस विषय मैं कल्पना कर सकूँ नहीं केवल वेद के कथन तैं ईश्वरकूँ मानूँ हूँ तो हम कहैं हैं कि ये तो हमारे वी सम्मत है काहे तैं कि ।

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसम्विशन्ति तद्ब्रह्म तद्विजिज्ञासस्व ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिस सैं ये भूत पैदा होय हैं श्रोर पैदा हुये जिससैं जीवैं हैं श्रोर जाते हुये जिस मैं प्रवेश करजाय हैं सो ब्रह्म है तू उसकूँ जाणँवेकी इच्छा करि तो इससैं ये सिद्ध होय है कि सच्चिदानन्दरूप ब्रह्महीं ईश्वर है अविद्यावादियोँका कल्पित अविद्यासमष्ट्युपाधिक होणैं तैं मूर्खमण्डलरूप ईश्वर ज्यो है सो तो अलीक है ।। श्रोर ज्यो ये कहो कि अविद्यावादी तो अविद्याकूँ जीव श्रोर ईश्वर इनकी वी कारण मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि

ईक्षतेर्नाशब्दम् ॥

ये ब्रह्मसूत्र है इसका अर्थ ये है कि अशब्द ज्यो प्रकृति सो कारण नहीं है काहेतैं कि वेदमैं कारणका ईक्षण धर्म श्रवण किया है सो ईक्षण नाम ज्ञानका है तो इस व्यास भगवानके वाक्यमैं प्रकृतिमैं कारणपणैं

का निषेध ज्यो है सो स्पष्ट है यातैं प्रकृतिकूँ कारण मानणाँ असङ्गत है ॥ ज्यो कहो कि कारणका इक्षण धर्म किस श्रुतिमैं है तो हम कहैं हैं कि

स ईक्षत लोकान्नु सृजा ॥

ये ऐतरेयोपनिषद्की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि वो देखता हुवा लोकौंकूँ रचणैंकी इच्छा करिकैं तो देखणाँ ये ईक्षणका अर्थ है सो ये ईक्षण साक्षीरूप ही है यातैं अपणैं स्वरूपतैं भिन्न ईश्वर नहीं है ॥ ज्यो कहोकि ईश्वर तो जगत्का कर्त्ता है साक्षीकूँ कर्त्ता मानणैं मैं प्रमाण कहा है तो हम कहैं हैं कि

य एष सुप्तेषु जागर्त्ति कामं कामं पुरुषो निर्मि-
माणः तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ॥

ये कठोपनिषद्की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि सूते जे हैं तिनमैं ज्यो ये पुरुष जागै है सो विषयौंका पैदा करणैं वाला है सो ही शुद्ध है सो ही ब्रह्म है सो ही अविनाशी है तो अज्ञानवादी कर्त्ताकूँ ईश्वर कहैं हैं और श्रुति इस साक्षी परमात्माकूँ विषयौंका पैदा करणैं वाला कहै है तो ये ही ईश्वर है और इसकूँ हीं श्रुति शुद्ध कहै है और ब्रह्म कहै है तो इसमैं अविद्या नहीं है यातैं ब्रह्म अथवा ईश्वर इससैं भिन्न मानैं तो अली-क है ॥

ज्यो कहोकि शुद्ध चैतन्य मैं कर्त्तापणाँ कैसैं हो सकै तो हम पूछैं हैं जड ज्यो माया तामैं कर्त्तापणाँ कैसैं होसकै ज्यो कहोकि शुद्ध चैतन्य के प्रकाशसैं युक्त ज्यो माया तामैं कर्त्तापणाँ अज्ञानवादी मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि जिसके प्रकाशका ये प्रभाव है कि जिससैं प्रकाशित अविद्या जड है तो वी करणैं कूँ समर्थ होय है उसका प्रभाव ये नहीं कि जिससैं सृष्टि होय तो वडा ही आश्चर्य है ॥

अब कहो ईश्वरकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये अखण्ड ज्ञान है अथवा ईश्वर अख-ण्ड ज्ञानरूप है ज्यो कहोकि आपके किये निर्णय तैं अखण्ड ज्ञानरूप ईश्वर श्रुतिसिद्ध हुवा परन्तु अविद्यावादी ऐसैं कहैं हैं कि

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूता-
न्तरात्मा कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेत्ता:
केवलो निर्गुणश्च ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि स्वप्रकाश परमात्मा एक है सर्व भूतौं मैं गूढ है अर्थात् गुप्त है सर्व मैं व्यापक है सर्व भूतोंका अन्तरात्मा है कर्म का अध्यक्ष है अर्थात् साधक है सर्व भूतोंका आधार है साक्षी है ज्ञानरूप है केवल है निर्गुण है तो ये श्रुति शुद्ध ब्रह्मका प्रतिपादन करै है और दूसरी श्रुति ये है कि

एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः
एकधा वहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥

इसका अर्थ ये है कि सर्व भूतोंका आत्मा एक ही है सर्व भूतौं मैं स्थित है जल मैं चन्द्रमाकी तरँहँ एक प्रकार करिकैं और वहुत प्रकार करिकैं दीखै है तो प्रथम श्रुति मैं निर्गुणपरमात्माका गूढ ये विशेषण है और गूढ शब्दका अर्थ है गुप्त तो ब्रह्म मैं आवरण सिद्ध होगया और दूसरी श्रुति मैं जलचन्द्रके दृष्टान्त करिकैं ब्रह्मका एक प्रकार करिकैं और वहुत प्रकार करिकैं दीखणाँ वर्णन किया है तो ब्रह्म ज्ञानरूप है और साक्षी है अर्थात् ब्रह्म जो है सो द्रष्टा है दृश्य नहीं है और दूसरी श्रुति मैं एक प्रकार करिकैं और वहुत प्रकार करिकैं ब्रह्मका दीखणाँ वर्णन किया है तो अन्य प्रकार करिकैं तो ब्रह्मका दीखणाँ वणँ सकै नहीं यातैं जीव और ईश्वर जे हैं ते ब्रह्मके आभास हैं जैसैं जल मैं चन्द्रमाका आभास होय है जो कहो कि यहाँ जलकी तरँहँ कोन है तो हम कहैं हैं कि एक तो श्रुति ये है कि

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम् वह्वीः प्रजाः
सृजमानाम् ॥

और दूसरी श्रुति ये है कि

इन्द्रोमायाभिः पुरुरूप ईयते ॥

तो प्रथम श्रुति मैं तो माया का वाचक अजा शब्द है तहाँ एक वचन है और दूसरी श्रुति मैं

मायाभिः ॥

यहाँ वहु वचन है तो मायाके अंशौंकी दृष्टि करिकैं तो वहु वचन है और अंशीरूप जो माया ताकी दृष्टितैं एक वचन है ये जो माया सो

जलकी तरँहँ है तो अंशीरूप जयो माया से। तो समुद्रकी तरँहँ है और अंशरूप जयो माया से तरङ्गोंकी तरँहँ है और जैसें समुद्र एक है तैसें तो अंशीरूप माया एक है और जैसें तरङ्ग बहुत हैं तैसें अंशरूप माया बहुत हैं उसकूँ हीं अविद्या कहैं हैं उस माया मैं जयो आभास है सो तो ईश्वर है और अविद्या मैं आभास जीव है और माया और अविद्या ये अनादि हैं ईश्वर और जीव आभासरूप हैं और मायाकल्पित हैं यासैं और माया और अविद्या ये स्वतः सिद्ध हैं यासैं ये श्रुति प्रमाण है कि

जीवेशावाभासेन करोति माया चाविद्या च स्वयमेव भवति॥

इसका अर्थ ये है कि जीव और ईश्वर इनकूँ आभास करिकैं करै है और माया और अविद्या ये आप ही होय हैं तो ये सिद्ध हुवा कि सच्चिदानन्दरूप ब्रह्म अविद्या करिकैं आवृत है सो अविद्या अनादि है और जीव और ईश्वर अविद्या कल्पित हैं।

तो हम कहैं हैं कि आवरण तो अज्ञाततारूप है सो तो ब्रह्मरूप। सिद्ध भई है यातैं ब्रह्म जयो है सो गुप्त है इसका तात्पर्य्य तो ये है कि ब्रह्म जयो है सो किसीसैं भी प्रकाशित नहीं है अर्थात् सर्वका प्रकाशक है और अविद्याकूँ श्रुति अनादि सिद्ध बतावे है तो देखो विचार करो ब्रह्ममैं स्वप्रकाशता अनादि सिद्ध है और जयो श्रुति जीव और ईश्वर इनकूँ अविद्या कल्पित बतावे है तो ब्रह्मरूप बतावे है जैसें सुवर्ण ज्यो है ता करिकैं कल्पित भूषण सुवर्ण हीं होय है यातैं हीं बहुत श्रुतियें जीव और ईश्वर इनकूँ ब्रह्म वर्णन करैं हैं॥ अजी देखो श्रुतिमैं जीव और ईश्वर इनकूँ ज्यो आभास कहे तो जीव और ईश्वर नहीं हैं ये सिद्ध होय है काहेतैं कि जैसें न्याय मैं आभास हेतु हेतु नहीं है तैसें आभास जीव ईश्वर जे हैं ते जीव ईश्वर नहीं हैं जैसें सत् हेतु ज्यो है सो हेतु है तैसें सत् जीव ईश्वर जे हैं ते जीव ईश्वर हैं देखो अज्ञानवादी जीव ईश्वरकूँ आभास कहैं हैं वे ही इनकूँ अविद्याकल्पित मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं।

अजी तुम अविद्यावादियोंके ग्रन्थोंकूँ तो देखो कोई तो जीव ईश्वर इनकूँ आभास मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं और कोई आभास शब्दका अर्थ प्रतिबिम्ब मानि करिकैं जीव और ईश्वर इनकूँ तो सच्चिदानन्द रूप ही कहैं

हैं और बिम्बत्व प्रतिबिम्बत्व जे धर्म तिनकूँ कल्पित मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं और कोई ऐसैं कहैं हैं कि निरवयवका प्रतिबिम्ब होवै नहीं यातैं जैसैं महाकाश मैं गृहाकाश और घटाकाश ये कल्पित हैं तैसैं ईश्वर और जीव ये कल्पित हैं और कोई ये कहै है कि अविद्या सैं ब्रह्म हीं एक जीव है जैसैं कुन्तीका पुत्र कर्ण हीं राधाका पुत्र हुवा है और वो जीव हुवा ज्यो ब्रह्म उसनैं हीं ईश्वर और जीव ये कल्पित किये हैं जै-सैं निद्रामैं पुरुष ईश्वरकूँ तथा अनन्त जीवोंकूँ कल्पित करै है तो स्वप्न मैं कल्पित ईश्वर तथा जीव ये जैसैं ईश्वराभास और जीवाभास हैं तैसैं हीं आ-भास ईश्वर जीव हैं ॥ अब विचार करिकैं देखो ज्यो ईश्वर और जीव ब्रह्म-तैं भिन्न कुछ होते तो ये आपस मैं विवाद नहीं करते परन्तु ये आपस मैं विवाद करिकैं अपणें अपणें मत सिद्ध किये चाहैं हैं यातैं ये सिद्ध होय है कि इननैं हीं अण हुये जीव ईश्वर कल्पित किये हैं ॥

और ज्यो यें कहो कि जीवकूँ मैं ब्रह्महूँ ये ज्ञान नहीं है और मैं ब्रह्मकूँ नहीं जाणूँ हूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्यभिमानी है तो इसका समाधान हम पूर्व करि आये हैं यहाँ इस प्रश्नका उत्तर देणाँ उचित नहीं॥ अब कहो ब्रह्माश्रित और ब्रह्मविषयक अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है ये कथन असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति और अनुभवतैं अज्ञानका मानणाँ असङ्गत हुवा परन्तु

असुर्या नाम ते लोका अन्धे न तमसा वृताः
तांस्ते प्रेत्याभिगछन्ति ये के चात्महनो जनाः॥

ये ईशावास्य उपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि असुरोंके जे वे लोक हैं ते अन्ध तम करिकैं आवृत्त हैं शरीर त्यागि करिकैं ये पुरुष तहाँ जाय हैं जे आत्म हन हैं और कठोपनिषद्की ये श्रुति है कि

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराऽ पण्डि-तम्मन्यमानाः दन्द्रम्यमानाऽ परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥

इस का अर्थ ये है कि अविद्याके मध्य मैं वर्त्तमान और आप हम धीर हैं हम पण्डित हैं ऐसैं अभिमान करैं वे अत्यन्त कुटिल और अनेक प्रकार की ज्यो गति ताकूँ प्राप्त होते हुये दुःखो करिकैं व्याप्त होय हैं जैसैं अन्ध के

आश्रय तैं चले अन्य और इसही उपनिषद्की ये दोय श्रुतियाँ हैं कि

इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः
मनसश्च परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः ॥१॥
महतऽपरमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषऽ परः
पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परा गतिः ॥ २॥

इनका अर्थ ये है कि इन्द्रियोंतैं सूक्ष्म अर्थ हैं अर्थात् इन्द्रियोंके आरम्भक भूत हैं और उनतैं सूक्ष्म मनका आरम्भक भूत है और मनतैं सूक्ष्म बुद्धिका आरम्भक भूत है और बुद्धितैं सूक्ष्म महत्तत्व है १ और महत्तत्व तैं सूक्ष्म अव्यक्त है और अव्यक्त तैं अति सूक्ष्म पुरुष है और पुरुषसैं सूक्ष्म कुछ नहीं है वहाँ सूक्ष्मताकी समाप्ति है सोही परम गति है २ ऐसैंहीं बहुत श्रुतियाँ करिकैं अविद्या सिद्ध होय है यातैं अविद्यावादी अविद्या मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि पूर्व कही दोय श्रुतियाँ तो अविद्यावादी और ज्यो इनका विश्वास करैं हैं उनका महिमा वर्णन करैं हैं देखो

असुर्या नाम ॥

इस श्रुति के व्याख्यान मैं भाष्यकार ऐसैं लिखैं हैं कि

आत्मानं घ्नन्ति ते आत्महनः के ते अविद्वांसः कथं ते आत्मानं नित्यं हिंसन्ति अविद्यादोषेण विद्यमानस्यात्मनस्तिरष्करणात् विद्यमानस्यात्मनो यत्कार्यं फलमजरामरत्वादि सम्वेदनादि तद्धि तस्यैव तिरोभूतं भवति ॥

इसका अर्थ ये है कि आत्माका नाश करैं ते आत्महन हैं कोन हैं वे अविद्वान् कैसैं वे नित्य आत्माका नाश करैं हैं अविद्यारूप दोष करिकैं विद्यमान अर्थात् स्वप्रकाशता करिकैं सर्वकै प्रकाशमान ऐसा ज्यो आत्मा ताके तिरष्कार करणें तैं इसका अर्थ आनन्दगिरि ऐसैं करैं हैं कि जैसैं कोई पुरुष शुद्ध है उसके मिथ्याभिशाय ज्यो है सो शस्त्र वध है तैसैंहीं आत्मा मैं अविद्या मानि करिकैं पापीपणाकी कल्पना ज्यो है सो हिंसाही है विद्य-

मान ज्यो आत्मा ताका कार्य्य फल अजर अमरपणाँकूँ आदि लेकैं अथवा सम्वेदनकूँ आदि लेकैं सो उसके ही आवृत होय है ॥ ज्यो कहो कि इस कथनतैं तो अविद्यावादियोँकी निन्दा प्रतीत होय है ये महिमा कैसैं तो हम कहैं हैं कि सच्चिदानन्दरूप परमात्मानैं ज्यो वे कर्मफल अथवा जन्मरूप लोकोंकी रचना किई उन लोकोंकूँ वे पुरुष जाय हैं ज्यो ये अविद्यावादी न होते तो परमात्माकी किई लोकरचना व्यर्थ होती यातैं परमात्माकी लोक रचनाकूँ सफल करणेंकूँ इनका यत्न है तो परमात्माके उपकारक होणें तैं ये महिमा ही है ये इनकी निन्दा नहीं है ये तो प्रथम श्रुतिका तात्पर्य है ॥ और द्वितीय श्रुतिमैं इन अविद्यावादियोँका सङ्ग करणें वाले जे पुरुष तिनकी गति होय है सो स्पष्ट है ॥ और

इन्द्रियेभ्य ॥

इत्यादिक जे श्रुति इनमैं अव्यक्त शब्द है तिसका अर्थ भाष्यकार ये करैं हैं कि

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो वीजभूतम् ॥

इसका तात्पर्य आनन्दगिरि ऐसैं वर्णन करैं हैं कि भावी ज्यो वटवृक्ष उसकूँ पैदा करणेंकी ज्यो शक्ति उस शक्तियाला ज्यो वटवीज सो अपणीं शक्ति करिकैं सद्वितीय नहीं है तैसैं हीं ब्रह्म ज्यो है सो वी माया शक्ति करिकैं सद्वितीय नहीं है सत्वादिरूप करिकैं इसका निरूपण करै तो इसका स्वरूप कुछ नहीं है यातैं इसकूँ अव्यक्त कही है अव्यक्तशब्द तैं वी अद्वैतकी विरोधिनी नहीं है सर्व प्रपञ्चका कारण अव्यक्त है वो परमात्माके अधीनहै यातैं उपचार करिकैं परमात्मा कारण है अव्यक्तकी तरैंह विकारीपणाँ करिकैं कारण नहीं है अनादि है यातैं अव्यक्त परतन्त्र है उसतैं भिन्न मानणें मैं प्रमाण नहीं है आत्मसत्तासैं हीं सत्तावान् है तो विवेक दृष्टितैं विचार करो तो भाष्यकार मायांकूँ ब्रह्मरूपा ही मानैं हैं आनन्दगिरिके व्याख्यानतैं ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है देखो आनन्दगिरिनैं ज्यो ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो माया शक्ति करिकैं सद्वितीय नहीं है ॥ तो विचार करो कि आपतैं ही आप सद्वितीय नहीं होय है अर्थात् आपतैं ही आप भिन्न नहीं होय है आपतैं किञ्चित् वी विलक्षण होय कोई पदार्थ तव ही भेदकी कल्पना किई जाय है अब ज्यो माया शक्ति करिकैं ब्रह्म सद्वितीय

नहीं है तो माया ब्रह्मतैं विलक्षण नहीं ये भाष्यकारका अभिप्राय सिद्ध होय है ।। ज्यो कहो कि आनन्दगिरि वटवीजके दृष्टान्ततैं ये कहै है कि जैसैं वीजमैं वटनिर्माणशक्ति है तैसैं तो अव्यक्त है ओर जैसैं वीज है तैसैं ब्रह्म है तो यद्यपि शक्ति ज्यो है सो वीजतैं भिन्न दीखै नहीं तो वी वो वीजतैं भिन्न हीं है देखो वीज अपणैं स्वरूपतैं वणाँ रहै है ओर वृक्ष निर्माणशक्ति नष्ट हो जाय है तब वीजतैं वृक्ष होवै नहीं ओर जब वो शक्ति रहै है तब वृक्ष होवै है तो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि शक्ति ज्यो है सो वीजतैं विलक्षण है ओर वीजमैं रहै है ओर शक्तिका प्रत्यक्ष होवै नहीं किन्तु अनुमिति होवै है तो ब्रह्ममैं अव्यक्तका मानणाँ सिद्ध हो गया ।। तो हम कहैं हैं कि देखो आनन्दगिरिके व्याख्यानतैं तो ब्रह्म ज्यो है सो वीज सिद्ध होय है ओर अव्यक्त ज्यो है सो ब्रह्मवीजकी शक्ति सिद्ध होय है ओर भाष्यकार अव्यक्तकूँ वीज भूत कहैं हैं तो इसके तात्पर्यका विचार करणाँ चाहिये ।। ज्यो इसका तात्पर्य विचारते हैं तो

वीजभूतम् ॥

इसका यौगिक अर्थ ये है कि अवीज ज्यो है सो वीज होय सो वीज भूत तो यहाँ वीज होगा ब्रह्म सो सत् है तो अवीज होगा अव्यक्त सो असत् होगा तो अवीजका वीज होणाँ ज्यो है सो असत्का सत् होणाँ है तो इस भाष्यकारके वचनतैं तो ये सिद्ध होय है कि अव्यक्त ज्यो है सो असत् है अर्थात् नहीं है काहेतैं कि असत् है इस कथनतैं हीं असत्का सत् होणाँ सिद्ध होय है असत् नाम नहीं का है ओर है नाम सत्का है तो अव्यक्तका नहीं होणाँ सिद्ध होगया ।

ज्यो कहो कि

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो वीजभूतम् ॥

ऐसैं तो भाष्यकार बोले ओर

अव्यक्तं नास्ति ॥

ऐसैं नहीं बोले इसका कारण कहा है

अव्यक्तं नास्ति ॥

इस कथनतैं जैसैं आपका कह्या तात्पर्य स्पष्ट मालुम होता तैसैं

वीजभूतम् ॥

इस कथन तैं आपका कह्या तात्पर्य स्पष्ट मालुम होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि ये आत्मविद्याका उपदेश है यातैं ऐसा दृष्टान्त कहणाँ उचित तो नहीं है तथापि कह्या अर्थ शिष्यके हृदय मैं जैसैं आरूढ होय तैसैं यत्न करणें मैं दोष नहीं यातैं हम कहैं हैं कि जैसैं विषयी पुरुषोंकूँ तरुणीके आवृत कुचमण्डलके दर्शन तैं चमत्कार होय है तैसैं अनावृत कुचमण्डलके दर्शनतैं चमत्कार होवै नहीं तैसैं हीं अस्पष्टार्थ वाक्य जैसैं विद्वज्जनोंके हृदयमैं चमत्कार करै है तैसैं स्पष्टार्थ वाक्य चमत्कार करै नहीं यातैं भाष्यकार

अव्यक्तं नास्ति ॥

ऐसैं नहीं बोले और

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो बीजभूतम् ॥

ऐसैं बोले हैं ॥ ज्यो कहो कि

बीजभूतम् ॥

इसका अर्थ ये बी होय है कि

बीजम् भूतम् इति बीजभूतम् ॥

अर्थात् बीज होय सो बीज भूत तो हम कहैं हैं कि ऐसैं अर्थ करो तो बहुत ही उत्तम है काहेतैं कि आनन्दगिरिनैं बीज तो मान्याँ है ब्रह्मकूँ और शक्ति मान्याँ है अव्यक्तकूँ अब ज्यो

बीजभूतम् ॥

इसका अर्थ ये हुवा कि बीज होय सो बीजभूत तो अव्यक्त ज्यो है सो ब्रह्मरूप सिद्ध होगया॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि सत्त्वादिरूप करिकैं इसका निरूपण करै तो इसका स्वरूप कुछ नहीं है तो इस कथनतैं ये सिद्ध होय है कि सच्चिदानन्दरूप परमात्मातैं विलक्षण इसका स्वरूप कुछ होय तो इसका स्वरूप निरूपण किया जाय यातैं बी ये ब्रह्मरूप हीं सिद्ध होय है ॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि सर्व प्रपञ्चका कारण अव्यक्त है वो परमात्माके आधीन है यातैं उपचार करिकैं परमात्मा कारण है अव्यक्तकी तरँहँ विकारीपणाँ करिकैं कारण नहीं है तो यातैं ये सिद्ध होय है कि परमात्मामैं विकारीपणाँका दोष कोई नहीं लगावै यातैं अव्यक्तकी कल्पना है ॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि अनादि होणें तैं अव्य-

क परतन्त्र है तो इस कथनतैं आनन्दगिरिका ये तात्पर्य सिद्ध होय है कि अव्यक्त परतन्त्र नहीं है ज्यो अनादि होणें तैं परतन्त्र मानणें मैं आनन्दगिरिका तात्पर्य होय तो सच्चिदानन्दरूप ज्यो ब्रह्म ताकूं वी आनन्दगिरि परतन्त्र कहे काहेतैं कि ब्रह्म वी अनादि है ॥ याहीतैं आनन्दगिरिनैं ऐसैं कही है कि अव्यक्तकूं ब्रह्मसैं भिन्न मानणें मैं प्रमाण नहीं है ॥ ओर ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि आत्मसत्तासैं सत्तावान् है तो यातैं वी ये ही सिद्ध होय है कि अव्यक्त ब्रह्मरूप ही है काहेतैं कि ब्रह्म ज्यो है सो आपकी सत्तातैं हीं सत्तावान् है ॥ ज्यो कहो कि आत्मसत्तावान् तो प्रपञ्च वी है तो हम कहैं हैं कि प्रपञ्च ज्यो है सो वी ब्रह्म ही है यातैं हीं

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

ये श्रुति सर्वकूं ब्रह्मरूप वर्णन करै है ।

अब कहो श्रुतिका तात्पर्य अविद्याके मानणें मैं नहीं है ये सिद्ध हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति ओर अनुभव तैं तो अविद्या पूर्व असिद्ध होगई ओर अब श्रुति तैं वी सिद्ध भई नहीं तो श्रुति युक्ति ओर अनुभव तैं जगे पदार्थ सिद्ध नहीं होय उस पदार्थका मानणाँ ज्यो है सो अलीक पदार्थका मानणाँ है यातैं सच्चिदानन्दरूप आत्मामैं अविद्या मानणें तैं ज्यो श्रुतिनैं आत्महत्या दोष वर्णन कियो सो बहुत ही ठीक है ओर अविद्या मानणेंवाले जे पुरुष तिनकी सङ्गति करणें वाले जे पुरुष तिनकूं अनर्थकी प्राप्ति ज्यो श्रुतिनैं वर्णन किई सो वी बहुत ही ठीक है यातैं सच्चिदानन्दरूप आत्मामैं अविद्याका मानणाँ ओर अविद्यावादियोंकी सङ्गति करणाँ ये दोनूं हीं असङ्गत हैं परन्तु ज्यो अविद्या पदार्थ है ही नहीं तो श्रुति महावाक्योपदेश करिकैं आत्मज्ञान करावै है सो श्रुतिका उपदेश व्यर्थ होगा काहेतैं कि ज्यो अविद्या है ही नहीं तो श्रुति आत्मज्ञान कराय करिकैं किसकी निवृत्ति करै है यातैं श्रुतिका तात्पर्य अविद्याके मानणें मैं है ॥ ओर

अजामेकाम् ॥

इत्यादिक ओर

मायाभासेन ॥

इत्यादिक श्रुतियों बी हैं यातैं यी अविद्या के मानणें मैं श्रुतिका तात्पर्य सिद्ध होय है अव ज्यो अविद्या नहीं मानोंगे तो वेदका न मानणाँ सिद्ध होगा। ज्यो वेदकूँ न मान्याँ तो वेदकूँ न मानैं उनकूँ हीं नास्तिक क-हैं हैं सो तुमारे मैं नास्तिकपणाँकी आपत्ति होगी ऐसैं कोई अविद्या वादी कहै तो इसका उत्तर कहा है सो कहो।

तो हम कहैं हैं कि प्रथम ये विचार करणाँ चाहिये कि वेद ज्यो है सो आस्तिक है अथवा नास्तिक है ज्यो कहो कि वेद ज्यो है सो नास्ति-क है तो हम पूछैं हैं कि प्रथम नास्तिकका लक्षण कहो तो तुम ये ही क-होगे कि वेदकूँ नहीं मानैं सो नास्तिक तो हम पूछैं हैं कि वेदका न मा-नणाँ ज्यो तुम वर्णन करो हो सो वेदका ज्यो एक देश उसका न मानणाँ तुमारै अभिमत है अथवा सर्व देशका न मानणाँ तुमारै अभिमत है ज्यो क-हो कि एक देशका न मानणाँ हमारै अभिमत है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानों तो तुम हीं नास्ति भये काहेतैं कि देखो

एषोन्तरात्मान्नरसमयः अन्योन्तरआत्मा प्रा-णमयः॥

इत्यादिक श्रुतियेँ शरीरादिककूँ अन्तरात्मरूप वर्णन करैं हैं और तुम नहीं मानों हो अब कहो नास्तिक तो तुम हो और वेदकूँ नास्तिक मानों हो इसका दण्ड तुमकूँ कहा होगा॥ ज्यो कहो कि इन शरीरादिकों कूँ तो अन्तरात्मा वेद ही नहीं मानैं है देखो

नेति नेति॥

वाक्यों करिकैं इन शरीरादिकों मैं अन्तरात्मापणेंका निषेध वेद ही करै है यातैं हम इनकूँ अन्तरात्मा नहीं मानैं हैं तो हमारे मैं नास्तिक होणेंकी आपत्ति नहीं है॥ तो हम कहैं हैं कि अपणें एक देशकूँ न मा-नणें तैं वेद ही नास्तिक हुवा॥ ज्यो कहो कि वेदकूँ तो नास्तिक हम-नैं पूर्व कहा ही है यातैं हमारै ये इष्टापत्ति है॥ तो हम कहैं हैं कि वेद-कूँ नास्तिक मानणें मैं इष्टापत्ति मानोंगे तो तुमारे मैं नास्तिकपणाँकी आपत्तिका उद्धार होणाँ कठिन हीं है काहे तैं कि नास्तिकमतानुयायी ज्यो है सो नास्तिक ही होय है ज्यो वेद नास्तिक हुवा तो वेदमतानुयायी होणें तैं तुमारे मैं नास्तिकपणेंका उद्धार होवै ही नहीं यातैं वेदकूँ

आस्तिक ही मानों ॥ ज्यो कहो कि वेदके सर्व देशकूँ न मानैं सो नास्तिक तो हम कहैं हैं कि जिनकूँ तुम नास्तिक मानों हो उनकूँ वी आस्तिक मानणाँ चाहिये काहे तैं कि

असदेवेदमग्र आसीत् ॥

इस वेदकूँ वे वी मानैं हैं यातैं नास्तिकों मैं वेदके सर्व देशका न मानणाँ सिद्ध न हुवा। ज्यो कहो कि वेदके सर्व देशकूँ मानैं सो तो आस्तिक ओर ज्यो आस्तिक नहोय सो नास्तिक तो हम कहैं हैं कि ये तो तुमारे वचनकी चतुरता है इस तुमारे कथन तैं तो ये ही सिद्ध होय है कि एक देशकूँ मानैं सो नास्तिक तो अविद्यावादी कोई श्रुतिकूँ तो सिद्धान्त श्रुति मानि करिकैं अङ्गीकृत करैं हैं ओर कोई श्रुतिकूँ पूर्वपक्ष श्रुति मानि करिकैं त्याग करैं हैं ओर कोई श्रुतिकूँ अर्थवाद मानि करिकैं त्याग करैं हैं यातैं ये ही नास्तिक हैं ॥ ज्यो कहो कि सत् रूप परमात्माकूँ मानैं सो आस्तिक तो हम कहैं हैं कि ये अविद्यावादी सत् रूप परमात्माकूँ मानैं हैं तैसैं असत्रूप अविद्याकूँ वी मानैं हैं तो अर्द्ध नास्तिक हैं यातैं नास्तिकपणाँकी आपत्ति ज्यो है सो अविद्यावादियों मैं है अविद्याकूँ नहीं मानैं उनमैं नास्तिकपणाँकी आपत्ति नहीं है ॥

ओर ज्यो ये कहो कि अविद्या पदार्थ है ही नहीं तो श्रुति महावाक्योपदेश करिकैं अविद्याकूँ निवृत्त करणे के अर्थ आत्मज्ञान करावै है तो अविद्याके नहीं होणैं तैं श्रुतिका उपदेश व्यर्थ होगा तो हम कहैं हैं कि तुम अविद्यावादियोंकूँ पूछो कि तुम ज्ञान किसकूँ कहो हो तो वे ये कहैंगे कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिका नाम ज्ञान है सो ये वृत्ति महावाक्योपदेश करिकैं होय है तो हम कहैं हैं कि

अहम् अस्मि ॥

इस वाक्यका अर्थ करैं तो अहं शब्दका अर्थ तो है मैं ओर अस्मि शब्दका अर्थ है सत् तो इस वाक्यका अर्थ ये हुवा कि मैं सत् रूप हूँ तो सत् नाम ब्रह्मका है ज्यो सत् नाम ब्रह्मका हुवा तो

अहम् अस्मि ॥

इस वाक्यका और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्यका एक ही अर्थ होगा ज्यो ये दोनूँ वाक्य एकार्थक हौंगे तो

अहम् अस्मि ॥

ये वृत्ति और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति एक ही होगी ज्यो ये दोनूँ वृत्ति एक हुई तो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूँ अज्ञानवादी ज्ञान मानैं हैं तो

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ वी ज्ञानहीं मानैंगे ज्यो इस वृत्तिकूँ ज्ञान मानी तो अज्ञानवादी जिनकूँ जीव मानैं हैं उनकै सर्वकै ये वृत्ति स्वतः सिद्ध मानैं हैं तो ज्ञान स्वतः सिद्ध हुवा ज्यो ये ज्ञान स्वतः सिद्ध हुवा तो अज्ञानवादी ज्ञानतैं अविद्याकी निवृत्ति मानैं हैं तो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई ज्यो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई तो इस अविद्याकी निवृत्तिके अर्थ अज्ञानवादी महावाक्योपदेश करैं हैं यातैं उनकूँ पूछो कि अज्ञाननिवृत्ति तो स्वतःसिद्ध है तुम महावाक्योपदेशका फल कहा मानों हो सो कहो ॥ ज्यो कहो कि अविद्यावादी

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ तो अभिमान वृत्ति मानैं हैं और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

या वृत्तिकूँ ज्ञान मानैं हैं इरुमैं कारण कहा है साक्षी तो दोनूँ वृत्तियौं मैं समान प्रकाश करै है तो हम कहैं हैं कि इसका कारण तो अविद्या

वादी ही कहैंगे काहेतैं कि वे ही इस सच्चिदानन्दरूप आत्माकै अविद्यारूप कलङ्क लगाय करिकैं ज्ञान कराय करिकैं अविद्याकूँ निवृत्त करैं हैं और गुरू कहाय रुकरिकैं नाना प्रकार के व्यञ्जन भोजन करैं हैं ॥ और ज्यो तुमनैं ये कही कि श्रुतियों बी अविद्याकूँ प्रतिपादन करैं हैं तो इसका उत्तर पूर्व होगया है यातैं यहाँ उत्तर देणैं मैं पुनरुक्ति होय है यातैं इसका उत्तर देणाँ उचित नहीं ॥

अब कहो अविद्याका मानणाँ तो श्रुति युक्ति और अनुभवतैं सिद्ध हुवा नहीं अब कहा पूछो हो सो कहो ॥ ज्यो कहो कि ज्ञानरूप ज्यो वृत्ति ताके पूर्व कालमैं अज्ञान रहै है तहाँ अज्ञानवादी तो अज्ञान दो प्रकार के मानैं हैं तिनमैं एक अज्ञान तो भावरूप मानैं हैं उसकूँ सांश मानैं हैं और उसकूँ सदसद्विलक्षण मानैं हैं और तमकी तरैंह उसका आवरण करणैं का स्वभाव मानैं हैं और उसकूँ सारे जगत्का परिणामी उपादान कारण मानैं हैं और दूसरा अज्ञान ज्ञानरूप वृत्तिका प्रागभावरूप मानैं हैं और अनादिसान्त दोनूँकूँ हीं मानैं हैं और ज्ञानरूप वृत्तिके उदय भयें दोनूँका ही नाश मानैं हैं और न्यायवाले ज्ञानके अभावकूँ हीं अज्ञान मानैं हैं और ज्ञानतैं उसका नाश मानैं हैं और ज्ञानतैं ज्यो अज्ञानका ध्वंस होय है तहाँ अज्ञानवादी जैसैं अज्ञान दो प्रकार के मानैं हैं तैसैं अज्ञान के ध्वंस बी दो प्रकारके मानैं हैं तिनमैं भावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूँ तो अभावरूप मानैं हैं और ज्ञानप्रागभावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूँ भावरूप मानैं हैं काहेतैं कि द्वितीयाभाव ज्यो है सो प्रथमाभावप्रतियोगिरूप होय है तो ज्ञानप्रागभावध्वंस ज्यो है सो ज्ञानके अभावका अभाव है तो ज्ञान रूप होगा तो ज्ञान ज्यो है सो भाव है यातैं अज्ञानके ध्वंसकूँ भाव मानैं हैं तो मैं ये पूछूँहूँ कि अज्ञानवादियों नैं तो अज्ञान दो प्रकारके मानैं और न्यायवालों नैं एक ज्ञानप्रागभावरूप ही अज्ञान मान्याँ तो ज्यो या ज्ञान प्रागभावरूप अज्ञान तैं विलक्षण भावरूप अज्ञान है तो इसका अनुभव अज्ञानवादियोंकूँ तो हुवा और न्यायवालोंकूँ नहीं हुवा इसमैं कारण कहा है सो कहो ॥ तो हम कहैं हैं कि न्यायवालोंका मान्याँ ज्यो अभावरूप अज्ञान है तातैं विलक्षण अज्ञानवादियोंका कल्पना किया भावरूप अज्ञान नहीं है देखो न्यायवाले द्रव्य गुण और कर्म इनकूँ सत् मानैं हैं और सामान्य विशेष और समवाय इनकूँ असत् मानैं हैं और वैशेषिक सूत्र मैं

छे पदार्थ ही लिखे हैं तो न्यायवाले छे पदार्थ ही मानैं हैं अब ज्यो न्याय वालौं नैं अभाव की कल्पना किई है तो ये अभाव पदार्थ सदसद्विलक्षण हीं कल्पित किया है काहेतैं कि देखो इस अभावपदार्थका अन्तर्भाव छे पदार्थों मैं नहीं है तो अज्ञान कूं न्यायवालोंनैं अभाव मान्याँ है तो अज्ञान सदसद्विलक्षण हीं हुवा ओर अज्ञानवादी वी अज्ञानकूँ सदसद्विलक्षण हीं कहैं हैं ओर न्यायवाले ज्ञान प्रागभावरूप ज्यो अज्ञान है ताकूं अनादिसान्त मानैं हैं ओर अज्ञानवादी वी अज्ञानकूं अनादि सान्त ही मानैं हैं यातैं अज्ञानवादियोंका मान्याँ हुवा अज्ञान ज्यो है सो न्यायवालोंका मान्याँ हुवा ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण नहीं है ॥ ज्यो कहो कि न्यायवाले जे हैं ते तो अज्ञानकूँ निरंश मानैं हैं ओर इसका आवरण करणैंका स्वभाव नहीं मानैं हैं ओर अज्ञानवादी जे हैं ते अज्ञानकूँ सांश मानैं हैं ओर इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अज्ञानवादियों के मत मैं भाव अथवा अभाव ये नियत पदार्थ हैं नहीं किन्तु इस विषय मैं ये मीमांसकोंका मत मानैं हैं तो मीमांसक जे हैं ते अन्धकारकूँ द्रव्य मानैं हैं ओर इसकूँ सांश मानैं हैं ओर इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं तो अज्ञानवादी अपणैं कल्पित अज्ञानका तमका जैसा स्वभाव मानैं हैं यातैं इसकूँ सांश मानैं हैं ओर इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं परन्तु इतना विचार नहीं करैं हैं कि अज्ञान ज्यो है सो सच्चिदानन्दरूप आत्माका आवरण करि लेवै तब तो आप ही कसैं प्रतीत होय यातैं ये आवरक नहीं है किन्तु सुषुप्त्यादिक मैं वृत्तिरूप ज्ञान नहीं है यातैं वृत्तिरूप ज्ञानका अभाव रहै है सो ही अज्ञान है तो ये अज्ञान विलक्षण नहीं हुवा किन्तु न्यायवालोंका मान्याँ अभावरूप अज्ञान हीं हुवा अब ज्यो ये अज्ञान न्यायवालोंका मान्याँ ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण होय तो भविष्यत् अहंवृत्तिका प्रागभाव तो सुषुप्ति मैं अवश्य मानणाँ पडैगा काहेतैं कि सुषुप्ति के अव्यवहित उत्तर क्षण मैं होणैंवाली ज्यो अहंवृत्ति उसका प्रागभाव ज्यो है सो उस वृत्तिका कारण है ओर ज्यो वहाँ इस अज्ञानतैं विलक्षण तमःस्वभाव भावरूप अज्ञान ओर मानोंगे तो सुषुप्ति के उत्तरभावरूप ओर अभावरूप जे दोय अज्ञान तिनकूँ विषय करणैंवाली दोय स्मृति होणीं चाहिये सो होवैं नहीं यातैं न्यायवालोंका मान्याँ हुवा ज्यो अज्ञान तातैं ये अज्ञानवादियौं का मान्याँ हुवा अज्ञान विलक्षण नहीं है ॥

ज्यो कहो कि युक्ति और अनुभवतें अज्ञानवादियोंका मान्यों हुवा अज्ञान न्यायवालों का मान्यों हुवा अज्ञानतें विलक्षण नहीं हुवा तो भी अज्ञानवादी अज्ञानकूं भावरूप मानें हैं और इसकूं मानें जगत् का उपादान कारण मानें हैं इसमें हेतु कहाहै सो कहो तो हम कहें हैं कि ये अज्ञानवादी न्यायवालोंके परमविरोधी हैं इससें भिन्न हेतु नहीं है ॥ देखो न्यायवाले अभावकूं उपादान कारण नहीं मानें हैं यातें तो ये अज्ञानकूं उपादान कारण मानें हैं और अभाव ज्यो है सो उपादान कारण होसके नहीं ये इनके भी अनुभव सिद्ध है यातें अज्ञानकूं भाव मानें हैं ॥

अजी इतना विचार तो तुमबी करो कि ये जगत् अज्ञानतें कल्पित है अथवा कोई अलौकिक ज्ञान तें रचित है देखो

एकोऽहं बहु स्याम् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि परमात्माकूं ये इच्छा भई कि एक ज्यो मैं सो बहुत होवूं तो ये सिद्ध हुवा कि ये जगत् परमात्मा हीं हुवा है और

स एतमेव सीमानं विदार्य तद्द्वारा प्रापद्यत ॥

ये श्रुतिहै इसका अर्थ ये है कि वो परमात्मा मूर्द्ध सीमाको विदारण करिकें उस द्वार करिकें इस पुरुष शरीर में प्रवेश करता हुआ तो ये सिद्ध होय है कि ये जीव ज्यो है सो परमात्मा हीं है और पूर्व कही अवस्था तें इस जीव रूप परमात्मा के ज्ञान स्वतः सिद्ध है यातें अज्ञान की निवृत्ति स्वतः सिद्ध है तो बी इस अपणीं रचना कूं देखि करिकें आप हीं मोह कूं प्राप्त होय है तो जगत् अज्ञान तें कल्पित कैसें मान्यों जाय देखो इस समय के चक्रवर्त्ती कैसे कैसे विचित्र पदार्थों की रचना किई है तो ये रचना ज्ञान तें भई है अथवा अज्ञान तें भई है तो वो ज्यो जगत् कूं अज्ञान तें कल्पित मानें हैं तो वे पुरुष धन्य हैं ये ही जाणों परन्तु तुम अज्ञानवादियों कूं ये तो पूछो कि जगत् अज्ञान तें कल्पित है तो किस के अज्ञान तें कल्पित है अर्थात् जीव के अज्ञान तें कल्पित है अथवा ईश्वर के अज्ञान तें कल्पित है अथवा ब्रह्म के अज्ञान तें कल्पित है ॥

ज्यो कहो कि जीव के अज्ञान तें कल्पित है तो हम कहें हैं कि अनन्त जीवों के कल्पित अनन्त जगत् मानोंगे तो ये जगत् ज्यो तुमारेकूं और

हमारे कूँ दीखै है सो किस जीव का कल्पित जगत् है ये कहो तो विनिंग मना नहीं होयँ तैं किसी वी एक जीव के अज्ञान तैं कल्पित नहीं मान सकोगे ॥ और ज्यो ये कहो कि ईश्वर के अज्ञान तैं कल्पित है तो हम कहैं हैं कि ईश्वर कूँ तो अज्ञानवादी वी अज्ञानी नहीं मानैं हैं यातैं ईश्वर के अज्ञान तैं जगत् कल्पित है ऐसैं मानणाँ असङ्गत है ॥ और ज्यो ये कहो कि ब्रह्म के अज्ञान तैं कल्पित है काहेतैं कि जीव और ईश्वर ये तो जगत् के अन्तर्गत हैं यातैं ये तो आप ही अज्ञानकल्पित हैं तो हम पूछैं हैं कि ब्रह्म मैं अविद्या ज्यो है सो कल्पित है अथवा स्वभाव सिद्ध है जेपा कहो कि स्वभाव सिद्ध है तो हम कहैं हैं कि स्वभाव सिद्धकी निवृत्ति होवै नहीं यातैं इन के मानैं ज्ञान के साधन सर्व व्यर्थ होंगे काहेतैं कि ज्ञान साधनाँ सैं ज्ञान पैदा करणेंका प्रयोजन इनकै ये ही है कि अविद्या निवृत्त होय सो अविद्या स्वभावसिद्ध मानों तो स्वभाव सिद्ध की निवृत्ति होवै नहीं ज्यो स्वभाव सिद्ध की वी निवृत्ति होय तो ब्रह्म के सच्चिदानन्द स्वभाव की निवृत्ति वी होणीं हीं चाहिये यातैं ब्रह्म मैं अविद्या कूँ स्वतः सिद्ध मानणाँ असङ्गत ही है ॥

ज्यो कहो कि कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि ब्रह्म मैं अविद्या ज्यो है सो कल्पित है तो अज्ञानतैं कल्पित है अथवा ज्ञानतैं कल्पित है ज्यो कहो कि अज्ञान तैं कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि ब्रह्ममैं अविद्या जीवाज्ञान कल्पित है अथवा ईश्वराज्ञान कल्पित है अथवा ब्रह्माज्ञान कल्पितहै ज्यो कहो कि जीवाज्ञान कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि जीव और ईश्वर ये अविद्या कल्पित हैं ये तुमारा मत है तो ये कहो कि जीवकी कल्पक ज्यो अविद्या तातैं ब्रह्म मैं अविद्या ज्यो है सो कल्पित है अथवा जीवकी कल्पक ज्यो अविद्या तातैं भिन्न जीव मैं ब्रह्म वृत्ति ज्यो अविद्या ताकी कल्पक अविद्या मानों हो ज्यो कहोकि ब्रह्म मैं ज्यो अविद्या है सो जीवकी कल्पक अविद्या सैं कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि ब्रह्माश्रित अविद्या और जीवकी कल्पक अविद्या ये भिन्न हैं अथवा एकही है तो तुम येही कहोगे कि एकही है काहेतैं कि अविद्यावादी जीवकूँ ब्रह्माश्रित ज्यो अविद्यातातैं ही कल्पित मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ब्रह्माश्रित ज्यो अविद्या सो जीव की कल्पक अविद्यासैं कल्पित है ये कथन असङ्गत हुवा काहेतैं कि ब्रह्माश्रित अविद्या और जीवकी कल्पक अविद्या तो एक ही भई यातैं आपसैं

हीँ आप कल्पित है ये अर्थ सिद्ध हुवा तो ऐसैं मानणाँ अनुभव विरुद्ध है आपसैं आप कल्पित होय तो जगत् का कल्पक ईश्वर अविद्यावादी मानैं है सो बणाँसकै नहीँ और ज्यो ये कहो कि जीवमैं ब्रह्म वृत्ति जयो अविद्या ताकी कल्पक अविद्या जीवकी कल्पक अविद्यातैं भिन्न मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि रज्जुका जयो अज्ञान ताकरिकैं कल्पित जयो सर्प उस सर्पमैं जयो अ-ज्ञान उस अज्ञान करिकैं रज्जुमैं अज्ञान कल्पित है ऐसा अर्थ सिद्ध हुवा तो तुमहीँ विचार दृष्टितैं देखो इस कल्पनातैं अविद्या ब्रह्म मैं सिद्ध होय है अथवा असिद्ध होय है और जयो ये कहोकि ईश्वर के अज्ञानतैं कल्पित है तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि देखो सङ्क-ही निश्चलदासजी नैं विचारसागर के चतुर्थ तरङ्ग मैं लिखा है कि जैसैं जीवन्मुक्त विद्वान् के आत्माकूँ विषय करणैंवाली अन्तःकरण की

अहंब्रह्मास्मि ॥

ऐसी वृत्ति होय है तैसैं ईश्वरकूँ वी माया की वृत्तिरूप

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा ज्ञान होय है और ये कही है कि आवरण भङ्ग इसका प्रयोजन नहीँ है तो ये सिद्ध होय है कि ईश्वर मैं अज्ञानका आवरण नहीँ है अब ज्यो ईश्वर मैं अज्ञान है ही नहीँ तो ब्रह्म मैं अविद्या ईश्वर के अज्ञान तैं कल्पित है ये कैसैं हो सकै।

परन्तु हम यहाँ ये और पूछैं हैं कि विद्वान् कूँ ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है तो ये वृत्ति अन्तःकरण का परिणामरूप होगी तो अन्तःकरण ज्यो है सो सावयव है तो ये वृत्ति वी साव-यव ही होगी ज्यो वृत्ति सावयव भई तो अवयविरूप वृत्ति मैं आवरण भञ्जकता होणैं तैं वृत्तिके अवयवोँ कूँ वी आवरणभञ्जक मानणैं हीँ प-डैंगे जैसैं सूर्यमैं तमोनाशकता होणैं तैं तेजःपिण्डरूप जयो सूर्य ताके अव-यवोँ मैं वी तमोनाशकता वणैं है अब जयो ऐसैं वृत्तिके अवयवोँ मैं आ-वरणभञ्जकता सिद्ध हो गई तो ऐसैं हीँ माया की वृत्तिके अवयव रूप होंगे वे जिनकूँ तुम व्यष्टि अज्ञान मानोँ हो उनकूँ वी आवरण भञ्जकता होगी तो ब्रह्ममैं आवरण कैसैं सिद्ध होगा इसका समाधान सङ्कही नैं क-हा लिखा है सो कहो ॥ इस प्रश्नका तात्पर्य ये है कि ईश्वर मैं तो तुम

अवश्य ही अविद्या नहीं मानों हो काहेतैं कि ईश्वर कूँ तुम सर्वज्ञ मानों हो ओर उसमैं तुम अविद्या का किया आवरण नहीं मानों हो तो उसमैं यो सर्वज्ञता माया की वृत्तिरूप मानों हो तो उस माया कूँ शुद्धसत्वप्रधाना मानों हो ओर उस मायाकूँ व्यष्टि अज्ञानकी समष्टिरूपा मानों हो तो वो माया उपाधि जिसमैं रहेगी उस मैं स्वभाव सिद्ध ही आवरण का अभाव रहैगा जबो माया में स्वभाव सिद्ध आवरणका अभाव रहा तो उस माया की अंश रूप है जीवों की उपाधि तो इस मैं वी अवश्य ही स्वभावसिद्ध आवरण का अभाव मानणाँ पडैगा तो ब्रह्म मैं जीव अथवा ईश्वर तैं कल्पित अविद्या मानणाँ बणँ सकै नहीं तो सङ्कही नैं ब्रह्म मैं अविद्या का किया आवरण कैसैं मान्याँ सो कहो ॥

जबो कहो कि इसका विचार विचारसागर ओर वृत्तिप्रभाकर मैं लिखा नहीं ओर मोकूँ वी इसके उत्तर की स्फूर्त्ति होवै नहीं परन्तु निश्चलदास जी होते तो आपकूँ इसका उत्तर अवश्य देते, तो हम कहैं हैं कि इस का उत्तर तो वे ये ही देते कि हमनैं तो पूर्व के ग्रन्थकारोके मतों का सङ्ग्रह किया है ॥ इतना विचार तो तुम भी करो जबो इसका उत्तर कुछ होता तो कोई ग्रन्थकार तो अवश्य लिखता परन्तु किसी नैं वी लिखा नहीं यातैं ये ही सिद्ध होय है कि पूर्व के ग्रन्थकार ये ही जाणते रहे कि ब्रह्म मैं आवरण असिद्ध है ॥

अब जबो कहो कि ब्रह्म मैं अविद्या ब्रह्मके अज्ञान तैं कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि उस अविद्या का कल्पक अज्ञान उस अविद्या तैं भिन्न है अथवा उस अविद्या रूप है ॥ जबो कहो कि उस अविद्या तैं भिन्न है तो हम कहैं हैं कि उस अविद्या के कल्पक अज्ञान कूँ वी कल्पित ही मानोंगे तो अनवस्था होगी ॥ जबो कहो कि वो अज्ञान जबो है सो वो कल्पित जबो अविद्या तद्रूप ही है तो हम कहैं हैं कि यातैं तो ये सिद्ध होय है कि अविद्या स्वतऽकल्पित है जबो अविद्या स्वतऽकल्पित है तो इस मैं जबो स्वतऽकल्पितपणाँ है सो स्वाभाविक है अथवा आगन्तुक है ॥

जबो कहो कि स्वाभाविक है तो हम पूछैं हैं कि स्वभाव सैं जबो होय सो स्वाभाविक ये स्वाभाविक शब्दका अर्थ है ओर स्वभाव शब्दका अर्थ ये

है कि स्व कहिये अपणाँ जयो भाव कहिये होणाँ तो इसका फलितार्थ ये हुवा कि स्वसत्ता तो स्वाभाविक शब्द का अर्थ ये होगया कि स्वसत्ता सैं होय तो इसका निष्कृष्ट अर्थ ये होगया कि स्वसत्ता सैं जन्य होय सो स्वाभाविक तो स्वसत्ता शब्द करिकैं अविद्या सत्ता लिई जायगी तो ये कहो कि अविद्या कूँ ब्रह्मकी सत्ता करिकैं सत्तावाली मानौं हो अथवा इसमैं जो सत्ता है सो ब्रह्म सत्ता तैं भिन्न है ।। जयो कहो कि अविद्या जयो है सो ब्रह्म सत्ता तैं सत्तावाली है तो हम कहैं हैं कि ये तुमारी मानी अविद्या ब्रह्मरूपाही भई ब्रह्म तैं विलक्षण नहीं भई जैसैं घट जयो है सो पृथ्वी की सत्ता तैं सत्तावाला है तो घट पृथ्वी है ज्यो कहो कि घट जयो है सो पृथ्वी है तो वी पृथ्वी तैं जलानयनादिक कार्य होवैं नहीं और घट तैं जलानयनादिक कार्य्य होय हैं तैसैं हीं अविद्या जयो है सो ब्रह्म हीं है तो वी ब्रह्म तैं जगत् होवै नहीं और अविद्या तैं जगत् होय है ऐसैं मानैंगे तो हम कहैं हैं कि इतनाँ और मानौं कि जैसैं घट जयो है सो कुलाल के ज्ञान तैं रचित है और रज्जु सर्प की तरैंह कल्पित नहीं है तैसैं हीं अविद्या जयो है सो सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म के स्वरूपभूत अलौकिक ज्ञान तैं रचित है और रज्जुसर्प की तरैंह कल्पित नहीं है तो सारे विवाद ही मिट जावैं काहेतैं कि अविद्या कूँ ब्रह्म रचित मानणैं तैं ये ब्रह्म रूप ही सिद्ध होजावै परन्तु अविद्यावादी अविद्या कूँ ब्रह्म के स्वरूप भूत अलौकिक ज्ञान तैं रचित मानैं नहीं ।।

जयो कहो कि अविद्याकूँ ब्रह्म रचित मानैं तो कार्यकी उत्पत्ति उपादान कारण विना हीं माननी पड़ैगी सो बणैं सकै नहीं काहेतैं कि घटादिक कार्य जे हैं ते मृत्तिका रूप उपादान कारण विना होवैं नहीं और मृत्तिका वी आप ही घट कूँ पैदा कर सकै नहीं किन्तु कुलाल की सहायता सैं ही घट कूँ पैदा करै है यातैं निर्निमित्त वी कार्य होवै नहीं अब जयो अविद्या कूँ ब्रह्म रचित मानोंगे तो ये ब्रह्म अविद्या का उपादान कारण मानौं तब तो कार्य की निर्निमित्त उत्पत्ति मानणीं पडैगी और जयो ब्रह्म अविद्या का निमित्त कारण मानौं तो निरुपादान कार्य की उत्पत्ति मानणीं पडैगी और उपादान कारण तथा निमित्त कारण इन दोनूँ कारणौं विना कार्य होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है यातैं ब्रह्म सैं अविद्या की उत्पत्ति मानणाँ असङ्गत है ।।

तो हम पूछैं हैं कि अविद्यावादी जगत्कूँ ईश्वर करिकैं रचित मानैं हैं तहाँ दोय कारण कैसैं बणावैं हैं सो कहो जयो कहो कि अविद्यावादी मायाविशिष्टचेतन कूँ ईश्वर मानैं हैं ओर ईश्वर तैं जगत् रूप कार्यकी उत्पत्ति मानैं हैं तहाँ ऐसैं कहैं हैं कि ईश्वर जगत् का अभिन्ननितोपादान कारण है इसका तात्पर्य ये है कि ईश्वर कूँ जगत् का कारण मानैं तहाँ जैसैं घटादिक कार्य के कारण कुलाल ओर मृत्तिका ये भिन्न २ निमित्त उपादान बणैं हैं तैसैं तो बणैं सकै नहीं किन्तु उपाधिप्रधानता करिकैं तो उस ही ईश्वरकूँ जगत् का उपादान कारण मानैं हैं ओर उस ही ईश्वर कूँ चैतन्यप्रधानता करिकैं निमित्त कारण मानैं हैं ओर ये दृष्टान्त देवैं हैं कि जैसैं ऊर्णनाभि अर्थात् मकड़ी अपणैं रचित तन्तुकी कारण होय है तो शरीर रूप उपाधि की प्रधानता करिकैं तो रचित तन्तुकी उपादान कारण होय है ओर चैतन्य प्रधानता करिकैं वो ही मकडी रचित तन्तुकी निमित्त कारण है तो ये मकडी रचित तन्तुकी अभिन्ननिमित्तोपादान कारण सिद्ध भई तैसैं ही ईश्वर जयो है सो जगत का अभिन्ननिमित्तोपादन कारण है ॥ तो ये ओर कहो कि तुम जीव ओर ईश्वर इनकूँ अविद्या के कार्य मानोँ हो तहाँ निमित्तकारण तो किसकूँ मानोँ हो ओर उपादान कारण किसकूँ मानोँ हो देखो जीव ओर ईश्वर इनकूँ अविद्या के कार्य मानणैं सैं अविद्यावादी ये श्रुति प्रमाण देवैं हैं कि

जीवेशावाभासेन करोति ॥

इस का अर्थ ये है कि जीव ओर ईश्वर इनकूँ आभास करिकैं अविद्या करैं है जयो कहो कि इस प्रकरण मैं किसी ग्रन्थकारनैं तो कुछ लिखा नहीं परन्तु जीव ओर ईश्वर ये अविद्या रचित हैं ये अर्थ श्रुति सिद्ध होगया यातैं अङ्गीकार करणाँ हीं पडैगा तो इसके कारणोँ का विचार करते हैं तो जीव ओर ईश्वर इनके कारण दोय होंगे एक तो ब्रह्म ओर दूसरी अविद्या तो इनकूँ अविद्यावादी उपादान कारण हीं मानैं हैं तहाँ ब्रह्मकूँ तो विवर्त्ति उपादान मानैं हैं ओर अविद्याकूँ परिणामी उपादान मानैं हैं हैं ओर निमित्तकारण यहाँ कोई बणैं सकै नहीं यातैं यहाँ निर्निमित्त ही जीव ईश्वर की उत्पत्ति मानणीं पडैगी तो हम कहैं हैं कि ये नियम

तो रहा नहीं कि निर्निमित्त कार्य होवे नहीं यातैं अविद्याकी उत्पत्ति बी निर्निमित्त मानों ब्रह्मकूं अविद्या का उपादान मानों ॥

जेया कहो कि उपादान दो प्रकार के होय हैं तहाँ एक तो विवर्त्ति और दूसरा परिणामी तो यहाँ ब्रह्म कूं विवर्त्ति उपादान मानैं अथवा परिणामी उपादान मानैं सो कहो ॥ तो हम पूछैं हैं कि तुम विवर्त्ति उपादान किसकूं कहो हो और परिणामी उपादान किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि जयो कार्य भयैं तैं अपणें स्वरूप का त्याग नहीं करै वो तो उस कार्य का विवर्त्ति उपादान होय है जैसैं सुवर्ण जयो है सो कटक कुण्डल का विवर्त्ति उपादान होय है और जयो कार्य भयैं अपणें स्वरूप तैं रहै नहीं वो उस कार्य का परिणामी उपादान होय है जैसैं दुग्ध जयो है सो दधि का उपादान होय है तो हम कहैं हैं कि ब्रह्मकूं अविद्या का विवर्त्ति उपादान मानों, देखो अविद्यारूप कार्य भयैं वी ब्रह्म जयो है तिस के सच्चिदानन्द रूप का त्याग नहीं हुवा है ॥ जयो कहो कि ब्रह्म अविद्याका विवर्त्ति उपादान है ऐसैं अङ्गीकार करैंगे तो हम कहैं हैं कि अविद्या जयो है सो ब्रह्म रूपा सिद्ध होगई काहेतैं कि तुमहीं विवर्त्ति उपादानतैं विलक्षण कार्य मानों नहीं किन्तु उपादानरूप ही मानों हो जैसैं कटक कुण्डलकूं सुवर्ण हीं मानों हो ॥

जयो कहो कि अविद्याकूं जन्य मानणें मैं किसी आचार्यकी सम्मति नहीं यातैं हम इसकूं अनादि मानैंगे तो हम कहैं हैं कि इस अविद्याकूं भाष्यकार जन्य मानैं हैं देखो ब्रह्मसूत्रके तृतीय अध्यायके द्वितीय पादका ये सूत्र है कि

सामान्यात्तु ॥

इसके व्याख्यान में शङ्कर स्वामी लिखैं हैं कि

नहि ब्रह्मातिरिक्तं किञ्चिदजं सम्भवति ॥

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्मतैं भिन्न कोई वी अज अर्थात् अनादि हो सकै नहीं यातैं अविद्या जयो है सो अनादि नहीं है ॥ जयो कहो कि इस अविद्याकूं ब्रह्म रूप मानणें मैं आचार्यों की सम्मति कहो तो हम कहैं हैं कि

प्रकाशादिवन्नैवंपरः ॥

ये ब्रह्म सूत्र है इसके भाष्यमैं भाष्यकार लिखैं हैं कि

या मूलप्रकृतिरभ्युपगम्यते तदेव नो ब्रह्म ॥

इसका अर्थ ये है कि साङ्ख्य शास्त्र वाले जिसकूँ मूल प्रकृति मानैं हैं सो हमारा ब्रह्म है ॥

ओर देखो कि अविद्याकूँ अनादि मानों तो ऐतरेयोपनिषद् की ये श्रुति है कि

आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत्किञ्चन मिषत् ॥

इसका अर्थ ये है कि ये जगत् सृष्टिके पूर्व कालमैं एक आत्मा हीं हुवा इस आत्मासैं भिन्न निर्व्यापार अथवा सव्यापार कुछ वी रहा नहीं तो इस श्रुति मैं एक ये शब्द आत्माका विशेषण है अब ज्यो अविद्याकूँ अनादि मानों तो आत्माका एक ये विशेषण व्यर्थ हो जाय यातैं अविद्या ज्यो है सो जन्य है अनादि नहीं है ॥

ओर देखो कि

यत्र नान्यत् पश्यति नान्यच्छृणोति नान्यद्विजानाति स भूमा ॥

ये छान्दोग्य उपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जहाँ नहीं आपतैं भिन्न देखता है नहीं आपतैं भिन्न सुणता है नहीं आपतैं भिन्न जाणता है वो भूमा है तो इस परमात्मा तैं कुछ भिन्न होय तो उसका देखणाँ सुणणाँ जाणणाँ वणैं ज्यो कहो कि ये श्रुति ज्ञानके उत्तर काल की है तो हम कहैं हैं कि पूर्व कहे अनुभवतैं ज्ञान ज्यो है सो सर्वकूँ है यातैं सर्व ही अपणें तैं भिन्नकूँ देखैं नहीं सुणैं नहीं ओर जाणैं नहीं तो यातैं वी ये ही सिद्ध होय है कि अविद्या नहीं है ज्यो कहो कि उस प्रलय समय मैं द्रष्टा मैं दर्शन नहीं रहै है तो हम कहैं हैं कि

नहि द्रष्टुर्दृष्टेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वात्॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि अविनाशी है यातैं द्रष्टाकी दृष्टिका लोप नहीं है ॥ ओर देखो कि छान्दोग्य उपनिषद्की ये श्रुति है कि

यथासौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्॥

इसका अर्थ ये है कि हे सौम्य जैसैं एक मृत्तिका के पिण्ड के ज्ञानसैं-सर्व घटादिक कार्य मृत्तिका रूप जाणैं जाय हैं उसमैं वाणीं करिकैं आरम्भ कियो ज्यो नाम सो केवल विकार है सत्य तो मृत्तिका ही है ये उपदेश उद्दालक ऋषिनैं श्वेतकेतुकूँ कियो है पीछैं सुवर्ण और लोह ये दोय दृष्टान्त कहि करिकैं पीछैं

सदेव सौम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ॥

ये श्रुति कही है इसका अर्थ ये है कि हे सौम्य ये पूर्व काल मैं सत् ही हुवा एक ही हुवा अद्वितीय हुवा पीछैं असत् सैं सत् होवै नहीं ऐसैं अविद्याको निषेध करिकैं पीछैं

तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेय ॥

ये श्रुति कही यातैं शुद्ध ब्रह्म तैं सृष्टि कही पीछैं

यदग्ने रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्याऽपागादग्नेरग्नित्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाण्येव सत्यम् ॥

ये श्रुति कही इसका अर्थ ये है कि ज्यो लोकप्रसिद्ध अग्नि का रक्त रूप है सो अपञ्चीकृत तेजका रूप है और ज्यो शुक्ल रूप है सो अपञ्चीकृत जलका रूप है और ज्यो कृष्ण रूप है सो पृथ्वीका रूप है गया अग्नि तैं अग्निपणाँ सर्व वाचारम्भण विकार नाम मात्र है तीन हीं रूप सत्य हैं पीछैं ये श्रुति है कि

तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्रान्नादेवमेव खलु सोम्यान्नेन शुङ्गेनापो मूलमन्विच्छाऽद्भिः सोम्य शुङ्गेन तेजो मूलमन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः ॥

इसका अर्थ ये है कि शरीर का मूल अन्न तैं भिन्न कहाँ होय अर्थात् शरीर का मूल अन्न है और अन्नरूप कार्य करिकैं जलकूँ मूल जाणँ और जलरूप कार्य करिकैं तेजकूँ मूल जाणँ और तेज रूप कार्य करिकैं ब्रह्मकूँ मूल जाणँ हे सोम्य ये सर्व प्रजा जेहैं ते सत् है मूल उपादान जिनको ऐसी हैं और सत् है आश्रय जिनको ऐसी हैं और सत् है लयस्थान जिनको ऐसीहैं इस श्रुतिमें शुङ्ग नाम कार्यको है अब तुम हीं विचार करो ज्यो परमात्मामैं अविद्या होती तो ये श्रुति सर्वकी उत्पत्ति स्थिति लय ब्रह्मसैं कैसैं कहती यातैं परमात्मामैं अनादि अविद्या मानणाँ असङ्गत ही है पीछैं उद्दालक ऋषि नैं श्वेतकेतुकूँ ये श्रुति कही कि

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्वमसि ॥

इसका अर्थ ये है कि वो ब्रह्म सूक्ष्मतम है ये जगत् ब्रह्म रूप है वो ब्रह्म सत्य है वो साक्षी आत्मा है हे श्वेतकेतो सो ब्रह्म तू है ऐसैं छान्दोग्य उपनिषद् मैं कही यातैं अनादि अविद्या मानणाँ श्रुतिविरुद्ध है ॥

और देखो अविद्या ज्यो है सो सावयव है यातैं वी जन्य है क्यो कहो कि अविद्यावादी इसकूँ सांश मानैं हैं यातैं अनादि मानैं हैं सांश और सावयव मैं ये ही भेद मानैं हैं कि सांश होय सो अनादि और सावयव होय सो सादि तो हम कहैं हैं कि सावयव मानणें मैं तो ये श्रुति प्रमाण है कि

मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्
तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वचराचरम् ॥

इसका अर्थ ये है कि प्रकृति नाम तो मायाको है और माया जिस मैं रहै सो ईश्वर है उसके अवयवौं करिकैं चराचर सर्व व्याप्त है तो इस श्रुतिसैं माया विशिष्ट चेतन ईश्वर सिद्ध होय है तो चेतनकूँ तो अविद्यावादी वी सावयव मानैं नहीं और इस श्रुतिमैं ईश्वर के अवयवौं करिकैं चराचरकूँ व्याप्त कहा है तो माया सावयव है ये सिद्ध होय है और मायाकूँ सावयव तैं विलक्षण सांश मानणें मैं कोई वी श्रुति प्रमाण नहीं यातैं अविद्या सावयव होणें तैं सादि है सो शुद्ध ब्रह्म ही माया अविद्यारूप होय है इसमैं ये श्रुति प्रमाण है कि

मायाचाविद्या च स्वयमेव भवति ॥

इसका अर्थ ये है कि स्वयं शब्दका अर्थ ज्यो शुद्ध ब्रह्म सो ही माया अविद्यारूप होय है जगे कहोकि स्वयं शब्द का अर्थ शुद्धात्मा कहाँ है तो हम कहैं हैं देखो विद्यारण्य स्वामी नैं स्वयं शब्द का अर्थ शुद्धही कहा है ॥

और देखो कि श्रीकृष्ण नैं गीताके सप्तम अध्याय मैं अपरा और परा ये दोय प्रकृति कही पीछैं ये कही कि

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥

इसका व्याख्यान भाष्यकार ये करैं हैं कि

यस्मान्मम प्रकृतियोंनिः कारणं सर्वभूताना-मतोऽहं कृत्स्नस्य समस्तस्य जगतः प्रभव उत्पत्तिः प्रलयो विनाशः ॥

इसका अर्थ ये है कि मेरी प्रकृति सर्व भूतौं की कारण है यातैं मैं सर्व जगत् को प्रभवहूँ और प्रलय हूँ यहाँ श्रीधर स्वामी ये कहैं हैं कि परमेश्वर ज्यो अपणैं कूँ प्रभव और प्रलय कहैं हैं तो प्रभव शब्द का अर्थ ये है कि जातैं होय सो प्रभव तो ये सिद्ध होय है कि दोनूँ प्रकृति मोतैं भई ये श्रीकृष्णका अभिप्राय है यातैं वी अविद्या ज्यो है सो जन्य हीं सिद्ध होय है ॥ ज्यो अविद्या जगो है सो जन्य है इस विषयमैं विशेष विचार देखो तो नागेशकृत मञ्जूषामैं जहाँ शक्यनिर्णय है तहाँ देखो ॥ ज्यो कहो कि केवल नागेश के कथनतैं अविद्याकूँ जन्य कैसैं मानैं अविद्याकूँ अनादि मानणैं मैं बहुत ग्रन्थकारौं की सम्मति है तोहम कहैं हैं कि प्रथम तो अविद्या के सादित्व मैं श्रुति प्रमाण है और भाष्यकार जे हैं तिनकी सम्मति है यातैं नागेश अविद्याकूँ सादि मानैं है इस कारणतैं नागेश का कथन अप्रामाणिक नहीं है और ज्यो ये कही कि अविद्याकूँ अनादि मानणैं मैं बहुत ग्रन्थकारौं की सम्मति है तो इसका समाधान ये है कि रूपके निर्णयमैं नेत्रवाला एक पुरुष वी ज्यो कहै सो प्रमाण है और अन्ध पुरुष बहुत वी कुछ कहैं तो अप्रमाण है ॥

तुम ये तो कहो सङ्कहीनैं अविद्याकूँ अनादि मानी है अथवा सादि मानी है ज्यो कहो कि विचार सागर के द्वितीय तरङ्गमैं निश्चलदासजी ऐसैं लिखैं हैं कि एक ब्रह्म १ और ईश्वर २ और जीव ३ और अविद्या ४ और अविद्या का चेतन सैं सम्बन्ध ५ और अनादि वस्तु का भेद ६ ये षट् वस्तु स्वरूपतैं अनादि हैं जा वस्तु की उत्पत्ति होवै नहीं सो वस्तु स्वरूपतैं अनादि कहिये है तो हम पूछैं हैं इसमैं अर्थात् अविद्याकूँ आदि लेकैं जे पाँच इनकूँ अनादि मानणेमैं श्रुति प्रमाण दिई है अथवा स्मृति प्रमाण दिई है अथवा कोई युक्ति कही है अथवा अनुभव वताया है सो कहो जयो कहो कि श्रुति स्मृति युक्ति अनुभव तो कुछ वी लिखा नहीं परन्तु ऐसैं लिखा है कि ये षट् वस्तु अनादि हैं ये वेदान्त का सिद्धान्त है तो हम कहैं हैं कि ये वेदान्त का सिद्धाँत है तो वेदान्त नाम तो उपनिषदों का है उनमैं सिद्धाँत श्रुति तो ये है कि

न निरोधो नचोत्पत्तिर्न वद्धो न च साधकः
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥

इसका अर्थ ये है कि न तो निरोध कहिये प्रलय है और नैं उत्पत्ति है और नैं तो वन्धनकूँ प्राप्त भयो है और नैं कोई साधक है नैं कोई मोक्ष की इच्छा करै ऐसो है और नैं कोई मुक्त है ये परमार्थता है अर्थात् वेदान्त को सिद्धाँत है अव तुम ही विचार करो श्रुति स्मृति युक्ति अनुभव इन विना पाँचकूँ अनादि कहणाँ और इस कथनकूँ वेदाँत का सिद्धाँत कहणाँ ये प्रामाणिक है अथवा अप्रामाणिक है ॥

अव विचार करिकैं देखो अविद्याकूँ सदसद्विलक्षण और अनादि मानी तो न्यायवालोँ का मान्याँ ज्यो प्रागभाव तद्रूप भई तो अलीक सिद्ध भई काहेतैं कि भेद खण्डन के विषय मैं पूर्व अभाव की अलीकता सिद्ध हो गई है और ज्यो जगत्कूँ अज्ञान कल्पित सिद्ध करणैं के अर्थ अविद्या-मानी तो जगत् अज्ञान कल्पित सिद्ध हुवा नहीं और ज्यो अविद्याकूँ ब्रह्ममैं आवरण सिद्ध करणैं के अर्थ मानी तो ब्रह्ममैं आवरण सिद्ध हुआ नहीं और ज्यो स्वभाव सिद्ध मानी तो ज्ञान की व्यर्थता भई और ज्यो ज्ञान को निर्णय कियो तो ज्ञान स्वतः सिद्ध होणैं तैं इसकी निवृत्ति स्वतःसिद्ध भई और ज्यो कल्पित मानी तो इसका कल्पक सिद्ध हुवा नहीं और ज्योँ

स्वतः कल्पित मानी तो ब्रह्म रूपा सिद्ध भई और ज्यो ब्रह्म रचित मानी तो ब्रह्म इसका उपादान हुवा यातैं ये ब्रह्मरूपा सिद्ध भई और इसकूं जन्य मानणैं मैं तो श्रुति स्मृति और भाष्यकार इनकी सम्मति रही और सङ्क्षहीनैं ज्यो अनादि कही उसमैं कोई प्रमाण सिद्ध हुवा नहीं यातैं ब्रह्म तैं भिन्न अनादि सदसद्विलक्षण अविद्या अलीक है ॥

देखो ये अविद्यावादी कैसे हैं ज्यो पुरुषकूं अप्रामाणिक अर्थकूं प्रमाणिक कहिकैं ठगैं हैं जैसैं सङ्क्षहीनैं अविद्यादिक पाँचकूं अनादि बता करिकैं ये वेदान्त का सिद्धान्त है ऐसैं कही और ये वी नहीं कही कि ये पूर्व पक्ष है अथवा अर्थवाद है किन्तु ये ही कही कि ये वेदान्त का सिद्धान्त है॥ विचार तो करो अविद्या मानणैं मैंवेदान्त का अभिप्राय है अथवा सच्चिदानन्दरूप परमात्मा के मानणैं मैं और इससैं भिन्न वस्तु नहीं है इसमैं वेदान्त का अभिप्राय है ॥ देखो ब्रह्म की सत्ता करिकैं सत्तावान् ब्रह्मव्यतिक्त पदार्थ हैं ये वी वेदाँत का अभिप्राय नहीं है देखो

सामान्यात्तु ॥

इस सूत्र के भाष्य मैं शङ्कर स्वामी लिखैं हैं कि

न च ब्रह्मव्यतिरिक्तं वस्त्वस्तित्वमवकल्पते

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्म तैं व्यतिरिक्त कहिये भिन्न ऐसा ज्यो वस्तु सो अस्तित्व की कल्पना नहीं करै है तात्पर्य ये है कि ब्रह्म तैं भिन्न वस्तु नहीं है और ज्यो अस्तित्व धर्म करिकैं प्रतीत होय है अर्थात् है इस प्रतीत का विषय है सो ब्रह्म हीं है ।

ज्यो कहो कि अविद्या अलीक है ये अर्थ मेरै वी सम्मत हुवा और ये अविद्यावादियोंनैं अलीक ही कल्पित किई है परन्तु इन की ही कल्पित अविद्या इनकूं हीं अनादि कैसैं प्रतीत होय है सो कहो ॥ तो हम कहैं हैं कि अविद्यावादी रज्जु मैं सर्प कूँ कल्पित मानैं हैं वो सर्प तत्क्षणजात है अर्थात् उस ही क्षण मैं उत्पन्न भयो है तो वी तत्क्षणजात प्रतीत होवै नहीं इस मैं कारण ये कहैं हैं कि जैसैं रज्जु का सामान्य धर्म इदन्ता है तैसैं रज्जु मैं एक प्राक्सिद्धत्व धर्म और है सो रज्जु की इदन्ता जैसैं कल्पित सर्प मैं प्रतीत होय है तैसैं हीं रज्जु का प्राक्सिद्धत्व धर्म कल्पित सर्प मैं प्रतीत होय है यो प्राक्सिद्धत्व धर्म कल्पित सर्पके तत्क्षण

जातत्व धर्मका आवरण करि लेवै है यातैं कल्पित सर्प मैं तत्क्षणजातत्व प्रतीत होवै नहीं ऐसैं अविद्यावादी मानैं हैं ऐसैं हीं ब्रह्म मैं अविद्यावादियैं नैं अविद्या कल्पित किई है यातैं ब्रह्म का अनादित्व धर्म अविद्यावादियैं कूँ अविद्या मैं प्रतीत होय है इस कारणतैं इनकी कल्पित अविद्या इनकूँ अनादि प्रतीत होय है ऐसैं मानौं ॥ परन्तु आश्चर्य तो ये है कि इनकूँ अविद्या मैं ब्रह्मकी सत्ता प्रतीत होय है तो बी ये अपणीं कल्पित अविद्या कूँ सद्रूप नहीं मानैं हैं ॥

ज्यो कहो कि प्रतीति काल मैं इसकूँ सत् ही मानैं हैं तो हम कहैंहैं कि इननैं ज्यो अविद्याकूँ सदसद्विलक्षण कही है सो कथन असङ्गत हुवा ज्यो कहो कि इसकूँ सदसद्विलक्षण सत् मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि सदसद्विलक्षण सत् इस का अर्थ कहो ज्यो कहो कि तीन काल मैं अबाध्य होय सो तो सत् और ज्यो इससैं विपरीत होय सो असत और ज्यो इन दोनूँ तैं विलक्षण होय सो सदसद्विलक्षण तो अविद्या ज्यो है सो ज्ञान तैं नष्ट होय है यातैं तो सद्विलक्षण है और सत् तैं विपरीत हैं अलीक तो ये अविद्या अलीकायिलक्षण है यातैं असद्विलक्षण है तो अविद्या जो है सो सदसद्विलक्षण सिद्ध होगई और अविद्या जो है सो है इस प्रतीतकी विषय है यातैं सदसद्विलक्षण सत् भई तो हम पूछैं हैं कि अविद्या जो है सो सदसद्विलक्षण सत् है तो इस मैं ज्यो सत्ता है तिस कूँ ब्रह्मसत्तातैं भिन्न मानणीं पडैगी तो भाष्यकारनैं ज्यो ब्रह्मसत्तातैं भिन्न सत्ता नहीं है ये कथन किया सो असङ्गत हुवा इस की सङ्गति कहा है सो कहो ।

ज्यो कहो कि अविद्यावादी सत्ता तीन मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि हमनैं सत्ता च्यार कही है देखो न्याय के मतके विवेचन मैं जहाँ भेद खण्डन है तहाँ हम पारमार्थिकीसत्ता व्यवहारिकीसत्ता प्रतिभासिकीसत्ता और चतुर्थासत्ता ऐसैं कहि आये हैं तहाँ चतुर्थीसत्ता भेद की तथा हावू की कही है तो ये तो कल्पना मात्र है वस्तु गत्या तो एक ब्रह्मसत्ता ज्यो है सो ही मुख्यसत्ता है इस ही सत्ता तैं सर्व सत्तावान् है यातैं सर्व ब्रह्म हीं है ज्यों सर्व ब्रह्म न होय तो किसी बी पदार्थ मैं सत्ता की प्रतीति होवै नहीं काहे तैं कि भाष्यकार जे हैं तिनकै ब्रह्म तैं व्यतिरिक्त पदार्थ मैं सत्ता मानणाँ अभिमत नहीं है इसी सत्ता के तीन नाम अविद्यावादियैं नैं कल्पित किये हैं और हमनैं च्यार नाम कल्पित किये हैं और कोई विद्वज्जन

आवश्यकता तैं विशेष नाम बी कल्पित करैं तौ इसमैं हमारा कुछ बी विवाद नहीं है और तुम कूँ बी इस विषय मैं विवाद करणाँ उचित नहीं तुम तो श्रुति नैं ज्यो एक मृत्पिण्ड के विज्ञान तैं सर्व मृन्मय जाणैं जाय हैं इस दृष्टान्त तैं एक मृत्पिण्डस्थानीय ज्यो वस्तु कहा है तिस कूँ जाणवेको यत्न करो ॥

ज्यो कहो कि अविद्या अलीक है तो इस की प्रतीति कैसैं होय है तो हम कहैं हैं कि जैसैं अलीक हावू बालकौं कूँ दीखै है तैसैं अविद्या अविद्यावादियौं कूँ दीखै है ज्यो कहो कि बालकौंकूँ हावू दीखै नहीं किन्तु बालक तो विचार शून्य हैं उनकूँ वृद्ध पुरुष कुपथ तैं हटायवेके अर्थ अलीक हावूकी तृणादिक मैं कल्पना करिकैं भय कराय देवैं हैं यातैं उस बालक की कुपथ तैं निवृत्ति होजाय है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं हीं विचार शून्य पुरुषौं कूँ जीवन्मुक्ति का आनन्द करायवे के अर्थ वेद ब्रह्म मैं अलीक अविद्या की कल्पना करिकैं डरावै है पीछैं आप ही विवेक कराय करिकैं जीवन्मुक्ति का आनन्द करावै है ॥ ज्यो कहो कि वेदअविद्याका कल्पक है इस मैं अनुभव कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि जब पर्यन्त वेद अवान्तर वाक्यौं करिकैं उपदेश करै नहीं तब पर्य्यन्त अविद्या का अनुभव होवै नहीं और जब वेद अवान्तर वाक्यौं करिकैं उपदेश करै है तब अज्ञानका अनुभव होवै है जैसैं कल्पना करो कि कोई पुरुष ऐसा है जिसनैं आजन्म तैं घट ऐसा नाम बी श्रवण किया नहीं उस पुरुष कूँ मैं घटकूँ नहीं जाणूँ हूँ ये वुद्धि होवै नहीं और जब उस पुरुष कूँ उस पुरुष का आप्त मान्याँ हुवा कोई पुरुष ऐसैं कहै कि घट है तब उस पुरुष कूँ घट का ज्यो आवरण उस का अनुभव होवै है और जब वो ही पुरुष ऐसैं कहै कि ये है घट तब उस पुरुष कूँ घटका साक्षात्कार होय है तैसैं अवान्तर वाक्यौं करिकैंतो आत्मा मैं आवरण रूप अज्ञान प्रतीत होय है और महावाक्यौं करिकैं आत्मा का साक्षात्कार होय है ऐसैं अविद्यावादी बी मानैं हैं ॥

अब तुम विचारो कि घट अज्ञान करिकैं आवृत रहा तो उसका ज्यो आवरण तिसका अनुभव असत्वापादक अज्ञान की निवृत्ति तैं पूर्व हुवा नहीं इस मैं कारण कहा है ॥ ज्यो कहो कि असत्वापादक अज्ञान अभानापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक है तो हम पूछैं हैं कि

असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति अभानापादक अज्ञान के रहतैं होय है अथवा नहीं जेया कहो कि अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होय है तो हम पूछैं हैं कि उस प्रतीति का आकार कहा है सो कहो ज्यो कहो कि घट नहीं है ये असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का आकार है तो हम कहैं हैं कि विषयि व्यवहार मैं विषयज्ञान कारण है ज्यो विषय कूँ नहीं जाणै वो उस के विषयि कूँ नहीं जाण सकै है जैसैं न्याय के मत मैं अनुव्यवसाय तो विषयिरूपज्ञान है और व्यवसायज्ञान विषय है तो वो व्यवसायज्ञान ज्यो है सो यत्किञ्चित् घटादि विषयक है तो व्यवसायज्ञान जो है सो विषयि हुवा तो उसके विषय होंगे घटादि पदार्थ अब तुम हीं देखो ज्यो पुरुष घट कूँ नहीं जाणैगा वो पुरुष व्यवसायज्ञान कूँ घटका विषयि कैसैं कहैगा ऐसैं हीं तुम घट नहीं है इस प्रतीति कूँ असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति कहोहो तो इस प्रतीति का विषय होगा घटविषयक अज्ञान तो ये अज्ञान घटका विषयि होगा और घट इस अज्ञान का विषय होगा अब ज्यो घट का ज्ञान असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति के पूर्व नहीं मानैंगे तो घट नहीं है इस प्रतीति का विषय जो घटविषयक अज्ञान उसकूँ घटका विषयि अज्ञान कैसैं कहोगे यातैं अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति मानौं तो असत्वापादक अज्ञानका ज्यो विषय ताका ज्ञान पूर्व मानौं अब ज्यो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति के पूर्व अज्ञान के विषय का ज्ञान मान्याँ तो घट है ऐसा ज्ञान मानोंगे ज्यो ऐसा ज्ञान मान्याँ तो ये ज्ञान ज्यो है सो घट नहीं है इस ज्ञान का प्रतिवन्धक है यातैं असत्वापादक अज्ञान की सिद्धि होवै ही नहीं ॥ अब जो असत्वापादक अज्ञान सिद्ध नहीं हुवा तो इस असत्वापादक अज्ञान कूँ अभानापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिवन्धक तुम नैं मान्याँ है तो इस असत्वापादक अज्ञान के नहीं होणैं तैं अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मानौं ज्यो अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मानी तो अभानापादक अज्ञान की प्रतीति भयैं असत्वापादक अज्ञान रहै नहीं ये अनुभव सिद्ध है जयो असत्वापादक अज्ञान नहीं रहा तो इसकी जो निवृत्ति सो ही अज्ञानवादियें। कैं अवान्तर वाक्यों करिकैं उत्पन्न भया जो परोक्षज्ञान ताका फल है यातैं अर्थात् असत्वापादक अज्ञान के नहीं रहणैं तैं इस अज्ञान की निवृत्ति के अर्थ अ-

वास्तवाक्योपदेश व्यर्थ होगा इस कारण तैं अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होय है ऐसे मानणाँ असङ्गत है ॥ जयो कहो कि अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति नहीँ मानैंगे तो हम पूछैं हैं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक किसकूँ मनैंगे सो कहो जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति का प्रतिबन्धक अभानापादक अज्ञान कूँ मानैंगे तो हम पूछैं हैं असत्वापादक अज्ञान के रहतैं अभानापादक अज्ञान की प्रतीति होय है अथवा नहीं जयो कहोकि होय है तो हम कहैं हैं कि अभानापादक अ-ज्ञान की प्रतीति का आकार ये है कि घट नहीं दीखे है तो ये प्रतीति अज्ञानवादियों कूँ तब होय है कि जब असत्वापादक अज्ञान निवृत्त हो जाय है अब जयो असत्वापादक अज्ञान रहा ही नहीं तो अभानापादक अज्ञानकूँ असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक मानणाँ असङ्गत हुवा ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञान के रहतैं अभानापादक अज्ञान की प्रतीति होवे नहीं ऐसैं मानैंगे तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथनका अभिप्राय ये सिद्ध हुवा कि अप्रतीत जे असत्वापादक और अभानापादक अज्ञान ते परस्पर परस्पर की प्रतीति के प्रतिबन्धक हैं तो तुम येही कहोगे कि हमारा ये ही अभिप्राय है तो हम पूछैं हैं जयो पदार्थ है और प्रतीत नहीं होवे तहाँ तुम पदार्थ की अप्रतीति का कारण किसकूँ मानौं हो सो कहो ॥ जयो कहो कि अन्यदेशस्थित पदार्थकी जयो अप्रतीति होय है तहाँ तो भित्यादिक आवरक होय हैं और जहाँ पुरोवर्त्ति पदार्थकी अप्रतीति होय है तहाँ अज्ञान आवरक होय है तो हम कहैं हैं कि अन्य देशस्थित पदार्थकी अप्रतीति का कारण तो उचित होय तिसकूँ मानौं इसमैं तो हमारा विवाद नहीं परन्तु जहाँ पुरोवर्त्ति पदार्थ अप्रतीत होय तहाँ तुम अज्ञान कूँ आवरक मानौं हो और यहाँ अज्ञान दो प्रकारके मानौं हो और उनकूँ परस्पर परस्पर की प्रतीति के प्रतिबन्धक मानौं हो तो वे दोनूँ अप्रतीत भये परन्तु ये कहो वे दोनूँ अज्ञान निरावरण अप्रतीत हैं अथवा सावरण अप्रतीत है ॥ जयो कहो कि निरावरण अप्रतीत हैं तो हम कहैं हैं कि घट कूँ वी निरावरण हीं अप्रतीत मानौं ऐसैं मानोंगे तो घटविषयक असत्वापादक और अभानापादक दोनूँ अज्ञान नहीं मानणें पडैंगे तो

लाघव होगा लाघव कूँ गुण और गौरव कूँ दोप सकल शास्त्रौं मैं मानै हैं ॥

जयो कहो कि आवरण अप्रतीत मानैंगे तो हम पूछैं हैं उन दोनूँ अज्ञानौं के और तो आवरण बणैं सकै नहीं यातैं उन दोनूँ अज्ञानौं के आवरक च्यार अज्ञान और मानणें पड़ैंगे काहेतैं कि प्रत्येक अज्ञान के आवरण के अर्थ असत्वापादक और अभानापादक अज्ञान आवश्यक होंगे तो अनवस्था होगी इस दोपकी निवृत्ति होणीं कठिनहै ॥

ज्यो कहो कि प्रतिबन्धक के होतैं कार्य होवै नहीं ये सर्वसम्मत है तो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक तो है अभानापादक अज्ञान यातैं तो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होवै नहीं और अभानापादक अज्ञानकी प्रतीतिका प्रतिबन्धक है असत्वापादक अज्ञान यातैं अभानापादक अज्ञानकी प्रतीति होवै नहीं इस कल्पनातैं कोई आपत्ति वी नहीं रही और दोनूँ अज्ञानौंकी अप्रतीति वी बणैं जायगी तो हम कहैं हैं कि ऐसैं इन दोनूँ अज्ञानौंकूँ परस्परकी प्रतीतिके प्रतिबन्धक मानोंगे तो अवान्तर वाक्यौं करिकैं ज्यो परोक्षज्ञान मानौं हो और उससैं तुम असत्वापादक अज्ञानका नाश मानौं हो ये कथन कैसैं समीचीन होगा काहेतैं कि जिज्ञासु पुरुषकूँ ज्यो दोनूँ अज्ञानौं की प्रतीति ही नहीं तो वो पुरुप दोनूँ अज्ञानौं की निवृत्तिके अर्थ यत्न कैसैं करैगा देखो सारे पुरुप लोकमैं प्रतीतिविषय जे सर्पादिक तिनकी ही निवृत्ति को यत्न करैं हैं और अप्रतीत जे सर्पादिक तिनकी निवृत्ति को यत्न कोई वी करै नहीं यातैं असत्वापादक और अभानापादक अज्ञान दोनूँहीं मानणाँ असङ्गत हुवा ॥

ज्यो कहो कि अवान्तरवाक्यश्रवणके अनन्तर ज्यो परोक्षज्ञान होय है उसका आकार ये है कि आत्मा है तो ये ज्ञान ज्यो है सो आत्मा नहीं है इस ज्ञानका विरोधी है ये अनुभव सिद्ध है यातैं हम ऐसैं मानैंगे कि परोक्षज्ञानतैं पूर्व हमकूँ असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति रही ऐसैं ज्यो असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति मानौंतो इसका विषयअसत्वापादक अज्ञान सिद्ध होगया तो हम कहैं हैं कि ये तो अत्यन्तही आश्चर्य हुवा कि अविद्यावादी ज्ञानतैं अज्ञानकूँ निवृत्त करते रहे तिनके ज्ञानतैं अज्ञान सिद्ध हुवा है परन्तु हमारे कथन मैं तो अनुगुण हुवा है काहेतैं कि हम पूर्व ऐसैं कहि आये हैं

कि वेद ब्रह्म में अविद्याकी कल्पना करिकैं डरावै है सो ही अर्थ सिद्ध होगया काहेतैं कि अवान्तर वाक्यौं करिकैं तुमनैं जयो ज्ञान मान्यौं उसतैं हीं तुमनैं अज्ञान की सिद्धि किई है और हमनैं वी वेदकूं हीं अज्ञानका कल्पक कहा है परन्तु परोक्षज्ञानकी उत्पत्तिके पूर्व असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति मानौं सो। किसी कै वी अनुभव सिद्ध नहीं यातैं उस प्रतीतिका प्रतिबन्धक अवश्य कोई कल्पित करणौं चाहिये और उस प्रतिबन्धक का स्वरूप अभानापादक अज्ञानतैं विलक्षण वताणौं चाहिये काहेतैं कि अभानापादक अज्ञान सैं पूर्व असत्वापादक अज्ञानकी जयो प्रतीति ताकी प्रतिबन्धकता असिद्ध भई है और उस असत्वापादक अज्ञान का कोई आवरक वी पूर्व सिद्ध नहीं हुवा है ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव मानैंगे अर्थात् असत्वापादक अज्ञानका ये स्वभाव ही है कि ये आवृत ही रहै है तो हम कहैं हैं कि इसका आवृत स्वभाव है तो ये अपणैं विषय का आवरण कैसैं करैगा देखो अज्ञानवादी अज्ञानकूं तमःस्वभाव मानैं हैं तो तम जयो है तिसका आवृत्त स्वभाव नहीं है किन्तु आवरण स्वभाव है तम आप अनावृत होता हुवा अन्य पदार्थौंका आवरण करै है यातैं असत्वापादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव मानणौं असङ्गत ही है ॥ अथवा असत्वापादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव ही मानौं ये हमारै वी अभिमत है काहेतैं कि भेद हावू ये आवृतस्वभाव हैं तो ये अलीक सिद्ध भये हैं तैसैं हीं आवृत स्वभाव होणैंतैं असत्वापादक अज्ञान वी अलीक ही है ऐसैं मानौं॥ जयो कहो कि ये अज्ञान अलीक होय तो आवरण कैसैं करैगा तो हम कहैं हैं कि जैसैं अलीक जयो भेद सो भिन्न ऐसा जयो व्यवहार ताकूं सिद्ध करै है और जैसैं अलीक हावू भय सिद्ध करै है तैसैंहीं अलीक जयो असत्वापादक अज्ञान सो आवरण सिद्ध करैगा ॥

जयो कहोकि असत्वापादक अज्ञानकी निवृत्ति जयो है सो अवान्तर वाक्योपदेशका फल है अर्थात् अवान्तर वाक्योपदेश करिकैं असत्वापादक अज्ञानकी निवृत्ति होय है अव जयो असत्वापादक अज्ञान अलीक हुवा तो इसकी निवृत्ति वी अलीक ही होगी जयो ये निवृत्ति अलीक भई तो इस निवृत्तिकूं सिद्ध करणैं के अर्थ अवान्तर वाक्योपदेश व्यर्थ होगा काहेतैं कि त्रिकालासत् जयो है सो अलीक होय है तो ये असत्वापादक अज्ञान

की निवृत्ति ज्यो है सो अलीक होणैं तैं ये वी त्रिकालासत् भई तो इसकी सिद्धिके अर्थ अवान्तर वाक्योपदेश ज्यो है सो व्यर्थ ही है॥ तो हम कहैं हैं कि असत्वापादक अज्ञान अलीक होणैं तैं इसकी निवृत्ति ज्यो है ताकूँ अलीक मानणाँ असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो अलीक की निवृत्ति वी अलीक होय तो अविद्यावादी रज्जुमैं सर्पकूँ प्रातिभासिक मानैं हैं ओर रज्जुसर्प की निवृत्तिकूँ प्रातिभासिक नहीं मानैं हैं सो इनकूँ वी ये रज्जु सर्प की निवृत्ति प्रातिभासिक ही मानणीं पडेगी सो अनुभव विरुद्ध है यातैं अलीक ज्यो असत्वापादक अज्ञान ताकी निवृत्ति के अर्थ ज्यो वेद अवान्तर वाक्योपदेश करे है सो व्यर्थ नहीं है अथवा असत्वापादक अज्ञान की निवृत्तिकूँ अलीक ही मानों तो वी कुछ हानि नहीं है ज्यो कहो कि अवान्तरवाक्योपदेशमैं ज्यो व्यर्थ ताकी आपत्ति भई उसकी निवृत्तिका उपाय कहा तो हम कहैं हैं कि अवान्तरवाक्योपदेश का फल परोक्षज्ञानकूँ हीं मानों असत्वापादक अज्ञान तो ज्यो होता तो प्रतीत होता परन्तु ये तो प्रतीत होवै नहीं यातैं त्रिकालासत् ही है जयो ये अज्ञान त्रिकालासत् हुवा तो इसकी निवृत्ति का यत्न भी व्यर्थ ही है यातैं परोक्षज्ञान हीं अवान्तरवाक्योपदेश का फल है ये ही जाणों ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञान अलीक हुवा तो वेदकूँ अज्ञान का कल्पक कहा सो असङ्गत हुवा काहेतैं कि जयो असत्वापादक अज्ञान हीं नहीं तो वेदनैं किस अज्ञान की कल्पना किई तो हम कहैं हैं वेदकूँ अभानापादक अज्ञान का कल्पक मानों काहेतैं कि अवान्तरवाक्योपदेश के अनन्तर अभानापादक अज्ञान प्रतीत होय है जयो कहो कि अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मात्रतैं वेदकूँ अविद्या का कल्पक कैसैं मानैं अभानापादक अज्ञान तो अवान्तरवाक्योपदेशतैं पूर्व ही रहा सो ही अवान्तरवाक्योपदेश कै अनन्तर प्रतीत हुवा है तो हम कहैं हैं कि अभानापादक अज्ञान अवान्तरवाक्योपदेशतैं पूर्व होता तो प्रतीत होता परन्तु कोई इस अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक रहा नहीं तो वी ये प्रतीत हुवा नहीं तो ये ही जाणों कि ये अज्ञान अवान्तरवाक्योपदेशतैं पूर्व रहा ही नहीं अवान्तरवाक्योपदेशतैं पीछैं हीं कल्पित हुवा है ॥

जयो कहो कि साक्षात् आत्मतत्व का प्रतिपादक जयो वेद ताकूँ अज्ञान का कल्पक कहणैं तैं वेदकी न्यूनता होय है यातैं वेदकूँ अज्ञानका

कल्पक कहणाँ असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि अवान्तरवाक्यश्रवण के अनन्तर विचार शून्य अविद्यावादी अभानापादक अज्ञान की कल्पना करैं हैं यातैं अज्ञानवादियोंकूँ ऐसैं कही है कि तुम वेदकूँ अज्ञान का कल्पक मानों ॥ और हम तो अवही पूर्व कहि आये हैं कि अवान्तरवाक्योपदेश का फल परोक्षज्ञानकूँ हीं मानों यातैं वेदकूँ अज्ञान का कल्पक मानणे मैं हमारा अभिप्राय नहीं है हम तो वेदकूँ साक्षात् परमात्मा हीं मानैं हैं ये वेद साक्षात् सच्चिदानन्दरूप परमात्मा का स्वरूपभूत अलौकिक अनुभव है ऐसैं मानैं है देखो श्रीकृष्ण महाराज गीता के तृतीय अध्याय मैं आज्ञा करैं हैं कि

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञःकर्मसमुद्भवः
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥

इसका अर्थ ये है कि सच्चिदानन्दरूप परमात्मातैं वेद उत्पन्न हुवा है और वेदतैं कर्म उत्पन्न हुवा है और कर्मतैं यज्ञ उत्पन्न हुवा है और यज्ञतैं मेघ होय है और मेघतैं अन्न होय है और अन्नतैं प्रजा होय है तो परमात्मातैं जनो सृष्टि भई तहाँ प्रथम वेदरूप परमात्मा हीं हुवा है और ये ही सकल सृष्टिका कारण है और परमात्मा वेदका उपादान कारण है तो उपादानतैं कार्य विलक्षण होवे नहीं यातैं वेद ज्यो है सो परमात्माहीं है ॥

अभी हमारा अभिप्राय तो अभानापादक अज्ञानके मानणे मैं वी नहीं है हम तो परमात्माकूँ सदा निरावरण मानैं हैं यातैं हम अज्ञाततकूँ स्वप्रकाशता रूप सिद्ध करि आये हैं और अब ज्यो अविद्यावादियोंकूँ कही है कि अभानापादक अज्ञानकूँ तुम कल्पित मानों ये केवल प्रौढिवाद है तात्पर्य ये है कि अभानापादक अज्ञान की कल्पना करो तो वी ये परमात्मा का आवरक नहीं ये ज्यो आवरक होय तो ये अविद्यावादियोंकूँ हीं दीखे नहीं ॥ ज्यो कहोकि अभानापादक अज्ञान नहीं मानोंगे तो परमात्मा मैं अज्ञात व्यवहार कोन करावैगा और ज्यो अज्ञान विनाहीं परमात्मा मैं अज्ञात व्यवहार मानों तो अज्ञान विना इस व्यवहार के होणे मैं कोई आचार्यकी सम्मति कहो तो हम कहैं हैं कि जगद्गुरु श्रीकृष्णमहाराजनैं त्रयोदश अध्याय मैं असैं आज्ञा किई है कि

सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्म ज्यो है सो सूक्ष्म है यातैं अज्ञात है तो इस कथनतैं ये अर्थ सिद्ध होगया कि परमात्मामैं अज्ञात ऐसा व्यवहार अज्ञान के होणें तैं नहीं है ॥

जो कहो कि जिन विद्यारण्य स्वामीनैं गायत्री के प्रसादतैं वेदार्थ प्रकाशका वरदान पाया वे वृत्तिव्याप्ति का फल ब्रह्ममैं आवरणभङ्गकूं कहैं हैं देखो उनका कथन पञ्चदशी मैं ये है कि

ब्रह्मण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्षिता
फलव्याप्यत्वमेवास्य शास्त्रकृद्भिर्निवारितम् १ ॥

इसका अर्थ ये हैं कि ब्रह्म मैं अज्ञान के नाशके अर्थ वृत्ति व्याप्तिकी अपेक्षा किई है और शास्त्रकारों नैं फलव्याप्यता का ही निराकरण किया है १ तो ये सिद्ध होगया कि ब्रह्ममैं अज्ञानका किया आवरण है तो हम कहैं हैं कि आचार्यों के हृदयका समुझणाँ कठिन है देखो तुम तो ये कहो हो कि इस कथनतैं विद्यारण्य स्वामीकै ब्रह्ममैं आवरण अभिमत है और हम कहैं हैं कि इस कथन तैं विद्यारण्य स्वामीकै ब्रह्ममैं अज्ञानका किया आवरण अभिमत नहीं है ज्यो ब्रह्म मैं आवरण इनकै अभिमत होता तो शास्त्रकारोंकी अभिमति नहीं कहते किन्तु ब्रह्ममैं अज्ञानका मानणाँ अपणे अभिमत कहते ॥ विचार तो करो ज्यो आवरण श्रीकृष्णकै अभिमत नहीं है उसकूं ऐसे उत्तम पुरुष कैसें सम्मत करैंगे यातैं अर्थात् आवरणकूं शास्त्रकारोंकै अभिमत बताणें तैं इस कथनका अभिप्राय ये ही सिद्ध होय है कि ब्रह्ममैं आवरण मानणाँ विद्यारण्य स्वामीकै अभिमत नहीं है देखो विद्यारण्य स्वामी नैं तो वृत्तियोंकूं भी कूटस्थ दीपमैं निरावरण मानी है तहाँ का ये श्लोक है कि

ज्ञातताज्ञातते न स्तो घटवद्वृत्तिषु क्वचित्
स्वस्य स्वेनाऽगृहीतत्वात्ताभिश्चाऽज्ञाननाशनात् १ ॥

इसका अर्थ ये है कि जैसें घट मैं ज्ञातता और अज्ञातता है तैसें वृत्ति जेहैं तिनकै विषैं ज्ञातता और अज्ञातता ये नहीं होय हैं काहेतैं कि आपसैं आपका ग्रहण नहीं और उन करिकैं अज्ञानका अदर्शन होय है१ तो

ये सिद्ध हुवा कि वृत्ति जिस पदार्थके पास चली जाय तहाँ ही आवरण दीखै नहीँ तो वृत्तिकै आवरण होणाँ इसका तो सम्भव ही कहाँ ॥

अब नैं तो विद्यारण्य स्वामीकै घटादिक मैं आवरण अभिमत हुवा ओर नैं वृत्तियाँ मैं आवरण सिद्ध हुवा ओर नैं आत्मामैं आवरण सिद्ध हुवा यातैं आवरण वी अलीक ही है ऐसैं मूलाज्ञान ओर असत्वापादक ओर अभानापादक आवरण इनका मानणाँ असङ्गत है ऐसैं अज्ञान असिद्ध हुवा तो जगत् अज्ञान कल्पित सिद्ध नहीँ हुवा जयो जगत् अज्ञान कल्पित सिद्ध नहीँ हुवा तो परमात्माके स्वरूप भूत अलौकिक ज्ञानतैं रचित सिद्ध हुवा जयो अलौलिक ज्ञानतैं रचित सिद्ध हुवा तो सच्चिदानन्द रूप परमात्मा इस जगत् का विवर्त्ति उपादान पूर्व सिद्ध हुवा है तो उपादानतैं विलक्षण कार्य होवै नहीँ यातैं जगत् परमात्मरूप ही है ॥

जयो कहो कि चिद्रूप परमात्मा जगत् का उपादान है तो जगत् जड कैसैं प्रतीत होय है तो हम पूछैं हैं कि अज्ञानवादियाँकै अविद्या जड उपादान है तो इसके कार्य जीव ईश्वर चेतन कैसैं भये सो कहो जयो कहो कि अविद्या जयो है सो अघटित घटना पटीयसी है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं हम परमात्मरूप ज्ञानकूँ अलौकिक कहैं हैं ॥

अब हम ये ओर पूछैं हैं कि अविद्यावादी ज्यो जगत् कूँ अज्ञान कल्पित मानैं हैं तो इसके अज्ञानकल्पित पणाँ मैं अनुभव कहा कहैं हैं सो कहो ज्यो कहो कि रज्जुसर्पके दृष्टान्त तैं जगत कूँ अविद्यावादी अज्ञान कल्पित मानैं हैं तो हम पूछैं हैं रज्जु सर्प कूँ अज्ञान कल्पित कैसैं मानैं हैं सो कहो ॥

ज्यो कहो कि भ्रमस्थल मैं शून्यवादी नास्तिक तो असत् ख्याति मानैं है १ ॥ ओर क्षणिकविज्ञानवादी आत्मख्याति मानैं है २ ॥ ओर न्याय मत मैं तथा वैशेषिकमत मैं अन्यथा ख्याति मानैं हैं ३ ॥ ओर साङ्ख्य तथा प्राभाकर अख्याति मानैं हैं ४ ॥ ओर अज्ञानवादी अनिर्वचनीयख्याति मानैं हैं ५ ॥

तहाँ शून्यवादी नास्तिक तो ये कहै है कि रज्जुदेश मैं सर्प अत्यन्त असत् है उसकी ही प्रतीति होवै है १ ॥

ओर क्षणिक विज्ञानवादी ऐसैं कहै है कि सर्व पदार्थ बुद्धि सैं भिन्न नहीँ हैं ओर बुद्धि ज्यो है सो क्षण क्षण मैं उत्पत्ति कूँ प्राप्त होय है

ओर नाश कूँ प्राप्त होय है ये बुद्धि ही सर्प रूप करिकैँ प्रतीत होय है २॥ ओर न्याय वैशेषिक मत के मानवेवाले ऐसैं कहैं हैं कि वल्मीकादिस्थान मैं सर्प सत्य है उसकूँ पुरुष नेत्रौं सैं देखे है वो सर्प नेत्रौं के दोषतैं सन्मुख प्रतीत होय है जैसैं पित्त दोष तैं भस्मक रोगवाला पुरुषके भोजनसामर्थ्य वधै है तैसैं दोषवलतैं नेत्रौं मैं दर्शनसामर्थ्य वधै है यातैं दूर देशस्थित सर्प दीखै है उसका रज्जुदेश मैं भान होय है॥ ओर चिन्तामणि कारका ये मत है कि दूरदेशस्थित सर्प का भान होय तो मध्य के अन्य पदार्थौंका वी भान होणाँ चाहिये सो होवै नहीं यातैं दोष सहित नेत्र तैं रज्जुका ही सर्परूप करिकैँ भान होय है ३॥

ओर साङ्ख्य तथा प्राभाकर इनके मत के मानवे वाले ऐसैं कहैं हैं कि असत् की प्रतीति होय तो वन्ध्यापुत्र की वी प्रतीति होणीं चाहिये सो होवै नहीं यातैं तो असत्ख्याति मानणाँ असङ्गत है॥ ओर क्षणिक विज्ञान का ही आकार सर्प होय तो क्षणतैं अधिक काल इस सर्प की प्रतीति नहीं होणीं चाहिये यातैं आत्मख्याति का मानणाँ असङ्गत है॥ ओर अन्यथाख्याति की प्रथम रीति तो चिन्तामणिकार के मत तैं खण्डित है ओर चिन्तामणिकारका वी मत असङ्गत है काहे तैं कि ज्ञेयके अनुसार ज्ञान होय है ज्ञेय रज्जु ओर ज्ञान सर्प का ये कथन अत्यन्त विरुद्ध है॥ यातैं जहाँ रज्जु मैं सर्प भ्रम होय है तहाँ ये रीति मानवे योग्य है कि प्रथम नेत्रका वृत्तिद्वारा रज्जु सैं सम्बन्ध होय है पीछैं रज्जु का तो इदंरूप करिकैँ ज्ञान होय है ओर सर्पकी स्मृति होय है तो ये सर्प है यहाँ ज्ञान दोय हैं रज्जु के इदं अंशका ज्ञान तो प्रत्यक्ष है ओर सर्प ज्ञान स्मृतिरूप है परन्तु भय दोष तो प्रमाता मैं ओर तिमर दोष प्रमाण मैं यातैं ऐसा विवेक होवै नहीं कि मेरेकूँ दो ज्ञान भये हैं किन्तु एकही ज्ञान का विवेक होय है ऐसैं दो ज्ञानौं का अविवेक ही भ्रम है ४॥

ओर अविद्यावादी ऐसैं कहैं हैं कि इदं अंशका तो प्रत्यक्ष ज्ञान ओर सर्प की स्मृति ऐसैं दो ज्ञान होवैं तो रज्जु कूँ देखि करिकैँ पुरुष भागे है सो भागणाँ नहीं चाहिये काहेतैं कि सर्पके स्मरण तैं कोई वी भागै नहीं ये अनुभवसिद्ध है यातैं॥ ओर रज्जु का विशेष रूप करिकैँ ज्ञान भयैं पीछैं ऐसा बाध होय है कि मेरेकूँ रज्जु मैं सर्पप्रतीति मिथ्या भई यातैं॥ ओर ये सर्प है यहाँ ज्ञान एक ही प्रतीत होय है यातैं॥ ओर एक काल मैं

अन्तःकरण तैं स्मृतिरूप और प्रत्यक्षरूप दो ज्ञान होवैं नहीं यातैं ॥ अख्याति मतका मानणां बी असंगतही है ॥ या कारण तैं अनिर्वचनीयख्याति मानणीं चाहिये ताकी ये व्यवस्था है कि अन्तःकरण की वृत्तिनेत्र द्वारा निकसिकैं विषयाकार होय है तातैं आवरण भङ्ग होय के विषय का प्रत्यक्ष ज्ञान होय है और जहाँ सर्प भ्रम होय है तहाँ अन्तःकरण की वृत्ति निकसिकैं विषयसम्बद्ध होय है परन्तु तिमिरादि दोष प्रतिबन्धक हैं यातैं वृत्ति ज्यो है सो रज्जुसमानाकार होवै नहीं यातैं रज्जुचेतनाश्रित अविद्या मैं क्षोभ हो करिकैं वो अविद्या ही सर्पाकार हो जाय है वो सर्प सत् होय तो रज्जु के ज्ञानतैं वाकी निवृत्ति होवै नहीं और ज्यो वो सर्प असत् होय तो वन्ध्यापुत्र की तरैं प्रतीत होवै नहीं यातैं वो सर्प सद्सद्विलक्षण अनिर्वचनीय है उसकी ज्यो ख्याति कहिये प्रतीति अथवा कथन सो अनिर्वचनीयख्याति कहिये है ॥ और जैसैं सर्प अविद्या का परिणाम है तैसैं उसका ज्ञान बी अविद्याका ही परिणाम है अन्तःकरण का परिणाम नहीं काहेतैं कि जैसैं रज्जुज्ञान तैं सर्पकी निवृत्ति होय है तैसैं उसके ज्ञानकी बी निवृत्ति होय है वो ज्ञान अन्तःकरण का परिणाम होय तो उसका बाध होवै नहीं यातैं वो ज्ञान बी अनिर्वचनीय है परन्तु रज्जूपहित चेतनाश्रित अविद्या का ज्यो तमोंश उसका परिणाम सर्प है और साक्षिचेतनाश्रित ज्यो अविद्या उसके सत्वाँशका परिणाम उस सर्पका ज्ञान है और अविद्या मैं ज्यो क्षोभ सो उस सर्पका और उसके ज्ञानका एक ही निमित्त है यातैं भ्रमस्थलमैं सर्पादि विषय और उनका ज्ञान एकही समयमैं उत्पन्न होय है और रज्जु के ज्ञान तैं एक ही समय मैं ये दोनूं निवृत्त होय हैं ये तो बाह्य भ्रमस्थलका प्रकार है ॥ और स्वप्न मैं तो साक्षि आश्रित अविद्याका ही तमोंश विषयाकार होय है और उसका ही सत्वांश ज्ञानाकार होय है इतनाँ भेद है कि भ्रमस्थल मैं सारे विषय साक्षि भास्यहैं रज्ज्वादिक मैं सर्पादिक और उनका ज्ञान भ्रम कहिये है सो भ्रम अविद्याका परिणाम है और चेतन का विवर्त्त है ॥ उपादान के समान स्वभाववाला अन्यथा स्वरूप परिणाम कहिये है और अधिष्टान तैं विपरीत स्वभाववाला अन्यथा स्वरूप विवर्त्त कहिये है और मिथ्या सर्पका अधिष्टान रज्जूपहित चेतन है रज्जु नहीं काहेतैं कि रज्जु तो आप ही कल्पित है कल्पित ज्यो है सो कल्पित का अधिष्टान वनैं नहीं और रज्जु विशिष्टचेतन कूँ सर्पका

अधिष्ठान मानैं तो भी चेतन हीं अधिष्ठान है काहेतैं कि रज्जु आप ही कल्पित है यातैं रज्जु मैं सर्पाधिष्ठानता बाधित है और तैसैं हीं सर्पज्ञान का अधिष्ठान साक्षी है ऐसैं भ्रमस्थलमैं विषयका और उसके ज्ञानका अधिष्ठान उपाधि भेद तैं भिन्न है और विशेषरूप करिकैं रज्जुकी अप्रतीति अविद्या मैं क्षोभ द्वारा दोनूँकी उत्पत्तिमैं कारण है और रज्जु का विशेषरूप करिकैं ज्ञान दोनूँकी निवृत्ति मैं कारण है ॥ ज्यो कहो कि अधिष्ठान के ज्ञान विना मिथ्या पदार्थकी निवृत्ति होवै नहीं ये अविद्यावादियोंका सिद्धान्त है तो सर्पका अधिष्ठान रज्जूपहित चेतन है रज्जु नहीं यातैं रज्जु ज्ञान तैं सर्पकी निवृत्ति सम्भवै नहीं तो इस का समाधान ये है कि रज्जु तो इन के मतमैं अज्ञानका कार्य है यातैं रज्जुमैं तो आवरण रहै नहीं काहेतैं कि आवरण ज्यो है सो अज्ञानकी शक्ति है और अज्ञान जडाश्रित रहै नहीं ये इन का मत है किन्तु जब साभास अन्तःकरण की वृत्ति विषयाकार होय है तब वृत्ति तैं रज्जूपहित चेतनाश्रित ज्यो आवरण सो नष्ट हो करिकैं अधिष्ठान चेतन तो स्वप्रकाशता करिकैं प्रकाशै है और आभास करिकैं विषयका प्रकाश होयहै तो रज्जूपहित चेतन हीं सर्पका अधिष्ठान है उस का ज्ञान हुवा ऐसैं मानैं हैं यातैं रज्जुके ज्ञानतैं सर्पकी निवृत्ति सम्भवै है ज्यो कहो कि सर्प ज्ञानका अधिष्ठान तो साक्षीचेतन है उसका ज्ञान हुवा नहीं यातैं सर्प ज्ञान की निवृत्ति कैसैं होगी तो हम कहैं हैं कि चेतन मैं स्वरूप तैं तो भेद है नहीं किन्तु उपाधि के भेद तैं भेद है सो भी उपाधि भिन्न देश मैं स्थित होय तब तो उपहित मैं भेद होय है और उपाधि एक देश मैं स्थित होय तब उपहित मैं भेद होवै नहीं यातैं वृत्ति जब विषयाकार भई तब विषय और वृत्ति एक देशस्थित होनैं तैं विषयोपहित चेतन और वृत्त्युपहित चेतन इन का भेद नहीं या कारण तैं विषयाधिष्ठान चेतन का ज्ञान हीं वृत्त्युपहित चेतनका ज्ञान है ऐसैं सर्पज्ञानाधिष्ठान का ज्ञान होनैं तैं सर्पज्ञानकी निवृत्ति सम्भवै है ॥ अथवा जब अन्तःकरण की वृत्ति मन्दान्धकारावृत रज्जु तैं सम्बद्ध हो करिकैं रज्जु के विशेषाकार कूँ प्राप्त होवै नहीं तब इदमाकार वृत्ति मैं स्थित ज्यो अविद्या सो ही सर्पाकार और ज्ञानाकार होय है उस अविद्याका तमोंश सर्पाकार होय है और उसका ही सत्वांश ज्ञानाकार होय है और वृत्त्युपहित चेतन दोनूँ का अधिष्ठान है और वृत्ति विषय देश मैं गई यातैं विषयोपहित चेतन और

वृत्युपहितचेतन ये दोनूँ उपाधि एक देशस्थित होवों तैं एक हैं तो वृत्ति जब विषय के विशेषाकारकूँ प्राप्त भई और उसमें विषयका अधिष्ठान जयो चेतन उसका आवरण दूर हुवा और विषयका विशेषरूप करिकैं ज्ञान हुवा तो साक्षि चेतन का ही आवरण दूर हुवा यातैं सर्प और उस के ज्ञानकी निवृत्ति अधिष्ठान ज्ञान तैं सम्भवै है ॥ जो कहो कि प्रथम पक्षका त्याग करिकैं ये द्वितीय पक्ष कहणें में तुमारा तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि प्रथम पक्षमैं विषयोपहित चेतनाश्रित अज्ञानका परिणाम सर्प है ऐसैं मानणें में ये दोष है कि जहाँ बहुत पुरुषों कूँ सर्प भ्रम होय तहाँ एक पुरुषकूँ रज्जु के यथार्थ ज्ञान भयें सर्व पुरुषों का भ्रम निवृत्त होणाँ चाहिये काहेतैं कि विषयाधिष्ठान चेतनाश्रित अविद्या का परिणाम जयो सर्प उसकी निवृत्ति एक पुरुषकूँ रज्जु का यथार्थ ज्ञान जयों भया तातैं होगी ॥ और द्वितीय पक्ष में ये दोष नहीं है काहे तैं कि जिसकी वृत्तिमैं स्थित अविद्या का परिणाम सर्प और ज्ञान निवृत्ति हुवा उसका भ्रम निवृत्त हुवा और जिसकी वृत्ति मैं स्थित अविद्या का परिणाम सर्प और ज्ञान निवृत्त होवैं नहीं उनका भ्रम निवृत्त होवै नहीं ऐसैं बाह्य भ्रमस्थल में विषय और ताके ज्ञान का अधिष्ठान वृत्युपहित साक्षी है ॥ और आन्तर भ्रमस्थल मैं स्वप्न पदार्थ और उनके ज्ञान का अधिष्ठान अन्तःकरणोपहित साक्षी ही है या प्रकार करिकैं सत् और असत् तैं विलक्षण जे अनिर्वचनीय सर्पादिक तिनकी जो ख्याति कहिये प्रतीति अथवा कथन सो अनिर्वचनीयख्याति कहिये है ५॥ ऐसैं रज्जुसर्प कूँ अविद्यावादी अज्ञानकल्पित मानैं हैं ये प्रक्रिया सद्गुरू नें विचार सागर के चतुर्थ तरङ्ग मैं लिखी है ॥

तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो सद्गुरू के मत तैं ही विरुद्ध है काहेतैं कि विचारसागर के पञ्चम तरङ्ग मैं सद्गुरू ऐसैं लिखैं हैं कि सम-सत्ताक जे हैं ते परस्पर साधक और बाधक होवैं हैं तहाँ ऐसा प्रसङ्ग है कि गुरु वेद मिथ्या हैं तो इनतैं संसारकी निवृत्ति कैसैं होय जैसैं मरुस्थल का जल मिथ्या है तो उसका सामर्थ्य ये नहीं है कि तृषाकूँ निवृत्त करि देवै ऐसैं आप शिष्य की शङ्का लिख करिकैं आप ही ऐसैं समाधान लिखैं है कि समसत्ताक परस्पर साधक बाधक होवै है विषमसत्ताक परस्पर साधक बाधक होवै नहीं जैसैं स्वप्नमैं मिथ्या चोरनैं राजाकूँ सताया उस राज्य मैं बड़े बड़े योधा व्यावहारिक राजा के कुछ भी काम आये नहीं और स्वप्नके मुनि

नैं हीं औषध देकरिकैं राजा की पीड़ा निवृत्त किई तो सिद्ध हुवा कि सम सत्ताक ही साधक बाधक होय है काहे तैं कि स्वप्नका प्रातिभासिक जीव ही तो राजा के पीडाका साधक हुवा ओर प्रातिभासिक औषध ही राजाकी पीड़ा का बाधक हुवा ऐसैं हीं मिथ्या गुरु वेद मिथ्या भव दुःखकूं निवृत करैहै ऐसें सङ्कही नैं विचारसागर के पञ्चम तरङ्ग में लिखा है ॥

अब तुमहीं विचार करो ज्यो अविद्यावादी रज्जुसर्प की प्रातिभासिकीसत्ता मानैं हैं तो रज्जुसर्प प्रातिभासिक हुवा ओर उसका साधक रज्जुका विशेष रूप करिकैं ज्यौं अज्ञान ताकूं मान्यां है तो इस अज्ञान की व्यावहारिकी सत्ता है यातैं ये अज्ञान व्यावहारिक है ओर रज्जु के ज्ञानतैं प्रातिभासिक सर्प की निवृत्ति मानी है तो ये रज्जु का ज्ञान वी व्यावहारिक है तो सर्प प्रातिभासिक कैसें हो सकै ज्यो सर्प प्रातिभासिक होय तो रज्जु का व्यावहारिक अज्ञान तो इस सर्प का साधक हो सकै नहीं ओर रज्जु का व्यावहारिक ज्ञान इस सर्प का बाधक हो सकै नहीं ॥ ऐसैं ही स्वप्न मैं समुझो कि व्यावहारिकी ज्यो निद्रा सो तो स्वप्न की साधक है ओर व्यावहारिक ज्यो जाग्रत् अथवा सुषुप्ति ये स्वप्न के बाधक हैं तो स्वप्न प्रातिभासिक कैसें होसकै ॥ ओर देखो कि ब्रह्मकूं अविद्यावादी सर्वका साधक मानैं हैं तो ब्रह्म की परमार्थसत्ता है ओर सर्व जगत् की व्यावहारसत्ता है अब ज्यो समान सत्ताक ही साधक होय तो ब्रह्म किसी का वी साधक नहीं होणां चाहिये यातैं सर्व की साधकता बाधकता का निर्वाह के अर्थ सर्व की एक ही सत्ता मानों अब ज्यो सर्व की प्रतिभाससत्ता मानोंगे तब तो ब्रह्मकूं वी मिथ्या मानणां पडैगा सो तो अविद्यावादियौं कै वी अभिमत नहीं है ओर ज्यो सर्व की व्यावहार सत्ता मानों तो ब्रह्म व्यावहारिक पदार्थ सिद्ध होगा तो अविद्यावादी व्यावहारिक पदार्थांकूं जन्य मानैं हैं तो ब्रह्मकूं वी जन्य मानणां पडैगा तो ये वी अविद्यावादियौं के अभिमत नहीं है यातैं सर्व की परमार्थसत्ता मानों इस सत्ता के मानणें मैं ब्रह्म मैं मिथ्यात्व की वी आपत्ति नहीं है ओर तैसैं ही ब्रह्ममैं जन्यता की आपत्ति वी नहीं है ओर ऐसैं मानणां

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुति के अनुकूल है यातैं श्रुतिसम्मत भी है ।

ज्यों कहो कि ऐसें मानणें मैं जगत् मैं नित्यता की आपत्ति होगी काहेतैं कि ब्रह्म की परमार्थ सत्ता है तो ब्रह्म नित्य है तैसें ही जगत् की वी परमार्थ सत्ता है तो जगत् वी नित्य होगा सो अनुभव विरुद्ध है काहेतैं कि जगत् के उत्पत्ति नाश तो प्रत्यक्ष सिद्ध हैं ।। तो हम कहैं हैं कि उत्पत्ति और नाश तो मानणाँ असङ्गत है काहेतैं कि न्यायमतविवेचन मैं जहाँ अनुव्यवसाय का विचार है तहाँ परिशेष मैं उत्पत्ति और नाश इनका खण्डन होगया है उसकूँ स्मरण करिकैं सन्तोष करो ।

ज्यो कहो कि जगत् की नित्यता मैं आचार्यों की सम्मति कहो तो हम कहैं हैं कि श्रीकृष्ण पञ्चदशाध्याय मैं आज्ञा करैं हैं कि

ऊर्ध्वमूलमधश्शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ॥

तो यहाँ जगत्कूँ अव्यय कहा है तो अव्यय नाम नित्य का है और

ऊर्ध्वमूलोऽवाक्शाख एषोऽश्वत्थस्सनातनः ॥

ये कठोपनिषद् की श्रुति है इसमैं संसारवृक्षकूँ सनातन कहा है तो सनातन शब्दका अर्थ ये है कि सदा रहै तो संसार नित्य सिद्ध होगया ज्यो कहो कि संसारजोहै सो प्रवाह रूप करिकैं नित्य है यातैं इसकूँ अव्यय और सनातन कहा है तो हम पूछैं हैं कि प्रवाहरूप करिकैं नित्य इसका अर्थ ये है कि बीजाँकुर न्यायतैं नित्य अथवा कोई इससैं भिन्न ही प्रकार कहो हो तो तुम ये ही कहोगे कि बीजाँकुर न्यायतैं नित्य ये ही प्रवाह रूप करिकैं नित्य इस वाक्यका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि इसका बीज श्रुति परमात्माकूँ कहै है तो परमात्मरूप बीजतैं तो संसाररूप वृक्षकूँ उत्पन्न मानों हो परन्तु संसाररूप वृक्षतैं परमात्मरूप बीज की उत्पत्ति तुम मानों नहीं सो वी मानणीं चाहिये और ये वी तुम अपणें अनुभवतैं समुझो कि बीज और वृक्ष इन दोनूँ की सत्ता समान होय है तो जगत् का बीज है परमात्मा और परमात्मा की परमार्थ सत्ता है तो जगत् की परमार्थ सत्तातैं भिन्न सत्ता कैसें हो सकै यातैं जगत् की परमार्थ सत्ता मानों ज्यो जगत्की परमार्थ सत्ता मानों तो जगत् परमात्मरूप सिद्ध होगया ज्यो जगत् परमात्मरूप सिद्ध हुवा तो ये रज्जुसर्प के दृष्टान्त तैं मिथ्या कैसें जैसें जगत् परमार्थ सत्य है तैसें रज्जुसर्प और स्वप्न पदार्थ वी पर-

मार्थ सत्य हैं ज्यो कहा कि ये परमार्थ सत्य हैं तो इनकी निवृत्ति कैसैं हो जाय है तो हम पूछैं हैं कि अविद्यावादी सारे जगत् कूँ अज्ञानकल्पित मानैं हैं तो आकाशादिक तो निरवयव और अविनाशी कैसैं प्रतीत होयहैं और घटादि पदार्थ चिरस्थायी कैसैं प्रतीत होयँहैं और चातुर्मास्य मैं अनन्त जीव क्षण विनाशी कैसैं प्रतीत होय हैं ॥ ज्यो कहो कि ये अविद्या का महिमा है तो हम कहैं हैं कि ये परमात्मा के स्वरूपभूत अलौकिक ज्ञान का महिमा है कि जिसतैं जिनकूँ तुम रज्जु सर्पादिक कहो हो और प्रातिभासिक मानों हो वे शीघ्र ही निवृत्त होजाय हैं और तुमारे मानैं व्यावहारिक सर्पका जैसैं मरण के अनन्तर शरीर प्रतीत होय है तैसैं रज्जु सर्पका शरीर प्रतीत होवै नहीं और स्वाप्नपदार्थौं कूँ बी तुम प्रातिभासिक मानौं हो और स्वप्न के पुरुषौं का मरण के अनन्तर शरीर प्रतीत होय है और मरुभूमिजल कूँ तुम प्रातिभासिक मानौं हो और भ्रम निवृत्त हो जाय है तो बी तुमकूँ उसकी प्रतीति होती रहैहै ॥

देखो इस विचित्रता कूँ ये तुमारे निज स्वरूप भूत सच्चिदानन्द रूप परमात्मा के ही अलौकिक ज्ञान का महिमा है यातैं ये तुमारा ही महिमा है तुम हीं सच्चिदानन्दरूप परमात्मा हो तुमही तुमारी रचना कूँ देखो हो तुमारा आवरण कोई नहीं कर सकै है तुम हीं सुषुप्ति मैं सर्व पदार्थौं के अभावौं कूँ देखो हो और तुम हीं स्वप्न कूँ देखो हो और तुम हीं जाग्रत् कूँ देखो हो यातैं तुम तुरीय हो तुम हो जैसे के जैसे हो तुमारे सर्व अवस्थावौं के प्रकाश करणैं मैं वृत्तिकी सहायता की अपेक्षा नहीं है तुम तो वृत्ति और वृत्ति जिनकूँ विषय करै है तिनकूँ समरस प्रकाशित करो हो जैसैं सूर्यके प्रकाश मैं सर्व चेष्टा करैं हैं तैसैं तुमारे प्रकाश सैं अनन्त वृत्तियौं का नृत्य होय है ज्यो तुमतैं उत्पन्न भई वृत्तियौं के तथा वृत्तियौं के अभावौं के ही आवरण नहीं तो तुमारे आवरण कैसैं होसकै तुम तो अपणैं तैं आपका प्रकाश करते भये वृत्तियौंकूँ और वृत्तियौं के अभावौं कूँ और वृत्तियौंके विषयौं कूँ प्रकाश देवो हो यातैं तुमारे मैं आवरण का सम्भव त्रिकाल मैं नहीं है ॥

ज्यो कहो कि श्रीकृष्ण सप्तम अध्याय मैं आज्ञा करैं हैं कि

नाहं प्रकाशस्सर्वस्य योगमायासमावृतः ॥

इसका अर्थ ये है कि मैं योगमाया करिकैं आवृत्त हूँ यातैं मेरो प्रकाश सर्व कूँ नहीं होवै है तो इस श्रीकृष्ण के कथन तैं सच्चिदानन्दरूप परमात्मा मैं माया कृत आवरण सिद्ध होय है और माया अविद्या ये पर्याय हैं यातैं परमात्मा मैं अविद्या कृत आवरण सिद्ध होगया तो हम कहैं हैं कि योगमाया शब्द परमात्मा के स्वरूप भूत ज्ञानका वाचक है देखो श्रीधर स्वामी योगमाया शब्द का ये व्याख्यान करैं हैं कि

योगो युक्तिर्मदीयः कोप्यचिन्त्यः प्रज्ञाविला
सः स एव मायाऽघटमानघटनापटीयस्त्वात् ॥

इस का अर्थ ये है कि योग नामहै परमात्माके ज्ञान का सो हीमाया है इस मैं ये हेतु है कि ये ज्ञान अघटमानघटना मैं समर्थहै तो परमात्मा मैं अविद्याकृत आवरण मानणाँ असङ्गत ही है ॥ और अघटमानघटना मैं समर्थ है इसका तात्पर्य ये है कि भित्यादिपदार्थों का आवरण करणैं का स्वभाव है अर्थात् जड पदार्थोंका आवरण करणैंका स्वभाव है ज्ञान का आवरण करणैं का स्वभाव नहीं है ये सर्वानुभव सिद्ध है तथापि मेरे स्वरूप भूत ज्ञान नैं मेरो आवरण कर राख्यो है ये आश्चर्य है यातैं ये ज्ञान हीं माया है यातैं भिन्न कोई विलक्षण माया पदार्थ नहीं है ॥ और दूसरा आश्चर्य ये है कि ज्यो पुरुष किसी पदार्थ करिकैं आवृत्त होय है वो पुरुष अन्य कूँ नहीं देख सकै है और अन्य पुरुष उसकूँ नहीं देख सकै है और मेरे स्वरूप भूत ज्ञान की ये विचित्रता है कि मैं सर्वकूँ जाणूँ हूँ और मेरेकूँ कोई बी नहीं जाणैं है ये अभिप्राय श्री कृष्ण का है यातैं हीं इस के उत्तर श्लोक मैं भगवान् नैं आज्ञा किई है कि

वेदाहं समतीतानि वर्त्तमानानि चार्जुन
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥

इस का अर्थ ये है कि मैं भूत भविष्यत् वर्त्तमान जे हैं तिन कूँ जाणूँ हूँ और मेरे कूँ कोई नही जाणैं है यातैं हीं श्रीधर स्वामी नैं योगमाया शब्द का पूर्वोक्त व्याख्यान किया है यातैं परमात्मा के स्वरूपभूत ज्ञान तैं विलक्षण माया पदार्थ नहीं है।

और देखो कि इस सप्तम अध्याय मैं हीं भगवान् नैं ऐसैं आज्ञा किई है कि

वहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥

इसका अर्थ ये है कि वहुत जन्मोँ के अन्त मैँ ज्ञानवान् हो करिकैँ मोकूँ प्राप्त होय है सर्व वासुदेव है ऐसैँ जाणैँवे वालो पुरुष दुर्लभ है यातैँ सर्व जगत की एक परमार्थ सत्ता ही मानणीँ ये ही उत्तम सिद्धान्त है ऐसे निश्चय मैँ ये अनुगुण वी है कि कदाचित्

वासुदेवः सर्वम् ॥

ये अपरोक्ष दृढ न होय तौ वी मुक्ति मैँ सन्देह नहीँ है काहेतैँ कि अष्टमाध्याय मैँ श्री कृष्ण ऐसैँ आज्ञा करैँ हैँ कि

यं यं वापिस्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्
तंतमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

इस का अर्थ ये है कि अन्त काल मैँ जिसका स्मरण करता हुवा शरीर कूँ छोडै है उसकी भावना करिकैँ उस कूँ हीँ प्राप्त होय है और द्वादशाध्याय मैँ भगवान् आज्ञा करैँ हैँ कि

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ १ ॥
तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात्
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥२॥

इन श्लोकौंका अर्थ ये है कि जे पुरुष सर्व कर्मौंका मेरे मैँ सन्यास करिकैँ अर्थात् मेरे मैँ अर्पण करिकैँ और मेरे मैँ तत्पर हो करिकैँ अनन्य योग करिकैँ मेरो ध्यान करते हुये मेरी उपासना करैँ हैँ १ तिनकूँ मृत्यु संसार सागर तैँ मैँ उद्धार करूँ हूँ थोडे ही काल मैँ काहेतैँ कि उन नैँ मेरे मैँ चित्त लगाय राख्यो है २ यहाँ अनन्य योग शब्द को व्याख्यान शंकर स्वामी ये करैँ हैँ कि

अविद्यमानमन्यदालम्बनं विश्वरूपं देवमात्मानं

मुन्त्का यस्य सोऽनन्यस्तेनाऽनन्येन केवलेन योगेन समाधिना ॥

इस का अर्थ ये है कि नहीं विद्यमान है अन्य आलम्बन विश्वरूप देव आत्माकूँ त्याग करिकैं जिसकै ऐसा ज्यो योग सेः अनन्य योग है ये अनन्य योग केवल समाधि है अर्थात् परमात्मसमाधिहै ॥ अजी देखो सर्व ये मिथ्या है ऐसी दृष्टि तैं मुक्ति प्राप्त होय है ये कहीँ वी आचार्यों नैं आज्ञा की नहीँ तो वी जगत् कूँ अविद्यामूलक बतावैँ हैँ इसमैं अविद्यावादियोंका कहा तात्पर्य है ये तुम हीं विचार करिकैं कहो

ज्यो कहो कि ज्ञान के साधनोंमैं वैराग्य वी गणाया है और वैराग्यकी कारण है दोषदृष्टि सो जगत् मैं मिथ्यात्व के प्रतिपादनके विना वणँ सकै नहीँ यातैं शिष्यों के ऊपर अनुग्रह करणेंके अर्थ दयालु जे आचार्य तिन नैं जगत् परमात्मरूप है तो वी अविद्याकी कल्पना करिकैं और उस अलीक कल्पित अविद्या करिकैं रचित बताया है काहेतैं कि पुरुष जिस कूँ मिथ्या कल्पित मानि लेवै है उसकी इच्छा करै नहीँ जैसैं मरुस्थल के जलकूँ मिथ्या मानवें वालो पुरुष उस जलकी इच्छा करै नहीँ यातैं शिष्यकूँ ये लाभ होय है कि वैराग्य के बलतैं भोग्य दृष्टि निवृत्त हो करिकैं शिष्य की बुद्धि अन्तर्मुख हो जाय है वा बुद्धि तैं ज्यो आपनैं पूर्व मृत्पिण्डस्थानीय मूल उपादान शुद्ध चिद्रूप आत्माका वर्णन किया है उसका साक्षात्कार करिकैं जीवन्मुक्ति का आनन्द प्राप्त होय है ॥ ज्यो कहो कि आचार्यों का ये अभिप्राय है इसका निर्णय तुमनैं कैसैं किया तो हम कहैं हैं कि आचार्यों नैं ऐसैं लिखा है कि अधिष्ठान के ज्ञान तैं कल्पित पदार्थ का त्रैकालिक अभाव होय है तो आचार्यों कूँ सर्वाधिष्ठान सच्चिदानन्द रूप परमात्माका साक्षात्कार रहा है ये तो आप कै वी अभिमत है काहे तैं कि आप वी उनके वचनोंकूँ प्रमाण मानौं हो अब आप ही विचार करो जिन पुरुषोंकूँ जिस वस्तु के त्रैकालिक अभावका भान होवे है वे पुरुष उस वस्तुकूँ कैसैं मानसकैं यातैं शिष्योंके ऊपर अनुग्रहके अर्थ ही अलीक अविद्याकूँ कल्पित करिकैं उस करिकैं कल्पित जगत् कूँ बताय करिकैं मिथ्या कहि करिकैं शिष्योंकूँ वैराग्य करावैं हैं ॥

ज्यो कहो कि जिस समय मैं उन आचार्यों कूँ अज्ञान रहा उस स-मय मैं वो अज्ञान अलीक कैसैं होगा तो हम कहैंहैं कि उनके गुरून नैं अलीक अज्ञान कल्पित किया है ऐसैं मानों ऐसैं परम्परा गुरु जे हैं तिनमैं मूल गुरु परमात्मा है और वेद उसका उपदेश है तो वेद मैं अविद्याका वर्णन है अब अविद्याकूँ अलीक नहीं मानैं तो वेद अज्ञानीका किया हुवा उपदेश सिद्ध होगा ज्यो ये उपदेश अज्ञानीका किया सिद्ध हुवा तो प्रलाप वाक्य होगा ज्यो प्रलाप वाक्य होगा तो इससैं आत्मविद्याके लाभका असम्भव होणैं तैं ब्रह्मविद्याकी सम्प्रदायका उच्छेद होगा यातैं अविद्या अलीक ही कल्पित है ॥

ज्यो कहो कि अलीक अविद्या प्रथम तो कल्पित करणीं और पीछैं इसकूँ निवृत्तकरणीं इस मैं आचार्योंका अभिप्राय कहा है देखो ये शि-ष्ट पुरुषों का वाक्य है कि

प्रक्षालनाद्धि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम् ॥

इस का अर्थ ये है कि कर्दमकूँ स्पर्श करिकैं प्रक्षालन करै इसकी अपेक्षा कर्दमका स्पर्श ही नहीं करै ये उत्तम है तो हम कहैं हैं कि जैसैं भार कूँ धारण करकैं निवृत्त करणैं तैं पुरुषके अपणाँ आनन्द अभिव्यक्त होय है तैसैं सदा भार रहित पुरुष कै आनन्द अभिव्यक्त होवै नहीं ये सर्व कै अ-नुभव सिद्ध है यातैं दयालु आचार्यों नैं जगत् कूँ अज्ञानकल्पित बता करि-कैं मिथ्या कहा है ॥ और उनकी दृष्टि तो ब्रह्ममय ही है देखो आप उन का ये वाक्य है कि

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मनि यत्र
यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः ॥ १ ॥

इसका अर्थ ये है कि देहाभिमान निवृत्त हो करिकैं जब परमात्मज्ञान हो जावै तब जहाँ जहाँ मन जाय है तहाँ तहाँ समाधि होय है अर्थात् परमात्मभिन्न दृष्टि उनकी नहीं होयहै ।

तो हम कहैंहैं कि जगत् मैं मिथ्यात्व की भावना कराणैं तैं जैसैं वैराग्य होय है तैसैं परमात्म दृष्टि कराणैं तैं बी वैराग्य होयहै यातैं हीं जिन उपासकोंकी सर्वमैं परमात्मदृष्टि है वे अत्यन्त विरक्त होय हैं काहे-

तैं कि विरक्ति मैं भोग्याभाव बुद्धि कारण है सो जैसैं मिथ्यात्व बुद्धि तैं होय है तैसैं सर्वात्मभाव तैं बी होय है देखो ऐसे उपासकौं के अर्थ भगवान्नैं नवम अध्याय मैं प्रतिज्ञा किई है कि

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥ १॥

इसका अर्थ ये है कि सर्व मैं मेरे भाव करिकैं उपासना करैं हैं उनका योग क्षेम मैं करूँ हूँ १ अलब्धका लाभ योग है और लब्धकी रक्षा ज्यो है सो क्षेम है और ये भगवान्नैं कहीं आज्ञा नहीं किई है कि सर्व मैं मिथ्यात्व दृष्टि करवें वालेको मैं योगक्षेम करूँ हूँ यातैं वैराग्यके अर्थ बी सर्वात्मदृष्टि ही कर्त्तव्य है।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुमनैं ज्यो रज्जुसर्पकूँ भ्रमकल्पितकहा और उसके दृष्टान्ततैं जगत् कूँ आत्मा मैं कल्पित बताया तहाँ दृष्टान्त दार्ष्टान्तका साम्य कहा नहीं सो कहो परन्तु प्रथम ये कहो कि जब वृत्ति विषय देश मैं गई और तिमिरादिदोषतैं रज्जुसमानाकार भई नहीं अर्थात् रज्जुके सामान्य अंशके आकार कूँ तो प्राप्त भई और रज्जुके विशेष अंश के समानाकार भई नहीं तब रज्जु चेतनाश्रित अविद्यामैं तथा साक्षि चेतनाश्रितअविद्या मैं क्षोभ होकरिकैं अथवा इदन्नाकार वृत्ति मैं स्थित अविद्या मैं क्षोभ हो करिकै उस उस अविद्याका तमोंश तथा सत्वांश सर्पाकार और ज्ञानाकार परिणामकूँ समकाल मैं प्राप्त होय है और रज्जुका विशेष रूप करिकैं अज्ञान अविद्या मैं क्षोभ द्वारा दोनूँकी उत्पत्ति मैं निमित्त है और रज्जुका विशेषरूप करिकैं ज्ञान दोनूँकी निवृत्ति मैं निमित्त है ऐसैं मानि करिकैं सर्प और सर्पके ज्ञानकूँ तुमनैं भ्रम कहाहै और रज्जुका ज्यो विशेषरूप करिकैं ज्ञान ता करिकैं सर्प और ज्ञान इन दोनूँकी निवृत्ति कही है परन्तु रज्जुसर्प मैं ज्यो इदन्ता प्रतीत होय है सो सर्पकी तरैं कल्पित है अथवा नहीं ये तुमनैं पूर्व कही नहीं सो कहो।

ज्यो कहो कि रज्जुसर्प मैं इदन्ता कल्पित नहीं है किन्तु रज्जुकी ही इदन्ता सर्प मैं प्रतीत होय है और सर्पके विषैं अनिर्वचनीय इदन्ता रज्जुकी इदन्ता के समान जातीय उत्पन्न होवे नहीं काहेतैं कि विचारसागर के षष्ठ तरङ्ग मैं ऐसैं लिखा है कि जहाँ ज्ञेय पदार्थ समीप देशस्थहोवै

तहाँ भ्रमस्थल मैं अन्यथाख्याति माननी और तहाँ अनिर्वचनीयख्याति नहीं माननी चाहिये ॥ ज्यो कहो कि अनिर्वचनीयख्याति नहीं मानोंगे और इस स्थल मैं अन्यथाख्याति मानोंगे तो तुमारे सिद्धान्त मैं हानि होगी काहेतैं कि तुमारे मत मैं अन्यथाख्याति नहीं मानी है इसकूँ तो न्यायके मत वाले मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ऐसे स्थल मैं हमारे मतमैं अन्यथाख्यातिका ही अङ्गीकार है परन्तु पूर्व जे दो प्रकारकी अन्यथाख्याति कही हैं एक तो अन्यदेशस्थित पदार्थकी अन्य देश मैं प्रतीति ये अन्यथाख्याति है और दूसरी अन्यथाख्याति ये है कि अन्यकी अन्यरूपतैं प्रतीति इनमैं प्रथम अन्यथाख्यातिकूँ तो हम नहीं मानैं हैं और दूसरी अन्यथाख्यातिकूँ हम मानैं हैं काहेतैं कि सम्मुखमैं पदार्थ तो शुक्ति है और रजतका ज्ञान होय है तहाँ तो हम दोनूँहीं अन्यथाख्याति मानैं नहीं किन्तु अनिर्वचनीयख्याति ही मानैं है इसमैं कारण ये है कि नहीं होय उसकी भी प्रतीति होय तो वन्ध्यापुत्रकी वी प्रतीति होणीं चाहिये परन्तु जहाँ सम्मुख देश मैं दोय पदार्थ होयँ तिनमैं एक पदार्थ मैं अन्यपदार्थका धर्म प्रतीत होय तहाँ अन्यथाख्यातिका अङ्गीकार है जैसैं स्फटि मैं जपापुष्पके सन्निधान मैं रक्तताकी प्रतीति होय है तहाँ स्फटिक मैं अनिर्वचनीय रक्तता उत्पन्न होवै नहीं किन्तु जपापुष्पकी ही रक्तता स्फटिक मैं प्रतीत होय है तो अन्यका अन्यरूप करिकैं भान है यातैं अन्यथाख्याति है परन्तु स्फटिक मैं जहाँ जपापुष्पका सम्बन्ध होय तहाँ पुष्पकी रक्तताका भान स्फटिक मैं होय है इसमैं कारण ये है कि जहाँ अन्तःकरणकी वृत्ति रक्तपुष्पाकार होय है तहाँ हीं वृत्तिका विषय रक्तपुष्पसम्बन्धी स्फटिक है यातैं पुष्पकी रक्तताकी स्फटिक मैं प्रतीति होय है ॥ ऐसैं ही जहाँ रज्जुमैं सर्प भ्रम होय है तहाँ तो अन्यथाख्याति सम्भवै नहीं काहेतैं कि भिन्न देशस्थित होणें तैं रज्जुका सर्प सैं सम्बन्ध नहीं है और ज्ञेयके अनुसार ही ज्ञान होय है ये नियम है तो ज्ञेय तो रज्जु और ज्ञान सर्पका ये कथन विरुद्ध है यातैं रज्जु देश मैं अनिर्वचनीय सर्प उत्पन्न होय है ऐसैं मानणाँ उचित है ॥ और रज्जु सर्प मैं इदन्ता प्रतीत होय है सो अनिर्वचनीय नहीं है काहेतैं कि रज्जु और अनिर्वचनीय सर्प ये दोनूँ एक देश मैं स्थितहैं यातैं रज्जुकी ही इदन्ता सर्प मैं प्रतीत होय है ऐसैं मानणें मैं कारण ये है कि परमात्मसत्ता सर्व पदार्थों मैं प्रतीत होय है तो स्वप्नपदार्थों मैं भी प्रतीत होय है

अब उस सत्ताकूँ स्वप्नके पदार्थोंकी तरँहँ अनिर्वचनीय तो मानसकैं नहीँ काहेतैं कि सत्ता परमात्मरूपा है इसकूँ स्वप्नपदार्थोंँ की तरँहँ अनिर्वचनीय मानणैं मैं सत्य ज्यो है सो मिथ्या है ऐसैं मानणाँ होगा सो विरुद्ध है यातैं ऐसैं मानैं हैं कि परमात्मरूप ज्यो स्वप्नाधिष्टान ताकी सत्ता ही स्वाप्नपदार्थोंँ मैं प्रतीत होय है ऐसैं विचारसागर के षष्ट तरङ्ग मैं लेख है यातैं रज्जु की इदन्ता ही अनिर्वचनीय सर्प मैं प्रतीत होय है ये अविद्यावादियोंका मत है ॥

तो हम पूछैं हैं कि रज्जुकी ज्यो इदन्ता सो अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी विषय है अथवा सर्पविषयक ज्यो अविद्यावृत्ति ताकी विषय है तो तुम ये ही कहोगे कि अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी ही विषय है काहेतैं कि रज्जुकी इदन्ता व्यावहारिक है व्यावहारिक और प्राति भासिक जे पदार्थ तिनका येही भेद है कि व्यावहारिक पदार्थ तो अन्तःकरणकी वृत्तिके विषय होय हैं और प्रातिभासिक पदार्थ अविद्याकी वृत्तिके विषय होयहैं और व्यावहारिक पदार्थ तो प्रमातृवेद्य हैं अर्थात् इनका ज्ञाता तो चिदाभास है और प्रातिभासिक पदार्थ साक्षिभास्य हैं अर्थात् इनका ज्ञाता साक्षी है तो हम पूछैं हैं कि रज्जुकूँ देखि करि कैं अर्थात् अल्पान्धकारावृत्त रज्जुदेश मैं अन्तःकरणकी वृत्ति गई और रज्जु के सामान्यांशाकार तो भई और रज्जुके विशेषाकारकूँ प्राप्त भई नहीँ तब ज्यो

अयंसर्पः ॥

अर्थात् ये सर्प है ऐसा भ्रमात्मक ज्ञान होय है ऐसैं तुम मानोहो तहाँ ज्ञान दोय मानों हो अथवा एक ज्ञान मानों हो ज्यो कहो कि दोय ज्ञान मानैं हैं तिनमैं रज्जुके सामान्य अंशकूँ विषय करणैंवाला तो अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञान है और सर्पकूँ विषय करणैंवाला अविद्याकी वृत्ति रूप ज्ञान है तो हम कहैंहैं कि ऐसैं मानणाँ तो असङ्गत है काहेतैं कि तुम हीँ पूर्व ऐसैं कहि आये हो कि ये सर्प है यहाँ ज्ञान एक ही प्रतीत होय है यातैं अख्यातिमतका मानणाँ बी असङ्गत ही है ज्यो कहो कि स्मरणात्मक और प्रत्यक्षात्मक ये दोय ज्ञान

अयंसर्पः ॥

यहाँ नहीं होय है ऐसैं हमारे दोय ज्ञानोंका निषेध अभिमत है और प्रत्यक्षात्मक जे दोय ज्ञान ते तो हमारे अभिमत हैं तो हम पूछैं हैं कि अन्तःकरणकी ज्यो वृत्तिसो इदन्ताकूँ विषय करैगी तो रज्जु मैं विषय करैगी सर्प मैं विषय नहीं करसकैगी काहेतैं कि अनिर्वचनीय सर्प अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताका विषय नहीं है किन्तु अविद्याकी ज्यो वृत्ति ताका विषय है ऐसैं तुम मानों हों अब धर्मीजो प्रातिभासिक सर्प सो अन्तःकरणकी वृत्तिका विषय ही नहीं तो रज्जुकी इदन्ता सर्प मैं कैसैं प्रतीत होय देखो तुमारे दृष्टान्तकूँ स्मरण करो पुष्पकी ज्यो रक्तता तदाकार वृत्ति नैं हीं पुष्पसम्बन्धी स्फटिक कूँ विषय कियाहै·यातैं पुष्पकी रक्तता स्फटिक मैं प्रतीत होय है और यहाँ तो इदमाकार वृत्ति नैं इदंशब्दका अर्थ ज्यो रज्जु उसके सम्बन्धी सर्पकूँ विषय किया नहीं यातैं रज्जुकी इदन्ता सर्प मैं कैसैं प्रतीत होवै सो कहो १ और

अयंसर्पः ॥

यहाँ ज्ञान एक ही प्रतीत होय है दोय ज्ञान प्रतीत होवैं नहीं और तुम यहाँ दोय ज्ञान मानों हो तो अनुभव विरोध होय है इस विरोध का परिहार कहा है सो कहो २ और जब रज्जुज्ञान तैं सर्पकी निवृत्ति होय है तहाँ रज्जुका ज्ञाता तुम प्रमाताकूँ मानों हो तो प्रमाताकूँ ज्ञान भयैं साक्षीके ज्ञात ज्यो सर्प ताकी निवृत्ति कैसैं होय सो कहो ज्यो अन्यकूँ रज्जुका ज्ञान भयैं अन्यके भ्रमकी निवृत्ति होय तो हमारेकूँ ज्ञान भयैं तुमारेकूँ वी भ्रमकी निवृत्ति होणीं चाहिये ३ और ज्यो सर्प प्रमाताके ज्ञानका विषय नहीं है और साक्षीका विषय है तो प्रमाताकूँ भय नहीं होणाँ चाहिये किन्तु साक्षीकूँ भय होणाँ चाहिये सो साक्षी कूँ भय होवै नहीं ये तुम वी मानों हो ४ और जैसैं व्यावहारिक सर्पका ज्ञान परमाताकूँ होवै है उस समय मैं ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय रूपा ज्यो त्रिपुटी ताकूँ साक्षी प्रकाश करता हुवा स्वप्रकाशता करिकैं प्रकाश करै है तैसैं हीं प्रातिभासिक सर्पका जब ज्ञान होवै है तब वी साक्षी त्रिपुटीका ही प्रकाशक प्रतीत होय है ये तुमहीं रज्जु सर्प भ्रम होय तब अनुभव तैं देखिलेवो अब ज्यो यहाँ दोय ज्ञान मानोंगे और उनके विषय दोय मानोंगे तो च्यार तो ये भये और एक प्रमाता है ऐसैं पाँचकूँ साक्षी प्रकाश करैहै ऐसैं अवश्य मानणाँ पड़ैगा तो साक्षी पञ्चपुटी का प्रकाशक मानणाँ पड़ैगा सो हमनैं तो आज पर्यन्त ऐसा लेख कोई ग्रन्थ मैं देखा नहीं ज्यो

समुझी में कोई ग्रन्थ में देखा होय और लिखा होय तो तुम ही कहो ५

जो कहो कि प्रमाताकूँ जब अन्धकारावृत रज्जु में इदन्ताका ज्ञान हुवा उस समय में इदन्ताकार वृत्त्युपहित साक्षी की बी विषयता इदन्ता में है तो जैसें रज्जुकी इदन्ता प्रमाताकी विषय भई तैसें साक्षीकी बी विषय भई अब जब अनिर्वचनीय सर्प और उस कूँ विषय करणें वाला ज्ञान ये समकाल में उत्पन्न भये उसकाल में वो ही साक्षी सर्प और ज्ञान दोनोंका प्रकाश करै है यातें रज्जुकी इदन्ता सर्प में प्रतीत होय है जैसें प्रमाताकी विषय पुष्पकी रक्तता स्फटिक में प्रतीत होय है ऐसें इदन्ता और सर्प एकचिद्विषय होणें तें अन्यथाख्याति है इस प्रकार तें अन्यथाख्याति मानणें में स्फटिक में बी रक्तताकी अन्यथाख्याति बण जायगी काहेतें कि एक प्रमातृरूप जो चित् तिसकी विषयता रक्तता और स्फटिक दोनूँ में है ऐसें तो प्रथम प्रश्नका समाधान हुवा १ और द्वितीय प्रश्नका समाधान ये है कि ज्ञान में स्वरूपतें तो भेद है नहीं किन्तु विषय भेदतें भेद है तो यहाँ विषय हैं दोय एक तो रज्जु की इदन्ता है और दूसरा प्रातिभासिक सर्प है ये दोनूँ साक्षीरूप जो ज्ञान ताके विषय हैं यातें हमनें आरोपबुद्धितें ज्ञान दोय कहे हैं और वस्तुगत्या साक्षीरूप ज्ञान एक ही है यातें एक ही ज्ञान प्रतीत होय है २ और तृतीय प्रश्नका समाधान ये है कि यद्यपि आवरण भङ्ग होय करिकें रज्जुका विशेष रूप करिकें ज्ञान प्रमाताकूँ हुवा है तथापि साक्षी त्रिपुटीका प्रकाशक है यातें साक्षीका बी विषय रज्जु है तो जैसें रज्जुका ज्ञान प्रमाताकूँ हुवा तैसें साक्षीकूँ बी हुवा यातें अन्यकूँ ज्ञान भयें अन्य के भ्रमकी निवृत्ति नहीं भई किन्तु जिसकूँ ज्ञान हुवा उसके ही भ्रमकी निवृत्ति भई इस कारण तें अन्यकूँ ज्ञान भयें अन्यके भ्रमकी निवृत्ति की आपत्ति नहीं है ३ और चतुर्थ प्रश्नका समाधान ये है कि यद्यपि सर्प प्रमाताके ज्ञानका विषय नहीं है साक्षीका ही विषय है तथापि अन्तःकरणकी उपादानभूत जो अविद्या ताका परिणाम सर्प और ताका ज्ञान है और अन्तःकरण बी उसही अविद्याका परिणाम है तो उपादान तें भिन्न कार्य होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है जैसें घटकी उपादान मृत्तिका है तो घट जो है सो मृत्तिका ही है तैसें अन्तःकरण और सर्पज्ञान ये बी अविद्याके परिणाम

हैं तो अविद्या इनकी उपादान भई ज्यो अविद्या इनकी उपादान भई तो ये अविद्यारूप भये ज्यो ये अविद्यारूप भये तो अन्तःकरणकी वृत्ति ज्यो है तिसका उपादान अन्तःकरण है तो अविद्या ही वृत्तिकी उपादान भई तो अविद्याकी वृत्तिका विषय सर्प है तो अन्तःकरणकी वृत्तिका ही विषय सर्प हुवा यातैं प्रमाताकूँ भय होय है ४ ओर पञ्चम प्रश्नका उत्तर ये है कि अविद्याकी सर्पकूँ विषय करणे वाली ज्यो वृत्ति सो तो सूक्ष्म है यातैं प्रतीत होवै नहीं ओर रज्जुकी इदन्ता पूर्वोक्त प्रकार करिकैं सर्पका धर्म प्रतीत होय है यातैं इस स्थलमैं साक्षी पञ्चपुटीप्रकाशक है तोबी त्रिपुटीप्रकाशकतातैं हीं प्रकाशै है ५

ये उत्तर मैंनैं मेरे अनुभवतैं किये हैं इस विषयमैं मैंनैं विचारसागर मैं तथा वृत्तिप्रभाकरमैं कुछ बी लेख देखा नहीं है ॥ तो हम कहैं हैं कि तुमारे सर्व उत्तर अशुद्ध हैं देखो तुमनैं इदन्ता ओर अनिर्वचनीय सर्प इनकूँ एकचिद्विषय मानि करिकैं प्रथम प्रश्नका उत्तर कहा है तहाँ तो हम ये पूछैं हैं कि एक चिद्रूप ज्यो साक्षी सो ज्यो विषयका प्रकाश करै है सो वृत्तिकी सहायतासैं प्रकाश करै है अथवा वृत्तिकी सहायता विना प्रकाश करै है ज्यो कहो कि वृत्तिकी सहायतासैं प्रकाश करै है तो हम पूछैं हैं कि साक्षी जिस वृत्ति की सहायतासैं जिस विषयका प्रकाशक होय है उस ही वृत्तिकी सहायतासैं उस विषयतैं अन्य विषयका बी प्रकाशक होय है अथवा नहीं ज्यो कहो कि अन्य विषयका बो प्रकाशक होय है तो हम कहैं हैं कि जैसैं साक्षी अविद्याकी वृत्तितैं सर्पका प्रकाश करता हुवा इदन्ताका प्रकाशक है ऐसैं मानि करिकैं तुम अन्यथाख्याति बणावोगे तैसैं जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति बी मानणीं पडैगी काहेतैं कि जैसैं सर्पतैं भिन्न इदन्ता है तैसैं अन्य सारे पदार्थ सर्पतैं भिन्न हैं तो उनका प्रकाशक बी जीव साक्षीकूँ मानणाँ हीं पडैगा ऐसैं जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति होगी ॥ ज्यो कहो कि ऐसैं मानणैं मैं आपत्ति है तो ऐसैं मानैंगे कि साक्षी जिस वृत्ति सैं जिस विषयका प्रकाशक होय है उस वृत्तिसैं अन्य विषयका प्रकाशक होवै नहीं यातैं जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति नहीं है तो हम कहैं हैं कि इदन्ता ज्यो है सो अविद्याकी वृत्ति करिकैं सर्पका प्रकाशक ज्यो साक्षी ताकी विषय नहीं होगी तो सर्प मैं इदन्ताकी प्रतीति असिद्ध होगी तो अन्यथाख्यातिका मानणाँ असङ्गत

हुआ ।। ज्यो कहो कि साक्षी वृत्तिकी सहायता विना हीं विषय का प्रकाश करै है तो हम कहैं हैं कि शुद्ध चिद्रूप ज्यो आत्मा तामैं साक्षि भाव ज्यो है सो वृत्ति दृष्टितैं कल्पित है और वृत्तिनिरपेक्ष ज्यो आत्मा तामैं साक्षिभाव नहीं है यातैं वृत्ति की सहायता विना साक्षीकूँ विषयका प्रकाशक मानणाँ असङ्गत है ।। ओर ज्यो प्रौढिवादतैं वृत्तिनिरपेक्ष शुद्धात्माकूँ विषयका प्रकाशक मानि लेवो तो वृत्ति निरपेक्ष शुद्धात्मा हीं ब्रह्म है सो ब्रह्म समस्त ब्रह्माण्डका प्रकाशक है तो ये ब्रह्मरूप शुद्धात्मा जैसैं रज्जुकी इदन्ताकूँ विषय करता हुवा रज्जुसर्पकूँ विषय करैगा यातैं अन्यथाख्याति सिद्ध होगी तैसैं हम ऐसैं कहैंगे कि ये ब्रह्मरूप शुद्धात्मा वल्मीकादि स्थान मैं स्थित ज्यो सर्प ताकूँ विषय करता हुवा रज्जुकूँ विषय करै है यातैं रज्जु सर्प भ्रमस्थल मैं वी अन्यथाख्याति ही मानों अनिर्वचनीय ख्यातिका उच्छेद ही होगा ।। ज्यो कहो कि रज्जु ओर सर्प एक देशस्थ नहीं यातैं रज्जु सर्पस्थल मैं अन्यथाख्याति सम्भवै नहीं तो हम पूछैं हैं कि जहाँ एक देशस्थित दोय पदार्थ प्रतीयमान होय हैं सो वी एक के विषय होय हैं तहाँ अन्यथाख्याति मानों हो अथवा भिन्न विषय होय हैं तहाँ वी अन्यथाख्याति मानों हो तो तुम ये ही कहोगे कि एक के विषय होय हैं तहाँ हीं अन्यथाख्याति होय है काहेतैं कि स्फटिक मैं रक्तताकी प्रतीति होय है तहाँ पुष्पकी रक्तता ओर स्फटिक एक वृत्ति विषय होय हैं यातैं हीं स्फटिक मैं रक्तताकी अन्यथाख्याति है तो हम पूछैं हैं कि जहाँ जपा पुष्पसम्बन्धी पाषाण है तहाँ पाषाण मैं रक्तताकी प्रतीति होवै नहीं इसमैं कारण कहा है सो कहो तो तुम ये कहोगे कि पाषाण मलिन है यातैं पाषाण मैं पुष्पकी छाया होवै नहीं तो हम कहैंहैं कि अन्यथाख्यातिके मानणैं मैं छाया वी निमित्त सिद्ध भई अब हम पूछैं हैं कि शुद्ध वस्तु मैं छाया होय है ये तो तुमारै अनुभव सिद्ध है तो जहाँ पुष्पका सम्बन्ध तो स्फटिक सैं नहीं है ओर पुष्पकी छाया स्फटिक मैं है तहाँ पुष्प ओर स्फटिक एक देशस्थ नहीं हैं तो वी रक्तताकी प्रतीति स्फटिक मैं होय है यातैं एक देशस्थत्व ज्यो है सो अन्यथाख्याति मैं निमित्त नहीं है किन्तु छाया ज्यो है सो ही निमित्त है ऐसैं मानणाँ हीं पडैगा तो जहाँ रज्जु सर्प भ्रम होय है तहाँ वी रज्जु ओर सर्प ये दोनूं एक देशस्थ नहीं हैं तो वी जैसैं स्फटिक मैं रक्तताकी छाया है

तैसैं रज्जुमैं सर्पका सादृश्य है यातैं अन्यथाख्याति ही मानौं अनिर्वच-
नीय सर्पकी उत्पत्ति मानणैं मैं गौरव दोष है इस कारणतैं अनिर्वचनीय-
ख्यातिका उच्छेद ही होगा सो तुमारै अभिमत नहीं है ऐसैं तो प्रथम प्रश्न
का समाधान असङ्गत है १ ओर द्वितीय प्रश्नका उत्तर तुमनैं ये कहा है
कि आरोपबुद्धितैं दोय ज्ञान कहे हैं ओर वस्तुगत्या साक्षिरूप ज्ञान एक
है यातैं ज्ञान एक ही प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि जैसैं ये रज्जु है
इस ज्ञानकूँ तुम अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति तद्रूप ज्ञान मानौं हो ओर
इसकूँ साक्षिभास्य मानौं हो काहेतैं कि ये वृत्तिरूप ज्ञान घटकी तरँहैं स्पष्ट
प्रतीत है तैसैं हीं ये सर्प है ये ज्ञान वी अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी
तरँहैं साक्षीका विषय हो करिकैं प्रतीत होय है यातैं इसकूँ साक्षिरूप
मानणाँ अनुभव विरुद्ध ही है ॥ ओर ज्यो प्रौढिवादतैं इसकूँ हीं साक्षि
रूप ज्ञान मानोंगे तो वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान ताका उच्छेद ही होगा काहेतैं
कि विषय भेदतैं हीं ज्ञानमैं भेद सिद्ध होजायगा तो वृत्तिज्ञान मानणाँ
व्यर्थ ही है यातैं द्वितीय प्रश्नका समाधान वी असङ्गत ही है २ ओर तृ-
तीय प्रश्नका समाधान तुमनैं ये कहा है कि जैसैं रज्जु ज्यो है सो विशेष
रूप करिकैं प्रमाताका विषय है तैसैं साक्षीका वी विषय है यातैं अन्य
के ज्ञानतैं अन्यके भ्रमकी निवृत्तिकी आपत्ति नहीं है तो हम पूछैं हैं
कि उपाधि भेदतैं तुम उपहितमैं भेद मानौं हो अथवा नहीं जो कहो
कि उपाधिभेदतैं उपहित मैं भेद मानैं हैं काहेतैं कि विचारसागर के द्वि-
तीय तरङ्गमैं लिखा है कि अन्तःकरणरूप उपाधियोंके भेदसैं जीव
साक्षी नाना हैं यातैं अन्य के सुखदुःखोंका अन्यकूँ भान होवै नहीं ओर
वो साक्षी ज्यो सुखदुःखोंकूँ प्रकाशै है सो वी वृत्तिकी सहायतासैं हीं
प्रकाशै है यातैं जब अन्तःकरण मैं सुख दुःख पैदा होय हैं उस काल मैं
अन्तःकरण की सुखाकार दुःखाकार वृत्ति होय हैं उन वृत्तियोंसैं साक्षी सुख
दुःखोंका प्रकाश करै है ॥ तो हम कहैंहैं कि उपाधिभेदतैं उपहितमैं भेद है
तो अन्यके ज्ञानतैं अन्यके भ्रमकी निवृत्तिकी आपति दूर होवै ही नहीं
काहेतैंकि अन्तःकरण वृत्त्युपहित साक्षीकूँ तो विशेषरूप करिकैं रज्जुका ज्ञान
होगा ओर अविद्यावृत्त्युपहित साक्षीका भ्रम निवृत्त होगा उपाधि भेद तैं
साक्षी मैं भेद है ये तुमारे कथन तैं सिद्ध है यातैं तृतीय प्रश्णका उत्तर वी
असङ्गत ही है ३ ओर चतुर्थ प्रश्ण के समाधान मैं तुमनैं ऐसैं कही है कि

उपादान कारण एक अविद्या है यातैं अन्तःकरणकी वृत्ति और अविद्या की वृत्ति एक ही है तो सर्प अविद्याकी वृत्तिका विषय है तो अन्तःकरण की वृत्तिका ही विषय है यातैं प्रमाताकूं भय होय है तो हम कहैं हैं कि तुमारे कहे प्रकार करिकैं तो सर्व जीवोंके अन्तःकरणोंकी वृत्ति सर्पविषयकवृत्ति सैं अभिन्न हैं यातैं सर्व जीवों कूं भय होणाँ चाहिये सो होवै नहीं इस हेतु तैं चतुर्थ प्रश्नका उत्तर वी असङ्गत ही है ४ और पञ्चम प्रश्नका उत्तर तुमनैं ये कहा है कि सर्पकूं विषय करणैं वाली अविद्याकी वृत्ति तो अति सूक्ष्म है यातैं प्रतीत होवै नहीं और पूर्वोक्त प्रकार करिकैं रज्जुकी इदन्ता ज्यो है सो सर्पका धर्म प्रतीति होय है यातैं साक्षी पञ्चपुटीका प्रकाशक है तो वी त्रिपुटी प्रकाशक ही प्रतीत होय है तो हम पूछैं हैं अविद्याकी वृत्तिमैंजरो सूक्ष्मता है सो किम्प्रयुक्त है ज्यो कहो कि अविद्या अति सूक्ष्म है सो इस वृत्तिकी उपादान कारण है यातैं ये वृत्ति अतिसूक्ष्म है तो हम कहैंहैं कि ये कथन तो तुमारा तुमारे मत तैं ही असङ्गत है काहे तैं कि तुमारे मत मैं सर्व जगत् अज्ञान कल्पित है तो सर्व जगत्की प्रतीति नहीं होणीं चाहिये ।। ज्यो कहो कि साक्षात् अविद्याका कार्य अतिसूक्ष्म होय है जैसैं साक्षात् अविद्याका कार्य है यातैं आकाश जयो है सो अति सूक्ष्म है तैसैं ही सर्प विषयक वृत्ति वी साक्षात् अविद्याकी कार्य है यातैं अति सूक्ष्म है तो हम कहैं हैं कि रज्जु सर्प ज्यो है सो वी तुमारे मत मैं साक्षात् अविद्याका कार्य है यातैं इसका वी प्रत्यक्ष नहीं होणाँ चाहिये ।। अब विचार करो कि तमोगुणका कार्य रज्जु सर्प ही प्रतीत होय है तो वृत्ति ज्यो है सो तो सत्व गुणकी कार्य है इसकी अप्रतीति तो कैसैं हो सके और रज्जुकी ज्यो इदन्ता है उसकी सर्प मैं प्रतीति पूर्वोक्त दोष करिकैं दुर्घट है यातैं पञ्चम प्रश्नका समाधान वी असङ्गत ही है ५

ज्यो कहो कि दोय ज्ञान मानणैं मैं पूर्वोक्त दोष होय हैं तो

अयं सर्पः ॥

यहाँ ज्ञान एक ही मानैंगे तो हम कहैं हैं कि रज्जु की ज्यो इदन्ता उसकी प्रतीति सर्प मैं हो सकै नहीं यातैं सर्प मैं ज्यो इदन्ता है उसकूं रज्जु की इदन्ता तैं भिन्न मानों काहेतैं कि इदन्ता जयो है सो पुरोदेशवर्त्तित्वधर्म तैं विलक्षण नहीं है रज्जु जयो है सो तो पुरोदेश जयो भूतल तद्वृत्ति है और सर्प जयो है सो पुरोदेश जयो रज्जु तद्वृत्ति है यातैं दोनूँकीइ-

दन्ता भिन्न भिन्न हैं अब जयो दोनूं इदन्ता भिन्न भई तो इदन्ताविशिष्ट सर्पकूं विषय करणें वाली जयो वृत्ति सो अविद्याकी वृत्ति नहीं होसके किन्तु अन्तःकरणकी ही वृत्ति होगी काहेतैं कि सर्पदर्शन तैं प्रमाताकूं हीं भय होय है ये अनुभव सिद्ध है अब जनो सर्प विषक वृत्ति अन्तःकरण की वृत्तिरूप भई तो रज्जु जैसैं प्रातिभासिक नहीं है तैसें सर्पवी प्रातिभासिक नहीं होगा जयो सर्प प्रातिभासिक नहीं होगा तो ये अज्ञान कल्पित नहीं होगा तो प्रमाता के दुःखभोग के प्रारब्ध तैं उत्पन्न हुवा मानौं जयो ये प्रारब्धतैं जन्य सिद्ध हुवा तो जैसैं सर्व जगत् परमात्मरचित है तैसें ये सर्प वी परमात्मरचित ही है जयो ये परमात्मरचित हुवा तो इसकूं अज्ञान कल्पित मानणाँ असङ्गत ही है काहे तैं कि शुद्ध सच्चिदानन्दरूप परमात्मा मैं अज्ञानका सम्भव ही नहीं है ये अर्थ पूर्व सिद्ध होगया है ॥ जयो कहो कि ऐसैं रज्जुकी इदन्ताका भान सर्प मैं नहीं मानोंगे ओर सर्प मैं इदन्ता भिन्न ही मानोगे तो इस सर्प मैं तथा स्वाप्नपदार्थों मैं जयो सत्ता प्रतीत होय है उसकूं वी भिन्न ही मानोँ सो आपके अभिमत नहीं है ओर हमारे वी अभिमत नहीं है काहेतैं कि सत्ता ब्रह्मरूपा है तो हम कहैहैं कि सर्प जयोहै सो तो रज्जु रूप नहीं या तैं सर्प मैं जयो इदन्ता है सो रज्जुकी इदन्ता सैं भिन्न है ओर सर्व जगत् जयो है सो तो ब्रह्मरूप श्रुति सिद्ध है यातैं सत्तासैं भेद नहीं है जैसैं घट मैं पृथिवीत्वकी प्रतीति होयहै तो यहाँ अन्यथाख्याति नहीं है तैसैं जहाँ सत्ता प्रतीत होय है तहाँ अन्यथाख्याति नहीं है विचार तो करो घट मैं पृथिवीत्व प्रतीत होय है तो घट पृथ्वी ही है तैसैं सर्व जगत् मैं सत्ता प्रतीत होय है तो सर्व जगत् सद्रूप ही है।

ज्यो कहो कि जैसैं घट पृथ्वीही है यातैं पृथ्वीका धर्म पृथ्वीत्व घट मैं प्रतीत होय है तैसैं सर्प ज्यो है सो वस्तुगत्या रज्जु ही है यातैं रज्जुका इदन्ता धर्म सर्प मैं प्रतीत होय है ऐसैं मानणें मैं यद्यपि हमारी मानीं अन्यथाख्यातिका उच्छेद होयहै तथापि आपनैं ज्यो सर्प मैं रज्जुकी इदन्ता तैं भिन्न इदन्ता मानी है उसका वी उच्छेद ही होगा ॥ ज्यो कहो कि सर्प ज्यो है सो वस्तुगत्या रज्जुरूप है तो रज्जु तैं तो भय होवै नहीं ओर इस सर्पतैं भय कैसैं होय है तो हम पूछै हैं कि रज्जु ज्यो है सो वस्तुगत्या तृणोंतैं भिन्न नहीं है तो भी तृणोंतैं गजका बन्धन होवै नहीं ओर रज्जु तैं

गजका बन्धन कैसें होयहै सो कहो। जो कहो कि तृणोंका विलक्षण संयोग जो है सो तृणोंकी रज्जु अवस्था और रज्जु में गज बन्धन योग्यताका कारण है तो हम कहैं हैं कि रज्जुका विशेषरूप करिकैं अज्ञान अथवा सामान्यरूप करिकैं ज्ञानहीं रज्जुकी सर्प रूप करिकैं प्रतीति और सर्प में भय जनकताका कारण है यहाँ आपही विचार करिकैं देखो रज्जु सर्प तैं भयही होय है और दंशन होय करिकै विषकी प्रवृत्ति नहीं होय है ॥ अब जो यहाँ व्यावहारिक सर्प की तरँह परमात्मरचित सर्प मानोंगे तो जैसें व्यावहारिक परमात्मरचित सर्प दंशन करिकै पुरुषके शरीर में विषकी प्रवृत्ति करै है तैसें इस सर्प सें बी विषकी प्रवृत्ति मानणीं पडैगी सो अनुभव विरुद्ध है ॥ और हम तो इस सर्पकूं रज्जुका ही अवस्थाविशेष मानेंगे यातैं रज्जु में जैसें दंशन करिकैं विष प्रवृत्तिकी योग्यता नहीं है तैसें इस सर्पमें बी विष प्रवृत्तिकी योग्यता नहीं है और तृणोंके विलक्षण संयोग के नाश तैं जैसें तृणोंकी जो रज्जु अवस्था ताकी निवृत्ति होय है तैसें रज्जु का विशेषरूप करिकैं जयो ज्ञान ताकरिकैं रज्जुकी जयो सर्पावस्था ताकी निवृत्ति होय है ऐसें मानेंगे ॥ और आपकूं बी ये व्यवस्था मानणीं हीं पडैगी काहेतैं कि ये व्यवस्था अनुभव विरुद्ध नहीं है तो आपका रज्जु देश में परमात्मरचित सर्प मानणाँ असङ्गत हुवा ॥

जो कहो कि ऐसें मानणें में तुमारी अनिर्वचनीयख्यातिका उच्छेद होगा काहेतैं कि यहाँ अनिर्वचनीय सर्प उत्पन्न नहीं हुवा किन्तु व्यावहारिक रज्जुका ही अवस्था विशेष सर्प सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि हमारी अनिर्वचनीयख्यातिका उच्छेद हुवा तैसें आपका परमात्मरचित सर्प मानणाँ बी तो असङ्गतही हुवा काहेतैं कि ये सर्प तो रज्जुका ही अवस्था विशेष है परमात्मरचित नहीं है ॥

तो हम कहैं हैं कि इस कल्पनातैं तो तुमारी अनिर्वचनीयख्यातिकाही उच्छेद होगा और हमारी मानीं परमात्मरचना असङ्गत नहीं है काहेतैं कि जहाँ रचनाका कर्त्ता पुरुष नहीं होय है तहाँ परमात्मरचना मानीं जाय है देखो तृणोंकी रज्जु अवस्था करणेंवाला तो पुरुष है और रज्जु की सर्प अवस्था करणेंवाला पुरुष नहीं है यातैं रज्जु सर्प परमात्म रचित ही है ॥

जयो कहो कि आपनें पञ्चविध ख्याति में कोई बी ख्याति अङ्गीकार नहीं किये तो यहाँ ख्याति कोनसी मानीं जाय सो कहो तो हम कहैं हैं

कि पूर्व सर्व की एक परमार्थ सत्ता सिद्ध भई है यातैं परमात्मख्याति मानौं ये ही उत्तम सिद्धान्त है ।। और उत्पत्ति तथा नाश ये सिद्ध भये नहीं यातैं परमात्माका ही आविर्भाव और तिरोभाव मानौं जब परमात्मा कोई पदार्थरूप करिकैं आविर्भूत होय तब तो उस पदार्थ मैं उत्पन्न व्यवहार करो और जब उस पदार्थका तिरोभाव होय तब उस पदार्थ मैं नाश व्यवहार करो ।।

अब रज्जु सर्प रूप जयो दृष्टान्त सो तो अज्ञान कल्पित सिद्ध हुवा नहीं तो इसके दृष्टान्त तैं आत्मामैं जगत् अज्ञान कल्पित कैसैं सिद्ध होगा परन्तु तथापि अविद्यावादी दृष्टान्त दार्ष्टान्तका साम्य कैसैं बतावैं हैं सो कहो ।। जयो कहो कि दार्ष्टान्त मैं अविद्यावादी ऐसैं कहैं हैं कि आत्मा जयो है सो सत् चित् आनन्द असङ्ग कूटस्थ नित्यमुक्त है तो जैसैं रज्जुके दोय अंश हैं इदंरूप तो रज्जुका सामान्य अंश है और रज्जु जयो है सो विशेष अंश है जयो भ्रान्तिकाल मैं मिथ्या कल्पित पदार्थ सैं अभिन्न हो करिकैं प्रतीत होवै सो तो सामान्य अंश कहिये है और जिस अंशकी भ्रान्ति काल मैं प्रतीति होवै नहीं सो विशेष अंश कहिये है जैसैं जहाँ रज्जु मैं सर्प भ्रम होय है तो उस भ्रमका आकार यह सर्प है ऐसा है तो यह शब्दका अर्थ इदम्पदार्थ सर्प सैं अभिन्न हो करिकैं भ्रान्तिकाल मैं प्रतीत होय है यातैं ये रज्जुका सामान्य अंश है तैसैं हीं स्थूल सूक्ष्म सङ्घात है ऐसैं स्थूल सूक्ष्मकी भ्रान्ति समय मैं मिथ्या सङ्घात सैं अभिन्न हो करिकैं सत् प्रतीत होय है यातैं आत्माका सत्‌रूप सामान्य अंश है और जैसैं सर्प की भ्रान्ति समय मैं रज्जु के विशेष अंशका प्रत्यक्ष होवै नहीं किन्तु रज्जु की विशेष रूपतैं प्रतीति भयैं सर्प भ्रम दूर होवै है यातैं रज्जु विशेष अंश है तैसैं स्थूल सूक्ष्म सङ्घात की भ्रान्ति समय मैं आत्माका असङ्ग कूटस्थ नित्यमुक्त स्वरूप प्रतीत होवै नहीं किन्तु असङ्गादिरूप आत्माकी प्रतीति भयैं सङ्घातकी भ्रान्ति दूर होवै है यातैं असङ्गता कूटस्थता नित्यमुक्तता इत्यादिक जे हैं ते आत्मा के विशेषरूप हैं जैसैं भ्रान्ति समय मैं सर्पका आश्रय ज्यो रज्जु ताका सामान्य अंश इदंरूप सर्पका आधार है और विशेषरूप अधिष्ठान है तैसैं मिथ्याप्रपञ्चका आश्रय जयो आत्मा ताका सामान्य सत् रूप स्थूल सूक्ष्मका आधार है और असङ्गतादिक विशेषरूप अधिष्ठान है ।। जयो कहो कि सर्पका आधार और अधिष्ठान तो रज्जु है

और रज्जु तैं भिन्न जो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है तैसें आत्मा जगत्का आधार और अधिष्ठान है तो इसतैं भिन्न जगत् का द्रष्टा कौन होगा जैसें सर्पका आधार और अधिष्ठान जो रज्जु सो सर्पका द्रष्टा नहीँ है किन्तु रज्जु तैं भिन्न जो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है तैसें आत्मा तैं भिन्न जगत् का द्रष्टा कौन होगा सो कहो ॥ तो हम कहैं हैं कि मिथ्या वस्तु अधिष्ठानमैं कल्पित होय है सो अधिष्ठान दो प्रकारका होय है एक तो जड़ अधिष्ठान होय है और दूसरा अधिष्ठान चेतन होय है सो जहाँ अधिष्ठान जड़ होय है तहाँ तो द्रष्टा अधिष्ठानतैं भिन्न होय है जैसें सर्पका अधिष्ठान रज्जु है सो जड़ है तो या रज्जु तैं भिन्न जो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है और जहाँ चेतन अधिष्ठान होय है तहाँ अधिष्ठान तैं भिन्न द्रष्टा होवे नहीँ जैसें स्वप्न का अधिष्ठान साक्षि चेतन है सो ही स्वप्नका द्रष्टा है तैसें जगत् का अधिष्ठान आत्मा है सो ही जगत्का द्रष्टा है ये व्यवस्था स्थूल दृष्टि तैं कही है काहेतैं कि सिद्धान्त मैं तो सर्वका अधिष्ठान साक्षी ही है सो ही द्रष्टा है यातैं पूर्वोक्त शङ्का समाधान है ही नहीँ एैसें आत्माके अज्ञानतैं जगत् प्रतीत होय है ॥ जो जाके अज्ञानतैं प्रतीत होय है सो ताके ज्ञानतैं निवृत्त होय है जैसें रज्जु के अज्ञानतैं सर्प प्रतीत होय है सो रज्जु के ज्ञानतैं निवृत्त होय है तैसें आत्माके अज्ञान तैं जगत् प्रतीत होय है सो आत्माके ज्ञानतैं निवृत्त होय है यातैं आत्म ज्ञान सिद्ध करवे योग्य है एैसें विचारसागरके चतुर्थ तरङ्ग मैं दृष्टान्त दार्ष्टान्तका साम्य कह्या है ॥

तो हम कहैं हैं ये विचार और होणाँ चाहिये कि अधिष्ठानका सामान्य रूप करिकैं ज्ञान भ्रमका कारण है अथवा अधिष्ठानका विशेषरूप करिकैं अज्ञान भ्रमका कारण है अथवा अधिष्ठानका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान और विशेषरूप करिकैं अज्ञान ये दोनूँ भ्रमके कारण हैं ॥ जो कहो कि अधिष्ठानका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान भ्रमका कारण है तो हम कहैं हैं अधिष्ठानका विशेषरूप करिकैं ज्ञान भयैं भी भ्रम होणाँ चाहिये काहेतैं कि रज्जुका विशेषरूप करिकैं जो ज्ञान ताका आकार ये है कि ये रज्जु है तो इस ज्ञान मैं ये इतनाँ अंश सामान्य ज्ञान है सो तुमनैं भ्रमका कारण मान्याँ है यातैं तुमकूँ अधिष्ठानका विशेषरूपकरिकैं ज्ञान होय जिस समय मैं भी सर्प भ्रम होणाँ चाहिये सो होवे नहीँ या कारण तैं अधिष्ठानका

सामान्यरूप करिकैं ज्ञान भ्रमका कारण मानणाँ असङ्गत है ॥ ज्यो कहो कि अधिष्ठानका विशेष रूप करिकैं अज्ञान भ्रमका कारण है तो हम कहैं हैं कि जिस समय मैं रज्जु सर्वथा अज्ञात है उस समय मैं वी तुमकूँ सर्प भ्रम होणाँ चाहिये काहेतैं कि उस समय मैं तुमारा मान्याँ हुवा भ्रमका कारण जयो अधिष्ठानका विशेषरूप करिकैं अज्ञान सो मोजूद है यातैं अधिष्ठानका विशेवरूप करिकैं जयो अज्ञान ताकूँ भ्रमका कारण मानणाँ वी असङ्गतहै॥ जयो कहो कि अधिष्ठानका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान ये दोनूँ कारण हैं तो हम पूछैं हैं कि दोनूँ ज्ञात भये कारण हैं अ-थवा ये दोनूँ अज्ञात ही कारण हैं अथवा दोनूँ मैं एक तो ज्ञात हुआ ओर द्वितीय अज्ञात हुवा कारण है ॥ जयो कहो कि ये दोनूँ ज्ञात भये कारण हैं तो हम कहैं हैं कि तुमकूँ सर्प भ्रम होणाँ हीं नहीं चाहिये का-हेतैं कि तुमहीं अनुभवतैं देखो जहाँ तुमकूँ सर्प भ्रम होय है तहाँ रज्जुका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान तो प्रतीत होय है ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान प्रतीत होवै नहीं यातैं दोनूँ ज्ञात हुये कारण हैं ऐसैं मानणाँ असङ्गत है ॥ ज्यो कहो कि दोनूँ अज्ञात ही कारण हैं तो हम कहैं हैं कि जिस समय मैं तुमकूँ रज्जुका सामान्यरूप करिकैं वी ज्ञान नहीं है ओर विशेषरूप करिकैं वी ज्ञान नहीं है उस समय मैं वी तुमकूँ भ्रम होणाँ चाहिये काहेतैं कि उस समय मैं रज्जुका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान ये दोनूँ हीं अज्ञात हैं ॥ जयो कहो कि दोनूँ मैं एक तो ज्ञात ओर द्वितीय अज्ञात हुवा भ्रमके कारण हैं तो हम पूछैं हैं कि सामान्यरूप करिकैं जयो ज्ञान सो तो ज्ञात ओर विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अ-ज्ञात ऐसैं भ्रमका कारण कहो हो अथवा विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञानसो तो ज्ञात ओर सामान्यरूप करिकैं जयो ज्ञान सो अज्ञात ऐसैं भ्रमका कारण कहो हो ॥ जयो कहो कि प्रथम पक्ष कहैं हैं तो हम कहैं हैं कि प्रथम पक्ष मानोगे तो जहाँ रज्जु मैं सर्प भ्रम होय है तहाँ तो भ्रम वर्णं जायगा का-हेतैं कि वहाँ सामान्यज्ञान तो ज्ञात है ओर विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अज्ञात है परन्तु इसके दृष्टान्त तैं जयो तुम आत्मा मैं जगत्कूँ अज्ञान कल्पित वतावो हो सो कैसैं होगा काहेतैं कि आत्माका विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अज्ञात नहीं है काहेतैं कि मैं मोकूँ नित्यमुक्त असङ्ग कू-टस्थ नहीं जानूँ हूँ ऐसी प्रतीति होय है यातैं दृष्टान्तदार्ष्टान्तका साम्य

हुवा नहीं तो आत्मा मैं जगत् अज्ञान कल्पित मानणाँ असङ्गत हुवा ॥ और देखो कि आत्मा मैं जगत् अज्ञान कल्पित होय तो जैसैं रज्जुका विशेषरूप करिकैं ज्ञान भयें तैं सर्प ज्यो है सो सर्वथा निवृत्त हो जाय है तैसैं आत्माका विशेषरूप करिकैं ज्ञान भयें तैं जगत् निवृत होणाँ चाहिये सो होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है ॥

ज्यो कहो कि अज्ञानवादी अध्यास दो प्रकार के मानैं हैं एक तो सोपाधिक अध्यास मानैं हैं ओर दूसरा निरुपाधिक अध्यास मानैं हैं जहाँ भ्रमकी निवृत्ति भयें वी अध्यस्तकी प्रतीति उपाधिके सद्भाव पर्यन्त मिटैं नहीं उस स्थान मैं तो अविद्यावादी सोपाधिक अध्यास कहैं हैं जैसैं नदी के तटके ऊपर स्थित ज्यो पुरुष ताकूँ अपणाँ शरीर जल मैं प्रतीत होयहै सो मिथ्या है वहाँ पुरुष के चित्तमैं भ्रम नहीं है अर्थात् अपणैं तटस्थ शरीर मैं हीं तो पुरुषकै सत्य बुद्धिहै ओर जलमैं प्रतीयमान ज्यो शरीर तामैं मिथ्यात्व बुद्धि दृढ है तथापि जल मैं प्रतीत ज्यो अपणाँ शरीरताका अदर्शन होवै नहीं काहेतैं कि यहाँ ज्यो अध्यास है सोपाधिक है ॥ ज्यो कहो कि यहाँ उपाधि कहा है तो हम कहैं हैं कि यहाँ जलतीर संबन्ध ज्यो है सो उपाधि है सो ये उपाधि जब पर्यन्त बणाँ रहै तब पर्यन्त शरीरका अदर्शन होवै नहीं ओर जहाँ रज्जु मैं सर्पकी प्रतीति है तहाँ निरुपाधिक अध्यास कहैं हैं काहेतैं कि सर्प भ्रम निवृत्त भयें अर्थात् सर्प मैं मिथ्यात्व बुद्धि भयें सर्पकी प्रतीति होवै नहीं कारण ये है कि यहाँ कोई उपाधि ऐसा नहीं है कि जिसके रहणें तैं भ्रमकी निवृत्ति भयें वी सर्प प्रतीति होती रहै तो आत्मा मैं जगत्की प्रतीति है यहाँ सोपाधिक अध्यास है यातैं आत्माका विशेष रूप करिकैं ज्ञान भयें तैं जगत्की निवृत्ति होवै नहीं।

तो हम कहैं हैं कि परमात्मा मैं जगत्कूँ अज्ञानकल्पित सिद्ध करणैं के अर्थ तो रज्जुसर्प दृष्टान्त बणाया ओर जब दृष्टान्तका ओर दार्ष्टान्त का साम्य कहणें लगे तब सोपाधिक भ्रमकूँ दृष्टान्त कहा है ऐसैं उपदेश कियें तैं शिष्यकै सन्तोष कैसैं होय ऐसैं उपदेशकरणेंवाले गुरूकूँ तो बुद्धिमान् शिष्य ज्यो है सो भ्रान्त ममुक्षै है ॥ ज्यो कहो कि गुरु मैं भ्रान्त बुद्धि करै सो सच्छिष्य नहीं होय है ।

तो हम कहैं हैं कि ऐसैं क्रम विरुद्ध उपदेश करै सो सद्गुरु नहीं होय है ज्यो कहो कि भ्रमस्थल मैं भ्रमकूँ दृष्टान्त कहैं क्रम विरुद्ध उपदेश

नहीँ होय है यातेँ सोपाधिक भ्रमकूँ दृष्टान्त कहैँ कुछ वी हानि नहीँ तो हम कहैँ हैँ कि जहाँ तीरस्थ पुरुषकूँ जलमैँ अपणेँ शरीरका भ्रम होय है तहाँ भ्रमाधिष्ठान जल है उसका ज्ञान पुरुषकूँ सामान्यरूप करिकेँ वी है अोर विशेषरूप करिकेँ वी है आत्माका तो तुम सामान्यरूप करिकेँ ज्ञान अोर विशेषरूप करिकेँ अज्ञान मानोँ हो यातेँ दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम हैँ ॥ जो कहो कि मरु भूमिका जो जल ताकूँ दृष्टान्त करैँगे काहेतैँ कि मरु भूमिका सामान्यरूप करिकेँ तो ज्ञान अोर विशेषरूप करिकेँ अज्ञान इनके होणेँतैँ हीँ तो जलभ्रम होय है अोर मरु भूमिका विशेषरूप करिकेँ ज्ञान भयेँ जल भ्रम रहे नहीँ परन्तु जलकी प्रतीतिहोतीरहै है तैसैँ हीँ आत्माका सामान्यरूप करिकेँ ज्ञान अोर विशेषरूप करिकेँ अज्ञान इनके होणेँतैँ तो आत्मा मैँ जगद्भ्रम हुवा है अोर आत्माका विशेषरूप करिकेँ ज्ञान भयेँ जगद्भ्रम निवृत्त होजाय है परन्तु जगत्की प्रतीति होती रहै है ऐसैँ आत्मा मैँ जगत्का सोपाधिक अध्यास सिद्ध होगा।

तो हम पूछैँ हैँ कि आत्मा मैँ जगत् अज्ञान कल्पित है यातेँ तुम दृष्टान्तोँ करिकेँ आत्मा मैँ जगत्कूँ अज्ञान कल्पित सिद्ध करो हो अथवा तुम अपणाँ मत अन्य शास्त्रोँ सैँ विलक्षण दिखाणेँ के अर्थ आत्मा मैँ जगत्कूँ अज्ञान कल्पित बतावो हो सो तो कहो ॥ ज्यो कहो कि आत्मा मैँ जगत् अज्ञान कल्पित है यातेँ हम दृष्टान्तोँ करिकेँ जगत्कूँ अज्ञान कल्पित बतावैँ हैँ तो हम पूछैँ हैँ आत्मा मैँ अज्ञान ज्यो है सो कल्पित है अथवा नहीँ तो तुम ये ही कहोगे कि कल्पित ही है तो हम पूछैँ हैँ कि किस समय मैँ कल्पित हुवा है तो तुम ये कहोगे कि अनादि कल्पित है परन्तु इतना तो विचार करो अनादि होय सो कल्पित कैसैँ हो सकै ॥ ज्यो कहो कि जैसैँ न्याय मैँ प्रागभावकूँ अनादि कल्पित मानैँ हैँ तैसैँ हम अज्ञानकूँ अनादि कल्पित मानैँ हैँ तो हम कहैँ हैँ कि व्यवहार सिद्ध करणेँ के अर्थ न्यायवाले असत् पदार्थोँकी कल्पना करैँ हैँ तैसैँ तुम नैँ वी असत् अज्ञानकी कल्पना किई है तो इसमैँ तो हमारा विवादही नहीँ परन्तु जगत् अज्ञान कल्पित नहीँ है काहेतैँ कि अज्ञानकूँ तुम जगत्का उपादान कारण मानोँ हो परन्तु ये ज्यो जगत्का उपादान होय तो आत्मज्ञान भयेँ तुमकूँ जगत्की प्रतीति नहीँ होणीँ चाहिये काहेतैँ कि उपादान कारणका नाश भयेँ कार्य रहै नहीँ ये सर्व कै अनुभव सिद्ध है ॥ अोर ज्यो कहो कि सोपा

धिक अध्यास होय तहाँ उपादानका नाश भयेँ बी जब पर्यन्त उपाधि-की स्थिति होवै तब पर्यन्त कार्यकी प्रतीति रहै है तहाँ मरु जलका दृष्टान्त कहा है तो हम पूछैँ हैँ यहाँ उपाधि कहा है सो कहो ज्यो कहो कि यहाँ अन्तःकरण ज्यो है सो उपाधि है तो हम कहैँ हैँ कि अन्तःकरण ज्यो है सो तो जगत्के अन्तर्गत है यातैं ये तो उपाधि हो सकै नहीँ यातैँ जगत् तैँ भिन्न कोई उपाधि कहो ।। ज्यो कहो कि हम ज्ञानके उत्तर काल मैँ अविद्या लेश मानैँ हैँ जैसैँ लशुन भाण्ड मैँ तैँ लशुन निवृत्त कियेँ बी लशुन के भाण्ड मैँ लशुनका गन्ध रहै है तैसैँ ज्ञानके भयेँ बी अविद्या लेश रहै है ।। तो हम कहैँ हैँ कि अविद्यावादियौँकी कल्पना तो देखो ज्यो जीवन्मुक्त विद्वानौँके अविद्याका कलङ्क कहैँ हैँ ये तो जब पर्यन्त जीवते रहोगे तब पर्यन्त तुमकूँ अविद्याके कलङ्क तैँ रहित होवे देवैँ नहीँ इनकै तो जैसैँ भेद वादियौँकै भेदमैँ आग्रह है तैसैँ अविद्या मानणैँ मैँ आग्रह है ये इनकी कल्पना किई ज्यो अविद्या सो भेदकी माता है काहेतैँ कि न्यायमत विवेचन मैँ पूर्व भेद ज्यो है सो अलीक सिद्ध हुवा है ओर ये बी इस भाग मैँ अलीक ही सिद्ध भई है तो जैसैँ मनुष्यादिकौँ मैँ सजातीय सन्तान होय हैँ तैसैँ अलीक अविद्याका सजातीय सन्तान भेद है माताके उपासक अविद्यावादी हैँ ओर पुत्रके उपासक अन्यशास्त्रौँके अभिमानी पुरुष हैँ यातैँ जीवन्मुक्तिके आनन्दकी इच्छा होय तो केवल श्रुतिका आश्रय करै ओर केवल अद्वैत दृष्टि आचार्य तैँ उपदेश ग्रहण करै ।

देखो श्रुति ऐसैँ कहै है कि

यदाह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दतेऽथ सोऽभयं गतो भवति१ यदा ह्येवैष उदरमन्तरं कुरुतेऽथ तस्य भयं भवति॥२॥

इनका अर्थ ये है कि ज्यो पुरुष इस आत्मा मैँ संशय रहित हो करिकैँ ब्रह्माभिन्न हो करिकैँ स्थित होयहै सो ब्रह्मकूँ प्राप्त होय है ये आत्मा कैसा है कि इन्द्रियौँका विषय नहीँ है ओर स्व है यातैँ स्वकीय नहीँ है अर्थात् आप है यातैँ अपणाँ नहीँ है ओर शब्दका विषय नहीँ है ओर निराधार है १ जब ये पुरुष इसमैँ किञ्चित् बी भेद देखै है उसकूँ

भय प्राप्त होय है २ तो इन श्रुतियोंका तात्पर्य ये हुआ कि किञ्चित् बी भेद दर्शन ज्यो है सो भय हेतु है यातैं सच्चिदानन्द रूप आत्मातैं भिन्न अविद्या मानणाँ असङ्गत ही है ।

ज्यो कहो कि श्रुति मैं तो भेद दर्शन ज्यो है सो भयहेतु कहा है तो हम कहैं हैं कि भेद और अविद्या ये तो एक ही हैं देखो आत्मा मैं अविद्याकी कल्पना कियेंहीं भेद सिद्ध होयहै ।

अब हम ये कहैं हैं कि ज्यो तुमारे व्यवहार सिद्ध करणैं के अर्थ अज्ञान मानणैं मैं आग्रह है तो ऐसैं मानों कि जैसैं परमात्मानैं जगत्के अनन्त पदार्थ रचेहैं तैसैं अज्ञानभी रचा है सो घटादिकमैं अज्ञात व्यवहार होणैं के अर्थ रचा है सो वृत्तिका विषय तैं सम्बन्ध होय तब तो इसका तिरोधान होजाय है और जब वृत्तिका विषय तैं सम्बन्ध निवृत्त होजाय है तब ये उद्भूत हो करिकैं विषयका आवरण करलेवै है ऐसैं मानों अथवा और कोई प्रकारकी कल्पना करिकैं तुम जगत् के व्यवहारकी व्यवस्था करो इसमैं हमारे खण्डन करणैंका आग्रह नहीं है काहेतैं कि इस जगत् की रचना अलौकिक है इस की व्यवस्था भिन्न भिन्न शास्त्रों वाले पण्डितोंनैं भिन्न भिन्न प्रकार करिकैं किई है ।। परन्तु यथार्थ निर्णय किसीकूँ बी इसका आज पर्यन्त हुआ नहीं शपथ कराय करिकैं प्रश्ण करोगे तो सर्व विद्वज्जन जगत्के निर्णय मैं सन्दिग्ध ही अपणैं कूँ कहैंगे यातैं व्यवहारकूँ कथञ्चित् सिद्ध करो ।।

और हम तो येही कहैं हैं कि तुम अपणैं अनुभव तैं देखो नित्य ज्ञात निराश्रय ज्यो स्वस्वरूप तिस के स्वरूप भूत अनुभव करिकैं स्वरूपकूँ प्रकाश करते भये तुम सर्वके प्रकाशक हो और तुम तो परमात्मा तैं भिन्न नहीं हो और परमात्मा तुमतैं भिन्न नहीं है ये ही वेदका सिद्धान्त अर्थ है । ये ही परम उपदेश है ।। तुम नित्य प्राप्त हो यातैं तुमारी प्राप्ति सम्भवै नहीं ।। और तुम नित्य मुक्त हो यातैं तुमारी मुक्ति सम्भवै नहीं ।। और तुम नित्य ज्ञात हो यातैं तुमारा ज्ञान सम्भवै नहीं ।। तुम अज्ञान के आवरण तैं अज्ञात नहीं हो किन्तु तुमतैं भिन्न तुमारा ज्ञाता और ज्ञान नहीं हैं यातैं अज्ञात हो ।। तुम वाणीं और मन इनके विषय नहीं हो किन्तु वाणी मन तुमारे दृश्य हैं ।। तुमारे ही स्वरूप भूत सत्ता स्फुरणका विलास सर्व

जगत् है ॥ तुम अचल हो अजर हो अमर हो अविकारी हो तुम आनन्द रूप हो ज्ञान रूप हो सत्य रूप हो नित्य हो शुद्ध हो बुद्ध हो मुक्त हो अविद्याके कलङ्कतैं रहित हो अद्वितीय हो एक रस हो ॥ तुम स्थूल नहीं हो अणु नहीं हो ह्रस्व नहीं हो दीर्घ नहीं हो कोई इन्द्रिय के विषय नहीं हो च्यारों वेद तुमकूं हीं ब्रह्म वर्णन करैं हैं तुम तैं भिन्न परमात्मा नहीं है ॥ ऋग्वेद तो तुम कूं

प्रज्ञानं ब्रह्म ॥

इस वाक्यतैं ब्रह्म वर्णन करै है और यजुर्वेद

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्यकरिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करैं है और सामवेद

तत्त्वमसि ॥

इस वाक्य करिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करैहै और अथर्वण वेद

अयमात्मा ब्रह्म ॥

इस वाक्य करिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करै है यातैं तुम ही परमात्मा हो और

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

ये श्रुति सर्व जगत्कूं ब्रह्म वर्णन करै है ॥ यातैं ।

चौपाई ॥

हम तुम जगत् एक हरि जानों । भेद लेश तनक न मन आनों ।
ज्यो नर भेद दीठि उर धारै । भय ताकूं श्रुतिवचन पुकारै ॥१॥
जयो जगकूं मिथ्या करिजानैं । सो गुरु वेद ईश नाहिं मानैं ॥
करत पाप भय तनक न लावैं । सकल जगत मैं निन्दा पावै ॥२॥

शौचा चार सकल ही त्यागै । पाप त्यागि सत् कर्म न लागै ॥

खोटे करम करत ही रहते । हम नहिँ करत वचन इमि कहते३

हरि षोडश अध्याय सुनाई । सृष्टि आसुरी तहाँ बताई ॥

अप्रतिष्ट जग असत हि जानैं । सो कर्त्ता ईश्वर नहिं मानैं॥४॥

याविधि दृष्टि पुरुष जयो राखै । नष्ट बुद्धि सो इमि हरि भाखै ॥

अर्जुन उग्र कर्म वह करतो । काम दम्भ मद मान हि धरतो ॥५

सत्संगिन की माति भरमावै । अपणी सेवा माहि लगावै ॥

काम भोगही में मति धारै । आश पाशकूँ तनक न टारै ॥६॥

करि अन्याय गहत है धनकूँ । नहि सँतोष देत है मन कूं ॥

ऐसो पुरुष नरककूं जावै । वह मोकूँ कबहूँ नहिँ पावै ॥७॥

या विध हरि उपदेश सुनायो । अर्जुन को संदेह मिटायो ॥

यातें असत बुद्धि तुम टारो । ब्रह्म बुद्धि सब माँही धारो ॥८॥

सवैया ।

पीतपटा लपटाय लियें तन श्यामघटा घन अंग सुहावत ।

गोप चटान की लेइ छटा जमुना के तटापर धेनु चरावत ॥

जाके कटाछतें मुक्ति अटा मिलजात सटाक नहीँ भरमावत ।

नन्दवटातैँ लटापट जो नर कालभटा नहिँ ताहि लखावत॥९

जाको स्वरूप अलौकिकज्ञान भयोजगबाग तरू तन कीन्हो ।

जीव पतत्रिको रूपवनाय वसात तहाँ वहु आनँद लीन्हो ॥

आपहि देखि अलौकिक सृष्ठि भयो वश मोह न आतम चीन्हो।

आपहि वेदको अर्थ विचारिलख्यो अरु आपहि दर्शन दीन्हो१०

॥ दोहा ॥

कृष्ण चरण रागी रहै, ज्यो नर चाहै मुक्ति ।
सब साधन यातैं सधै यहै वेद की उक्ति ॥ ११ ॥

इति श्री जयपुर निवासि दधीचिवंशोद्भव डेरोवटङ्क
पण्डित गोपीनाथ विरचिते स्वानुभवसारे वेदान्त
मुख्यसिद्धान्ते श्रीज्ञानसिद्धगुरूपदेशे अविद्या
स्वरूपविवेचने द्वितीयो
भागः ॥ २ ॥

श्रीकृष्णो जयति तराम् ॥

अथ तृतीयो भागः ॥

चौपाई ॥

या विधि गुरु उपदेश उदारा। सुन्यौं विमल मति श्रुतिको सारा॥
परमानँद मन माँहिँ नमायो। पुनिगुरुचरणयुगलशिरनायो ॥१॥
अरजकरत या विधि करजोरी। मति सन्तोष लहत नहिँ मोरी।
कही अविद्या आप अलीका। सो नहिँ कथन तनकहू फीका॥२॥
घटपट आदि वृत्ति उपजावैँ। ले दृग माँहिँसकल कै आवैँ।
ज्यो आवरणहोयआतमकै।तो चितइन माँहिँ नहिँ दमकै ॥३॥
ज्यो आवरण वृत्तिकूँ छावे। तो नहिँ वृत्ति दीठिमैँ आवे ॥
ज्यो आवरण दोयमैं नाँहीँ। तो यह रहै कोनकै माँहीँ ॥४॥
यातैं है अज्ञान अलीका। यह जानौँ निश्चय मो जीका ॥
मैं उपदेश आपको पाई। ज्यो समुझ्यो सो दियो सुनाई ५
जव यह वृत्ति विषय मैं जावे। तव अज्ञान तहाँ नीहँ पावे॥
जव विषयन तैं यह उलटावे। तव अज्ञान तहाँ वतलावे ६
ज्यो याकूँ जीव हि नहिँ लेखे। तो किहिँ विधि जगकर्त्ता देखै॥
यातैँ प्रभु अज्ञान नहीँ है। यहै आपको कथन सही है ७
शङ्का एक चित्त उपजाई। सो मेरी द्यो आप मिटाई ॥

ज्ञान न ज्यो अज्ञान नसावै । कहिये ज्ञान काम को आवै॥८॥
ज्ञान नहीँ ज्यो या विध कहिहो।कहा व्यवस्था श्रुतिकी लहिहो॥
ज्ञान भयेँ हीँ मुक्ति लहे है । श्रुति या विधतैँ वचन कहे है॥९॥
ज्ञान सिद्ध इमि सुनि मुसकाये॥शिष्य वुद्धि शुचिलखि उमगाये
करन लगे जा विधि उपदेशा । कहूँ जाहि सुनि मिटै कलेशा१०

अव तुमनैँ ज्यो ये कही कि आपके कथन तैँ अज्ञान ज्यो है सो अलीक सिद्ध हुवा और मैनैँ अनुभव तैँ निर्णय किया तो ये अलीक ही है परन्तु

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति ॥

ये श्रुति ज्यो है सो आत्माके ज्ञानतैँ मुक्तिकूँ प्राप्त होय है ऐसैँ कहै है और आत्मा ज्यो है सो नित्य प्राप्त है नित्य मुक्त है नित्यज्ञात है ऐसैँ आपनैँ पूर्व वर्णन किया है और अनुभव तैँ आत्मा ऐसा ही प्रतीत होय है तो ज्ञानका फल तो अज्ञानकी निवृत्ति ही मानी जायगी सो अज्ञान अलीक है यातैँ नित्य निवृत्तहै तो इसकी निवृत्ति वी अलीक ही है तो ज्ञान निष्फल हुवा और ज्यो आप ज्ञानकूँ वी अलीक ही कहो तो ज्ञानतैँ मुक्तिकी प्रतिपादक ज्यो श्रुति ताकी व्यवस्था कहा होगी सो कहो ।

तो हम पूछैँ हैँ कि अविद्यावादी ज्ञान किसकूँ कहैँ हैँ ।। ज्यो कहो कि विषयका प्रकाशक ज्यो अन्तःकरणका और अविद्याका परिणाम सो वृत्ति है उसकूँ हीँ अविद्यावादी ज्ञान कहैँ हैँ ज्यो कहोकि विषयका प्रकाशक ये ज्ञानका विशेषण देणेँका तात्पर्य कहा है तो हम कहैँ हैँ कि अन्तःकरणके परिणाम तो सुखादिक वी हैँ इनकी व्यावृत्ति करणैँ के अर्थ विषयका प्रकाशक ये ज्ञानका विशेषण है यद्यपि सुखादिक जे हैँ ते अन्तःकरण के परिणाम हैँ तथापि ये विषयके प्रकाशक नहीँ हैँ यातैँ ये ज्ञान नहीँ हैँ और अविद्याके परिणाम तो आकाशादिक वी हैँ यातैँ इनकी व्यावृत्ति के अर्थ वी ये विशेषण है ज्यो कहो कि विषयका प्रकाशक ज्यो अन्तःकरणका परिणाम सो ज्ञान है ऐसैँ हीँ कहो अविद्याके परिणामकूँ

ज्ञान माननेंका तात्पर्य कहा है तो हम कहैं कि स्वप्नका ज्यो ज्ञान सो स्वप्नके विषयोंका प्रकाशक तो है परन्तु उसकूं अन्तःकरणका परिणाम नहीं मानैं हैं किन्तु अविद्याका परिणाम मानैं हैं उसमैं ज्ञानका लक्षण नहीं रह सकैगा यातैं अविद्याका परिणाम ज्ञानका स्वरूप कहैं हैं ज्यो कहो कि विषयका प्रकाशक ज्यो अविद्याका परिणाम सो ज्ञान है ऐसैं हीं कहो तो हम कहैं हैं कि जाग्रत्का ज्यो ज्ञान सो विषयका प्रकाशक तो है परन्तु अज्ञानका परिणाम नहीं है किन्तु अन्तःकरणका परिणाम है तो इसमैं ज्ञानका लक्षण नहीं रहसकैगा यातैं अन्तःकरणका परिणाम ज्ञान कहैं हैं ॥ ये ज्ञान दो प्रकारका है एक तो प्रमारूप है १ ओर दूसरा अप्रमारूप है २ तिनमैं अप्रमा भी दो प्रकारकी है एक तो यथार्थ अप्रमा है १ ओर दूसरी अयथार्थ अप्रमा है २ इसकूं हीं भ्रम कहैं हैं इन्द्रिय ओर अनुमानादिक करिकैं ज्यो ज्ञान होय है सो यथार्थ कहिये है ॥ ओर दोष जन्य होय सो अयथार्थ कहिये है शुक्तिमैं रजतज्ञान सादृश्य दोष जन्य है ओर मिसरी मैं कटुताज्ञान पित्त दोष जन्य है ओर चन्द्रमामैं लघुत्वज्ञान दूरत्व दोष जन्यहै यातैं ये ज्ञान भ्रम हैं ओर स्मृतिज्ञान तथा सुख दुःखोंका प्रत्यक्ष ज्ञान तथा ईश्वरका वृत्तिज्ञान ये दोष जन्य नहीं यातैं ये भ्रम नहीं हैं ओर प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं किन्तु भ्रम ओर प्रमातैं विलक्षण यथार्थ ज्ञान हैं ॥ स्मृतिज्ञान ज्यो है तिसका कारण अनुभव है सो अनुभव यथार्थ होय तो उससैं उत्पन्न भई स्मृति ज्यो है सो यथार्थ होय है ओर ज्यो स्मृतिका हेतु अनुभव ज्यो है सो भ्रम होय तो उससैं उत्पन्न ज्यो स्मृति सो अयथार्थ होय है ॥ ओर धर्म अधर्म रूप कारणों करिकैं अनुकूल प्रतिकूल पदार्थोंका सम्बन्ध हो करिकैं अन्तःकरणके सत्व रजके परिणाम सुखदुःख होय हैं ओर उन हीं धर्म अधर्म रूप कारणों करिकैं सुख दुःखोंकूं विषय करणेंवाली वृत्तियां होवैं हैं उनमैं आरूढ साक्षी सुख दुःखोंका प्रकाश करैहै ॥ ऐसैं स्मृतिज्ञान ओर सुखदुःखोंका ज्ञान ये प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं ॥ ओर ऐसैं हीं ईश्वरका ज्ञान ज्यो है सो माया वृत्ति रूप है सो जीवोंके अदृष्टों करिकैं जन्यहै तो प्रमाण जन्य नहीं हुवा यातैं प्रमा नहीं है ओर दोष जन्य नहीं यातैं भ्रम नहीं है किन्तु प्रमा ओर भ्रम इनतैं विलक्षण यथार्थज्ञान है ऐसैं हीं स्मृति ज्ञान तथा सुखदुःखोंके ज्ञान भी प्रमा ओर भ्रमतैं विलक्षण यथार्थहैं ॥ ये स्मृति

ज्ञान और सुख दुःखोंके ज्ञान ये प्रमा नहीं इसमें येवी कारणहै कि प्रमा ज्यो है सो प्रमाताके आश्रित होवै है ये जे ज्ञान हैं ते अविद्याकी वृत्तिरूप हैं यातैं प्रमा नहीं हैं ॥ जैसैं भ्रम और संशय जे हैं ते अविद्याकी वृत्तिरूपहैं यातैं प्रमा नहीं हैं ॥ और संसार दशामैं इनका बाध नहीं यातैं ये भ्रम नहीं हैं ॥ येविचारवृत्ति प्रभाकरके प्रथम प्रकाशमैं और विचारसागरकेच-तुर्थ तरङ्गमैं लिखा है ॥ तो हम पूछैं हैं तुम प्रमा ज्ञान किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि स्मृति तैं भिन्न और अबाधित अर्थकूं विषय करणैंवाला ज्यो ज्ञान सो प्रमा ज्ञान है अबाधित अर्थकूं तो यथार्थ स्मृति वी विषय करै है यातैं प्रमाके लक्षणमैं स्मृति भिन्न ये ज्ञानका विशेषण है और स्मृतिभिन्न ज्ञान तो भ्रमज्ञानवी है यातैं अबाधित अर्थकूं विषय करणैंवाला ये प्रमाके लक्षणमैं ज्ञानका विशेषण है भ्रमज्ञान यद्यपि स्मृति भिन्न है तथापि अबा-धित अर्थकूं विषय करणैंवाला नहीं है और अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान सो प्रमा है काहेतैं कि ये ज्ञान प्रमाताकै आश्रित होवै है और स्मृति संशय भ्रम इत्यादिक जे ज्ञान ते अविद्याकी वृत्तिरूप हैं यातैं प्रमाताके आश्रित नहीं किन्तु साक्षी कै आश्रित हैं इस हेतुतैं ये प्रमा नहीं हैं और कोई स्मृति ज्ञानकूं वी प्रमा मानैं हैं उनके मतमैं अबाधित अर्थकूं विषय करणैं वाला ज्यो ज्ञान सो ही प्रमा है स्मृति ज्ञानकूं जे प्रमा मानैं हैं उनके मतमैं स्मृति ज्ञान अविद्याकी वृत्तिरूप नहीं है किन्तु अन्तःकरणकी वृ-त्तिरूप है यातैं प्रमाताकै आश्रित है ऐसैं स्मृतिज्ञान जिनके मतमैं अविद्या की वृत्तिरूप है तिनके मतमैं तो ये साक्षी कै आश्रित है और ये प्रमा नहीं है और जिनके मतमैं ये अन्तःकरणकी वृत्तिरूप है तिन के मतमैं ये प्रमाता कै आश्रित है और ये प्रमा है और संशय तथा भ्रान्ति ज्ञान ये तो सर्वके मतमैं अविद्याकी वृत्तिरूप हैं और साक्षीके आश्रित हैं इसमैं किसी कै वी विवाद नहीं है और सिद्धान्त ये है कि स्मृति ज्ञान वी अविद्या की वृत्तिरूप ही है और साक्षी कै आश्रित है यातैं प्रमा नहीं है ॥

ऐसैं मानणैं मैं कारण ये है कि इनके मतमैं प्रमा छै प्रकारकी है प्र-त्यक्ष प्रमा १ अनुमिति प्रमा २ शाब्दी प्रमा ३ उपमिति प्रमा ४ अर्थापत्ति प्रमा ५ अभाव प्रमा ६ और इनके करण क्रमतैं प्रत्यक्ष १ अनुमान २ शब्द ३ उपमान ४ अर्थापत्ति ५ अनुपलब्धि ६ ये हैं ॥ तो हम ये और पूछैं हैं कि तुम प्रमाता किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि प्रमाताके स्वरूप के मानणैं मैं

मत भेद हैं तहाँ कोईका मत तो अवच्छेदक वाद है और कोईका मत प्रतिबिम्ब वाद है और कोईका मत आभासवाद है ॥

व्यवहार में चेतनके च्यार भेद हैं एक तो प्रमातृचेतन है १ और दूसरा प्रमाण चेतन है २ और तीसरा प्रमितिचेतन है ३ इसकूँ हीं प्रमाचेतन कहैं हैं और चौथा विषय चेतन है ४ इसकूँ हीं प्रमेयचेतन कहैं हैं सत्व रज तम ये तीन प्रकृतिके गुणहैं उनमें सत्वके कार्य तो ज्ञानेन्द्रिय ५ और एक अन्तःकरण ये छे हैं और रजोगुणके कार्य कर्मेन्द्रिय ५ प्राण ५ ये दश हैं और तमोगुणके कार्य सर्व जड विषय हैं देहके भींतर ज्यो अन्तःकरण ता करिकैं अवच्छिन्न ज्यो चेतन सो तो प्रमातृ चेतन है और नेत्रादिक इन्द्रियाँ तैं लेकरि कैं घटादि विषय पर्यन्त ज्यो अन्तःकरणकी दण्डाकार वृत्ति ताकरिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो प्रमाण चेतन है और विषय तैं सम्बद्ध हो करिकैं ज्यो अन्तःकरण की विषयाकारवृत्ति ताकरिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो प्रमा चेतन अथवा प्रमितिचेतन है और प्रमा के विषय जे घटादि पदार्थ तिन करिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो विषयचेतन अथवा प्रमेय चेतन है ।

अवच्छेदकवादमैं अन्तःकरणविशिष्ट चेतन ज्यो है सो प्रमाता है सो ही कर्त्ता भोक्ता है और अन्तःकरण उपहितचेतन ज्यो है सो साक्षी है एक ही अन्तःकरण ज्यो है सो प्रमाताका तो विशेषण है और साक्षीका उपाधि है स्वरूप कै विषैं जिसका प्रवेश होवै ऐसा ज्यो व्यावर्त्तक वस्तु सो विशेषण कहिये है ज्यो भिन्नता करिकैं वस्तुके स्वरूपकूँ जणावै उसकूँ व्यावर्त्तक कहैं हैं और जिसकूँ भिन्नता करिकैं जणावै उसकूँ व्यावर्त्य कहैं हैं और व्यावर्त्तक व्यावर्त्य जे हैं तिनकूँ परिच्छेदक परिच्छेद्य भी कहैं हैं जैसें नील घट है यहाँ नीलरूप ज्यो है सो घटका विशेषण है काहेतैं कि नीलरूपका घटके स्वरूप विषैं प्रवेश है और पीतादिक तैं घटकूँ भिन्न जणावै है और जावस्तुका स्वरूपके विषैं प्रवेश नहीं और व्यावर्त्तक होवै सो उपाधि कहिये है जैसैं न्यायके मतमैं कर्णशष्कुलीसैं अवच्छिन्न ज्यो आकाश सो श्रोत्रहै यहाँ कर्णशष्कुली ज्यो है सो श्रोत्रका उपाधिहै काहेतैं कि श्रोत्रके स्वरूप मैं कर्ण शष्कुलीका प्रवेश नहीं है और बाहिरके आकाश सैं भिन्नता करिकैं श्रोत्रकूँ जणावै है तैसैंहीं अन्तःकरणका प्रमाताके स्वरूपमैं प्रवेश है और प्रमाताकूँ प्रमेय चेतनसैं भिन्नता करिकैं जणावै है

यातैं अन्तःकरण ज्यो है सो प्रमाताका विशेषण है और अन्तःकरणका साक्षीके स्वरूप विषैं प्रवेश नहीं है और साक्षीकूं प्रमेय चेतनमैं भिन्नता करिकैं जनावै है यातैं अन्तःकरण ज्यो है सो साक्षीका उपाधि है ।

और प्रतिबिम्बवाद मैं अन्तःकरण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब सो प्रमाता है और बिम्ब ज्यो शुद्ध चेतन सो परमात्मा है सोही साक्षी है इस मत मैं एक ही अन्तःकरणरूप उपाधिके सम्बन्धसैं एकही चेतन बिम्बरूप करिकैं और प्रतिबिम्बरूप करिकैं प्रतीत होय है ॥

और आभासवाद मैं आभाससहित अन्तःकरण जीवका विशेषण है और आभास सहित अन्तःकरण साक्षीका उपाधि है यातैं साभास अन्तःकरण विशिष्ट चेतन जीव है और साभास अन्तःकरण उपहित चेतन साक्षी है ।

इसैं अवच्छेदकवाद मैं अन्तःकरण विशिष्ट चेतन प्रमाता है और प्रतिबिम्बवाद मैं अन्तःकरण उपहित प्रतिबिम्बरूप ज्यो जीव सो प्रमाता है और आभासवाद मैं आभाससहित अन्तःकरण विशिष्ट चेतन प्रमाता है॥

तो हम पूछैं हैं कि तुम संसार किसमैं मानौं हो सो कहो ज्यो कहो कि अवच्छेदकवाद और आभासवाद इनमैं तो यद्यपि विशेषण सहित चेतन प्रमाता है सो ही संसारी है तथापि विशेष्य ज्यो चेतन तामैं तो संसारका सम्भव है नहीं केवल विशेषण मैं संसार है सो विशिष्ट ज्यो चेतन तामैं प्रतीत होवै है ॥ कहीं तो विशेषणका धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होय है और कहीं विशेष्यका धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होय है और कहीं विशेषण और विशेष्य इन दोनूंके धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होय हैं जैसैं दण्ड करिकैं घटाकाशका नाश होय है तहां दण्ड करिकैं घटका नाश होय है और घटका विशेष्य ज्यो आकाश ताका नाश सम्भवै नहीं तो भी विशिष्ट ज्यो घटाकाश ताके नाशका व्यवहार होय है और कुण्डली पुरुष सोवै है यहां कुण्डल तो पुरुषका विशेषण है और पुरुष ज्यो है सो विशेष्य है तो विशेषण ज्यो कुण्डल तामैं तो शयन क्रिया सम्भवै नहीं किन्तु विशेष्य ज्यो पुरुष तामैं शयनक्रिया है तिसका कुण्डल विशिष्ट ज्यो पुरुष तामैं व्यवहार होय है और शस्त्री पुरुष युद्ध मैं गया है यहां विशेषण ज्यो शस्त्र और विशेष्य ज्यो पुरुष दोनूं युद्ध मैं गये हैं यातैं दोनूंका धर्म ज्यो गमन सो शस्त्र विशिष्ट पुरुष मैं प्रतीत होय है ।

ओर प्रतिबिम्बवाद मत मैं अन्तःकरणरूप जयो उपाधि ताका धर्म जयो संसार सो उपहित जयो प्रतिबिम्ब तामैं प्रतीत होय है जैसैं दर्पण के धर्म जे मालिन्यादिक ते दर्पण मैं प्रतिबिम्ब जयो मुख तामैं प्रतीत होय हैं।

तो हम पूछैं हैं इन तीनौं मतौं मैं तुम किस मतका अङ्गीकार करो हो सो कहो जयो कहो कि हम आभासवाद मानैं हैं काहेतैं कि भाष्यकार इसही मतकूँ मानैं हैं ओर विद्यारण्य स्वामीनैं अवच्छेदकवाद मैं दोष वी कहा है जयो कहो कि अवच्छेदकवाद मैं दोष है तो प्रतिबिम्बवादका अङ्गीकार करो तो हम कहैंहैं कि आभासमैं ओर प्रतिबिम्ब मैं ये भेद है कि बिम्ब जैसा होय सो तो प्रतिबिम्ब ओर बिम्बकी अपेक्षा ईषत् प्रकाशित होय सो आभास तो बिम्ब ज्यो शुद्धात्मा सो तो असङ्ग है ओर निर्विकार है ओर स्फूर्त्तिरूप है ओर चिदाभास ज्यो है सो स्फूर्त्तिरूप तो है परन्तु असङ्ग ओर अविकारी प्रतीत होवै नहीं किन्तु ससङ्ग ओर विकारी प्रतीत होय है यातैं ये आभास है ओर प्रतिबिम्ब नहीं है इस हेतु तैं हम प्रतिबिम्बवाद नहीं मानैं हैं किन्तु आभास वाद मानैं हैं॥ विद्यारण्य स्वामी नैं कूटस्थदीप मैं ऐसैं हीं कही है कि

ईषद्भासनमाभासः प्रतिबिम्बस्तथाविधः
बिम्बलक्षणहीनस्सन् बिम्बवद्भासते स हि१॥

इसका अर्थ ये है कि ईषत् प्रकाश ज्यो है सो तो आभास होय है ओर बिम्ब जैसा होय उसकूँ प्रतिबिम्ब कहैं हैं सो ये चिदाभास बिम्बलक्षण करिकैं हीन हुवा बिम्ब की तँरँहँ मालुम होय है यातैं ये आभास ही है।

१ तो हम पूछैं हैं आत्मज्ञान करिकैं ज्यो अज्ञानकी निवृत्ति मानौं हो तहाँ तुम कोन से ज्ञानकूँ आवरण भञ्जक मानौं हो सो कहो॥ ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष ज्ञानकूँ आवरण भञ्जक मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि प्रत्यक्ष ज्ञानका कारण तुमनैं पूर्व प्रत्यक्ष कहा है तहाँ करणवाचक ज्यो प्रत्यक्ष शब्द तिसका अर्थ तुम किसकूँ मानौं हो सो कहो॥ ज्यो कहो कि करणवाचक ज्यो प्रत्यक्ष शब्द ताका अर्थ इन्द्रिय है सो इन्द्रिय पाँच प्रकारके हैं श्रोत्र १ त्वक् २ चक्षु ३ रसन ४ घ्राण ५ इन इन्द्रियौं करिकैं पाँच प्रकार की प्रमा

होय है श्रौत्र प्रमा १ त्वाच प्रमा २ चाक्षुष प्रमा ३ रासन प्रमा ४ घ्राणज प्रमा ५ तो हम पूछैं हैं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा उसका करण कोन है सो कहो।

जयो कहो कि पूर्व जे पाँच प्रकार की प्रमा कही ते तो बाह्य प्रमा हैं उनके करण तो बाह्य इन्द्रिय हैं काहेतैं कि इन इन्द्रियों द्वारा अन्तःकरणकी वृत्ति शरीरके बहिर्देश मैं जाकरिकैं बाह्यविषयाकार होय है और ब्रह्मज्ञान रूप जयो प्रमा सो शरीर के भींतर होय है यातैं ये आन्तर प्रमा है इसका करण कोई तो मनकूँ मानैं हैं और कोई शब्द कूँ करण मानैं हैं॥ जिनके मतमैं मन इन्द्रिय है उनके मतमैं मन जयो है सो करण है और जिनके मतमैं मन ज्यो है सो इन्द्रिय नहीं है उनके मत मैं शब्द जयो है सो करण है ऐसैं प्रत्यक्षप्रमा षट् प्रकारकी है और ऐसैंहीं इस षट्प्रकारकी प्रत्यक्ष प्रमाका करण बी षट् प्रकारके हैं।

तो हम पूछैं हैं कि तुमनैं ब्रह्मज्ञानरूप जयो प्रमा ताके करण मत भेदतैं दोय कहे हैं तिनमैं एक मत मैं तो मनकूँ करण कहा है और दूसरे मत मैं शब्दकूँ करण कहा है तो ये और कहो कि ये मन तैं अथवा शब्दतैं जयो प्रत्यक्ष प्रमा होय है सो कैसैं होय है॥ जयो कहो कि अन्तःकरण जैसैं आभास सहित है तैसैं अन्तःकरणकी वृत्तिबी आभास सहित ही होय है उस साभासवृत्ति विषिष्ठ जयो चेतन सो तो प्रमाण है और अन्तःकरणकी घटादि विषयाकार जयो वृत्ति तामैं आरूढ जयो चेतन सो प्रमा है परन्तु ताका साधन इन्द्रिय है यातैं इन्द्रियकूँ प्रमाण कहैं हैं यद्यपि चेतन जयो है सो स्वरूप तैं नित्य है यातैं इन्द्रिय जन्य नहीं तो ताका साधन इन्द्रिय हो सकै नहीं तथापि चेतन मैं प्रमा व्यवहारकी सम्पादक जयो विषयाकार वृत्ति सो इन्द्रिय जन्य है यातैं प्रमाका उपाधि जयो वृत्ति सो इन्द्रियजन्य होणैं तैं प्रमा कूँ इंद्रियजन्य कहैं हैं॥ और इंद्रियकूँ प्रमाका साधन कहैं हैं यातैं इन्द्रियकूँ प्रमाण कहैं हैं॥ औरवृत्ति जयो है सो प्रमा चेतनका उपाधि है यातैं वृत्तिकूँ प्रमा कहैं हैं॥ जयो कहो कि प्रमाण चेतनका उपाधि जयो वृत्ति ताकूँ हीं प्रमाण कहो इन्द्रियकूँ प्रमाण कहणैं मैं तुमारा तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि इन्द्रिय देशतैं प्रारम्भ करिकैं विषयके समीप देश पर्यन्त ज्यो दण्डाकार वृत्ति सो प्रमाण चेतनका उपाधि है सो ही वृत्ति विषयतैं सम्बद्ध होकरिकैं विषयाकार हो

य है सो विषयाकार वृत्ति प्रमा है उससैं प्रमाण चेतनका उपाधि जयो वृत्ति ताका अत्यन्त भेद नहीँ यातैं हम इन्द्रिय कूँ प्रमाण कहैंहैं ॥तात्पर्य ये है कि प्रमाण चेतनोपाधि वृत्ति और प्रमाचेतनोपाधि वृत्ति इनका ज्यो भेद है सो देश भेद तैं भेद है वस्तुगत्या भेद नहीँ काहे तैं कि प्रमाण चेतनोपाधि जयो वृत्ति सो ही विषयाकार होय है ऐसैं वाह्य घटादिविषयक प्रमा जहाँ होवै तहाँ तो अन्तःकरणकी वृत्ति ज्यो है सो इन्द्रिय द्वारा निकसिकैं विषय सम्बद्ध हो करिकैं विषयाकार होय है उस वृत्ति तैं तो विषयका आवरण दूर होवै है और वृत्तिमैं ज्यो आभास है तिस करिकैं विषयका प्रकाश होय है ये तो वाह्य विषयके प्रत्यक्ष स्थलका प्रकार है ।

और शरीरके भीँतर जव आत्माका साक्षात्कार होय है तव अन्तःकरण की वृत्ति वाहरि जावै नहीँ किन्तु शरीरकै भीँतर ही वृत्ति आत्माकार होवै है उस वृत्तिसैं आत्माके आश्रित ज्यो आवरण सो नष्ट होवै है और आत्मा जयो है सो स्वप्रकाशता करिकैं उस वृत्तिमैं प्रकाश करै है ऐसैं वृत्तिका प्रयोजन आत्माकै आश्रित जयो आवरण ताका भङ्ग है यातैं तो आत्मा जयो है सो वृत्तिका विषय है और वृत्तिमैं चिदाभासरूप जयो फल ताका प्रकाश आत्मामैं होवै नहीँ यातैं साक्षी आत्माका स्वप्रकाशता करिकैं भान होवै, है सो ये आत्माकार वृत्ति वेदान्त वाक्यौं के श्रवण सैं होय है यातैं ये वृत्तिरूप जयो प्रमा ताका करण शब्दकूँ मानैं हैं ।

और जे वृत्ति रूप प्रमाका करण मनकूँ मानैं हैं वे ऐसैं कहैं हैं कि प्रत्यक्ष ज्ञानका करण इन्द्रियौं तैं भिन्न पदार्थ होवै नहीँ ये नियम है जैसैं वाह्य जे प्रत्यक्ष हैं उनके करण वाह्य इन्द्रिय ही होय हैं तैसैं आत्म ज्ञान रूप ज्यो आन्तर प्रमा ताका करण आन्तर इन्द्रिय ज्यो मन सो है और वेदान्त वाक्य जे हैं ते सहकारि कारण हैं ऐसैं ब्रह्म ज्ञान रूप ज्यो प्रमा ताका करण कोई तो शब्दकूँ मानैं हैं और कोई मनकूँ करण मानैं हैं यहाँ भाष्यकार तो शब्दकूँ करण मानैं हैं और वाचस्पति मिश्र ज्यो है सो मनकूँ करण मानै है ।

तो हम कहैं हैं तुम एकाग्र हो करिकैं श्रवण करो हम तुमारे कथन का निर्णय करैं हैं तुमनैं पूर्व ज्ञान दो प्रकार के कहे तिनमैं एक तो प्रमा ज्ञान कहा और दूसरा अप्रमाज्ञान कहा तिनमैं अप्रमाज्ञान तो भ्रम ज्ञान है उसकूँ तो साक्षीकै आश्रित कहा और प्रमाज्ञानकूँ प्रमाताकै आश्रित

कहा और इन दोनूँ ज्ञानोंतैं विलक्षण तुमनैं यथार्थ ज्ञान और कहा उस का स्वरूप ये कहा है कि अबाधित अर्थकूँ तो विषय करै और प्रमाताकै आश्रित नहीं रहै सो वो यथार्थ ज्ञान तुमनैं स्मृतिज्ञान सुख दुःखज्ञानऔर ईश्वरकूँ जयो ज्ञान है सो बताया है इन ज्ञानों मैं अप्रमाज्ञानका विचार तो द्वितीय भागमैं होगया यातैं तो इसके निर्णयकी आवश्यकता नहीं है और ईश्वरकूँ जयो ज्ञान है उसका निर्णय तुम कर सको नहीं काहेतैं कि ईश्वरका ज्ञान तुमारै परोक्ष है और तुम उस ज्ञानकूँ आवरणभञ्जक भी नहीं मानों हो तो सुखदुःखोंका ज्ञान और स्मृति ज्ञान और तुमकूँ जयो प्रमाज्ञान होय है इनका विचार करणाँ चाहिये सो इन ज्ञानोंमैं सुखदुःखों का ज्ञान और स्मृति ज्ञान इनकूँ तुमनैं साक्षीके आश्रित कहे हैं और इन ज्ञानोंकूँ प्रमाताकै आश्रित नहीं मानें हैं तो ये सिद्ध हुवा कि जीवकूँ सुख दुःखोंका ज्ञान तथा स्मृति ज्ञान ये नहीं हैं ।। और प्रमाज्ञानकूँ तुमनैं जीवाश्रित कहा है तो ये सिद्ध हुवा कि साक्षी मैं प्रमाज्ञान नहीं है ।। सो तुमारी व्यवहार की व्यवस्था तो सर्व निवृत्तिकूँ प्राप्त भई काहेतैं कि इष्ट साधनता ज्ञान विना प्रवृत्ति होवै नहीं तो इष्ट नामहै सुखका उसका ज्ञान जीवमैं रहा नहीं तो जीव जयो है सो व्यवहार मैं प्रवृत्त कैसैं हो सकै ।। और वो सुखज्ञान साक्षी मैं रहा सो वो साक्षी व्यवहार करै नहीं काहेतैं कि तुम साक्षीमैं व्यवहार मानों नहीं तो व्यवहार का तो लोप ही हुवा ।।

और विचार करो कि स्मृति ज्ञानकूँ तुमनैं साक्षीकै आश्रित कहा है और प्रमाज्ञानकूँ तुमनैं प्रमाता कै आश्रित कहा है तो प्रमाज्ञान जयो है सो अनुभव है और अनुभव जयो है सो स्मृतिका कारण है और जिसकूँ जिस पदार्थ का अनुभव होय उसकूँ उस पदार्थकी स्मृति होवै है अन्य-कूँ होवै नहीं ये नियम है तो जीवका अनुभव किया जयो पदार्थ उसका स्मरण साक्षीकूँ कैसैं हो सकै॥और विचार करोकि संशय ज्ञान और भ्रमज्ञान इनकूँ तुमनैं सर्व के मत सैं साक्षीकै आश्रित कहे हैं और प्रमाज्ञानसैं इन की निवृत्ति मानी है सो प्रमाज्ञान जीवाश्रित कहा है तो जीवकूँ ज्ञानभयें साक्षीके भ्रमकी निवृत्ति कैसैं होसकै इसका विचार द्वितीय भाग मैं होगया है यातैं यहाँ विशेष लेखतैं पुनरुक्ति होय है ।

अब प्रथम तुम इन विरोधूँका परिहार कहो पीछैं अन्य विचार करैं गे जयो कहोकि मैंनैं तो इन ज्ञानोंकी व्यवस्था विचारसागर के चतुर्थ तरङ्ग

मैं और वृत्तिप्रभाकरके प्रथम प्रकाश मैं लिखी है सो कही है यहाँ तो इन विरोधूँका परिहार कुछ बी लिखा नहीं यातैं मैं कुछ बी कह सकूँ नहीं परन्तु ये तो लिखा है कि यद्यपि

अहं ब्रह्म ॥

ये ज्ञान जयो है सो आभासकूँ होवैहै कूटस्थकूँ ये ज्ञान होवै नहीं तथापि आभास जयो है ताकूँ कूटस्थका अभिमान होवै है इस कथनका तात्पर्य्य ये है कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्य का अर्थ ये है कि मैं ब्रह्मरूप हूँ तो यहाँ मैं शब्द का अर्थ साभास अन्तःकरण विशिष्ट चेतन है तिसमैं विशेष्य जयो चेतन तिसका तो ब्रह्म कै साथ मुख्य सामानाधिकरण्य है अर्थात् सदा अभेद है जैसैं घटाकाश जयो है ताका महाकाश सैं सदा अभेद है और आभास जयो है तिसका ब्रह्म कै साथ बाधसामानाधिकरण्य है अर्थात् आभासका अपणैं स्वरूप का बाध करिकैं ब्रह्मसैं अभेद है अथवा जैसैं स्थाणु मैं पुरुषका भ्रम होय है तहाँ स्थाणु के ज्ञान कै अनन्तर पुरुष स्थाणु है ऐसैं पुरुषका स्थाणु मैं बाधसामानाधिकरण्य है तैसैं आभासका बाध हो करिकैं ब्रह्म सैं अभेद है यातैं मैं शब्द मैं भान होवै जयो आभास सो ब्रह्मसैं भिन्न नहीं है॥ तो हम कहैं हैं कि आभासवाद मैं आभासकूँ मिथ्या कहा है जैसैं रज्जु मैं सर्प जयो है सो कल्पित है तैसैं ब्रह्ममैं जीव जयो है सो कल्पितहै ये आभास वादका सिद्धान्त है तो तुमहीं विवेक दृष्टितैं देखो मिथ्या कल्पित मैं अभिमान कैसैं होसकै जयो मिथ्याकल्पितमैं अभिमान होय तो जहाँ स्थाणु मैं पुरुष कल्पित है तहाँ कल्पित पुरुषकूँ बी ये अभिमान होणाँ चाहिये कि मैं स्थाणु हूँ परन्तु उस पुरुषकूँ ऐसैं अभिमान होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है यातैं आभास मैं अभिमान का असम्भव है याहीतैं सङ्क्षेही नैं मूल मैं तो ये कही कि आभासकूँ मैं कूटस्थ हूँ ऐसैं अभिमान होयहै और जब टीका लिखी तब आभासका कूटस्थ सैं अभेद तो युक्तितैं सिद्ध किया और ये नहीं लिखा कि आभासकूँ कूटस्थका अभिमान होय है इसमैं कारण ये है कि आभासवाद की प्रक्रियातैं आभासमैं कूटस्थका अभिमान युक्तितैं सिद्ध हो सकै नहीं यातैं आभास मैं कूटस्थ का अभिमान मानणाँ अयुक्त है॥

ओर देखो कि यहाँ सङ्कही नैं कैसी चतुरता किई है कि आभास का कूटस्थ सैं अभेद तो आचार्य नैं सिद्ध किया ओर आभास मैं अभिमान होणेंकी कोई युक्ति कही नहीं इसके मध्य मैं शिष्यका ये प्रश्न लिख दिया है कि अहम्वृत्ति मैं साक्षी ओर आभास दोनूँका भान होय है सो क्रम तैं होय है अथवा क्रम विना होय है सो आप मोकूँ कहो पीछैं इस प्रश्नका उत्तर लिखा है तो इस लेखतैं ये सिद्ध होय है कि आचार्य अपणें शिष्यकूँ आभास मैं अभिमान होणेंकी युक्ति कहते तो सही परन्तु शिष्य नैं आचार्यके उत्तर के मध्य मैं अन्य प्रश्न कर दिया यातैं प्रथम प्रश्न के उत्तर सैं शिष्यकूँ सन्तुष्ट जाणिं करिकैं प्रथम प्रश्नका उत्तर अपूर्ण ही रहा तो वी अन्य प्रश्नके उत्तर दानतैं प्रक्रिया मैं न्यूनता किञ्चित् वी भई नहीं ऐसे स्थल मैं ऐसी चतुरता सैं लेख करणाँ इसमैं सामान्य पण्डित का सामर्थ्य नहीं है देखो आभास मैं अभिमान होणें की युक्ति वी नहीं कही ओर प्रसङ्ग वी विरुद्ध हुवा नहीं यातैं आभास मैं अभिमान होणेंका असम्भव ही है ओर आभास मैं साक्षीके आश्रित अज्ञानका अभिमान होय है ये जयो तुमनैं द्वितीयभाग मैं कही तहाँ जयो हमनैं दोष कहा है सोवी स्मृत कर लेणाँ चाहिये यातैं वी आभास मैं कूटस्थका अभिमान मानणाँ असङ्गत ही है ॥

ओर प्रमाताके स्वरूप के मानणें मैं तुमनैं तीन मत कहे तो यातैं ये सिद्ध होयहै कि प्रमाता वस्तु नहीं है जयो प्रमाता होता तो जैसैं साक्षी कूँ शुद्ध चिद्रूप मानणें मैं किसी आचार्यके विवाद नहीं तैसैं प्रमाताके एक स्वरूपकूँ मानणें मैं वी सर्वकी सम्मति होती यातैं प्रमाता वस्तु नहीं है॥ ओर जयो तुमनैं ये कही कि प्रमाता के विशेष्य भाग मैं तो संसारका सम्भव है नहीं किन्तु साभास अन्तःकरणरूप जयो विशेषण तामैं संसार है ताकी विशिष्ट मैं प्रतीति होय है तहाँ हम ये पूछैं हैं कि ये प्रतीति किस कूँ होय है अर्थात् साक्षीकूँ होय है अथवा आभासकूँ होय है ॥ जयो कहो कि आभासकूँ होय है तो हम पूछैं हैं ये प्रतीति जयो है सो भ्रमरूप है अथवा प्रमारूप है ॥ जयो कहो कि भ्रमरूप है तो हम कहैं हैं कि भ्रम रूप ज्यो प्रतीति तिस कूँ तो तुमनैं अविद्या की वृत्तिरूप मानी है ओर अविद्या कूँ तुम साक्षी के आश्रित मानों हो यातैं आभास मैं इस प्रतीति का मानणाँ असङ्गत है ॥

ओर ज्यो कहो कि इस प्रतीति का अभिमानी है आभास तो हम कहैं हैं कि आभास मैं अभिमान सिद्ध तो हुवा है नहीं ओर ज्यो हठ करिकैं अभिमान मानों तो हम ये पूछैं हैं कि साक्षी मैं इस प्रतीतिकूं मानि करिकैं आभास मैं इस प्रतीति का अभिमान मानोंगे तो ये कहो साक्षी मैं इस प्रतीतिका अनुभव करिकैं ओर आभास आप अभिमान करै है अथवा इस प्रतीतिका अनुभव किये बिना हीं आभास अभिमानकरै है ।

ज्यो कहो कि साक्षी मैं संसार की प्रतीति का अनुभव करिकैं ओर आभास अभिमान करै है तो हम कहैं हैं कि जिसमैं संसार की प्रतीति रहै उसकूं हीं संसारी कहैं हैं तो साक्षी कूं संसारी मानणां पडैगा सो श्रुति विरुद्ध है ओर विद्वानों के अनुभव तैं वी विरुद्ध है काहेतैं श्रुति मैं कहीं वी साक्षी कूं संसारी कहा नहीं किन्तु नित्य मुक्त कहा है ओर विद्वानोंकूं वी साक्षी नित्य मुक्त ही प्रतीत होय है यातैं साक्षी मैं संसार की प्रतीति मानणीं ये असङ्गत है ।

ओर ज्यो कहो कि साक्षी मैं इस प्रतीति का अनुभव किये विनांहीं आभास अभिमान करैहै तो हम कहैंहैं कि आभासनैं अनन्त पदार्थोंका अनुभव नहीं कियाहै तिनका वी इस आभासकूं अभिमान होणां चाहिये से होवै नहीं यातैं अनुभव के विना अभिमान मानणां असङ्गत ही है ।

ओर ज्यो कहो कि ये प्रतीति ज्यो है सो प्रमारूप है तो हम कहैंहैं कि ये प्रमारूप है तो अन्तःकरणकी वृत्तिरूप है ओर प्रमाताके आश्रित है काहेतैं कि तुमनैं पूर्व प्रमाज्ञानकूं प्रमाता के आश्रितही कहाहै ओर इस ज्ञानकूं अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ही कहाहै तो ये प्रतीति ज्योहैसो प्रमाता के विशेष्य भागमैं तो बाधित है काहेतैं कि प्रमाता के स्वरूप मैं विशेष भाग ज्यो है सोही साक्षीहै साक्षीकूं तुम प्रमाज्ञानका आश्रय मानों हो नहीं तो ये प्रतीति विशेषण भाग मैं होगी तो प्रमाताका विशेषण भागहै साभास अन्तःकरण तो ये प्रतीति साभास अन्तःकरण मैं होगी अब ज्यो इस प्रतीति का विशिष्टमैं व्यवहार होगा तो इस व्यवहारकूं अन्तःकरण सहित आभास करैगा तो ज्यो पुरुष विशेषण के धर्मका विशिष्टमैं व्यवहार करैहै उसकूं उन विशेषण विशेष्य जे हैं तिनकी प्रतीति व्यवहार करणें के पूर्वकालमैं रहैहै जैसैं घटके नाश का व्यवहार घटाकाश मैं होय है तहाँ व्यवहार कर्त्ता ज्यो पुरुष ताकूं इस व्यवहारके पूर्वकाल मैं घट ओर आकाश इन दोनूंकी प्रतीति

होवैहै यातैं घटके नाशका व्यवहार घटाकाशमैं करैहै तैसैं अन्तःकरण सहित आभासकूँ प्रमाताका विशेष्यभाग ज्यो साक्षी और विशेषणभाग ज्यो अन्तःकरण सहित आप तिसकी प्रतीति ज्यो है सो व्यवहारके पूर्वकाल मैं होवै नहीं काहेतैं कि साक्षी किसीका बी विषय नहीं और अन्तःकरण सहित आभास ज्यो है ताकूँ विषय करैहै ।

ज्यो कहो कि ये प्रतीति आभास मैं असिद्ध भई तो हम इस प्रतीतिकूँ साक्षी मैं मानैंगे कहेतैं कि साक्षी ज्यो है सो प्रमाताका स्वरूपमैं विशेषण ज्यो साभास अन्तःकरण तिसका बी ज्ञाता है और स्वप्रकाशता करिकैं अपणाँ बी ज्ञाता है तो हम कहैंहैं कि इस प्रतीति कूँ साक्षी मैं मानौंगे तो अविद्याकी वृत्तिरूप मानौंगे ज्यो अविद्याकी वृत्तिरूप मानीतो ये प्रतीति आभास कूँ होवै नहीं ज्यो ये प्रतीति आभास मैं नहीं भई तो आभास कूँ सुखदुःखका अभिमान करिकैं संसारी नहीं मानणाँ चाहिये ज्यो ये संसारी नहीं हुवा तो साक्षी कूँ संसारी मानौं ज्यो साक्षी संसारी हुवा तो संसारी होणैं तैं जितनैं अनर्थ होंगे उनकी प्राप्ति साक्षी मैं मानणीं पड़ैगी सो श्रुति विरुद्ध बी है और विद्वानों के अनुभव तैं बी विरुद्ध है यातैं ये प्रतीति साक्षी मैं मानणीं ये बी असङ्गत ही है ।

ज्यो कहो कि ऐसैं आभासवाद की प्रक्रिया तैं संसार के मानणे की व्यवस्था नहीं भई तो हम अवच्छेदकवाद की प्रक्रियातैं संसार के मानणेकी व्यवस्था करैंगे काहेतैं कि अवछेदकवादमैं अन्तःकरण विशिष्ट चेतन ज्योहै सो तो प्रमाता है और अन्तःकरण उपहित ज्यो चेतन सो साक्षी है तो इस मतमैं एक ही अन्तःकरण मैं विशेषण की दृष्टि तैं तो चेतनमैं प्रमातापणाँ है और उसही अन्तःकरण मैं उपाधि की दृष्टितैं उस ही चेतन मैं साक्षी पणाँ है तो प्रमाताके स्वरूप मैं विशेषण भाग ज्यो अन्तःकरण तामैं संसार है उस की अन्तःकरण विशिष्ठ चेतन मैं प्रतीति होय है तो हम कहैं हैं कि अवच्छेदकवादका तो मानणाँ हीं असङ्गत है काहेतैं कि अन्तःकरण ज्यो है सो अवच्छेदकमात्र होणैं तैं शुद्ध चेतन हीं प्रमाता होय तो घट ज्यो है सो अवच्छेदक होणैं तैं बी शुद्ध चेतन ज्यो है सो प्रमाता होणाँ चाहिये ये जहाँ अवच्छेदकवादका खण्डन है तहाँ विचार सागर मैं विस्तार तैं लिखा है वहाँ विद्यारण्यस्वामीका मत लिखा है सो वहाँ देख लेबो और अवच्छेदकवाद मानणैं मैं ये दोष और है कि

इस मत मैं अन्तःकरण विशिष्टचेतन जयो है सो प्रमाताहे और विशिष्ट नाम विशेषणयुक्तका है और विशेषणका लक्षण तुमनैं ये कहाहे कि स्वरूप के विषैं जिसका प्रवेश होवे ऐसा ज्यो व्यावर्त्तक वस्तु सो विशेषण हे और ये दृष्टान्त काहा है कि जैसैं नील घट है यहाँ नील रूप ज्यो हे सो घटका विशेषण है काहेतैं कि नीलरूपका घट मैं प्रवेश है पीछैं ये कही है कि तैसैं हीं अन्तःकरण ज्यो है तिसका प्रमाता के स्वरूप मैं प्रवेश है यातैं अन्तःकरण ज्यो है सो प्रमाता का विशेषण है सो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि घट जयो है सो तो साकार है यातैं इसके स्वरूप मैं तो नीलरूपका प्रवेश सम्भवे है और साक्षी तो निराकारहे इसके स्वरूपमैं अन्तःकरणका प्रवेश सम्भवे नहीं जयो कहो कि हम तो प्रमाताके स्वरूपमैं अन्तःकरणका प्रवेश कहैंहैं साक्षीके स्वरूपमैं अन्तःकरणकाप्रवेश नहीं कहैं हैं तो हमकहैंहैं कि दृष्टान्त मैं जैसैं नील पदार्थ तैं घटपदार्थ भिन्न है तिसमैं नील पदार्थका प्रवेश है तैसैं अन्तःकरण सैं भिन्न प्रमाता पदार्थ नहीं है किन्तु अन्तःकरणतैं भिन्नतो शुद्धचेतन है सो ही साक्षी है यातैं साक्षीके स्वरूप मैं हीअन्तःकरणकाप्रवेशहै ऐसैं हीं कहणाँ पड़ैगा सो असङ्गतही है ॥ काहेतैं कि तुम साक्षीकूँ असङ्गमानौहो यातैं अवच्छेदकवादका मानणाँअसङ्गतहीहै और जयो हटकरिकैं अवच्छेदकवादकाही अङ्गीकारकरो तो बी विशेषणका धर्म जयो संसार ताकी प्रतीति विशिष्ट मैं सम्भवै नहीं काहेतैं कि विशेषण है अन्तःकरणतिसका धर्म तो है संसार और विशिष्ट है प्रमाता तो इसप्रमातामैं संसारकी प्रतीति किसकूँ होवै इसका विचार करणाँ चाहिये जयो कहो कि अन्तःकरण कूँ ये प्रतीति विशिष्ट मैं होय है तो हम कहैं हैंकि येकथन तो असङ्गत है काहेतैं कि अन्तःकरण तो जड है जयो जडकूँ बी प्रतीति होयतो घटकूँ बी प्रतीतिहोणीं चाहिये और जयो कहो कि ये प्रतीति जयो है सो अन्तःकरणका विशेष्य जयो चेतन ताकूँ विशिष्ट मैं होय है तो हम कहैं हैं कि विशेष्य जयो चेतन सो तो प्रतीतिरूप है यातैं इसकूँ प्रतीति का आश्रय मानणाँ असङ्गत है ।

जयो कहो कि अवच्छेदकवादकी प्रक्रिया तैं संसारके मानणैंकी व्यवस्था नहीं भई तो हम प्रतिबिम्बवादसैं संसार के मानणैंकी व्यवस्था करैं गे तो हम कहैंहैं कि प्रथम तो प्रतिबिम्ब का मानणाँहीं असङ्गत है काहेतैं कि तुमनैं हीं प्रतिबिम्ब के मानणै मैं पूर्व दोष कहाहै और जयो हठ करिकैं

प्रतिबिम्ब ही मानौं तो ऐसें मानोगे कि जैसें दर्पणमें मुखका प्रतिबिम्ब हो-य है तैसें अन्त करण में शुद्ध चेतनका प्रतिबिम्ब होय है तो ये विचार करो कि प्रतिबिम्बवाद में प्रतिबिम्ब मिथ्या तो है नहीं काहेतें कि दर्पणमें जे मुख का प्रतिबिम्ब मानें हैं वे ऐसें कहैहैं कि चक्षुरिन्द्रिय जयो है तिस का ये स्वभाव है कि ये जब मलिनवस्तु सें संयुक्त होय तब तो विषय देश में फैल जाय है और जब ये शुद्ध वस्तुसें संयुक्त होय है उस समय में उस वस्तुके पृष्ट भाग में आवरण होवे नहीं तब तो उस शुद्ध वस्तु में प्रवेश करिकें उसके पृष्ट देश के पदार्थ सें संयुक्त हो करिकें उस पदार्थका ज्ञान करावैहै और जयो उस शुद्ध वस्तुके पृष्ट भागमें कललीका आवरण होय तो वेगतें उस शुद्ध वस्तु सें संयुक्त हुवा जयो चक्षु सो उलटिकें मुखके सन्मुख होजायहै यातें बिम्बरूप ज्यो मुख ताकूं हीं देखै है दर्पण में मुख नहीं है काहेतें कि दर्पणज्यो है सोपापाणकी तरैंह कठोरहै यातें सावयव जयो मुख ताकाप्रवेश दर्पण में होसकैं नहीं परन्तु दर्पणमें मुखकूं देखूंहूं ये प्रतीति होयहै सो प्र-तीति भ्रमरूप है।। तो इस कथन तैं ये अर्थ सिद्ध हुवा कि दर्पणरूप उपाधि तें एक ही मुखमें बिम्ब प्रतिबिम्ब व्यवहार होय है प्रतिबिम्ब जयो है सो बिम्ब तैं भिन्न नहीं यातें मिथ्या नहीं है किन्तु बिम्बरूपही है यातें सत्य है तैसें अन्तःकरण रूप उपाधि के होणें तें एकही चेतन जीवरूप करिकें और परमात्मरूप करिकें प्रतीत होयहै यातें प्रतिबिम्बरूप जीव जयो है सो परमात्मरूप होणें तें आभास की तरैंह मिथ्या नहीं है किन्तु सत्य है ये प्रतिबिम्बवादका सिद्धान्त है।

तो तुम अपणें अनुभव तें निर्णय करो देखो इस कथनतें ये अर्थ सिद्ध हुवा कि प्रतिबिम्ब जयो है सो बिम्ब तैं भिन्न नहीं है किन्तु बिम्ब रूपही है और इसमें भेद प्रतीति जयो है सो दर्पण रूप उपाधि तें संयुक्त हो करि कैं चक्षुरिन्द्रिय ज्यो है सो उलटि करिकें मुखके सन्मुख होजाय है और बिम्बरूप मुखकूं हीं विषय करैहै यातें होय है तो ज्यो पुरुष दर्पणकूं देखै है उसकै दर्पणके दर्शनका साधन चक्षुरिन्द्रिय है सो सावयवहै और दर्पण जयो है सो भी सावयव है यातें दर्पणका सम्बन्ध हो करिकें चक्षुरिन्द्रिय का उलटणां सम्भवै है और दार्ष्टान्त में तो सच्चिदानन्दरूप परमात्मा नि-रवयव है और इस आत्माके अन्तःकरणकूं देखणें का साधन चक्षुरिन्द्रिय की तरैंह कोई सावयव पदार्थ है नहीं कि जयो अन्तःकरणमें संयुक्त हो

करिकैं और उलटि करिकैं आत्माके सन्मुख होय किन्तु आत्माका तो स्वरूपभूत ज्ञानहीं अन्तःकरणका प्रकाशक है सो ज्ञान निरवयव है यातैं अन्तःकरण का सम्बन्ध हो करिकैं ज्ञानका उलटणाँ सम्भवै नहीं तो प्रतिबिम्बवादकी प्रक्रियातैं शुद्ध चेतन मैं बिम्बप्रतिबिम्ब भाव कैसैं हो सकै यातैं प्रतिबिम्बवादका मानणाँ बी असङ्गत ही है ।

अब हम ये पूछैं हैं कि प्रतिबिम्बवाद युक्तिसिद्ध नहीं है तो बी तुम-इसकाही अङ्गीकार करो परन्तु संसार की प्रतीति की व्यवस्था कहो तो तुम ये ही कहोगे कि अन्तःकरण रूप ज्यो उपाधि है तिसमैं संसार है उस संसार की प्रतीति प्रतिबिम्ब मैं होय है जैसैं दर्पणका ज्यो मालिन्य सो दर्पण मैं प्रतिबिम्ब ज्यो मुख तामैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि दर्पण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब है उसमैं मालिन्यकी ज्यो प्रतीति होय है सो बिम्ब ज्यो पुरुष ताकूँ होय है और प्रतिबिम्बकूँ ये प्रतीति होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है तो दार्ष्टान्त मैं बिम्बस्थानीय तो ईश्वर है और प्रतिबिम्बस्थानीय जीव है और दर्पणस्थानीय अन्तःकरण है तो अन्तःकरण का धर्म ज्यो संसार सो जीवमैं ईश्वरकूँ प्रतीत होगा जयो संसार जीव मैं ईश्वरकूँ प्रतीत होगा तो जैसैं बिम्ब जयो पुरुष ताका दर्पण मैं जयो प्रतिबिम्ब तामैं मालिन्यकी प्रतीति बिम्बकूँ है तो बिम्ब जयो पुरुष सो ही यत्न करिकैं दर्पण के मालिन्यकूँ दूर करै है और पीछैं उस दर्पण मैं अपणैं यथार्थ रूपकूँ देखै है तैसैं बिम्ब जयो शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा ताका अन्तःकरण मैं जयो प्रतिबिम्ब तामैं संसार की प्रतीति बिम्बकूँ होगी तो बिम्ब है शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा तो वेही यत्न करिकैं अन्तःकरण मैं जयो संसार है ताकूँ दूर करिकैं और अन्तःकरण मैं अपणैं यथार्थ रूपकूँ देखैहै ऐसैं मानों जयो ऐसैं अङ्गीकार किया तो ये कहो तुम अन्तःकरण मैं प्रतिबिम्ब हो अथवा बिम्ब हो जयो कहो कि मैं संसारी हूँ ये प्रतीति होय है यातैं प्रतिबिम्ब हूँ तो हम कहैं हैं कि जैसैं घट नीलरूप वाला है ऐसी प्रतीति होय है तो ये प्रतीति नीलरूप और इसका आधार जयो घट ताकूँ विषय करै है और विषय तैं प्रतीति पदार्थ भिन्न होय है ये सर्वानुभवसिद्ध है तैसैं मैं संसारी हूँ ये जयो प्रतीति ताका विषय संसार वाला मैं शब्दका अर्थ प्रतिबिम्ब है तो ये प्रतीति संसार और मैं शब्द का अर्थ जयो प्रतिबिम्ब इनतैं भिन्न होगी जयो ये प्रतीति भिन्न भई तो

बिम्बरूप ही होगी जयो बिम्बरूप भई तो ये ही परमात्मरूप होगी जयो ये परमात्मरूप भई तो ये विचार करो कि तुम इस प्रतीति सैं कोई भिन्न पदार्थ हो अथवा ये जयो प्रतीति तद्रूप ही हो जयो कहोकि हम इस प्रतीतिसैं भिन्न हैं तो हम कहैं हैं कि तुम इस प्रतीतिसैं भिन्न हो तो संसार और मैं शब्द का अर्थ प्रतिबिम्ब ये इस प्रतीतिके विषय हैं तुमारे विषय नहीं हैं ऐसैं मानणाँ पडैगा जयो ऐसैं मान्याँ तो अन्यका अनुभव किया पदार्थ अन्यकूँ प्रतीत होवै नहीं तो तुमकूँ संसार और मैं शब्दका अर्थ प्रतिबिम्ब ये प्रतीत नहीं होणैं चाहियें परन्तु ये तो तुमकूँ प्रतीत होय हैं यातैं तुम संसार और मैं शब्दका अर्थ इनकी जयो प्रतीति तद्रूप हो जयो तुम इस प्रतीतिरूप भये तो इस प्रतीतिसैं भिन्न कोई बिम्बपदार्थ है नहीं यातैं तुमहीं बिम्बरूप भये जयो तुम बिम्बरूप भये तो प्रतिबिम्बवाद मैं बिम्ब ही परमात्मा है तो तुम परमात्मरूप भये अब बिम्बरूप जे तुम तिनमैं कर्त्तापणाँ है तो अपणें प्रतिबिम्ब मैं ज्यो संसार प्रतीत होय है तिसकूँ निवृत्त करिकैं अपणें प्रतिबिम्बकूँ देखो और ज्यो तुमारे मैं कर्त्ता पणाँ नहीं है तो अपणें प्रतिबिम्बकूँ संसार करिकैं युक्त देखो॥ज्यो कहोकि मेरे बिम्बरूप मैं तो कर्त्तापणाँ है नहीं यातैं मैं तो प्रतिबिम्ब मैं ज्यो संसार प्रतीत होय है ताकूँ निवृत्त कर सकूँ नहीं आप ही कृपा करिकैं कोई यत्नतैं प्रतिबिम्ब मैं प्रतीत होवै ज्यो संसार ताकूँ निवृत्त करो तो हम कहैं हैं कि प्रतिबिम्ब मैं संसार प्रतीत होय है उसका स्वरूप ये है कि वैराग्य क्षमा उदारता काम क्रोध लोभ यत्न आलस्य भ्रम तन्द्रा इत्यादिक तो इनके विषय मैं श्रीकृष्ण महाराज ऐसैं आज्ञा करैं हैं कि

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव ।
नद्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि प्रकाश कहिये सत्व के कार्य वैराग्यादिक और प्रवृत्ति कहिये रजोगुणके कार्य कामादिक और मोह कहिये तमोगुणके कार्य आलस्यादिक इनमैं प्रवृत्त भये जे रज तमके कार्य तिनमैं तो ज्यों द्वेष नहीं करै है और निवृत्त जे सत्वके कार्य तिनकी इच्छा नहीं करै है यो पुरुष गुणातीत है १ तो प्रतिबिम्ब मैं ज्यो संसार प्रतीत होय है सो सत्वरजतमके कार्यही हैं इनमैं रागद्वेषके त्यागकी आज्ञा श्रीकृष्णमहाराज नैं किई है यातैं इस विषय मैं हम उपाय कर सकैं नहीं परन्तु तुम तो क-

तार्थ है। काहेतैं कि तुमारे कथन तैं हमकूँ ये निश्चय होय है कि तुमकूँ अपणाँ स्वरूप अकर्त्ता साक्षी प्रतीत होय है यहाँ श्रुतिके उपदेश की समाप्ति है ।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुमनैं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताके करणगत भेदतैं दोय कहे हैं तिनमैं शङ्कर स्वामीके मतसैं तो शब्दकूँ करण कहा है और वाचस्पति मिश्रके मतसैं मनकूँ करण कहा है तो जे शब्दकूँ करण मानैं हैं वे वाचस्पति के मतमैं दोष कहा कहैं हैं ॥ ज्यो कहोकि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिसकूँ मनसैं नहीं जाणैं है तो इस श्रुति मैं मन करण नहीं है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है यातैं मनकूँ करण नहीं मानैं हैं और

तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति ॥

ये श्रुतिहै इसका अर्थ ये है कि वेदवचन करिकैं ब्राह्मण इस आत्माकूँ जाणनैं की इच्छा करैं हैं तो इस श्रुति मैं आत्माके ज्ञानमैं वेदवाक्य करण है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है यातैं शब्दकूँ करण मानैं हैं वे वेद वाक्य दोय प्रकार के हैं एक तो अवान्तर वाक्यरूप है और दूसरा महावाक्यरूप है ज्यो वाक्य परमात्माकूँ अस्तिरूप करिकैं अर्थात् है ऐसैं बोधन करै सो अवान्तर वाक्य है और ज्यो वाक्य जीव ब्रह्मकी एकता का बोधन करै सो महावाक्य है वे अवान्तर वाक्य बी दोय प्रकार के हैं तिनमैं एक तो स्वरूपलक्षण रूप है जैसैं

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ॥

ये वाक्य स्वरूपलक्षणरूप है काहेतैं कि ये वाक्य परमात्माके स्वरूप का प्रतिपादन करै है ब्रह्म ज्यो परमात्मा सो सत्य है ज्ञानरूप है और अनन्तरूप है ये इस श्रुतिका अर्थ है और दूसरा तटस्थलक्षणरूप वाक्य है जैसैं

यतोवाइमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि
जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्ब्रह्म॥

ये श्रुति है इसका अर्थ द्वितीय भागमैं लिख दिया है ये वाक्य तट-स्थलक्षण रूपहै काहेतैं कि इस श्रुतिमैं ब्रह्मकूँ जगत् का कारण कहा है और ब्रह्मका स्वरूप इस श्रुति मैं नहीँ कहाहै और महावाक्य जेहैं ते जीव ब्रह्मकी एकता का बोधन करैं हैं वे द्वितीय भागके अन्त मैं कहि आये हैं सो वहाँ देखि लेवो अवान्तर वाक्यौं करिकैं परोक्ष ज्ञान होय है और महावाक्यन तैं अपरोक्ष ज्ञान होय है सो महावाक्य ओत्र सम्बद्ध होवै तब इस मैं अपरोक्ष ज्ञान होय है यहाँ कोई तो ये कहै है कि श्रवण मनन निदध्यासन जे हैं तिन करिकैं सहित ज्यो वाक्य ताकरिकैं अपरोक्षज्ञान होय है और केवल वाक्य करिकैं परोक्ष ज्ञान हीँ होवै है और सिद्धान्त ये है कि महावाक्य तैं अपरोक्ष ज्ञान हीँ होवै है जिसके मत मैं श्रवणादि सहित वाक्य तैं अपरोक्ष ज्ञान होय है वो ऐसैं कहै है कि केवल वाक्य तैं जिनके मत मैं अपरोक्ष ज्ञान होयहै ऐसैं मानैं हैं उनके मत मैं श्रवणादिक व्यर्थ हैं काहेतैं कि अपरोक्ष वस्तु मैं असम्भावना और विपरीत भावना ये होवैं नहीँ इसमैं यद्यपि बहुत ग्रन्थ-कारोँ की सम्मति है तथापि ये मत उत्तम नहीँ काहेतैं कि शब्द का ये स्वभाव है कि ज्यो वस्तु व्यवहित होवै तिसका शब्दसैं परोक्ष ज्ञानहीँ होवै है जैसैं स्वर्गादिकका शास्त्र सैं परोक्षज्ञान हीँ होवैहै और ज्यो वस्तु अव्यव-हित होवै तिसका शब्द सैं परोक्षज्ञान और अपरोक्षज्ञान दोनूँ होवैं हैं जहाँ अव्यवहित वस्तुकूँ शब्द अस्तिरूप तैं बोधन करै तहाँ तो अव्यवहित वस्तुकावी परोक्ष ही ज्ञान होयहै जैसैं दशम पुरुषहै इस वाक्यतैं दशम पु-रुषका परोक्षही ज्ञान होवैहै और जहाँ अव्यहित वस्तुकूँ शब्द इदंरूप करि कैं बोधन करै है तहाँ अव्यवहित वस्तुका अपरोक्ष ज्ञानहीँ होवै है जैसैं शब्द सैं दशम पुरुषका अपरोक्ष ज्ञानहीँ होवै है तैसैं ब्रह्म ज्यो है सो सर्व का आत्मा है यातैं अत्यन्त अव्यवहित है ताकूँ अवान्तर वाक्य अस्ति-रूप करिकैं बोधन करैं हैं यातैं अवान्तर वाक्योँ करिकैं ब्रह्म का वी परोक्ष ज्ञान हीँ होवै है और तैसैं हीँ महावाक्य दशम तू है इस वाक्य की तरैँह ब्रह्मकूँ श्रोता के आत्मरूप करिकैं बोधन करै है यातैं दशम पुरुष की तरैँह महा वाक्य तैं ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान हीँ होवै है और ज्यो पूर्व ये कहीकि अपरोक्ष वस्तु मैं असम्भावना और बिपरीत भावना होवै नहीँ इस का समाधान ये है कि ये श्लोक सकल विद्वज्जन जाणैं हैं कि

चक्रं सेव्यं नृपः सेव्यो न नृपश्चक्रवर्जितः
नृपचक्रविरोधेन भारविर्भूततां गतः ॥१॥

इस का अर्थ ये है कि राजा का चक्र बी सेवन करवे योग्य है ओर राजा बी सेवन करवे योग्यहै ओर चक्रतैं विपरीत हे करिकैं राजाका सेवन करणाँ उचित नहीँ है राजाके चक्रसैं विरोध करिकैं भारविनाम कवि ज्योहै सो भूत पणेंकूँ प्राप्त हुवा १ इसकी वार्तासर्व विद्वज्जनोंमैं प्रसिद्ध है तो जैसैं अपरोक्ष ज्यो भारवि तामैं विपरीत भावना दूर भई नहीँ तैसैं महावाक्य करिकैं ब्रह्मका अपरोक्ष ज्ञान हीँ होवै है परन्तु जिनके अन्तःकरण मैं असम्भावना ओर विपरीत भावना ये दोष होवैं तिनकै महावाक्यतैं हुवा ज्यो ज्ञान सो निष्फल है यातैं इन दोषोंकी निवृत्ति के अर्थ श्रवणादिक कर्त्तव्य हैं ऐसैं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण शब्दकूँ मानैं हैं ये मनकी करणताको निषेध करैं हैं ।

तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो असङ्गत है काहेतैं कि श्रुति ज्यो है सो जैसैं शब्दकूँ करण कहै है तैसैं मनकूँ बी करण कहै है देखो

मनसैवेदमापितव्यम् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ये ब्रह्म मनसैं हीँ जाण्याँ जाय है तो इस श्रुति मैं मनहीँ ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है और ज्यो ये कही कि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये श्रुति मन करण नहीँ है ऐसैं कहै है यातैं हम मनकूँ करण नहीँ मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्तंते ॥

ये श्रुति शब्द ज्यो है सो ज्ञानका करण नहीँ है ऐसैं कहै है जिससैं वाणी निवृत्त होय हैं ये इस श्रुतिका अर्थ है यातैं शब्द ज्यो है सो करण नहीँ है ।

ज्यो कहोकि शाब्दी ज्यो प्रमा उसका करण शब्द है वो शाब्दीप्रमा दोय प्रकार की है एक तो व्यावहारिकी प्रमाहै ओर दूसरी पारमार्थिकी प्रमा है

ये श्रुति है इसका अर्थ द्वितीय भागमैं लिख दिया है ये वाक्य तटस्थलक्षण रूपहै काहेतैं कि इस श्रुतिमैं ब्रह्मकूँ जगत् का कारण कहा है और ब्रह्मका स्वरूप इस श्रुति मैं नहीं कहाहै और महावाक्य जेहैं ते जीव ब्रह्मकी एकता का बोधन करैं हैं वे द्वितीय भागके अन्त मैं कहि आये हैं सो वहाँ देखि लेवो अवान्तर वाक्यौं करिकैं परोक्ष ज्ञान होय है और महावाक्यन तैं अपरोक्ष ज्ञान होय है सो महावाक्य श्रोत्र सम्बद्ध होवै तब इस सैं अपरोक्ष ज्ञान होय है यहाँ कोई तो ये कहै है कि श्रवण मनन निदिध्यासन जे हैं तिन करिकैं सहित ज्यो वाक्य ताकरिकैं अपरोक्ष ज्ञान होय है और केवल वाक्य करिकैं परोक्ष ज्ञान हीं होवै है और सिद्धान्त ये है कि महावाक्य तैं अपरोक्ष ज्ञान हीं होवै है जिसके मत मैं श्रवणादि सहित वाक्य तैं अपरोक्ष ज्ञान होय है वो ऐसैं कहै है कि केवल वाक्य तैं जिनके मत मैं अपरोक्ष ज्ञान होयहै ऐसैं मानैं हैं उनके मत मैं श्रवणादिक व्यर्थ हैं काहेतैं कि अपरोक्ष वस्तु मैं असम्भावना और विपरीत भावना ये होवैं नहीं इससैं यद्यपि बहुत ग्रन्थकारों की सम्मति है तथापि ये मत उत्तम नहीं काहेतैं कि शब्द का ये स्वभाव है कि ज्यो वस्तु व्यवहित होवै तिसका शब्दसैं परोक्ष ज्ञानहीं होवै है जैसैं स्वर्गादिकका शास्त्र सैं परोक्षज्ञान हीं होवैहै और ज्यो वस्तु अव्यवहित होवै तिसका शब्द सैं परोक्षज्ञान और अपरोक्षज्ञान दोनूँ होवैं हैं जहाँ अव्यवहित वस्तुकूँ शब्द अस्तिरूप तैं बोधन करै तहाँ तो अव्यवहित वस्तुकावी परोक्ष ही ज्ञान होयहै जैसैं दशम पुरुषहै इस वाक्यतैं दशम पुरुषका परोक्षही ज्ञान होवैहै और जहाँ अव्यहित वस्तुकूँ शब्द इदंरूप करिकैं बोधन करै है तहाँ अव्यवहित वस्तुका अपरोक्ष ज्ञानहीं होवै है जैसैं शब्द सैं दशम पुरुषका अपरोक्ष ज्ञानहीं होवै है तैसैं ब्रह्म ज्यो है सो सर्व का आत्मा है यातैं अत्यन्त अव्यवहित है ताकूँ अवान्तर वाक्य अस्तिरूप करिकैं बोधन करैं हैं यातैं अवान्तर वाक्यों करिकैं ब्रह्म का वी परोक्ष ज्ञान हीं होवै है और तैसैं हीं महावाक्य दशम तू है इस वाक्य की तरैंह ब्रह्मकूँ श्रोता के आत्मरूप करिकैं बोधन करै है यातैं दशम पुरुष की तरैंह महावाक्य तैं ब्रह्मका अपरोक्षज्ञान हीं होवै है और ज्यो पूर्व ये कहीकि अपरोक्ष वस्तु सैं असम्भावना और बिपरीत भावना होवै नहीं इस का समाधान ये है कि ये श्लोक सकल विद्वज्जन जाणैं हैं कि

चक्रं सेव्यं नृपः सेव्यो न नृपश्चक्रवर्जितः
नृपचक्रविरोधेन भारविर्भूततां गतः ॥१॥

इस का अर्थ ये है कि राजा का चक्र भी सेवन करने योग्य है और राजा भी सेवन करने योग्यहै और चक्रतैं विपरीत हो करिकैं राजाका सेवन करणाँ उचित नहीं है राजाके चक्रसैं विरोध करिकैं भारविनाम कवि ज्योहै सो भूत पणेंकूं प्राप्त हुवा १ इसकी वार्तासर्व विद्वज्जनों मैं प्रसिद्ध है तो जैसैं अपरोक्ष ज्यो भारवि तामैं विपरीत भावना दूर भई नहीं तैसैं महावाक्य करिकैं ब्रह्मका अपरोक्ष ज्ञान हीं होवै है परन्तु जिनके अन्तःकरण मैं असम्भावना और विपरीत भावना ये दोष होवैं तिनकै महावाक्यतैं हुवा ज्यो ज्ञान सो निष्फल है यातैं इन दोषोँ की निवृत्ति के अथ श्रवणादिक कर्त्तव्य हैं ऐसैं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण शब्दकूं मानैं हैं ये मनकी करणताको निषेध करैं हैं ।

तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो असङ्गत है काहेतैं कि श्रुति ज्यो है सो जैसैं शब्दकूं करण कहै है तैसैं मनकूं भी करण कहै है देखो

मनसैवेदमाप्तिव्यम् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ये ब्रह्म मनसैं हीं जाणयाँ जाय है तो इस श्रुति मैं मनहीं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है और ज्यो ये कही कि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये श्रुति मन करण नहीं है ऐसैं कहै है यातैं हम मनकूं करण नहीं मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्तते ॥

ये श्रुति शब्द ज्यो है सो ज्ञानका करण नहीं है ऐसैं कहै है जिससैं वाणी निवृत्त होय हैं ये इस श्रुतिका अर्थ है यातैं शब्द ज्यो है सो करण नहीं है ।

ज्यो कहोकि शाब्दी ज्यो प्रमा उसका करण शब्द है वो शाब्दीप्रमा दोय प्रकार की है एक तो व्यावहारिकी प्रमाहै और दूसरी पारमार्थिकी प्रमा है

वो व्यावहारकी प्रमा वी दोय प्रकारकी है एक तो लौकिक वाक्यसैं होयहै और दूसरी वैदिक वाक्य सैं होय है पदोंके समुदायकूँ वाक्य कहैं हैं अर्थ सहित वर्ण रूप होय उसकूँ पद कहैं हैं पद के श्रवण सैं पदार्थ स्मृति होय है उस पदार्थ की स्मृति द्वारा शाब्दी प्रमा होय है ऐसैं पदार्थस्मृति द्वारा शाब्दी प्रमाका करण शब्द है उसकूं हीं पद कहैं हैं वो पद दोय प्रकारका है एक तो शक्त और दूसरा लाक्षणिक है पदका और पदार्थका ज्यो सम्बन्ध सो वृत्तिहै वो वृत्ति दोय प्रकार की है एक तो शक्ति है और दूसरी लक्षणा है शक्ति वृत्ति करिकैं पद जिस अर्थका बोध न करै उस अर्थकूँ शक्यार्थ कहैं हैं और उन पदकूँ शक्त कहैं हैं और लक्षणा वृत्ति करिकैं पद जिस अर्थका बोधनकरै उन अर्थकूँ लक्ष्यार्थ कहैं हैं और उस पदकूँ लाक्षणिक कहैं हैं वो लक्षणा तीन प्रकारकी है जहती १ अजहती २ और जहदजहती ३ इसकूं हीं भागत्याग लक्षणा कहैं हैं जहाँ शक्य अर्थका सर्वका त्याग होय तहाँ जहल्लक्षणा होय है जैसैं किसी नैं प्रश्न किया कि तुमारा ग्राम कहाँ है तो उत्तरदातानैं कहा मेरा ग्राम गङ्गा जी मैं है तो यहाँ गङ्गा शब्दका शक्य अर्थ प्रवाह है उसमैं तो ग्राम होसकै नहीं यातैं गङ्गा पदकी तीर मैं लक्षणा है अर्थात् गङ्गापद ज्यो है सो तीररूप अर्थकूँ कहै है यहाँ जहतीलक्षणा है काहेतैं कि यहाँ गङ्गा पदका प्रवाहरूप ज्यो अर्थ ताका त्यागहै और जहाँ शक्य अर्थ का तो त्याग होवै नहीं और अन्यअर्थकावी ग्रहण होय तहाँ अजहल्लक्षणा होय है जैसैं छत्री पुरुष जायहैं यहाँ छत्री पुरुष और इनतैं भिन्न जे पुरुष ते छत्री शब्दतैं लिये जाय हैं यहाँ छत्री शब्द ज्यो है सो छत्रधारी पुरुष और इनतैं भिन्न जे पुरुष तिनका बोधन करै है यातैं यहाँ अजहती लक्षणा है और जहाँ शक्य अर्थमैं एक भाग का त्याग होय तहाँ भागत्याग लक्षणा होयहै जैसैं

सोयं देवदत्तः ॥

अर्थात् वो ये देवदत्त है यहाँ सो शब्दका अर्थ है भूत काल विशिष्ट और ये शब्द का अर्थहै वर्त्तमान काल विशिष्ट तो ये दोनूँ विशेषण देवदत्त के हैं यातैं देवदत्त पिण्डकूँ कहैं हैं तो इन दोनूँ शब्दों के अर्थोंमैं भूतकाल और वर्त्तमान काल ये विरुद्ध भाग हैं इन का त्याग करिकैं केवल तत् शब्द का अर्थ और केवल इदं शब्द का अर्थ ज्यो देवदत्त पिण्डमात्र, ताका बोध

भागत्याग लक्षणा सैं होय है तैसैं हीं महावाक्य बी भागत्याग लक्षणा करिकैं जीव और ब्रह्मकी एकता बोधन करैं हैं देखो

तत्वमसि ॥

ये महा वाक्य है यहाँ तीन पद हैं एक तो तत् पद है और दूसरा त्वम्पद है और तीसरा असि पद है तत्पदका शक्य अर्थ मायाविशिष्ट चेतन है और त्वम्पदका शक्य अर्थ अविद्या विशिष्ट चेतन है और असि पद का अर्थ सत्ता है तो इस का अर्थ ये हुवा कि वो तू है तो इस वाक्य मैं तत्पदशक्यार्थ और त्वम्पदशक्यार्थ इनकी एकता प्रतीत होयहै सो सम्भवै नहीं काहे तैं कि तत् पदका शक्यार्थ ईश्वर है सो सर्वज्ञ है और त्वम्पदका शक्यार्थ जीव है सो अल्पज्ञ है सर्वज्ञ और अल्पज्ञ इनकी एकता होा सकै नहीं यातैं ईश्वर मैं सर्वज्ञता मायाकृत है और जीवमैं अल्पज्ञता अविद्याकृत है तो ये दोनूं धर्म औपाधिक हैं स्वरूपतैं ये चिद्रूप हैं यातैं उपाधि भाग का त्याग करिकैं महावाक्य शुद्ध चिद्रूप मैं दोनूं की एकता का बोधन करै है सो भागत्याग लक्षणा करिकैं बोधन करैहै तो इस कथन सैं ये अर्थ सिद्ध हुवा कि

तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति ॥

ये श्रुति ज्यो शब्दकूं करण कहै है सो लक्षणा वृत्ति करिकैं शब्दकूं शाब्दी प्रमाका करण कहैहै और

यतो वाचो निवर्त्तन्ते ॥

ये श्रुति ज्यो शब्दकी करणताको निषेध करैहै सो शक्ति वृत्ति करिकैं शब्द ज्यो है सो शाब्दी प्रमा का करण नहीं है ऐसैं कहैहै यातैं हम ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण शब्दकूं मानैं हैं।

तो हम कहैं हैं कि ज्यो मनकूं करण मानैं है सो ऐसैं कहैहै कि जैसैं घटादिपदार्थोंका प्रत्यक्ष होय है तहाँ अन्तःकरण की वृत्ति नेत्रादि द्वारा निकसि कैं घटादिक विषयके समानाकार होय है तहाँ वृत्ति तो आवरणभङ्ग करैहै और आभास ज्यो है सो विषय को प्रकाश करैहै इस आभासकूं फल चेतन कहैहै सो घटके प्रत्यक्षमैं तो वृत्तिव्याप्ति बी रही और फलव्याप्ति बी रही काहेतैं कि वृत्ति मैं तो आवरण भङ्ग रूप उपयोग सिद्ध

ओर चिदाभासनैं प्रकाश रूप उपयोग किये ओर जब आत्माका मनसैं साक्षात्कार होय है तहाँ वृत्ति सैं आवरण भङ्ग होय है यातैं वृत्ति व्याप्ति तो है परन्तु चिदाभास ज्यो है सो आत्मा का प्रकाश करै नहीं जैसैं दीप ज्यो है सो सूर्यका प्रकाश करै नहीं यातैं आत्मा का ज्यो प्रत्यक्ष तहाँ फल व्याप्ति नहीं है तो इस कथन तैं ये अर्थ सिद्ध हुआ कि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये ज्यो श्रुति सो मन की करणताको निषेध करैहै सो तो फल व्याप्ति को निशेध करैहै ओर

मनसैवेदमापितव्यम् ॥

ये ज्यो श्रुतिसो मनकूँ करण कहैहै सो वृत्तिव्याप्ति करिकैं मनकूँ करण कहैहै ऐसैं ब्रह्मज्ञान रूप ज्यो प्रमा ताका करण मनकूँ मानैं है अब जैसैं शब्द की करणता श्रुतिसिद्ध भई तैसैं मन की करणता वी श्रुतिसिद्ध भई तो भाष्यकार शब्द कूँ तो करण मानैंहैं ओर मनकूँ करण नहीं मानैं हैं इसमैं गूढ तात्पर्य कहाहै सो कहो ।

ज्यो कहो कि मन ज्यो है सो इन्द्रिय नहीं है काहेतैं कि चक्षुरादि इन्द्रियों के जैसैं रूपादिक जे हैं ते असाधारण विषय हैं तैसैं मनका कोई असाधारण विषय नहीं है १ ओर श्रीकृष्ण महाराज ऐसैं आज्ञा करैं हैं कि

इन्द्रियेभ्यः परं मनः ॥

इसका अर्थ ये है कि मन ज्यो है सो इन्द्रियों तैं भिन्न है २ ओर अन्तःकरण का अवस्था विशेष ज्योहै सो मन है तो अन्तःकरण ज्यो है सो ज्ञान का आश्रय है यातैं कर्त्ताहै तो करण होसकै नहीं ३ यातैं हम मनकूँ करण नहीं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि दोय हेतु तो तुमनैं मनकूँ इन्द्रिय नहीं माननैं मैं कहे ओर एक हेतु तुमनैं मनकूँ करण नहीं माननैं मैं कहा तो इनका समाधान ये है कि सुखदुःखादिक जे हैं ते मनके असाधारण विषय हैं यातैं तो प्रथम हेतु कहा सो असङ्गत है ओर

इन्द्रियेभ्यः परं मनः ॥

यहाँ इन्द्रिय शब्द बाह्य इन्द्रियों का वाचक है यातैं द्वितीय हेतु कहा सो असङ्गत है ओर अन्तःकरण ज्यो है सो ज्ञानका आश्रय है यातैं

कर्त्ता है ओर मन जो है सो अन्तःकरणका परिणाम है यातैं करण है तो तृतीय हेतु कहा सो वी असङ्गतहै ॥ ज्यो कहो कि मनकूँ करण मानोंगे तो ब्रह्मप्रमाकूँ दोयप्रमाणोंसैं जन्य मानणीं पडैगी काहेतैं कि भाष्यकार तो शब्दकूँ करण कहैहैं ओर आपके कथनतैं मन ज्यो है सो करण सिद्ध होय है आप ही देखो न्यायवाले वी चाक्षुषादि प्रमाका करण वाह्य इन्द्रियकूँ हीं मानैं हैं ओर मनकूँ करण नहीं मानैं हैं किन्तु मनकूँ सहकारी ही मानैं हैं ओर सुखादिकों के प्रत्यक्षमैं मनकूँ हीं करण मानैं हैं ओर जहाँ दोय इन्द्रियों करिकैं वस्तु जाणयाँ जाय तहाँ दोय प्रमा मानैं हैं जैसैं घट ज्यो है सो चक्षुसैं वी जाणयाँ जाय है ओर त्वक् सैं वी जाणयाँ जाय है तो यहाँ चाक्षुष प्रमा त्वाच प्रमा ऐसैं दोय प्रमा मानैं हैं अब यहाँ शब्द प्रमाण करिकैं ओर मनःप्रमाण करिकैं ब्रह्मज्ञान रूप एक प्रमा मानैं तो दृष्ट विरोध होय है यातैं हम मनकूँ करण नहीं मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्ष दोय प्रमाणों सैं होय है यातैं दृष्टविरोध नहीं है देखो

सोयं देवदत्तः॥

अर्थात् वो ये देवदत्त है येप्रतिभिज्ञा प्रत्यक्ष है यहाँ संस्काररूप व्यापार द्वारा अनुभव करण है ओर सम्बन्ध रूप व्यापार द्वारा इन्द्रिय करण है तो ये सिद्ध हुवा कि दोय प्रमाणों सैं वी एक प्रमा होय है यातैं दृष्ट विरोध नहीं है तो मनकूँ करण मानणाँ असङ्गत नहीं हुवा यातैं मनकूँ करण मानों ॥ ज्यो कहो कि प्रतिभिज्ञा प्रत्यक्ष मैं करण तो इन्द्रिय ही है ओर अनुभवजन्यसँस्कार तो सहकारि कारण है यातैं ये ज्ञान तो एक प्रमाण जन्य है तो इस के दृष्टान्त तैं ब्रह्मज्ञानरूप प्रमा दोय प्रमाणों सैं जन्य हो सकै नहीं ।। तो हम कहैं हैं कि ब्रह्मज्ञान रूप प्रमाका करण वी मनकूँ हीं मानों शब्द तो सहकारि कारण है ॥ ज्यो कहो कि प्रत्यक्षज्ञानका करण इन्द्रिय होय है ओर मनकूँ इन्द्रिय मानणें मैं विवाद है यातैं हम मनकूँ करण नहीं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि मनकूँ कोई आचार्य तो इन्द्रिय मानैं हैं शब्दकूँ तो कोई वी आचार्य इन्द्रिय मानैं नहीं तो शब्द ज्यो है सो ब्रह्मज्ञानरूप प्रमाकूँ कैसैं उत्पन्न कर सकै ये तुमहीं विचार करो ओर श्रुति ज्यो है सो तो जैसैं शब्दकूँ करण कहै है तैसैं मनकूँ वी करण कहै है ओर जैसैं मनकी करणता को निषेध करै है तैसैं शब्द की करणताको वी निषेध करै है ओर जैसैं शब्दकी करणता ओर शब्दकी करणता को निषेध

इनकी व्यवस्था तुम करो हो तैसें मनकी करणता और मनकी करणताका निषेध इनकी व्यवस्था मनकूं करण मानवे वाले करें हैं तो यहाँ श्रुतिका हृदय गुरुगम्य है ॥

और देखो कि तुमनें लक्षणावृत्ति करिकें शब्दकूं करण कहा है तहाँ ये दोष और है कि शक्यका लक्ष्य चेतन सें सम्बन्ध मानों तो

असंगो ह्ययं पुरुषः ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ये पुरुष ज्यो है सो असङ्ग है यातें श्रुतिसें विरोध होगा और ज्यो शक्य का लक्ष्यचेतन सें सम्बन्ध नहीं मानों तो लक्षणा हो सके नहीं काहेतें कि शक्यका सम्बन्ध ज्यो है सो ही लक्षणा है ज्यो कहोकि वाच्य अर्थके विषैं दोय भाग हैं एक तो जड भाग है और दूसरा चेतन भाग है वाच्य भागमैं हीं केवल चेतन ज्यो है सो लक्ष्य है यातें वाच्य चेतन का लक्ष्य चेतन सें तादात्म्य सम्बन्ध है सो कल्पित है कल्पित सम्बन्ध करिकें वस्तुके स्वरूप को हानी होवै नहीं यातें श्रुतिनें ज्यो आत्माकूं असङ्ग कहा उसकी हानि नहीं है तो हम कहैं हैं कि ऐसें महावाक्यमैं लक्षणा मानोंगे तो तत् पद और त्वम्पद इनका अर्थ एक अखण्ड चेतन होगा तो पुनरुक्ति दोष होगा ज्यो पुनरुक्ति दोष होगा तो घट ज्यो है सो घट है इस वाक्यकी तरँहं महावाक्य अप्रमाण होगा और ज्यो दोनूं पदों का लक्ष्य अर्थ चेतन भिन्न मानोंगे तो महावाक्यों की अभेदबोधकता नहीं हो सकैगी ।

ज्यो कहो कि मायाविशिष्ट चेतन और अन्तःकरणविशिष्ट चेतन ये तो तत् पद और त्वम्पद इनके शक्य अर्थ हैं और इन करिकें उपहित चेतन लक्ष्य अर्थ है उपाधि भेदतें चेतन मैं भेद है यातें तो पुनरुक्ति दोष नहीं है और परमार्थदृष्टितें दोनूं चेतन अभिन्न हैं यातें महावाक्यों की अभेदबोधकता सम्भवै है ऐसें तत्पदार्थ और त्वम्पदार्थ ये उद्देश्यविधेयभाव करिकें अभेदबोधक हैं तो हम पूछैं हैं कि तुमनें उद्देश्यविधेयभाव करिकें महावाक्योंकूं अभेदबोधक कहे तो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि तत्पद के अर्थ मैं त्वम्पद के अर्थ के अभेद का विधान है और त्वम्पद के अर्थ मैं तत्पद के अर्थके अभेदका विधान है अर्थात् वो तू है और तू वो है ये अर्थ सिद्ध होय है तो उद्देश्यविधेयभाव मानवें का तात्पर्य कहा है सो कहो ॥ ज्यो कहो कि तत्पद के अर्थ मैं परोक्षता भ्रम-

कूँ निवृत्त करणेँ के अर्थ तो तत्पद्के अर्थ मैं त्वम्पद्के अर्थके अभेद का विधान है और त्वम्पद्के अर्थ मैं परिच्छिन्नता भ्रम निवृत्त करणेँ के अर्थ त्वम्पद्के अर्थ मैं तत्पद्के अर्थके अभेद्का विधान है तो हम कहैं हैं कि महावाक्यतैं ज्यो ज्ञान हुवा उस करिकैं तत्पद्के अर्थ मैं परोक्षता निवृत्त भई और त्वम्पद्के अर्थ मैं परिच्छिन्नता निवृत्त भई तो आत्मज्ञानीकूँ अपणाँ स्वरूप अपरोक्ष पूर्ण प्रतीत होय है ऐसैं मानणाँ पडैगा ज्यो अपणाँ स्वरूप अपरोक्ष पूर्ण प्रतीत हुवा तो जितनैं आत्मज्ञानी हैं वे सारे सर्वज्ञ होणेँ चाहिये ।

ज्यो कहो कि आत्मज्ञानी सर्वज्ञ ही होय हैं तो हम पूछैं हैं इस समय मैं कोई आत्मज्ञानी है अथवा नहीं ज्यो कहो कि नहीं है तो हम कहैं हैं कि अपरोक्ष ज्ञान होणेँ के अर्थ महावाक्यके उपदेशका ग्रहण ज्यो है सो व्यर्थ हुवा काहेतैं कि महावाक्यके उपदेशतैं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है इसकूँ तुम ज्ञान मानौं हो सो वृत्ति जिनकूँ महावाक्योपदेश करो हो उनकूँ सर्वकूँ होय है ये तुम पूर्व कहि आये हो और इसकूँ हीं तुम ज्ञान कहो हो और इससैं हीं तुम अज्ञानके आवरणका भङ्ग मानौं हो सो नहीं मानणाँ चाहिये काहेतैं कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिसैं ज्यो आवरणभङ्ग हुवा सो जीवसाक्षी के आश्रित ज्यो आवरण उसका ही भङ्ग नहीं मान सकोगे किन्तु ईश्वरसाक्षीके आश्रित ज्यो आवरण ताका वी भङ्ग मानणाँ हीं पडैगा ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग नहीं मानौं तो त्वम्पदार्थ के अभेदका भान तत्पदार्थ मैं कैसैं मान सकोगे ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग मान्याँ तो ईश्वरसाक्षी है ब्रह्म उसके आवरणका भङ्ग सिद्ध हुवा ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग हुवा तो त्वम्पदार्थ मैं परिच्छिन्नता भ्रम निवृत्त होणेँ के अर्थ ईश्वरसाक्षीके अभेदका भान जीवसाक्षीमैं मानणाँ हीं पडैगा अब जीवसाक्षीमैं ज्यो ईश्वरसाक्षीके अभेदका भान हुवा तो तुम ईश्वरसाक्षीकूँ ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक मानौं हो तो जीव साक्षी ही ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक हुवा ऐसैं ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक जीवसाक्षी हुवा तो जीवसाक्षीकूँ जैसैं अन्तः

करण की वृत्तियाँ प्रतीत होय हैं तैसें सर्व अन्तःकरणोंका समष्टिरूप ज्यो ईश्वरका उपाधि ताका भान होणाँ हीं चाहिये सो होवै नहीं यातैं महावाक्योपदेश करिकैं ज्ञानका होणाँ कहा और जीव ईश्वर जे हैं तिन मैं परस्पर अभेदका बोध महावाक्यसैं होय है ऐसैं कही ये दोनूं हीं व्यर्थ भये ॥

और ज्यो कहो कि इस समय मैं आत्मज्ञानी है तो हम कहैं हैं कि जिसकूं महावाक्योपदेशसैं जीव ईश्वर मैं परस्पर अभेद भान हुवा ऐसा पुरुष हमकूँ दिखाणाँ चाहिये कि ज्यो हमारे अन्तःकरणका वृत्तान्त कहै परन्तु ऐसा पुरुष मिलणाँ ये असम्भव है यातैं महावाक्य मैं जीव ईश्वर की परस्पर अभेदबोधकता कही सो कैसैं होसकै ॥

ज्यो कहो कि ये अर्थ मैंनैं अपणीं कल्पना तैं तो कहा है नहीं किन्तु वृत्तिप्रभाकरके तृतीय प्रकाश मैं महावाक्यकूँ परस्पर जीव ईश्वर जे हैं तिनका अभेदबोधक कहा है यातैं मैंनैं कहा है तो हम कहैं हैं कि हम नैं ज्यो ऐसैं अभेदबोधकता माननैं मैं दोष कहा तिसका समाधान थी उसमैं सैं हीं कहो ॥ ज्यो कहो कि जैसैं मठाकाश मैं घट है उस घटदेश मैं मठाकाश और घटाकाश दोनूं एक हैं काहेतैं कि दोनूं के उपाधि एक देशमैं स्थित होणैं तैं परन्तु घटाकाश मैं मठाकाश सैं होणै वाला कार्य होवै नहीं अर्थात् जितना अवकाश मठाकाश मैं है उतनाँ अवकाश घटाकाश देवै नहीं तो यद्यपि घटदेशमैं घटाकाशका और मठाकाशका अभेद रहा तथापि उपाधि के महिमातैं घटदेशमैं घटाकाशसैं मठाकाशका कार्य नहीं होवै है तैसें हीं अन्तःकरण रूप उपाधि के देशमैं यद्यपि जीवसाक्षी और ईश्वरसाक्षी ये दोनूं एक हैं तथापि जीवसाक्षीसैं ईश्वरसाक्षीका कार्य होवै नहीं यातैं आत्मज्ञानीकूं सर्व अन्तःकरणोंका भान होवै नहीं ॥ तो हम कहैं हैं कि घटदेशमैं यद्यपि घटाकाश और मठाकाश इनका अभेद है तथापि उपाधि के महिमातैं घटाकाशसैं मठाकाशका कार्य होवै नहीं परन्तु मठाकाश और घटाकाश और इन दोनूं आकाशोंके उपाधि जे मठ और घट ये तुमकूं भान होवैं हैं यातैं घट देशमैं घटाकाश और मठाकाश इनका अभेद तुमकूं निश्चित होय है और ईश्वर तथा जीव और इनके उपाधि इनमैं तैं तो तुमकूं जीव और जीवोपाधि इनका हीं भान है और ईश्वर तथा ईश्वरोपाधि इनका भान

नहीं है तो यहाँ जीवदेश मैं तुमकूँ अभेदका भान कैसैं होसकै ।। ज्यो कहो कि जैसैं इस शरीर मैं यद्यपि ज्ञाता एक है तथापि चरण मैं कण्टका की पीडा और घ्राण देशमैं पुष्पका गन्ध ये भिन्न स्थानों मैं हीं प्रतीत होय हैं तैसैं सारे जगत्‌का प्रकाशक यद्यपि एक ही ब्रह्म है तथापि अन्तः करणों के धर्म सुखदुःखादिक जे हैं तिनका भान तत्तद्देशों मैं हीं होयहै तो हम कहैंहैं कि इसमैं तो हमारे विवाद ही नहीं तत्तद्देशों मैं हीं भान होवो परन्तु महावाक्योपदेश तैं तुमारे आवरणभङ्ग हो गया और जीवसाक्षी मैं तो परिच्छिन्नताभ्रम निवृत्त होगया और ईश्वरसाक्षीमैं परोक्षता भ्रम निवृत्त होगया और जीवसाक्षी तथा ईश्वरसाक्षी इनका अभेद होगया तो जीवसाक्षी ही ईश्वरसाक्षी हुवा अब जीवसाक्षी ही ईश्वरसाक्षी हुवा तो ईश्वरसाक्षी सर्वका प्रकाशक है यातैं जीवसाक्षीकूँ एक अन्तःकरणकी वृत्तियों की तरैंहँ सर्वका भान होणाँ हीं चाहिये ।

ज्यो कहो कि शुद्धचेतनमैं साक्षीपणाँ अन्तःकरणके होणैं तैं है और अन्तःकरण हैं नाना तो साक्षी नाना भये यातैं तो जा साक्षी कूँ जिस अन्तःकरणका भान होय है उस साक्षीसैं भिन्न ज्यो साक्षी ताकूँ उस अन्तःकरणका भान होवै नहीं और साक्षी सर्व ही परमार्थतैं ब्रह्मचेतनतैं भिन्न नहीं यातैं महावाक्य तैं अभेद ज्ञान होणैं मैं कोइवी हानि नहीं ।। तो हम कहैं हैं कि तुमारे अन्तःकरण देश मैं हीं महावाक्यजन्य ज्ञान तैं आवरणभङ्ग मानों और अन्य देश मैं आवरण है ऐसैं मानों ज्यो ऐसैं मान्याँ तो ब्रह्मचेतन आवृत वी हुवा और अनावृत वी हुवा ज्यो ब्रह्मचेतन ऐसा हुवा तो इसका अभेद तुमनैं जीवसाक्षी मैं मान्याँ है तो तुमारा जीव साक्षी आवृत अनावृत प्रतीत होणाँ चाहिये और जीवसाक्षी आवरणभङ्ग भयैं अनावृत ही प्रतीत होय है ये तो तुमारे अनुभवसिद्ध है और इसका अभेद तुम ईश्वरसाक्षी मैं मानों हो तो ईश्वरसाक्षी तुमकूँ अनावृत प्रतीत होणाँ चाहिये ज्यो ईश्वरसाक्षी अनावृत प्रतीत हुवा तो ये ही तुमारा स्वरूप है यातैं तुमकूँ सर्वअन्तःकरणौं का भान होणाँ हीं चाहिये यातैं महावाक्यौं की अभेदबोधकता तुमनैं कही सो असङ्गत है ।

अब कहो आत्मज्ञानरूप प्रमाका करण तुमनैं शब्दकूँ मान्याँ सो असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि महावाक्यौं कूँ अभेदबोधक माननैंका तात्पर्य ये है कि जब पर्यन्त अपणैं तैं भिन्न परमात्माकूँ

मानैं तब पर्यन्त कृतार्थ होवै नहीं यातैं सर्वप्रमाणोंमैं शिरोमणि ज्यो वेद् सो अभेद कहि करिकैं जिज्ञासु पुरुष कूँ कृतार्थ करै है यातैं जीवन्मुक्ति के आनन्दकी प्राप्ति होयहै तो हम कहैं हैं कि तुम तो जीवन्मुक्ति का आनन्द्ँ इसका फल कहो हो और हम तो शब्दजन्यज्ञानतैं अपणोंकूँ कृतार्थ मानवे वाले पुरुषोंकूँ ऐसे देखैं हैं कि अपणें मैं ज्ञानी पणों मानिकरिकै पापके भयकूँ त्यागि करिकैं निरन्तर अनर्थ करणें मैं प्रवृत्त होय रहेहैं और हम कहैं कि भाई तुम तुमारे अन्तःकरणकी वृत्तिकूँ अन्तर्मुख करिकैं अपणें निज आत्मस्वरूपका साक्षात्कार करो तो वे ऐसैं कहैंहैं कि मनतैं आत्माका प्रत्यक्ष होय तो ज्ञानका विषय होणें तैं आत्मा घटकी तरँहं अनित्य होजावै यातैं आत्माका तो केवल शब्दजन्य हीं प्रत्यक्ष होय है जब महावाक्य

तत्त्वमसि ।

ऐसैं उपदेश करैहै तब ।

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है सोही ज्ञान है सो हमकूँ हो गया और ज्ञान भयें पीछैं पापपुण्यका सम्बन्ध होत्रै नहीं यातैं हम तो कृतार्थ हैं और कर्तव्य उनका ये है कि गृहस्थाश्रमका त्याग करिकैं तो काषायवस्त्र धारण करैं हैं और स्त्रीसङ्ग मैं आसक्त हैं ।

ज्योकहो कि हम आत्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण मनकूँ मानैं गे और शब्दकूँ सहकारिकारण हीं मानैं गे परन्तु महावाक्योंकी अभेदबोधकता तब वी मानणीं पड़ैगी तो अभेदबोधकतामैं ज्यो दोष कहा उसकी निवृत्ति कैसैं होगी सो कहो ॥तो हम कहैं हैं कि जब तुमकूँ आत्म साक्षात्कार होगया और पूर्णता की प्रतीति भई नहीं तब तुमकूँ उचित है कि वारम्वार मनतैं साक्षीका अनुसन्धान करो तुमकूँ आत्मा पूर्ण प्रतीत होगा और तुम सर्वज्ञ होओगे इस मैं काकभुशुण्ड ऋषि दृष्टान्त है ।

योगवाशिष्ट मैं ये कथा है कि एक समय मैं वशिष्ट ऋषि नैं नील पर्वत मैं काकभुशुण्डजी कै पास जाय करिकैं ये प्रश्न किया कि आप सर्वज्ञ तो कैसैं होगये और शरीर तैं अमर कैसैं होगये तब काकभुशुण्डजीने उत्तर दिया कि मैंनैं साक्षीका अनुसन्धान किया है तब वशिष्टजी

ने कहीकि आपनैं साक्षीका अनुसन्धान कोनसे प्रकार तैं किया है तब काकभुशुण्डजी नैं कही कि मैंनैं प्राणायाम मैं साक्षीका अनुसन्धान किया है उसका प्रकार ये है कि ये प्राण द्वादश अङ्गुल तो वाहिर आवैं हैं और इतनैं हीं भीतर जाय हैं प्राणौं का वाहिर जयो आगमन सो तो रेचक प्राणायाम है और भीतर जयो गमन सो पूरक प्राणायाम है अब जब प्राण वाहिर आये तब उनकी रेचक संज्ञा है अब जब प्राणौंको रेचक पणौं तो निवृत्त भयो और पूरकपणौं उनमैं भयो नहीं तब वो प्राणौंकी अवस्था कुम्भकहै और जब प्राण भीतर जाय तब इनकी पूरक संज्ञा है अब ये द्वादश अङ्गुल भीतर गये और पूरक पणौं तो इनको निवृत्त भयो और रेचक पणौं भयो नहीं वो प्राणौंकी अवस्था कुम्भक है इन दोनौं कुम्भक अवस्थाओं का प्रकाशक साक्षीका मैंनैं अनुसन्धान किया है यातैं मैं योगसिद्धिकूँ पाय करिकैं सर्वज्ञ हुवा हूँ यातैं तुमकूँ उचित है कि तुम वी ऐसैं हीं साक्षी का अनुसन्धान करो।

जयो कहो कि आपके कथन तैं ये सिद्ध होय है कि सर्वज्ञता जयो है सो योगजन्य होवै है सो योग साक्षी के अनुसन्धान तैं होय है परन्तु ऐसैं तो काकभुशुण्ड ही भये हैं और ऐसे आत्मज्ञानी वहुत भये हैं कि जिनकूँ आत्मसाक्षात्कार हुवा और जीवन्मुक्त भये उनका निश्चय कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि ये अत्यन्त रहस्य है यातैं कहवे योग्य नहीं याही तैं ग्रन्थकारों नैं लिखा नहीं और ये लिखा है कि तत्व साक्षात्कार वाले गुरु सैं उपदेश ग्रहण करै तो इसका ये तात्पर्य है कि केवल शास्त्रके बल तैं जे उपदेश करैं हैं उनकी अपेक्षा तैं तत्वसाक्षात्कारवाले पुरुषों का उपदेश विलक्षण होय है।

जयो कहो कि उनके उपदेश की विलक्षणता कहा है तो हम कहैं हैं कि वे जब कृपा करैं तब प्रथम तो महावाक्योपदेशके विना हीं आत्मसाक्षात्कार करायदेवैं हैं और श्रवणादि साधनोंका उपदेश पीछैं करैं हैं वे आत्मज्ञान नित्य सिद्ध बतावैं हैं और वे वृत्तिकूँ ज्ञान नहीं मानैं हैं और वृत्तिका फल अज्ञानके आवरणका भङ्ग नहीं कहैं हैं और अज्ञान के विना हीं आवरण बतावैं हैं और वृत्तितैं आवरणका तिरोधान बतावैं हैं और ज्ञान के साधन स्थिरतीक्ष्ण वुद्धि१ उत्कट जिज्ञासा २ और आत्मसाक्षात्कार वाले पुरुषका कृपादृष्टि तैं उपदेश ३ ये तीन हीं कहैं हैं और

इन साधनौं करिकैं युक्त जयो पुरुष ताकूं स्वतस्सिद्ध ज्ञानका उपदेश करैं हैं ॥ वे ऐसैं कहैं हैं कि

आत्मा वारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि हे मैत्रेयि ये आत्मा देखवे योग्य है श्रवण करवे योग्य है मनन करवे योग्य है निदिध्यासन करवे योग्य है इस का अन्वय ग्रन्थकार तो ऐसैं लिखैं हैं कि

आत्मा श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः द्रष्टव्यः

अर्थात् श्रवण मनन निदिध्यासन इन साधनौं करिकैं आत्मसाक्षात्कार करवे योग्य है और अनुभव वाले पुरुष ऐसैं कहैं हैं कि इस श्रुति मैं

द्रष्टव्यः॥

ऐसैं प्रथम कहा है यातैं प्रथम आत्माका साक्षात्कार करवे योग्य है पीछैं श्रवण मनन निदिध्यासन ये करवे योग्य हैं ॥ जयो कहो कि इस श्रुति का प्रथम जयो अन्वय सो शङ्करस्वामी नैं लिखा है आचार्यौंका कथन असङ्गत कैसैं मान्याँ जाय तो हम कहैं हैं कि आचार्यौं के हृदय का अभिप्राय समुझणाँ कठिन है ॥ जयो कहोकि यहाँ शङ्करस्वामीका अभिप्राय कहा है तो हम कहैं हैं कि

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यन्न विद्युः आश्चर्य्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्य्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः ॥१॥

ये श्रुति है इसका अर्थ प्रथम भाग मैं लिखा है इस श्रुति मैं

आश्चर्यो वक्ता ॥

ऐसा कथन है इसका अर्थ ये है कि इसका कहणैंवाला आश्चर्य है तो हजारौं मनुष्यौं मैं कोई ही कहणैं वाला है अब जयो इसका कहणैंवाला दुर्लभ हुवा तो आत्मविचारका उच्छेद ही हुवा यातैं सम्प्रदायकी रक्षाके अर्थ शङ्करस्वामी नैं पूर्वोक्त प्रकार करिकैं

आत्मा वारे ॥

इस श्रुति का अन्वय कहाहै

जो कहो कि इस समय मैं श्रुतिप्रस्थान सूत्रप्रस्थान स्मृतिप्रस्थान इनके पढे भये लोक मैं ब्रह्म निष्ठता करिकैं प्रसिद्ध ऐसे पण्डित बहुत हैं

आप वक्ताकूँ दुर्लभ कैसैं बतावो हो तो हम कहैं हैं कि उन पण्डितौं मैं कदाचित् कोई तत्वसाक्षात्कार वाले गुरुका अनुग्रह पात्र होय तो आश्चर्य नहीं परन्तु बहुधा तो इस समय के पण्डित ऐसेही हैं कि वे जिज्ञासु पुरुषकूँ ऐसैं कहैं हैं कि प्रथम तो तुम भाष्यसहित तीनूँ प्रस्थानों का श्रवण करो और पीछैं तुम आपही मनन करो पीछैं निदिध्यासन करो तब तुमकूँ आत्मसाक्षात्कार होगा जब जिज्ञासु पुरुष तीनूँ साधनोंकूँ करिकैं कहै कि महाराज अब मोकूँ साक्षात्कार करावो तब ऐसैं कहैं हैं कि आत्मा का तो शाब्द ही प्रत्यक्ष होय है महावाक्य के श्रवण तैं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है येही ज्ञान है ॥ और विचारवाला पुरुष ज्यो उन तैं एकान्तमैं प्रश्न करै और सत्य उत्तर देणैं की प्रतिज्ञा कराय लेवै तब वे कहैं सो सत्य है ॥

एक समयका वृत्तान्त ये है कि हम एक पण्डित सैं मिले सो कैसा कि षट् शास्त्रोंका पढा हुआ और जिसके कथनकूँ श्रवण करिकैं और आचरणकूँ देखि करिकैं लोक जिसकूँ ब्रह्मश्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ जाणैं हमनैं उससैं सत्य उत्तर देणैंकी प्रतिज्ञा कराय करिकैं एकान्त मैं ये प्रश्न किया कि ग्रन्थकारोंनैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूँ ज्ञान मान्या है सो वृत्ति हमकूँ समुझावो और करावो तब उसनैं उत्तर दिया कि तुमारे तत्वमसि इस वाक्य के श्रवण तैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा अन्तःकरण का परिणाम होय है ये ही वृत्ति है इसकूँ ज्ञान समुझो तब मैंनैं कही कि ये तो अन्तःकरणका परिणाम नहीं है किन्तु वाणीका भेद है वाणी च्यार प्रकारकी है परा १ पश्यन्ती २ मध्यमा ३ वैखरी४ पराका स्थान नाभि है और पश्यन्ती का स्थान हृदय है और मध्यमा का स्थान कण्ठ है और वैखरी का स्थान मुख है जब हम

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसैं आवृत्ति करैं हैं तब ये हमकूँ घटकी तरैंह स्पष्ट प्रतीत होयहै सो कोई समय मैं तो हृदय मैं प्रतीत होय है सो तो सूक्ष्म प्रतीत होय है

और वहुधा कण्ठ देशमैं प्रतीत होय है सो स्थूल प्रतीत होय है तो हम इसकूं ज्ञान कैसैं मानैं ये तो वाक्य है ज्ञानके स्वरूप मैं तो वर्ण प्रतीत होवै नहीं जैसें घटका ज्ञान होय है तो ज्ञानके स्वरूप मैं कोई भी वर्ण प्रतीत नहीं होय है ऐसें हमारे कथनकूं श्रवण करिकैं वो पण्डित तूष्णीम्भावकूं प्राप्त हुवा।

तब मैनैं कही इस प्रश्नके उत्तरकी स्फूर्त्ति इस समय मैं नहीं होय तो ये कहोकि शरीरके भीतर ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वाक्य प्रतीत होयहै सो साक्षीका विषय है अथवा अन्तःकरण की वृत्तिका विषय है यह सुणिँ करिकैं वी पण्डित नैं कुछ उत्तर दिया नहीं। तब मैनैं कही कि मेरे प्रश्नौंका उत्तर नहीं देणैं का कारण कहा है सो तो कहो तब उस पण्डित नैं हमकूं ये कही कि ज्ञानी दोय प्रकारके होय हैं एक तो शास्त्रीयज्ञानवाला होय है और दूसरा अनुभववाला होय है सो हम तो शास्त्रीयज्ञानवान् हैं इन प्रश्नौंका उत्तर तो अनुभव वाला पुरुष कह सकै है ॥ तब मैनैं कहीकि तुम तो लोकमैं अनुभववाले प्रसिद्ध हो जिज्ञासु पुरुषकूं उपदेश कहा करो हो तब पण्डितनैं उत्तर दिया कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये ज्यो देहके भीतर प्रतीत होय है सो अन्तःकरणकी वृत्ति है अथवा वाक्य है इसकूं तो हम ज्ञान वतावैं हैं और ये जिसका विषय है वो साक्षी है अथवा प्रमाता है उसकूं साक्षी कहैं हैं और हमारे हृदय का सिद्धान्त ये है कि

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न वहुना
श्रुतेन यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा
वृणुते तनूं स्वाम् ॥

इसका अर्थ प्रथम भागमैं कहि आये हैं अब तुमहीं विचार करो ऐसे ऐसे पण्डितौंकूं वी सन्देह ही है तो आचार्यौंका अभिप्राय कैसैं जाण्याँ जाय यावैं श्रुति ज्यो है सो वक्ताकूं दुर्लभ वतावै है ॥

ज्यो कहो कि आपनैं पूर्व ये कही कि अनुभववाले पुरुष अज्ञान के विनाहीं आवरण वतावैं हैं सो कैसे वतावैं हैं तो हम कहैं हैं कि

पराञ्चि खानि व्यतृणत्स्वयम्भूस्तस्मात् पराङ् पश्यन्ति नान्तरात्मन् ॥

ये श्रुतिहै इसका अर्थ ये है कि स्वतन्त्र ज्यो परमात्मा सो बहिर्मुख जे इन्द्रिय तिनैं हिंसा करते भये या कारणतैं बाहिर देखैं हैं अन्तरात्माकूँ नहीं देखैं हैं तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि अन्तरात्माके अदर्शन मैं बहिर्दृष्टि ज्यो है सो कारणहै ॥ ज्यो कहो कि अन्तर्दृष्टि कहा और बहिर्दृष्टि कहा तो हम कहैं हैं कि जैसैं किसीनैं काष्ठके अश्वगज नरपक्षी इत्यादिक बणाये हैं तरहही पुरुषकै उनसैं अश्वादि दृष्टि होणें के काल मैं काष्ठका तिरोधान होय है ये अश्वादि दृष्टि ज्यो है सो तो बहिर्दृष्टि है और काष्ठदृष्टि तैं अश्वादिकका तिरोधान होय है ये काष्ठदृष्टि ज्यो है सो अन्तर्दृष्टि है ॥ अब तुमहीं विचार करो अश्वादिक सर्व काष्ठ ही हैं और काष्ठ बुद्धि होवे नहीं इसमैं कार्यदृष्टितैं काष्ठदृष्टि नहीं होय है अथवा वहाँ तुमकूँ कार्य दृष्टितैं भिन्न कोई काष्ठका आवरक प्रतीत होय है तो तुमकूँ ऐसैंहीं मानणाँ पडैगा कि काष्ठबुद्धिके नहीं होणैं मैं कार्यदृष्टिही कारणहै तो ऐसैंहीं अनुभव वाले पुरुष कहैं हैं कि ये जगत् परमात्मा हीं है परन्तु जगद्दृष्टि होणैं तैं अनावृत ही सच्चिदानन्द रूप परमात्मा आवृत प्रतीत होय है ॥

अब कहो ज्यो तुमनैं पूर्व ये कही कि अज्ञान अलीक हुवा तो ज्ञान निष्फल हुवा इस आपत्तिका उद्धार हुवा अथवा नहीं ज्यो कहोकि ज्ञान मैं निष्फलताकी आपत्ति रही उसका उद्धार हुवा काहेतैं कि जैसैं काष्ठबुद्धिके भयैं अश्वादि बुद्धि नहीं रहै है तैसैं ब्रह्मबुद्धि भयैं जगद्बुद्धिका लय होय है ये ही ज्ञानका फल है ये आपका कथन अत्यन्त समीचीन है परन्तु मैं ये कहूँ हूँ कि आत्मा प्रकाशरूप है और निरावरण है तथापि वृत्तिके उदय भयैं तैं पूर्व प्रकाशरूप प्रतीत होवै नहीं और वृत्तिके उदय भयैं प्रकाशरूप प्रतीत होय है यातैं प्रकाशरूपता करिकैं आत्माकी प्रतीतिकूँहीं वृत्तिका फल मानैं तो कहा हानि है ॥

तो हम पूछैं हैं कि तुम यहाँ वृत्ति शब्द करिकैं वृत्ति सामान्य लेवो हो अथवा वृत्ति विशेष लेवो हो ज्यो कहो कि हम वृत्ति विशेष लेवैं हैं अर्थात् ब्रह्माकार वृत्ति लेवैं हैं तो हम पूछैं हैं कि आत्मा तो प्रकाशरूपता करिकैं सर्व वृत्तियोंमैं प्रतीत होय है यहाँ ब्रह्माकार वृत्तिके

ग्रहणका तात्पर्य कहा है सो कहो ज्यो कहोकि इस प्रश्नका उत्तर तो मेरी दृष्टि मैं कहीं वी आया नहीं तो हम कहैं हैं कि जिनसैं तुमनैं ग्रन्थोंका अध्ययन किया है उननैं उत्तर दिया सो कहो ज्यो कहोकि हमारे उपदेष्टा नैं वी इस विषय मैं तो कुछ कहा नहीं यामैं कारण कहा है सो आप कहो तो हम कहैं हैं कि उपदेष्टा केवल शास्त्रज्ञ ही रहा ये ही कारण है ॥

एक समय का वृत्तान्त है कि एक पुरुष धनसम्पन्न और प्रसिद्ध सत्सङ्गी रहा हम उस के पास गये तो यहाँ एक पण्डित वेदान्त की कथा कहता रहा उस समय मैं वृत्तिका विचार होता रहा जब कथा समाप्त भई तब मैं नैं प्रश्न किया कि जैसैं घटका ज्ञान होय है तैसैं हीं वृत्तिका ज्ञान होय है और जैसैं घटज्ञान के अनन्तर पुरुष कूँ ये ज्ञान होयहै कि मोकूँ घटका ज्ञान हुवा है तैसैं हीं वृत्तिज्ञानके अनन्तर यी पुरुषकूँ मोकूँ वृत्ति का ज्ञान हुवाहै ये ज्ञान होय है ये अनुभवसिद्ध है काहेतैं कि सर्व पुरुष ऐसैं कहैं हैं कि आजके दिनमैं तो मेरे सङ्कल्प बहुत भये तो घटका ज्ञाता तो प्रमाताकूँ कहो हो और वृत्तिका ज्ञाता साक्षीकूँ बतावो हो इसमैं अनुभव कहा है सो कहो ॥ये हमारा प्रश्न श्रवण करिकैं पण्डितनैं कही कि इस प्रश्नका उत्तर हम एकान्तमैं कहैंगे जब हमनैं एकान्त मैं प्रश्न किया तब पण्डित नैं कही कि महाराज ऐसे प्रश्न सभामैं करवे योग्य नहीं हैं काहेतैं कि आत्मसाक्षात्कार वाले पुरुष जगत् मैं दुर्लभ हैं हम तो शास्त्रज्ञ हैं।

तब हमनैं कही कि शास्त्रमैं ज्ञान प्रमाताके आश्रित लिखा है सो प्रमाता चिदाभास है तो इसकूँ हीं ज्ञान होगा अब हम यहाँ ये पूछैं हैं कि चिदाभास ज्यो है तिसका द्रष्टा साक्षी है और चिदाभास दृश्य है अब ज्यो चिदाभासकूँ साक्षी का ज्ञान होगा तो साक्षीमैं दृश्यताकी आपत्ति होगी और ज्यो चिदाभासकूँ साक्षीका ज्ञान नहीं होगा तो वेदनैं ज्यो साधन सम्पत्ति कहीहै सो व्यर्थ होगी यातैं ज्ञानका स्वरूप ऐसा कहो कि जिससैं साक्षीमैं तो दृश्यताकी आपत्ति होवै नहीं और चिदाभासकूँ साक्षीका साक्षात्कार होजावै ॥ तब पण्डितनैं कही कि इस विषयमैं शास्त्रकार ऐसैं लिखैं हैं कि आत्मातैं भिन्न जे पदार्थ तिनका ज्ञान होय है तहाँ वृत्तिव्याप्ति और फलव्याप्ति ये दोनूँ होयहैं वृत्ति तैं आवरणभङ्ग होयहै और फल

चेतनतैं पदार्थका प्रकाश होयहै ओर जब आत्माका ज्ञान होय है तब वृ-त्तितैं आवरणभङ्ग मात्र होवैहै ओर फलचेतन का प्रकाश होवै नहीं किन्तु आत्मा अपणैं प्रकाशसैं हीं प्रकाशता है यातैं साक्षी ज्यो आत्मा तामैं फल चेतनकी अविषयता होणैं तैं दृश्यताकी आपत्ति होवै नहीं ओर वृत्ति की विषयता होणैं तैं आत्मा अज्ञात होवै नहीं ऐसैं आभासकूँ साक्षी का अ-ज्ञातता करिकैं ज्ञान होय है।

तब हमनैं च्यार प्रश्न किये कि वृत्ति अन्तर्मुख नहीं होवै तो आवरण भङ्ग होवै नहीं यातैं उस आवरणभञ्जक वृत्तिका स्वरूप कहो १ ओर फलका अविषय होणैं तैं घट अज्ञात कहावैहै तो ऐसैं हीं आत्मा वी फल का अविषय होणैं तैं अज्ञात होगा अब ज्यो आत्मा ऐसैं अज्ञात होगा तो जैसैं मेरे घट अज्ञात है इस प्रतीतिसैं घटमैं अज्ञान का आवरण मानौं हो तैसैं आत्मा मेरे अज्ञात है ऐसा प्रतीति का आकार श्रवण करिकैं शिष्यकूँ आत्मामैं अज्ञान के आवरणका भ्रम हो जायगा यातैं प्रतीति के आकार मैं भेद कहो २ ओर ज्यो तुमनैं ज्ञान की अविषयता तो साक्षीमैं कही ओर इस अविषयता का ज्ञान अभास मैं कहा तो साक्षी मैं ज्ञानकी विषयता वलात्कार तैं सिद्ध होय है काहेतैं कि धर्मी तो है साक्षी इसका धर्म है अविषयता तो धर्मीके ज्ञान विना धर्मका ज्ञान धर्मी मैं सम्भवै नहीं यातैं अविषयता के ज्ञानतैं पूर्व साक्षीका ज्ञान मानौं जयो साक्षीका ज्ञान मान्याँ तो साक्षी मैं ज्ञानकी अविषयता का मानणाँ असङ्गत हुवा इसका समा-धान कहो ३ ओर अविषयता का आश्रय ज्यो धर्मी तिसका ज्ञान लोकमैं परोक्ष मान्याँ है अब ज्यो साक्षीका ज्ञानभी ऐसा ही हुवा तो ये अपरोक्ष कैसैं होगा ज्यो कहो कि साक्षीका ज्ञान आवरणके नाशसैं अपरोक्ष है तो हम कहैहैं कि जैसैं परोक्षघटका ज्यो ज्ञान ताका आकार ये है कि घटअज्ञात है तैसैं हीं साक्षी के ज्ञानका आकार वी ये ही है साक्षी अज्ञात है तो एका-कार प्रतीतिसैं जे ज्ञान सिद्ध हैं तिनमैं एक ज्ञानकूँ परोक्ष ओर दूसरे ज्ञा-नकूँ अपरोक्ष कैसैं मान्याँ जाय सो कहो ४ ये प्रश्न श्रवण करिकैं पण्डितकी बुद्धि चकित होगई ॥ ओर ऐसैं कहणैं लगा कि ऐसे ऐसे सन्देहस्थान तो शास्त्रमैं बहुत हैं अब मैं आपतैं प्रश्न करूँहूँ कि

मनसैव ॥

इत्यादिक ज्यो श्रुति सो मनकूं प्रमाका करण कहे है सो मोकूं अ-युक्त प्रतीत होय है काहेतैं कि ज्यो मन आत्मज्ञानरूप प्रमाका करण होय तो आत्मा प्रमाका विषय होणेंतैं अप्रमेय नहीं हो सकैगा और

यन्मनसा ॥

इत्यादिक ज्यो श्रुति सो मनकी करणता को निषेध करै है अब ज्यो निर्मलता और मलिनता इन धर्मनतैं मनमैं भेदमानि करिकैं व्यवस्था करोगे और फलव्याप्ति के निषेध करिकैं आत्मामैं अप्रमेयता सिद्ध करोगे तो मैं ये पूछूं हूं कि मनोवृत्ति के द्वार मानें जे चक्षुरादिक तिनकूं शास्त्र मैं करण मानें हैं यातैं मनकूं करण मानणां अनुचित है और शास्त्रौं मैं घटादिकन के निमित्त कारण जे दण्डादिक तिनकूं हीं करण मानें हैं घटा-दिक की उत्पत्तिमैं मृत्तिकाकूं करण कोई वी पण्डित नहीं मानैं है मन तो वृत्ति का उपादान कारण है ये करण कैसें हो सकै अब ज्यो मन क-रण नहीं हुआ तो श्रुति मैं

मनसा ॥

यहाँ तृतीया विभक्ति सङ्गत कैसैं हो सकै

जनिकर्तुः ॥

इस सूत्रसैं मनमैं अपादानता प्राप्त होय है तो श्रुतिमैं मनस् शब्द सैं पञ्चमी होणीं चाहिये और ज्यो हठ करिकैं मनकूं करण मानोंगे तो जिनके मतमैं आत्मज्ञानरूप प्रमाका करण शब्दकूं मान्यां है उनकी व्यव-स्था कहा होगी सो कहो ।

ये प्रश्न श्रवण करिकैं हमनैं पण्डितसैं कही कि अब हम तुमारे प्रश्न का शास्त्रीय उत्तर कहैं हैं काहेतैं कि तुम अनुभवोत्तर के अधिकारी नहीं हो शास्त्रकारौंनैं बाह्य आन्तर भेदतैं प्रमा दोय प्रकार की मानी है बाह्य प्रमाके करण चक्षुरादिकौंकूं मानैं हैं और आन्तर प्रमाका करण मनकूं मान्यां है आत्मज्ञानरूप प्रमाकूं आन्तर मानी है यातैं इस प्रमाका करण मनकूं कहा है और ज्यो तुमनैं ये कही कि शास्त्रौं मैं निमित्त कारणकूं हीं करण मानैं हैं मन तो वृत्ति का उपादान कारण है ये करण कैसैं हो सकै सो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि निमित्त कारण ही करण होय है उपादान कारण करण होवै नहीं ऐसा लेख हमनैं कहीं वी देखा नहीं यातैं जिसमैं करणका लक्षण रहै वो करण होय है ऐसैं

जाणैं से न्यायवालौं का और व्याकरणवालौं का मान्याँ हुवा करणका लक्षण मनमैं है यातैं श्रुतिमैं मनस् शब्दतैं तृतीया विभक्ति है ।। ज्यो कहो कि

जनिकर्तुः ॥

इस सूत्रकी कहा गति होगी सो कहो तो हम कहैं हैं कि जहाँ कारणसैं कार्य की उत्पत्ति का कथन होय तहाँ कारण वाचक शब्दसैं पञ्चमी विभक्ति होय ये

जनिकर्तुः ॥

इस सूत्रका तात्पर्य है याहीतैं

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते ॥

यहां कारण वाचक शब्दसैं पञ्चमी है और

येन जातानि जीवन्ति ॥

यहाँ कारणसैं कार्य की उत्पत्तिका कथन नहीँ यातैं कारण वाचक शब्दसैं तृतीया विभक्ति है ऐसैं मनकूँ करण माननैं मैं किञ्चित् बी हठ-हुवा नहीँ यातैं शब्दकूँ करण मानणेँ की व्यवस्था तुमहीँ करो ।

ऐसैं हमारा कथन श्रवण करिकैं पण्डित लज्जित होगया यातैं हम कहैंहैं कि शास्त्रके हृदयकूँ जाणैंवे वाले बी पुरुष जगत्मैं बहुत नहीँ हैं तो अनुभव वाले पुरुष दुर्लभ होवैं इसमैं कहा आश्चर्य है॥ इस समयमैं तो जेपुरुष तीन प्रस्थान पढ़े हैं और दम्भ करिकैं शील सन्तोषादिक गुणोंकूँ अपणैं मैं दिखावते रहैं हैं उनकूँ तो लोक याज्ञवल्कके सदृश मानैं हैं और जे पुरुष सम्पन्न हैं और आत्मविद्या के ग्रथौं का श्रवण करैं हैं और पण्डितौं कूँ कुछ देवैं हैं उनकूँ लोक जनक के सदृश कहैं हैं और जे पुरुष अकिञ्चन हैं और जिनके यथालाभ सन्तोष है और जे सम्पन्न पुरुषोंके समीप जाणैं मैं इच्छा नहीँ करैं हैं और आत्मानुभवतैं आनन्दमग्न हैं और जिनकै बिवादकी कामना नहीँ है और जे अपणैं मैं ज्ञानीपणाँ विदित करैं नहीँ और जब कृपा करैं तब शीघ्र ही कृतार्थ कर देवैं हैं लोक इनकूँ मूर्ख और उन्मत्त जाणैं हैं ।

अब हम अनुभव वाले पुरुषों के किये हुवे उपदेश में ज्यो विलक्षणता है वो किंचित दिखावें हैं जब हम वेदान्त के ग्रन्थ पढते रहे तब

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः ॥

इत्यादिक ज्यो श्रुति तिसका तात्पर्य बहुत पण्डितों सें पूछा परन्तु हमारा हृदय निःसन्देह हुवा नहीं एक समय में हमकूं किसी महात्माका दर्शन हुवा तब इस श्रुतिका तात्पर्य उनसें पूछा तब उननें कही कि तुमारे इसमें सन्देह कहा है सो कहो तब मैंनें प्रार्थना किई कि महाराज ये श्रुति शब्दमें तथा बुद्धिमें ओर बहुत श्रुतमें ज्ञानकी हेतु ताको निषेध करे है ओर ये कहै है कि जिसकूं ये आत्माहीं अङ्गीकृत करे है उसकूंहीं इसकी प्राप्ति होय है उसकूंहीं ये आत्मा अपणें स्वरूपका साक्षात्कार करावै है इसमें मेरे ये सन्देह है कि आत्मामें तो कर्त्तापणां नहीं है ये जिज्ञासु पुरुषकूं कैसें अङ्गीकृत करै ओर कैसें अपणां साक्षात्कार करावे तब उननें हमकूं ये कही कि श्रुति ज्यो है सो परमात्मा का अनुभव है यातें अनुभव वाले पुरुष ही श्रुति के अर्थमें सन्देह होय उसकूं निवृत्त कर सकें हैं इस श्रुति के व्याख्यानमें भाष्यकारवी अक्षरार्थही लिखैं हैं येही प्रश्न हमनें हमारे ब्रह्मनिष्ठ आचार्यों सें किया तब उननें उत्तर दिया सो कहैंहैं उननें हमकूं ये कही कि इस श्रुति की एकवाक्यता

आचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

इस श्रुतिसें है देखो

ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति ॥

ये श्रुति ब्रह्मवेत्ताकूं ब्रह्म वर्णन करै है ओर

नायमात्मा ॥

ये श्रुति शब्दादिकों में ज्ञानकी हेतु ताको निषेध करिकें

यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः ॥

ऐसें कहै है तो इस श्रुतिमें एतद् शब्द आत्माकूं कहै है आत्मा ब्रह्म ये पर्याय हैं यातें ये अर्थ सिद्ध हुवा कि ब्रह्म हीं जिसकूं अङ्गीकृत करै उसकूं हीं इसकी प्राप्ति होय है अब

ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति ॥

ये श्रुति ब्रह्मवेत्ताकूँ ब्रह्म वर्णन करै है तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि ब्रह्मवेत्ता आचार्य ही जिसकूँ अङ्गीकृत करै है उसकूँ हीं आत्म लाभ होय है ॥ ऐसैं इस श्रुतिका तात्पर्य श्रवण करिकैं हमारा हृदय सन्तुष्ट होगया यातैं हम कहैहैं कि अनुभववाले पुरुषसैं उपदेश होय तबही आत्मज्ञान होय है ।

ज्यो कहो कि आत्मज्ञान तो स्वतः सिद्ध है आप ऐसैं कहो हो तो ये उपदेशतैं कैसैं हो सकै तो हम कहैं हैं कि यद्यपि वृत्तिसामान्य के उदय भयैं आत्मा स्वप्रकाशता करिकैं अपणाँ प्रकाश करता हुवा वृत्तिप्रकाशकता करिकैं स्वतः प्रतीत होय है यातैं ज्ञान स्वतःसिद्ध है ये आचार्य के उपदेशतैं होवै नहीं ओर आचार्यबी ऐसैंहीं कहैहै तथापि जैसैं जगत् के अनन्त पदार्थोंकूँ पुरुष देखै है परन्तु जब पर्यन्त आप्तपुरुष के वाक्यतैं उनका उपदेश होवै नहीं तब पर्यन्त उन पदार्थोंसैं व्यवहार होवै नहीं यातैं वे पदार्थ कार्यकर नहीं हैं तैसैं हीं आत्मा यद्यपि सर्वके ज्ञात है तथापि जब पर्यन्त आचार्य के वाक्यतैं इसका उपदेश होवै नहीं तब पर्यन्त जीवन्मुक्ति सिद्ध होवै नहीं यातैं ये ज्ञान आचार्य के उपदेशतैं होय है श्रुति ऐसैं कहै है ।

ज्यो कहो कि अज्ञातज्ञापकता करिकैं शास्त्र ज्यो है सो प्रमाण होय है ज्यो आचार्य का उपदेश ज्ञातज्ञापक होगा तो अप्रमाण होगा तो हम कहैं हैं कि आचार्यका उपदेश अप्रमाण नहीं है काहेतैं कि आचार्य ज्यो उपदेश करै है सो ऐसैं करै है कि आत्मा ज्यो है सो इन्द्रिय मन वाणी इनका विषय नहीं है अर्थात् इन करिकैं ज्ञात नहीं है किन्तु इनका प्रकाशक है यातैं आचार्य का उपदेश अज्ञातज्ञापक होणैं तैं प्रमाण है ।

ज्यो कहो कि आत्मा अज्ञातता करिकैं ज्ञात है इसमैं मेरै किञ्चित् बी सन्देह रहा नहीं परन्तु दुःखप्रतीति की निवृत्ति भयैं जीवन्मुक्ति सिद्ध होय यातैं दुःखप्रतीति की निवृत्तिका उपाय कहो तो हम कहैहैं कि इसकी निवृत्ति का उपाय स्वरूपस्थिति है ज्यो कहो कि आत्मा तो सदा ही स्वरूपस्थित है इसकी स्वरूपस्थिति कैसैं होसकै तो हम कहैहैं कि

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥

ये योग सूत्र है इसके भाष्यमैं व्यासजीनैं ऐसैं कही है कि ज्ञानवान् की परिणाम हीन ज्यो वृत्ति तामैं साक्षी की स्वरूप करिकैं स्थिति होयहै यातैं वृत्तिकूँ परिणाम रहित करो ।

ज्यो कहो कि वृत्तिकूँ अचल करणेंका उपाय कहाहै सो कहो तो हम कहैं हैं कि वृत्तिकूँ अचल करणें के उपाय पतञ्जलि महाराजनैं योग सूत्रमैं अधिकारि भेद तैं वहुत लिखेहैं सो वहाँ देखलेवो ओर ज्यो वे उपाय नहीं होसकैं तो

यथाभिमतध्यानाद्वा ॥

ये सूत्र उननैं लिखा है इसका अर्थ ये है कि परमात्मा का जैसा स्वरूप अपणे इष्ट होय तैसे स्वरूपका ध्यान करिकैं वृत्तिकूँ अचल करो ॥ ज्यो कहो कि अर्जुननैं श्री कृष्ण तैं कही है कि

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि वलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥

इसका अर्थ ये है कि हे कृष्ण ये मन चञ्चल है ओर प्रमाथि है अर्थात् आप ही चञ्चल नहीं है किन्तु शरीर इन्द्रिय इनकूँ वी परवश कर देवै है ओर प्रवल है ओर दृढ है इसका ज्यो रोध है तिसकूँ वायुके रोधकी तरैंहैं दुष्कर मानूँ हूँ १ ओर श्री रामचन्द्रनैं वशिष्ठजीतैं कही है कि

अप्याब्धिपानान्महतःसुमेरून्मूलनादपि

अपिवन्ह्यशनात्साधो विषमश्चित्तनिग्रहः २ ॥

इसका अर्थ ये है कि हे साधो चित्तका ज्यो दमनहै सो समुद्रके पान तैं वी ओर सुमेरुकूँ मूलतैं उच्छिन्न करणें तैं वी ओर अग्निके भोजनतैं वी कठिन है २ तो हम वृत्तिकूँ अचल कैसैं कर सकैं ॥ तो हम कहैं हैं कि श्री कृष्णनैं तो इस के दमनको उपाय ये कह्यो है कि

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥

इसका अर्थ ये है कि हे कुन्तीके पुत्र अभ्यास करिकैं और वैराग्य करिकैं मनको दमन होय है और पतञ्जलि सूत्र बी येही कहे हैकि

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥

और वशिष्ठजीनैं ये कही है कि

दृश्यं नास्तीति बोधेन मनसो दृश्यमार्जनम्
सम्पन्नं चेत्तदुत्पन्ना परा निर्वाणनिर्वृतिः ॥

इसका अर्थ ब्रह्मतैं भिन्न जगत् नहीँ है किन्तु सर्व परमात्माहीँ है इस ज्ञान करिकैं जिसके मनतैं विषयोँका निवारण हुवा अर्थात् विषयबुद्धि निवृत्त भई उसके मोक्षसुख सिद्ध हुवा १ ये है परन्तु यहाँ ये और समुझो कि पुरुष जब मनकूँ एकाग्र करै है तब च्यार उपद्रव होयहैं उस समय मैं सावधान रहै लय १ विक्षेप २ कषाय ३ और रसास्वाद ४ ये च्यार मनकी एकाग्रता करै तब उपद्रव होय हैं अब हम इन च्यारोँके स्वरूप कहैं हैं जब पुरुष मनकूँ स्थिर करै तब ये सुषुप्तिकूँ प्राप्त होजाय है याकूँ तो लय कहैं हैं १ और जब याकूँ स्थिर करवे लगे तब ये एकाग्र तो होवै नहीँ और विषयोँ मैं प्रवृत्त होवैहै याकूँ विक्षेप कहैं हैं २ और लय तथा विक्षेप इनकी मध्य अवस्था मैं ये मन समभावकूँ प्राप्त होवै नहीँ उसकूँ कषाय कहैं हैं ३ और एकाग्रताकूँ प्राप्त हुवा जो मन तामैं एक विलक्षण आनन्द होय है उसकूँ रसास्वाद कहैं हैं ४ इन उपद्रवोँ करिकैं रहित जो मन ताकी अवस्थाकूँ सम अवस्था कहैं हैं सो या अवस्था करिकैं मनकी स्थिति करै ॥ जो कहो कि इन उपद्रवोँ की निवृत्तिके उपाय कहा तो हम कहैं हैं कि इनकी निवृत्ति के उपाय गौडपादाचार्य नैं कहे हैं कि

लये सम्बोधयेच्चित्तं विक्षिप्तं शमयेत्पुनः
सकषायं विजानीयात्समप्राप्तं न चालयेत्
नास्वादयेत्सुखंतत्र निःसङ्गः प्रज्ञया भवेत् ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि जब लय होय तब ज्ञानाभ्यास और वैराग्य इन उपायोँ करिकैं चित्तकूँ बोध करावै और जब काम भोगोँ मैं विक्षिप्त होय तब इसकूँ शान्त करै और जब लय और विक्षेप इनके मध्य की

अवस्था होय तब रागके बीज करिकैं युक्त इसकूं जाणिं करिकैं इस अव-स्था तैं बी निवृत्त करै और जब सम अवस्था की प्राप्तिकै सन्मुख होय तब अचल करै अर्थात् विषयाभिमुख नहीं करै और ज्यो वहाँ समाधि सुख होय है उसमैं आसक्त होवै नहीं ये इन उपद्रवोंकी निवृत्तिके उपाय हैं ॥

जब इन उपद्रवों कूँ निवृत्त करदेवै तब अपणैं स्वरूपभूत ज्ञान क-रिकैं अपणेंकूं जाणैं है यातैं हम कहैंहैं कि आत्मज्ञान वृत्ति नहीं है याही तैं वृत्तिकूं प्रमा मानैं हैं वे पुरुष अनुभवशून्य हैं ऐसैं जाणों इस ज्ञानका स्वरूप गौडपादाचार्यनैं लिखा है कि

अकल्पकमजं ज्ञानं ज्ञेयाभिन्नं प्रचक्षते ।
ब्रह्मज्ञेयमजं नित्यमजेनाजं विबुध्यते ॥ १ ॥

इस का अर्थ ये है कि ज्ञान ज्यो है सो अकल्पक है अर्थात् सर्व कल्पनावोंतैं वर्जित है और ये उत्पन्न होवै नहीं और ब्रह्मवेत्ता इसकूं ज्ञेयरूप कहैं हैं अज और नित्य ऐसा ज्यो ब्रह्म सो ज्ञेयहै वो आत्मस्वरूप ज्ञान करिकैं आप ही अपणें कूं जाणैं है ॥ १ ॥

ज्यो कहो कि ऐसा स्वरूप तो मेराही है मोतैं भिन्न तो ऐसा स्वरूप प्रतीत होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि तुमहीं ब्रह्महो तुमतैं भिन्न ब्रह्म नहीं है ॥ अब हम ये कहैंहैं कि तुम शब्दकूं वृत्तिका करण मानों अथवा मनकूं वृत्तिका करण मानों अथवा दोनूं कूं वृत्तिके करण मानों परन्तु वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ये निश्चित जानों ज्ञान तो जिससैं शब्दादिक विषय और श्रोत्रादिक इन्द्रिय और अन्तःकरण और इससैं उत्पन्न भई वृत्तियाँ इनका प्रकाश होय है सो है ये ही तुमारा निजरूप है सो आपसैं हीं आप जाण्याँ जाय है ॥ देखो कठोपनिषद् की श्रुति येही कहैहै कि

येनरूपं रसं गन्धं शब्दान् स्पर्शांश्च मैथुनान् ।
एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते एतद्वैतत् ॥१॥

और इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

स्वप्नान्तं जागरितान्तञ्चोभौ येनानुपश्यति ।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ॥२॥

इनका अर्थ ये है कि रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श ओर मैथुन सुख इन कूँ इससैं हीं जाणैं हैं इसके अविज्ञेय कुछ वी नहीं है ये ही वो है अर्थात् देवादिकोंकूँ वी जिसमैं सन्देह है सो ये ही आत्मा है इससैं भिन्न कोई विष्णुपद नहीं है १ स्वप्न के पदार्थ ओर जाग्रत् के पदार्थ इनकूँ जिससैं देखैहै उस विभु आत्माकूँ जाणिँ करिकैँ निःशोक होय है २ यातैं हम कहैहैं कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ॥ ओर तुम अपणैं अनुभव तैं वी देखो वृत्ति ज्योहै सो ज्ञान होय तो वृत्तितैं आत्माकी प्रतीति होवै ओर वृत्ति की प्रतीति होवै नहीं परन्तु जब वृत्ति को उदय होय है तब वृत्ति ही प्रतीत होय है यातैं वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है।

ज्यो कहो कि साक्षिस्वरूपके निर्णयमैं मेरे कुछवी सन्देह रहा नहीं अब हम भोक्ता किसकूँ मानैं सो कहो तो हम कहैं हैं कि इससे भिन्न कोई भोक्ता नहीं है ये ही भोक्ता है गीता के नवमाअध्याय के दशम श्लोकके व्याख्यान मैं भाष्यकार श्री शङ्कर स्वामी नैं कही है कि

सर्वावस्थासु दृक्कर्मत्वनिमित्ताहि सर्वा प्रवृत्तिः

इसका अर्थ ये है कि सर्व अवस्थावोंमैं सर्व प्रवृत्ति परमात्माके प्रकाश मात्र करिकैँ है तो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि परमात्मातैं भिन्न कोई प्रकाश नहीं है यातैं ये परमात्मा ही भोक्ता है।

ज्यो कहो कि आचार्य ऐसैं लिखैं हैं तो हम एकजीववादमत मानैंगे ज्यो कहो कि एक जीववाद की प्रक्रिया कहाहै तो हम कहैं हैं कि इस मत मैं ब्रह्म ज्यो है सो ही अज्ञान करिकैँ जीव भावकूँ प्राप्तहुवाहै ओर जगत् के पदार्थोंका परस्पर कार्यकारणभाव नहीं है किन्तु सारे पदार्थ साक्षात् अविद्याके कार्यहैं जैसैं स्वप्न अथवा शुक्तिरजतादिक हैं अविद्याकी वृत्तिकरिकैँ उपहित ज्यो साक्षी तातैं इनका प्रकाशहोय है यातैं सारे पदार्थ साक्षिभास्य हैं ओर ज्ञानाकार तथा ज्ञेयाकार अविद्याका परिणाम एक ही काल मैं उपजै है यातैं जबपदार्थकी प्रतीति होवै तब ही प्रतीतिका विषय पदार्थ होवैहै या पक्षमैं पदार्थों की अज्ञातसत्ता नहीं है किन्तु ज्ञात सत्ता है अद्वैतशादिनका ये सिद्धान्त पक्ष है या पक्षमैं सत्ता दोय हैं तीन नहीं हैं काहेतैं कि अनात्मपदार्थ सारे स्वप्नकी तरैँ प्रातिभासिक हैं

यातैं इनकी तो प्रातिभासिकी सत्ताहै और ब्रह्म जयो है सो परमार्थ सत्य है यातैं ब्रह्मकी परमार्थसत्ता है और प्रतीतितैं भिन्न कालमैं कोई अनात्मपदार्थ नहीं है यातैं इस मतमैं व्यावहारिकी सत्ता नहीं है इस मतमैं प्रमाता और प्रमाण इनका विषय कोई वी नहीं है अन्तःकरण इन्द्रिय और घटादिक सर्व त्रिपुटी एक कालमैं उपजै है तिनका विषयविषयिभाव बनैं नहीं जयो घटादिक विषय और नेत्रादिक इन्द्रिय ये ज्ञानतैं प्रथम होवैं तो अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञान प्रमाण जन्य होवै सो ये ज्ञानतैं पूर्वकालमैं होवैंनहीं किन्तु ज्ञान समकालमैं हीं त्रिपुटी स्वप्नकी तरँहँ उपजै है यातैं त्रिपुटी जन्य ज्ञान कोईवी नहीं परन्तु ज्ञानमैं स्वप्नकी तरँहँ त्रिपुटी जन्यता प्रतीत होयहै यातैं जाग्रतके पदार्थ साक्षिभास्यहैं प्रमाणजन्य ज्ञानके विषय नहीं यातैं स्वप्नके समान मिथ्याहैं इसमतमैं वेद गुरु इनका अङ्गीकार नहीं किन्तुचेतन नित्यमुक्त है चेतन मैं अविद्या के परिणाम नानाविध विवर्त्त होयहैं आत्मा सदा असङ्ग एकरस है आज पर्यन्त कोई मुक्त हुवा नहीं और अग्रिम काल मैं कोईवी मुक्त होवै नहीं अविद्या और ताके परिणाम इन का चेतन मैं किसी कालमैं सम्बन्ध नहीं यातैं वेद गुरु श्रवणादिक समाधि मोक्ष इनकी प्रतीति स्वप्न की तरँहँ मिथ्या है ये इस मतका सिद्धान्त है।

तो हम कहैं हैं कि इस मतमैं जैसैं स्वप्न के दृष्टाँततैं व्यावहारिकी सत्ता का त्याग किया तैसैंहीं इस प्रातिभासिकी सत्ताका वी त्याग करो काहेतैं कि द्वितीय भागमैं श्रुति युक्ति और अनुभव इन करिकैं अविद्या सिद्ध भई नहीं यातैं प्रातिभासिकी सत्ता वी नहीं है किन्तु एक परमार्थ सत्ता ही मानौं विचार तो करो देखो अपणाँ मत तो अद्वैत कहो हो और सत्ता दोय मानों हो ॥ ये एक जीववाद की प्रक्रिया सङ्ग्रही नैं विचारसागर के षष्ठतरङ्गमैं लिखी है परन्तु

यदा ह्येवैष उदरमन्तरं कुरुते अथ तस्य भयं भवति ॥१॥

ये श्रुति किञ्चित् वी भेद दर्शन होय तो भय होय है ऐसैं कहैहै यातैं परमात्म भिन्न वस्तु नहीं है ये ही उत्तम सिद्धान्त है।

आपही सच्चिदानन्द रूप परमात्मा जगत् हुवा है और जीवरूप करिकैं आपही शरीरमैं प्रविष्ट हुवा है देवशरीरों मैं प्रविष्ट हुवा आप ही पूजा

कूँ ग्रहण करे है और मनुष्यादि शरीरोँ मैं प्रविष्ट हुवा आप ही देवपूजा करे है आपही अपणीँ रचनाकूँ देख करिकैं मोहकूँ प्राप्त हुवा है और आपही वेदार्थमनन करिकैं स्वरूपभूत ज्ञान करिकैं स्वरूपानन्दानुभव करे है और जीवन्मुक्त होय है ऐसैं जाणौं।

अब कहो वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीँ है ये तुमकूँ निश्चय हुवा अथवा नहीँ क्योंकि कहो कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीँ किन्तु ज्ञान तो वृत्ति का वी प्रकाशक है इसमैं मेरै किञ्चित् वी सन्देह नहीँ परन्तु निश्चलदासजी ऐसे प्रसिद्ध पण्डित रहे उननैं वृत्तिकूँ ज्ञान सिद्ध करणेँ के अर्थ वृत्ति प्रभाकर नाम ग्रन्थ की रचना कैसैं किई सो कहो ॥ तो हम कहैंहैं कि उननैं ग्रन्थ दोनूँ बणाये हैं सो केवल मतोंकूँ भिन्न भिन्न दिखाणेँ के अर्थ बणाये हैं केवल आत्मसाक्षात्कार करायवेमैं उनका तात्पर्य नहीँ क्यो आत्म साक्षात्कार मात्र मैं उनका तात्पर्य होता तो मतजालतैं ग्रन्थोंकूँ परिपूरित नहीँ करते उननैं ये ग्रन्थ अपणैं मैं बहुशास्त्रदर्शिता का बोध करायवे के अर्थ रचे हैं याहीतैं इन ग्रन्थोँ मैं ये कहीँ वी नहीँ लिखी है कि अब हम हमारा अनुभव कहैंहैं।

ज्यो इन ग्रन्थोँ की रचना केवल आत्मानुभव होणेँ के अर्थ होती तो वे अपणीँ अभिमत एकही प्रक्रिया वर्णन करते और अन्य प्रक्रियावोंकूँ पूर्व पक्षमैं दिखाय पीछैं खण्डन करिकैं अपणाँ शुद्धानुभव कहते सो ऐसे प्रकार का लेख इन ग्रन्थोँ मैं नहीँ है परन्तु एक उपकार इन ग्रन्थोँतैं अवश्य होय है कि ज्यो इन ग्रन्थोँ के पढे हुवे पुरुषकै उत्कट जिज्ञासा हो जाय और उसकूँ अनुभव वाला पुरुष उपदेश मिलजाय तो अपणीँ तीक्ष्ण बुद्धितैं उपदेशकूँ धारण कर सकै है।

अब हम ये और कहैंहैं कि हमारा उपदेश प्राचीन आचार्योँ के कथनतैं विरुद्ध नहीँ है किन्तु अनुकूल है देखो वे ऐसैं लिखैं हैं कि

अध्यारोपापवादाभ्यां वेदान्तानां प्रवृतिः ॥

इस पंक्तिका ये अर्थ है कि अध्यारोप और अपवाद इन करिकैं वेदान्तोँ की प्रवृत्ति है तो इस कथन का ये तात्पर्य हुवा कि वेदान्त जे हैं ते सच्चिदानन्दरूप परमात्मामैं अविद्या और जगत् त्रिकालमैं नहीँ हैं तिनकी कल्पना करिकैं पीछैं उनको निषेध करैं हैं ऐसैं आत्मानुभव करावैं हैं यातैं तो हमनैं अविद्यादिकोंकूँ अलीक सिद्ध किंदे हैं ॥ और उनहीं ग्रन्थकारोँनैं

वृत्तौ ज्ञानत्वोपचारात् ॥

ऐसें लिखा है इसका अर्थ ये है कि वृत्तिमें ज्ञानपणें का उपचार है तो इसका ये तात्पर्य हुवा कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है किन्तु इसमें तो केवल ज्ञानपणें का व्यवहारमात्र है यातें हमनें वृत्तितें भिन्न ज्ञान का स्वरूप बताया है ॥ अब तुमारे ओर कुछ प्रष्टव्य होय सो कहो ।

ज्यो कहो कि जन्मान्तरके विषयमें कुछ निर्णय कहो तो हम पूछें हैं प्रथम तुम अपणाँ अनुभव कहो ज्यो कहो कि हम तो ये कहें हैं कि जन्मान्तर नहीं है काहेतें कि जन्मातर नहीं है इसमें ये अनुभवहै कि जाग्रत् १स्वप्न २ सुषुप्ति ३ मुर्छा ४ मरण ५ ये पाँच अवस्थाहैं इनमें उत्तरोत्तर अवस्थामें प्रकाश को ह्रास प्रतीत होय है जाग्रत् की अपेक्षा तो स्वप्न में प्रकाश की अल्पता है ओर स्वप्न की अपेक्षा सुषुप्ति में प्रकाशकी अल्पता है येतो प्रकट ही है अब हम ये कहें हैं कि सुषुप्ति की अपेक्षा मूर्छा में प्रकाशकी अल्पता है काहेतें कि सुषुप्ति होय तब तो करायें तें बोध होय है ओर मूर्छा भयें करायें तें बोध होवै नहीं किन्तु स्वतः बोध होय है अब मरणमें मूर्छा की अपेक्षा ये ही विलक्षणता है कि इस अवस्थाके भयें स्वतः बी बोध होवै नहीं तो हम पूछें हैं जन्मान्तर का विचार तो पीछें करेंगे प्रथम जन्मका कारण कहा है सो कहो ज्यो कहो कि संसार प्रवाह अनादि है इसमें प्रथम जन्म सम्भवै नहीं ऐसें शास्त्रोंमें निर्णय लिखा है तो हम कहें हैं कि जन्मान्तर के विषय में प्रश्न हीं असङ्गत हुवा काहेतें कि प्रथम जन्मतें द्वितीय ज्यो जन्म ताकूं जन्मान्तर कहें हैं ज्यो कहोकि हम इस जन्मकूं हीं प्रथम जन्म मानेंगे तो हम पूछें हैं इस का कारण ऐसा कहो कि ज्यो तुमारे ओर हमारे दोनूंके अनुभवगम्य होवै तो तुमारेकूं येही कहणाँ पड़ैगा कि ये आत्माहीं कारण है तो हम पूछें हैं ये जन्म शरीरका हुवा है अथवा आत्माका हुवा है ज्यो कहो कि शरीरका हुवा है तो हम कहें हैं कि शरीर का तो जन्मान्तर किसीके बी अनुभवगम्य नहीं है काहे तें ज्यो शरीर नष्ट होय है उसकी उत्पत्ति तो फेर कोई बी मानें नहीं ज्यो कहोकि ये जन्म आत्माका हुवा है तो हम कहें हैं कि आत्मा का जन्म तो शास्त्र सिद्ध बी नहीं है ओर अनुभव सिद्ध बी नहीं है तो इसका जन्मान्तर कैसें मान्याँ जाय ज्यो कहो कि अन्तःकरण

का दूसरे शरीर मैं ज्यो प्रवेश ताकूँ शास्त्रोंमैं जन्मान्तर कहा है तो हम पूछैं हैं तुम अन्तःकरण किसकूँ कहो हो ज्यो कहोकि आन्तर जेसुखादिक पदार्थ तिनके ज्ञानका ज्यो साधन तो अन्तःकरण है तो हम पूछैं हैं आन्तर पदार्थ तो अन्तःकरण वी है इसके ज्ञानका साधन कोन है सो कहो तो तुम येही कहोगे कि इसके ज्ञानका साधन और इसका ज्ञान ये तो साक्षिरूपही हैं तो हम कहैं हैं कि सर्व आन्तर पदार्थोंके ज्ञानका साधन साक्षीहै यातैं ये ही अन्तःकरण हुवा सो इसका दूसरे शरीरमैं प्रवेश सम्भवै नहीं ज्यो कहोकि ये आपका कथन तो मेरै वाक्स्तम्भन मन्त्र हुवा जन्मान्तर है अथवा नहीं है इसका अनुभव कैसैं होय सो कहो तो हम कहैं हैं कि इसका उपाय योग है यातैं योग साधन करो ॥

और हमारा निश्चय तो ये है कि जैसैं गगन मण्डल मैं मेघ होय है जो वृष्टि करिकैं गगनमैं हीं लीन होजायहै तैसैं हीं इस ज्ञानरूप आत्मामैं अनन्त पदार्थ प्रतीत होयहैं और अपणाँ अपणाँ कार्य करिकैं यामैं हीं लीन होजाय हैं ॥

ज्यो कहोकि आपनैं शुद्ध ब्रह्मसैंही सर्वकी उत्पत्ति और शुद्ध मैं ही सर्वका लय कहा है सो यह कोनसे आचार्यका मत है तो हम कहैं हैं कि यह मत नहीं है किन्तु ब्रह्मसम्पन्न पुरुषोंका अनुभव है देखो श्रीकृष्ण महाराज नैं गीताके त्रयोदश अध्याय मैं कहीहै कि

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति
तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि जब भूतोँ के पृथग्भाव कोँ एक ज्यो ब्रह्म तामैं स्थित देखता है और उससैं हीं विस्तार कहिये उत्पत्तिकूँ देखता है तब ब्रह्म सम्पन्न होता है यातैं हम कहैं हैं कि यह ब्रह्मसम्पन्न पुरुषों का अनुभव है मत नहीं है ॥ ज्यो कहो कि इस श्लोक मैं ब्रह्म तैं उत्पत्ति तो कही है परन्तु ब्रह्म मैं लय कहा नहीं तो हम कहैं हैं कि उत्पत्ति के कथन तैं लय तो स्वतः प्राप्त है जैसैं घट पृथ्वी तैं उत्पन्न होय है तो पृथ्वी मैं हीं लीन होय है अब तुम्हारे और कुछ प्रष्टव्य होय सो कहो ।

ज्यो कहो कि ज्ञानवानोंका व्यवहार कहो तो हम कहैं हैं कि देशकाल शरीरादि सामर्थ्य इनकूँ देखि कैं स्वानुकूल सुख सर्व कोँ होय तैसैं

व्यवहार करैं हैं और आत्मानन्दानुभव तैं अल्पभाषी होय हैं और सर्वकौं आत्मरूप समुझि कैं किसीका भी तिरस्कार नहीं करैं हैं ॥

ज्यो कहो कि ज्ञानका फल जीवन्मुक्ति है अथवा विदेहमुक्ति है तो हम कहैं हैं कि विदेहमुक्त तो सर्व हैं ज्ञान का फल जीवन्मुक्ति प्रधान है ॥

ज्यो कहो कि जीवन्मुक्तिका स्वरूप कहो तो हम कहैंहैं कि दुःखादि उपद्रव के कालमैं वी निज स्वरूप की दृष्टि की अनवृत्ति ही जीवन्मुक्ति है ज्यो कहो कि कितनैं ही पुरुष वेदान्त को अभ्यास करिकैं साधु विद्वानों का तिरस्कार करैं हैं और मोद मानैं हैं वे अनुभवी हैं अथवा नहीं तो हम कहैं हैं कि ऐसे पुरुषों के विषय मैं प्राचीन विद्वानों नैं लिखा होय तिसका अन्वेषण करो वह लेख ऐसे पुरुषों के अत्यन्त क्षोभ जनक है यातैं कहिवे योग्य नहीं परन्तु वे अनुभव शून्य हैं ऐसैं जानो ॥

ज्यो कहो कि आप अदृष्ट मानों हो अथवा नहीं तो हम हैं हैं कि अदृष्ट यह आत्मा है काहेतैं कि यह दृग्विषय नहीं है किन्तु दृग्रूप है ऐसैं जानौं ॥

ज्यो कहो कि शरीर मैं प्रवेश सैं मुग्ध ज्यो जीवभावापन्न परमात्मा तानैं जा जगत्की कल्पनाकिई वा जगत् कूँ कितने हीं अविद्या वादी भ्रम कल्पित मानि करि कैं मिथ्या कहैं हैं और ऐसैं उन का मानणाँ अनुभव सिद्ध वी है काहेतैं कि जब विवेकतैं जीवका मुग्ध भाव निवृत्त होय है तब वो ही जगत् निवृत्त होय है तासैं जीव कृतार्थ हो करिकैं जीवन्मुक्त होय है और जे अविद्यावादी परमात्मरचित जगत् की निवृत्ति तैं जीवन्मुक्ति मानैं हैं उन का मत अनुभव विरुद्ध है काहेतैं कि ज्यो विवेक सैं परमात्मरचित जगत् की निवृत्ति होती तो सृष्टि के आदिमैं सनकादिकों को ज्ञान हुवा तब ही परमात्मरचित जगत् निवृत्त हो जाता तो सृष्टि होती ही नहीं यातैं हम जाणैं हैं कि उन के कल्पित जगत् की ही निवृत्ति भई यातैं वे सर्वात्मभाव सैं जीवन्मुक्त भये और अब भी जे विवेकी हैं वे स्वकल्पित जगत्कूँ ही निवृत्त करिकैं जीवन्मुक्त हैं परमात्मरचित जगत् तो जीवन्मुक्तिका साधक है बाधक नहीं है इस विषय मैं विद्यारण्य स्वामी नैं आज्ञा किई है कि

अबाधकं साधकं च द्वैतमीश्वरनिर्मितम्
अपनेतुमशक्यं चेत्यास्तां तद्द्विष्यते कुतः॥१॥

इसका अर्थ ये है कि परमात्म रचित जगत् बाधक नहीं है गुरु वेदादि प्राप्ति तैं ज्ञान का साधक है और तू इसकूँ निवृत्त भी नहीं कर सके है यातैं तू इससैं विद्वेष काहेकों करै है १ ज्यो कहो कि जीव कल्पित जगत् कहा है तो हम कहैं हैं कि जीव कल्पित जगत् दोयप्रकारका है एक तो अशास्त्रीय है और दूसरा शास्त्रीय है इनमैं अशास्त्रीय बी दोय प्रकार का है एक तो तीव्र दूसरा मन्द, काम क्रोधादिक तीव्र है और मनोराज्य मन्द है ये दोनूँ ज्ञान तैं पूर्व त्याज्य हैं और शास्त्र चिन्तनादिक शास्त्रीय जगत है ज्ञान के उत्तर ये बी त्याज्य है इन दोनूँ के त्यागतैं जीवन्मुक्ति मानैं हैं और ईश्वरकीमायाकों जीवकी मोहक मानैं हैं और ज्ञान सैं मोह की निवृत्ति मानैहैं ॥ तो हम कहैं हैं कि ये प्रक्रिया पञ्चदशी के द्वैतविवेक मैं अनुभव सैं लिखी है सो समीचीन हीं है परन्तु इसकातात्पर्य ऐसैं समुझो कि वेदनैं शरीर मैं परमात्माका प्रवेश कहा तो जीव ही परमात्मा है इनका मान्याँ कार्यब्रह्म क्यो जगत् सो ही मायाहै इसनैं याकों मोहित नहीं कियो है, किन्तु इसकूँ देखि कर ये जीवभावापन्न परमात्मा ही स्वयं मोहित भयो है जगो ये याकूँ मोहित करै तो इसके मोहनिवृत्ति सम्भवै नहीं काहेतैं कि ज्यो इसके प्रमाद सैं मोह नहीं होतो तो वेद इसकूँ मोह निवृत्ति के यत्न को उपदेश नहीं करतो जैसैं भूप नैं बध्द कियो ज्यो पुरुष ताकूँ कोई बी छूटवे के यत्न को उपदेश नहीं करै है ज्यो कहो कि कोई आचार्य आत्मा मैं अविद्या का त्रैकालिक अभावबी कहै है और जगत् कों अकारण भ्रम कहै है और ब्रह्मरूप बी कहै है उस का तात्पर्य कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं ये वशिष्ठ का मत है योगवाशिष्ठ के निर्वाण प्रकरण मैं पाषाणाख्यायिका स्थल मैं श्रीरामचन्द्र कों वशिष्ठनैं कही है कि

अज्ञानमपि नास्त्येव प्रेक्षितं यन्न लभ्यते
विचारिणा दीपवता स्वरूपं तमसो यथा॥१॥

इस का अर्थ ये है कि अज्ञानबी नहीं हीं है विचार वाला का देखा दीखता नहीं जैसैं दीप वाले का देखा तम नहीं दीखता है १ यातैंइ-

मनैं तेरेकूँ वो विचार कहा है जिस सैं अविद्या का त्रैकालिक अभाव सिद्ध होय है और विचार सागर तथा वृत्ति प्रभाकर ये अनुभव ग्रन्थ नहीं हैं यातैं हीं इन मैं ये विचार नहीं है किन्तु ये तो अविद्या की सिध्दि के विचार सैं पूर्ण हैं यातैं हम नैं स्वानुभव सैं इस विचार का खण्डन किया है और वहाँ हीं वशिष्ठ नैं ऐसैं कही है कि

अहंभावपिशाचोऽयमज्ञानशिशुना विना
अविद्यमान एवाऽन्तः को कल्पितस्तेन सुस्थितः॥१॥

या श्लोक मैं अज्ञान विना हीं अविद्यमान अहं भाव की कल्पना कही है यातैं कितनैं हीं वेदान्ती अकारणक जगद्ब्रह्म मानैं हैं परन्तु कारण विना कार्य संभवै नहीं ये सर्वानुभव सिध्द है यातैं सर्व ब्रह्मकारणक है यातैं हीं वहाँ हीं वशिष्ठ नैं ऐसैं कही है कि

ब्रह्म शान्तं घनं सर्वं क्वाहङ्कारादयः स्थिताः
अहंभावस्य संशान्तिरित्येषा कथिता तव॥१॥

इस का अर्थ ये है कि अहं कारादिक कहाँ हैं सर्व जगत् एक रस ब्रह्म है ऐसैं ये अहं भाव की शान्ति तेरेकूँ कही है १ इस मैं उत्तरार्द्ध का तात्पर्य ये है कि ये ब्रह्मभाव की सिद्धि तेरेकूँ कही है इस कथन का तात्पर्य ऐसा नहीं मानैं तो पूर्वार्द्ध की उक्ति तैं विरोध होय है ज्यो कहो कि सर्व ब्रह्म हीहै तो शुद्धात्मरूप तैं विलक्षण कैसैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि कार्यावस्था मैं कारणावस्थासैं कुछ विलक्षणता प्रतीत होय है येसर्वानुभव सिद्ध है जैसैं कटकावस्था मैं सुवर्ण सैं आकार की विलक्षणता प्रतीत होय है और जैसैं कटकावस्था मैं कटक सुवर्णताका त्याग नहीं करै है यातैं हीं कटक सुवर्ण सैं अभिन्न हीं भासै है तैंसैं ही जगदवस्था मैं जगत् ब्रह्मताका त्याग नहीं करै है यातैं हीं जगत् सत् सैं अभिन्न भासै है यहाँ ज्यो इस विलक्षणताकूँ मिथ्या कहै वो उपादान तैं भिन्न करि कैं इस का स्वरूप दिखावै सो विरञ्चका वी सामर्थ्य नहीं है ज्यो कहो कि जै सैं सत् सैं अभिन्न भासै है तैंसैं चित् सैं अभिन्न तो भासै नहीं तो हम कहैं हैं कि सत् सैं भिन्न चित् नहीं है यातैं हीं

जगत् अस्ति ॥

ये प्रतीति होय है तैसैं

जगत् भासते ॥

ये वी प्रतीति होय है अब और कुछ प्रष्टव्य होय सो कहो ज्यो कहो कि वेदान्तग्रन्थोँ मैं दृष्टिसृष्टिवाद लिखा है उस का सिद्धान्त कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि अविद्यावादी तो दृष्टिसृष्टिशब्द का समास ऐसैं करैं हैं कि

दृष्टिसमकालीना सृष्टिः ॥

और दृष्टिशब्दार्थ वृत्ति कौं मानैं हैं यातैं संसार कूँ मिथ्या कहैं हैं और अनुभवी पुरुष दृष्टिसृष्टि शब्द का समास ऐसैं करैं हैं कि

दृष्टिरेव सृष्टिः ॥

और दृष्टिशब्दार्थ स्वरूप भूत ज्ञानकूँ कहैं हैं यातैं सृष्टि कौं सद्रूप कहैं हैं सो हमनैं कहा है ज्यो कहो कि अविद्यावाद के ग्रन्थ आप के उपदेश मैं सर्व अनुपयुक्त है अथवा कोई अंश उपयुक्त वी है तो हम कहैंहैं कि अध्यारोपकेविना अपवाद संभवै नहीँ यातैं ऐसैंसमुझो कि अविद्यावाद मैं अविद्या सैं आदि लेकैं मुक्तिपर्यन्त आरोपित हैं और हमारा उपदेश अपवाद रूप है यातैं सर्व उपयुक्त हैयद्यपि अविद्यावाद के ग्रन्थोँ मैं कहीँ अपवाद वी है परन्तु उस मैं युक्ति अनुभव प्रमाण विस्तार सैं कहे नहीँ यातैं अपवाद अनुभवारूढ होवै नहीँ यातैं हमारा उपदेश वी अविद्यावाद मैं उपयुक्त है ज्यो कहो कि ऐसैं दोनूँ मैं सम प्राधान्य होगा तो हम कहैं हैं कि अनुभवी पुरुष अविद्यावादकूँ मानैं नहीँ यातैं अविद्यावाद अप्रधान है ॥

अब हम ये विचार करैं हैं कि कितनैं ही उपासकौं का ये सिद्धान्त है कि आत्मज्ञान भयें तैं पुरुष उपासना का उत्तम अधिकारी है और परमात्मा तैं अभिन्न होवै नहीँ ज्यो ज्ञान भयें तैं परमात्मा सैं अभिन्न हो जावै तो जैसैं अपणाँ स्वरूप शुद्ध सच्चिदानन्द असङ्ग नित्यमुक्त प्रतीत होय है तैसैं व्यापक वी प्रतीत होणाँ चाहिये सो होवै नहीँ इस का उत्तर हम ये कहैं हैं कि जब आत्मज्ञान हो जावै और अपणैं स्वरूप मैं व्यापकताकी प्रतीति

चाहै तो उसकों उचित है कि अल्प और स्थिरतो व्यवहार करै और युक्ता-हार विहार रहै और ब्रह्मचर्यका सेवन करै और प्रहर रात्रि शेप रहै तव पद्मासनसैं स्थित होकर श्वासोच्छ्वास मैं अजपाको अनुसन्धान करै जव इस सैं वृत्ति स्थिर होय तव नेत्रोंका निमीलन करिकैं भ्रूमध्य मैं ऊपर की तरफ लगावै और वहाँ शनैः२ दृष्टिके ठहरने का अभ्यास वढावै इस अभ्यास मैं शीघ्रता उन्मादहेतु है और शिरोव्यथा कारक है और ब्रह्मचर्यका त्याग कम्पजनक है आहारवैषम्य रोगजनक है यातैं पूर्वोक्त नियमों का त्याग नहीं करै जव ये अभ्यास वढै है तव याकूँ प्रथम अन्धकार मैं विस्फुलिङ्ग प्रतीत होय हैं पीछैं तमका ग्रास कर्त्ता चन्द्रमण्डल प्रतीत होय है पुनः शनैः २ अभ्यास वढायैं केवल प्रकाश प्रतीत होय है वो प्रकाश नील हरित रक्त शुक्ल पीत ऐसैं पञ्चविध अनियत प्रतीत होय है अव यहाँ विघ्नोंका संभव है यातैं सावधान रहै भय मोद आश्चर्य इनके वश नहीं होवै भयानक के दर्शनसैं नेत्रोंका उन्मीलन नहीं करै और भोग्य स्थान तथा विचित्र भोग सामग्री तथा भोग प्रार्थना करती रूप यौवन सम्पन्न स्त्री इनकों देखकर आसक्त नहीं होवै इनकों केवल विघ्न ही समुझै ऐसैं करतै २ जव ये तो दीखै नहीं और उस प्रकाशमैं स्वेष्ट सगुण मूर्त्तिका दर्शन होय तव वृत्तिकौं उस मूर्त्ति मैं स्थिर करैं ऐसैं करतेरयह साधक पुरुष वीणा सारंगी इनका मधुर शब्द सुनैं है ऐसैं सुनते २ मेघगर्जन अथवा घण्टानाद सुनैं तव वृत्ति का लय होय है उस समयमैं ऐसासावधान रहैकि वो वृत्ति अपनैं स्वप्रकाश आत्मरूपमैं लीन होवै और सुषुप्तिमैंजावैनहीं ऐसैं करतैं २ भविष्यत् स्वेष्टानिष्टका ज्ञान होय है उसमैंवी आसक्त होवै नहीं तव इसकूँ आत्मस्वरूप पूर्ण प्रतीत होय है तव ये पुरुष कृतार्थ है और अपणें सैं भिन्न परमात्माकूँ नहीं जाणै है इस अभ्यास का करने वाला रात्रिदिन आनन्द मग्न रहै है और इस अभ्यासकूँ करने वाला अपणी सिद्धि अन्य-कूँ नहीं कहै इससैं सिद्धि नष्ट होय है ॥ मैं पूर्व केवल उपासक ही रहा जव मैंनें आत्मज्ञान सिद्ध किया तव मोकूँ पूर्णता प्रतीत नहीं भई तो मैंनें ये अभ्यास ३ वर्ष पर्यन्त किया है इस अभ्यास के करनें मैं एक महा-विघ्न हुवा यातैं मैं जानूँ हूँ कि व्यवहार इसका प्रतिवन्धक है इस अ-भ्यास के करने वाले पुरुष कै स्वेष्टमूर्त्ति के दर्शन कै अनन्तर शरीरयात्रा स्वयं सुखपूर्वक होय है यातैं सन्तोष होकर उपराम वढै है याहीतैं जीव-

मुक्ति का आनन्द पावै है जिस पुरुष के स्वरूप की पूर्णता मैं सन्देह होय वो पुरुष इस अभ्यासकौं करै और जिसकै हमारे पूर्वकृत उपदेशसैं सन्देह निवृत्त हो जाय सो इस अभ्यासकौं नहीँ करै सन्दिग्ध जीवन दुःख का हेतु है ॥

ज्यो कहोकि परलोक है अथवा नहीँ तो हम कहैंहैं कि लोकशब्द ज्यो है सो लोकृदर्शने धातु सैं निष्पन्न है यातैं लोक यही है ये सर्व पदार्थौं तैं पर है यातैं परलोक है परलोक शब्द का अर्थ परज्ञान है परज्ञान शब्द का अर्थ पर कहिये उत्कृष्ट ऐसा ज्यो ज्ञान अर्थात् सर्व का प्रकाशक ज्यो ज्ञान सो ये है तो परलोक ये आत्मा हीँ है अब तुमारै और कुछ प्रष्टव्य होय सो कहो ।

ज्यो कहो कि आपनैं ज्ञान के साधन पूर्व तीन कहे तिन मैं स्थिर तीक्ष्ण बुद्धि और उत्कट जिज्ञासा येतो हो सकैं हैं परन्तु तत्वसाक्षात्कार वाले गुरु का लाभ दुर्लभ है यातैं मुक्ति का मार्ग कोई अन्य वी है अथवा नहीँ तो हम कहैं हैं

दोहा ।

ज्ञान धरण हरि पद शरण, मरण शम्भु पुर मांहिँ ।
अयन तीन हैँ मुक्ति के चोथो मारग नाँहिँ ॥ १ ॥
हरि पद रति काशी मरण, लहै दोयतैं ज्ञान ।
ज्ञान मुक्ति को रूप है ये निश्चय करि जान ॥ २ ॥
ज्ञानसिद्ध उपदेश शुभ शिष्य विमल मति पाय ।
कहन लग्यो कर जोरिकैं, परमानन्द समाय ॥ ३ ॥
वृत्ति प्रभाकर हू पढ्यो, विचार सागर पेखि ।
भयो न तउ कृतकृत्य मैं, निज आतम कौं लेखि ॥ ४ ॥
ताको प्रभु उद्धार करि, दीन्हों आतम ज्ञान ।
अब मोकूँ मैं अरु, जगत होत ब्रह्म हीँ भान ॥ ५ ॥

चौपाई ।

धर्म नगर को मैं हूँ भूपा । जाकी धरणी परम अनूपा ॥
जहाँ धर्मको नित उपदेशा । षट ईतिनको जहाँ न लेशा॥६॥
प्रजा सकल सुख मैं सरसाई। अपणें अपणें धर्म लगाई॥
नाग वाजि रथ वल अनगिनती।वहुत भूप नित करते विनती७
जीते देव असुर नर नागा । जुधमैं कोउ न सम्मुख लागा॥
तीन लोक के धनकूँ लाई । कोषराज को दियो भराई॥८॥
देवनारि मो चँवर ढुरावै । नित गन्धर्व मोय गुन गावै ॥
यज्ञ किये मैंनें वहु भांती । भोजन दिये करा द्विज पांती॥९॥
देइ दच्छिणा द्विजगन पोष्यो ।तऊ न मो मन अति सन्तोष्यो॥
आप कृपा करि किय उपदेशा । तातैं मेट्यो सकल कलेशा १०
गहि उपदेश ज्ञानकूँ पायो । भेट राज ये चरण चढायो ॥
ज्ञान सिद्ध या विध सुनिवानी । शिष्यभक्ति नीकी करिजानी११

दोहा ॥

गुरु वोले शिष्यकूँ वचन भेट लई मैं मानि ।
नीकी विधि करि राजकूँ याकूँ मेरो जानि ॥१२॥

चौपाई ॥

ज्यो कछु होइ हानि या माहीं। तनकहु सोच चित्तगहि नाहीं
लाभ होय तो हर्ष न कीजे। कोष हमारे ताहि धरीजे॥१३॥
कर्त्ता कर्म क्रिया जे होई । ब्रह्मरूप करि सवकूँ जोई ॥
ज्यो दखै अरु देखन हारो। ब्रह्मरूप ये श्रुति निरधारो ॥१४॥

दोहा ॥

याविधि सुनि गुरु को वचन शिष्य विमलमति नाम॥
गुरु के पदजुग भेटिकैं गयो आप कै धाम ॥१५॥

चौपाई ॥

है जयनगर जगत विख्याता । जहाँ नृपति माधव सुखदाता॥
वसै तहाँ दध्यच ऋषिवंसा । सकल विप्रकुलकोअवतंसा॥१६॥
नन्दराम तामैं उपजायो । हरिभक्तनसैं ज्यो सरसायो ॥
गोत्र ताहि काश्यप यह जानौं।डेरोल्या अवटङ्क पिछानौं॥१७॥
मालीराम भयो सुत ताकै । भई सुन्दरी वनिता वाकै ॥
दोनूं कृष्ण भक्तिरस पाये । तिनतैं दोय पुत्र उपजाये ॥१८॥
गङ्गाविष्णु पूर्व सुत जानहु । दूजो गोपीनाथ पिछानहु ॥
गङ्गाविष्णु भक्तिपरवीना । दूजो ज्ञान भक्तिरस लीना॥१९॥

दोहा ॥

गुरुतैं आतम वोध लहि रहत सदा आनन्द ।
कृष्ण चरण जुग कञ्जको पिवत रहत मकरन्द॥२०॥
तापैं गुरु करिकैं कृपा दियो स्वानुभव ग्रन्थ ॥
जहाँ अविद्याको न मल शुद्ध मोक्षको पन्थ॥२१॥
गहि ताकूँ तातैं रच्यो यहै स्वानुभवसार ॥
मनन करत याको पुरुष सहज लहत निससार॥२२॥
पाँच कोश त्रिपुटी सकल तीन अवस्था ज्योइ ॥
तिन्हैं प्रकाशत कृष्ण है मेरो आतम सोइ॥२३॥
दीसत जातैं सकल यह यह जाकूँ न लखात ॥
यहै कृष्ण निजरूप है आपहितैं दरसात॥२४॥
उगणींसैं चालीस अरु दोय (१९४२) वर्ष यह जानि ॥
पुरुषोत्तम के मासमैं ज्येष्ट कृष्ण पहिचानि॥२५॥

तैरस्त्रि (१३) अरु गुरुवारमेँ नीको ग्रन्थ वणाय ॥
कृष्ण चरण जुग कञ्जमैँ दीन्हौँ याहि चढाय॥२६॥

इति श्रीजयपुरनिवासिदधीचिवंशोद्भवडेरोल्यावटङ्क पण्डित गोपीनाथ विरचिते स्वानुभवसारे वेदान्त मुख्य सिद्धान्ते श्री ज्ञान सिद्ध गुरूपदेशे ज्ञानस्वरूप विवेचने तृतीयो भागः॥३॥ समाप्तोयं ग्रन्थः सम्वत १९४२ का द्वितीय ज्येष्ट कृष्ण १३ गुरुवार

॥ शुभं भवतु ॥

स्वानुभवसारका निष्कर्ष ॥

द्वैत दृष्टि की निवृत्ति वेदान्त शास्त्र का मुख्य रहस्य है सो सर्वत्र चिद्‌दृष्टिभये विना होा सके नहीं यातैं विद्वानों नैं नाना विध प्रक्रियाओं की कल्पना किई है परन्तु जगत् की रचना ऐसी विलक्षण है कि इस के वर्णन मैं बडे२ विद्वान् मोह कौं प्राप्त होय हैं ओर जे अनुभवी पुरुष हैं वे सर्वत्र चिद्‌दृष्टि सिद्ध करिकैं आनन्द मग्न रहैं हैं ओर तूष्णीम्भाव राखैं हैं इस मैं कारण यह है कि अज्ञ ओर तत्त्वज्ञ इन की दृष्टि समान नहीं होय है अज्ञ की दृष्टि सैं जो जगत् भासै है सो मिथ्या है ओर तत्त्वज्ञ की दृष्टि सैं जो जगत् भासै है सो वागगोचर अद्वितीय ब्रह्म रूप है देखो योगवाशिष्ठ के निर्वाण प्रकरण मैं उत्तरार्द्ध मैं १९० को रामविश्रान्ति नाम सर्ग है उस मैं वशिष्ठ नैं रामचन्द्र सैं कही है कि

यादृक् स्यादज्ञविषयं जगत्तस्य न सत्यता ।
यादृक् च तज्ज्ञविषयं तदनाख्यं यदद्वयम् ॥

इस का अर्थ यहहै कि जैसा जगत् अज्ञानीका विषयहै सो सत्य नहीं है ओर जैसा जगत् ज्ञानीका विषय है सो वाणी का अविषय अद्वय ब्रह्म है जो कहो कि सर्व वेदान्त ग्रन्थन मैं जगत् कौं भ्रान्ति रूप कहा है ओर वशिष्ठ नैं जगत् कौं सद्ब्रह्म रूप कहा है तो इस मैं अनुभव कहो तो हम कहैं हैं वहाँ हीं वशिष्ठ नैं ऐसैं कही है कि

अकारणत्वात्सर्वत्र शान्तत्वाद्भ्रान्तिरस्ति नो ।
अनभ्यासवशादेव न विश्राम्यति केवलम् ॥

इस का अर्थ यह है कि कारण के अभाव सैं और सर्वत्र शान्तपणाँ सैं भ्रान्ति नहीँ है अजभ्यास वश सैं हीँ केवल विश्राम कौं पावै नहीँ और यहाँ हीँ ऐसैं कही है कि

कारणाभावतो राम नास्त्येव खलु विभ्रमः ।
सर्वं त्वमहमित्यादि शान्तमेकमनामयम् ॥

इस का अर्थ यह है कि भ्रमकारण के अभाव सैं भ्रम है ही नहीँ त्वम् अहम् इत्यादिक सर्व जो है सो शान्त निर्दोष एक ब्रह्म है जो कहो कि ऐसैं कहो तो अभ्यास भ्रान्ति कहाँ सैं उपस्थित भई तो हम कहा कहैं वशिष्ठ नैं हीँ कही है कि

अभ्यासभ्रान्तिरखिलं महाचिद्घनमक्षतम् ॥

इसका तात्पर्य यह है कि जिस कौं तू अभ्यास भ्रान्ति कहै है सो अखण्ड चैतन्य घन है जो कहो कि अहंत्वं इन कौं बोध रूप मानौंगे तो बोध मैं भेद मानना होगा सो निर्मल आत्मा मैं सम्भवै नहीँ तो हम कहैं हैं कि इस का उत्तर वशिष्ठ नैं यह कहा है कि

यत्तद्बोधस्य बोधत्वं तदेवाऽहं त्वमुच्यते ।
द्वित्वमत्राऽनिलस्पन्दद्दशोरिव निगद्यते ॥

इस का अर्थ यह है कि जो बोध को बोधत्व है सो ही अहंत्वं है यहाँ जो द्वित्व है सो अनिल और स्पन्द इन की दृष्टियौं की तरँह है जो कहो कि चित्त के होनें तैं जगत् भासै है और चित्त के नहीँ होनें तैं जगत् भासै नहीँ यातैं जगत् चित्तरूप है तो हम कहैं हैं कि

चितश्चेत्योन्मुखत्वं यत्तच्चित्तमिति कथ्यते ।
विचार एष एवातो वासना तेन शाम्यति ॥

ऐसैं वशिष्ठनैं हीँ कही है यातैं चित्स्फुरण हीँ चित्त है यह ही विचार है इससैं हीँ वासनाकी शान्ति होय है जो कहोकि अनिल और स्पन्द यह भिन्न हैं एक नहीँ हैं तैसैं हीँ बोध और बोध्य जगत् यह भी भिन्न हैं एक नहीँ हैं तो हम कहैं हैं कि अनिल और स्पन्द तथा ज्ञान और ज्ञेय इनमैं भेद होता तो वशिष्ठ ऐसैं नहीँ कहते कि

न ज्ञानज्ञेययोर्भेदः पवनस्पन्दयोरिव ॥

यातैं ज्ञान और ज्ञेय एक हैं जो कहो कि चित्तकौं चित्स्फुरण रूप विचारैं वासना की शान्ति कैसैं होय तो हम कहैं हैं कि जो चित्त चिद्रूप हुया तो सर्व चित्तमय है यातैं सर्व विश्व चिद्रूप हुया जो सर्व चिद्रूप हुया तो जगद्रूप विषयके अभावसैं वासनाका उदय कैसैं होसकै जो कहोकि चिद्वासना का तो उदय होगा सो हम कहैं हैं कि चिद्वासना जो है सो जीवन्मुक्ति और विदेह मुक्ति दोनोंकी साधक है यातैं इसके होनैं तैं हानि नहीं है

परंतु यहाँ यह और समझो कि यौक्तिक मतमैं तो जगत्कौं बाधदृष्टिसैं ब्रह्म रूप कहाहै और बाधदृष्टिके विना जगत्कौं ब्रह्मरूप माना है उसकौं प्रतीक उपासना कहीहै इसमैं कारण यहहै कि यौक्तिक मतमैं जगत्कौं जड और अविद्या कल्पित माना है यातैं जगत् ब्रह्मरूप हो सकै नहीं और जगत्कौं ब्रह्मरूप बहुत श्रुतियोंमैं कहाहै यातैं यहाँ ऐसैं व्याख्यान किया है कि जैसैं शालग्रामका चतुर्भुज विष्णुरूप करिकैं वर्णन है तैसैं जगत्का ब्रह्म रूप करिकैं वर्णन है और वस्तुगत्या बाधदृष्टिसैं जगत ब्रह्मरूप है सो यह व्याख्यान अनुभवी पुरुषों के संमत नहीं है काहेतैं कि वे केवल श्रुति के अनुकूल अनुभव करैं हैं और अविद्याका उनके त्रैकालिक अभाव है यातैं वे जगत् कौं चित्स्फुरण मानैं हैं यातैं ही यौक्तिक मताभिमानी पुरुषोंसैं विवादका त्याग करिकैं जीवन्मुक्तिका आनन्द भोगैं हैं और अपणें सदृश अनुभवी मिल जायहै तो एकान्तमैं जिस अनुभवमैं अविद्याका त्रैकालिक अभाव है उस अनुभव कौं आनन्दपूर्वक प्रकट करैं हैं अथवा योग्य जिज्ञासु पुरुष उपस्थित होय तो उपदेशसैं उसकौं कृतार्थ करैं हैं।

और यौक्तिक मत उपासकों के भी संमत नहीं है काहेतैं कि जे दृढ उपासकहैं उनके शालग्राममैं अथवा मूर्त्तिमैं पाषाण बुद्धि होवै नहीं. किन्तु उपास्य बुद्धि ही होयहै यातैं हीं सगुण ब्रह्म के उपासकौं कौं तत्तन्मूर्त्ति उपास्य रूप सैं प्रतीत भई है और पूर्ण उपासकोंकौं स्वव्यतिरिक्त चराचर मैं सच्चिदानन्द बुद्धि होय है और जगद्बुद्धि होवै नहीं जो कहो कि ऐसैं कहोगे तो ज्ञानी और उपासक मैं भेद कहाहै तो हम कहैंहैं कि भेददर्शन हीं भेद हेतु है तात्पर्य यहहै कि इन उपासकोंके उपास्य और उपासक इस

में भेदबुद्धि रहैहै और जे अभेदसैं उपासना करैं हैं वे केवल यौक्तिक मतके अनुकूल जगत्‌कौं माया कल्पित और जड मानैं हैं और वेदवाक्योंके विश्वाससैं सर्वकी ब्रह्मरूपतासैं उपासना करैं हैं तो इस लेखका यह तात्पर्य हुया कि यौक्तिक मत उपासकों के संमत नहीं है।

और अनुभवी पुरुषों का कथन सर्व उपासकों के अविरुद्ध है काहेतैं कि वे जिसकों उपास्य मानैं हैं अनुभवी पुरुष भी उसकों चिद्रूप ही कहैं हैं और वेभी उपास्यकों चिद्घनरूप ही मानैं हैं जो कहो कि इस समयमें जे पुरुष उपासक हैं उनकों तो तत्तन्मूर्त्ति उपास्य रूपसैं प्रतीत होवैनहीं इसमें हेतु कहाहै तो हम कहैं हैं कि इस समय में तो बहुधा उपासक नहीं हैं किंतु उपासकाभास हैं यातैं हीं केवल तिलक मालाके ही आग्रह में लीन रहैं हैं और भक्तिलीन होवैं नहीं और जे उपासनामें दृढ हैं उनकूँ तत्तन्मूर्त्ति उपास्य रूप ही प्रतीत होय है परंतु वे स्वकीय सिद्धिकों प्रकट करैं नहीं और बाह्य चिन्हों के धारणमें आग्रह करैं नहीं और सर्वत्र उपास्य भाव सैं नम्र रहैं हैं ऐसैं यौक्तिक मत अनुभवी पुरुषों के संमत नहीं है तथापि इसके अभ्यास करनें वालेके जैसैं अनुभवीका उपदेश शीघ्र हृदयारूढ होय है तैसैं अन्यके हृदयारूढ होवै नहीं यह इस मत में परम गुण है यातैं हीं अनुभवी पुरुष इसकी प्रवृत्ति के प्रतिबन्धक नहीं हैं।

और अनुभवी पुरुषोंमें यह विलक्षणता और है कि जो कृपाकरैं तो यत्किञ्चत् ग्रन्थके उपदेशसैं हीं ब्रह्मविद्या करायदेवैं हैं कारण यहहै कि वे वाक्सामान्यकों उपनिषद्रूप देखैं हैं इसही कारणसैं इस ग्रन्थके प्रथम भाग में न्याय मत विवेचन सैं हीं शिष्यकों ब्रह्म विद्याकी प्राप्ति वर्णन किये है और इस ग्रन्थ के द्वितीय भागमें तथा तृतीय भागमें यौक्तिक मतानुयायी पुरुषोंके अनुभव में और अनुभवी पुरुषोंके अनुभवमें जो वैलक्षण्य है सो दिखाया है और यौक्तिक मतवादका खण्डन ऐसी विलक्षण प्रक्रियासैं किया है कि जिससैं मताभिमाननिवृत्ति पूर्वक निःसंशय आत्मसाक्षात्कार होकर पुरुष कृतार्थ होजावै और इन भागों में अविद्याके अवलम्ब विना आत्मानुभव कहाहै इसमें हेतु यह है कि तत्वसाक्षात्कारके अनन्तर वेदान्तके मतकों अर्थात् यौक्तिक मतकों लेकर शिष्यका प्रश्न है अब विचार दृष्टिसैं देखो तत्व साक्षात्कारके अनन्तर अविद्याका त्रैकालिक अभाव भासै है यह

उन हीं ग्रन्थों मैं लेखहै तो अविद्याके अवलम्बन सैं तत्वसाक्षात्कार वाले पुरुष कों उपदेश कैसैं हो सकै यातैं अविद्याखण्डनपूर्वक उपदेश है ।

और आवरणभङ्ग वृत्ति ज्ञानका फल है जो आवरण हीं नहीं तौ वृत्ति ज्ञानका माँननाँ निष्फलहै यातैं वृत्ति ज्ञान खण्डन पूर्वक स्वरूप भूतज्ञान कहाहै ।

जो कहोकि चित्स्वरूप प्रकाशक है और जगत् प्रकाश्य है तौ इन मैं अभेद कैसैं मान्याँ जाय तो हम कहैं हैं कि सूर्य और जगत् के पदार्थ इनमैं प्रकाशकत्व और प्रकाश्यत्व इनके होतैं भी जड मानौं हो तैसैं हीं चित्स्वरूप और जगत् इनकों भी ब्रह्मरूप मानौं जो कहोकि प्रकाशकताकी प्रतीति के विना विश्वकों चिद्रूप मानसकैं नहीं तो हम कहैं हैं कि विश्व स्वरूप स्फुरण विना आत्मा मैं प्रकाशकताकी प्रतीति होवै नहीं यातैं विश्वकों आत्मा की प्रकाशकताका प्रकाशक मानि करिकैं संतोष करो तात्पर्य यह है कि जैसैं आत्मा विश्वका प्रकाशक है तैसैं विश्व आत्मा का प्रकाशक है यातैं विश्व ब्रह्मरूप है और यातैंहीं आत्मा स्वप्रकाश है स्व कहिये स्वरूपसैं अभिन्न जो विश्व तद्रूप सैं प्रकाशै है सो स्वप्रकाश यह स्वप्रकाश शब्दका अर्थहै तो यह सिद्ध होगया कि विश्व चित्प्रकाश रूप है जो कहो कि जगत् आत्मामैं जो प्रकाशकता है तिसका प्रकाशक है आत्माका प्रकाशक नहीं है तो हम कहैं हैं कि आत्मा मैं जो प्रकाशकता है सो आत्म रूप ही है जो कहो कि प्रकाशकता तो धर्मरूपहै यातैं जड है और आत्मा चित् है तो प्रकाशकता आत्मरूप कैसैं हो सकै तो हम कहैं हैं कि अविद्योपादानक पदार्थ जड होयहै जो अविद्या है ही नहीं तो प्रकाशकता जड कैसैं हो सकै यातैं चिद्रूपही है ।

जो कहो कि जगत् वाह्य है और ब्रह्म चित् आन्तर है यातैं जगत् ब्रह्म होसकै नहीं तो हम कहैं हैं कि वाह्य आन्तर भाव होय तो आत्मा परिछिन्न सिद्ध होवै सो तो यौक्तिकमतावलम्बियोंकै भी संमत नहीं है यातैंहीं वशिष्ठनैं कही है कि

वाह्यश्चाभ्यन्तरश्चाऽर्थो न संभवति कश्चन ॥

जो कहो कि ऐसैं कथनसैं तो यह सिद्ध होय है कि द्रष्टाही दृश्यताकों प्राप्त होयहै तो हम कहैं हैं कि

द्रष्टा न याति दृश्यत्वं दृश्यस्याऽसंभवादतः।
द्रष्टैव केवलो भाति सर्वात्मैकघनाकृतिः॥

ऐसें वशिष्ठनें कही है यातें यह ही मानों कि द्रष्टा दृश्यताकों प्राप्त नहीं भया है किन्तु द्रष्टाही सर्वात्मरूप प्रकाशमान है जो कहो कि जगत् चित्कारणक है यातें चिद्रूप है ऐसे मानें तो आपकी संमति है अथवा नहीं तो हम कहें हैं कि

कार्यकारणताभावाद्भावाभावौ स्त एव नो।
इदं च चेत्यते यद्यत्स्वात्मा चेतति चेतितम॥

ऐसें वशिष्ठनें कही है यातें कार्यकारण भाव माननें में हमारी संमति नहीं है यद्यपि इस ग्रन्थ में सर्व कों ब्रह्मरूप सिद्ध करणें के अर्थ जगत् कों ब्रह्मकारणक कहा है तथापि उपदेशका तात्पर्य कार्यकारणभाव माननें में नहीं है किन्तु यौक्तिकमतावलम्बि शिष्यकों उसकी प्रक्रियासें समुझाया है यातें उपदेशमें न्यूनता नहीं है॥

जो कहोकि मेरे तो आत्मामें और जगत् में चिद्दृष्टि और जड दृष्टिही है केवल चिद्दृष्टि कैसें होय तो हम कहें हैं यावत् काल पर्यन्त चिज्जड दृष्टिका अभ्यास यौक्तिकमतानुयायि पुरुषों की संगतिसें किया है तावत्काल पर्यन्त अनुभवी पुरुषों की संगति सें चिद्दृष्टिका अभ्यास करोगे तब केवल चिद्दृष्टि होगी जो कहो कि जगद्दृष्टि की निवृत्ति कैसें होगी तो हम कहें हैं कि इस ग्रन्थ के अभ्यास सें अविद्याका त्रैकालिक अभाव सिद्ध होकर अनुभवारूढ होगा और जगत्का उपादानकारण केवल ब्रह्म सिद्ध होनें सें जगत् केवल ब्रह्मरूप सिद्ध होगा तब जगद्दृष्टिकी निवृत्ति होगी॥

अब यह और समुझो कि अनुभवी पुरुषके अर्थ में आत्मभाव होयहै यह सिद्ध करने के अर्थ इस ग्रन्थ में सर्वके ज्ञान स्वतःसिद्ध कहाहै और उसके स्वतःसिद्ध होनें में युक्ति अनुभव दिखाया है।

अब हम यह और कहें हैं कि यौक्तिक मतमें जैसें साक्षात्कार करनेंका प्रकार है तैसें आत्मसाक्षात्कार करिकें इस ग्रन्थके अभ्याससें सर्वत्र चिद्दृष्टि होय करिकें दुर्लभ पुरुषों की श्रेणी में प्रविष्ट होय करिकें कृतार्थ होवें इन्हीं पुरुषोंकों

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

इस वाक्य सैं श्री कृष्ण नैं दुर्लभ कहेहैं और हमनैं इस मतका खण्डन किया है सो अनुभवांश मैं नहीं है किंतु प्रक्रियांश मैं है पूर्व पक्ष के विना सिद्धान्त होसके नहीं यातैं इसके मतांश की प्रक्रिया पूर्वपक्षमैं कही है विरोधसैं नहीं कही है यातैं हीं रामसौभाग्यशतक मैं वादांश का त्याग करिकैं यौक्तिक मतके सारांश वर्णन सैं आत्मसाक्षात्कारका वर्णन हमनैं हीं किया है ॥

इस ग्रन्थ कै दोय टीका हैं एक तो संक्षिप्त संस्कृत टीका है ओर द्वितीय भाषा टीका है इस ग्रन्थके आदि मैं यह २० प्रश्नहैं कि

कोधर्मः १ किं फलं तस्य २ हेयं किं ३ ध्येयमस्ति किम् ४ कर्त्तव्यं किं सदा नृणां ५ जेयं ६ ज्ञेयं च किं भवेत् ७ का हानिः ८ कः परो लाभः ९ किं ज्ञानं १० तस्य-साधनम् किं ११ ज्ञानं कारयेत्कश्च १२ कस्मिन् दृष्टे कृतार्थता १३ को दुर्जयः १४ सुखं केषां १५ दुःखं किं १६ मुक्तिरस्ति का १७ कः शिष्यः १८ को गुरुःप्रोक्तः १९ सर्वे कुत्राऽविवादिनः २०

इन मैं एक एक प्रश्न के उत्तर मैं पाँच पाँच शार्दूल विक्रीडित छन्द के श्लोक हैं ऐसैं यौक्तिक मत की प्रक्रिया सैं आत्मसाक्षात्कार का वर्णन है यह ग्रन्थ टिकट भेजनें सैं मुकाम जयपुर ठाकुर सौभाग्यसिंहजीकी हवेलीमैं ठा-हरीसिंह जी के पास मिलैगा सो इस के अभ्यास सैं आत्मानुभव सिद्ध करि कैं पीछैं इस स्वानुभवसारके अभ्याससैं सर्वत्र चिद्दृष्टि करिकैं कृतार्थ होवैं ऐसैं दोनौं ग्रन्थ जीवन्मुक्ति के साधक हैं यातैं उत्तम पुरुषों कौं उचित है कि ऐसैं जीवन्मुक्ति सिद्ध करैं ओर कल्पित पदार्थों के मनन सैं हीं व्यर्थ कालक्षेप न करैं ॥

अब यह ओर समुझो कि अनुभवी पुरुष तो सर्व कौंआत्म रूप जानि कैं सर्व के हित मैं हीं प्रवृत्त होय है काहेतैं कि आत्मा के अहित मैं कोई भी प्रवृत्त होवै नहीं ओर यौक्तिकमतानुयायि पुरुष वहुधा सद्ब्रह्मानुभव हो अथवा न हो सर्व कौं मिथ्या मानि कैं अविहित

आचरण मैं निःशङ्क प्रवृत्त होय हैं यातैं लोकनिन्दा के भाजन होय हैं देखो श्रीकृष्ण नैं आसुरी संपत्ति वाले पुरुषौं का वर्णन किया है तहाँ ऐसैं कही है कि

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ॥

इसका अर्थ यह है कि वे जगत् कौं असत्य और अप्रतिष्ठ अर्थात् विनाशी कहैं हैं तो इस सैं यह सिद्ध होय है कि जगत् कौं सत्य और अविनाशी मानैं हैं वे दैवी संपत्ति वाले पुरुष हैं और इन संपत्तियौं के फल विषय मैं आज्ञा किई है कि

दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ॥

तो विवेकी पुरुष विचार दृष्टिसैं देखैं कि इन मैं प्रशंसनीय कोन है और सर्वत्र चिद्दृष्टि करनैं वाले की निन्दा कहीँ भी नहीं है यातैं सर्वत्र चिद् दृष्टि का होना हीं कल्याण हेतु है सो इस ग्रन्थ के मनन सैं सहज है।

अब यह और समुझो कि जिस की वासना दृढ होय है पुरुष उस स्वरूप कौं हीं प्राप्त होय है यह सर्व संमत है जैसैं जडभरत मृगवासना सैं हरिण भये यह पुराणप्रसिद्ध है तैसैं हीं इस ग्रन्थ के मनन सैं चिद्वासना के उदय सैं चिद्रूपता की प्राप्ति इस ग्रन्थ के मननका फल है और जे मिथ्या मनन सैं मिथ्या वासनाका परिपाक करैं हैं उनके मिथ्या की प्राप्तिही फल है जो कहो कि यौक्तिक मतानुयायि पुरुष तो मिथ्यात्व की वासनाकौं वैराग्य की कारण कहैंहैं यातैं वैराग्य इसका फल है तो हम कहैंहैं कि वे तो वैराग्य कौं इसकाफल कहैंहैं और हमकौं गुप्त रागवृद्धि इसकाफल प्रतीत होय है काहेतैं कि बड़े २ विद्वान् जिनसैं वेदान्त शास्त्र के सन्देहौं कौं निवृत्त करते रहे ऐसे साधु और जिनकै संस्कृत भाषासैं इतर भाषा बोलनैं का परित्याग और जे एकाकी एकस्थान मैं रहैं और जिनकौं सकल पुरुष वीतराग जानैं उनके शरीर पात के अनन्तर उनके पास गुप्त द्रव्यका संचय ६०००० सिद्ध हुवा यह प्रसिद्ध है हम व्यवहार विरुद्ध जानिकैं उनका नाम ग्रहण नहीं करैं हैं।

और जिनकै सर्वत्रचिद् दृष्टि है उनमैं यह दोष संभवै नहीं काहेतैं कि जो उनकै व्यवहारार्थ संचय भी होय तो उनका सर्व व्यवहार चिद्रूपसैं हीं होय है उनके विषयमैं प्राचीन आचार्य्यौं नैं कही है कि

सर्वोऽपि व्यवहारोऽयं ब्रह्मणा क्रियते बुधैः ॥

इसका अर्थ यह है कि अनुभवी पुरुष सर्व व्यवहार ब्रह्ममें हीं करैं हैं जैसैं भावनगरमैं गगा ओझा ओर जूनागढमैं गोकुलजी झाला यह सर्वत्र ब्रह्म दृष्टिसैं हीं सकल राजकार्य करते जीवन्मुक्त रहे ओर जे व्यवहारकौं मिथ्या देखैं हैं उनके व्यवहार संभवै ही नहीं काहेतैं कि जो मृगतृष्णा के जलकौं मिथ्या जानैं है सो पानकरणैं मैं प्रवृत्त होवै नहीं तो इसकथनका तात्पर्य यह है कि जे जगत्कौं मिथ्या मानैं हैं उनके आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर व्यवहार संभवै नहीं यद्यपि इननैं आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर अविद्याकी निवृत्ति तो मानी ओर जगत् की अनिवृत्ति देखिकैं प्रारब्ध तथा अविद्या वासना इत्यादि कारणौं की कल्पना जगत् की अनिवृत्तिमैं किई तथापि यहाँ इन कारणौं का असंभव देखिकैं (जो जगत् अविद्या कार्य होता तो अविद्या की निवृत्तिसैं इसकी निवृत्ति होती ओर जो अविद्या जगत्की तरँहँ व्यवहारिक होती तो जैसैं आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर जगत् की निवृत्ति नहीं भई तैसैं इसकी भी निवृत्ति नहीं होती अर्थात् जैसैं घट मृत्तिका का कार्य है तो मृत्तिका की निवृत्ति भयें घट की निवृत्ति होय है तैसैं जगत् जो अविद्या का कार्य होता तो अविद्या की निवृत्ति सैं निवृत्त होता ओर जैसैं व्यावहारिक घटकी निवृत्ति नहीं होय है तो उसकी उपादान मृत्तिका भी बनी हीं रहै है तैसैं जो आत्मसाक्षात्कार के भयें व्यावहारिक जगत् बना रहा तो जगत् की उपादान अविद्या निवृत्त हो सकै नहीं ओर अनुभव करैं हैं तो अविद्या प्रतीत होवै नहीं किन्तु आत्मामैं अविद्या का त्रैकालिक अभाव भासै है तो जगत् अविद्याकार्य कैसैं हो सकै) इनकै ऐसी शङ्का होय है सो इनके मत की प्रक्रियासैं इसका समाधान होसकै नहीं यातैं यह शरीरपात पर्यन्त सन्दिग्ध ही रहैंहैं ।

ओर जिनकै सर्वत्रचिद्दृष्टि है उनकै इस शङ्का के उत्थानका अवकाश ही नहीं है यातैं शरीरस्थिति पर्यन्तअसन्दिग्ध होकर आत्मानन्दानुभव करैं हैं ओर सदा सुखमग्न रहैंहैं यातैं सकल अधिकारी पुरुषौंकौं अखण्ड आनन्द होनैं के अर्थ हमनैं इस ग्रन्थकौं बनाया है सो सकल अधिकारी पुरुष इसकौं ग्रहण करिकैं इसके मननसैं सर्वत्रचिद्दृष्टि करिकैं कृतार्थ होवैं ओर ग्रन्थकर्त्ताके परिश्रमकौं सफल करैं यह प्रार्थना है ।

अब यह हम ओर कहैंहैं कि इसग्रन्थमैं देखिकैं यौक्तिकमतानुयायि

पुरुषों सें सभामें पूर्व पक्ष नहीं करना चाहिये काहेतें कि इसमें अनुभवी पुरुषों के मनन किये प्रश्न हैं यातें असमाधेय हैं सो उत्तरकी अस्फूर्ति सें वह संकुचित होंगे इस परमार्थ हेतु ग्रन्थसें परमार्थ ही सिद्ध करना ओर योग्य जिज्ञासुकों इसका अभ्यास कराना ओर ज्यो स्वकीय निश्चय यह ही होवै कि जगत् प्रत्यक्ष जड है इसमें चिद् दृष्टिका होना उपासना हीं है तो यौक्तिक मतानुयायि पुरुषोंकों उचित है कि अपनेंकों जो साक्षात्कार भया है तो आत्मा एक अन्तःकरण के धर्मोंका ही प्रकाशक प्रतीत भया है यातें परिछिन्न तप्रीत भया है तो इस में पूर्णता का निश्चय जो है सो ज्ञान कैसें मान्याँ जाय यह भी उपासना ही है ऐसें कोई प्रश्न करै तो इस का समाधान कहा है ऐसा विचार करना चाहिये परन्तु यह समाधान ऐसा होवै कि जिस कों सुनिकैं प्रश्न कर्त्ता कै सन्तोष हो जावै ॥

जो कहो कि इस के समाधान तो वेदान्त ग्रन्थों में लिखे हैं तो हम कहैं हैं कि वे समाधान तो अनुभवी पुरुषों की दृष्टि सें अयुक्त हैं यातें उन में जे दोष हैं वे इस ग्रन्थ में प्रदर्शित किये हैं सो वे अनिवार्य हैं जो कहो कि आत्मा में पूर्णता श्रुतिप्रमाण सिद्ध है तो हम कहैं हैं कि सर्वात्मभाव भी श्रुतिप्रमाण सिद्ध है तो इन में एककों माननाँ ओर एक कों न माननाँ यह कैसें उचित है जो कहो कि ज्ञानोत्तर काल में हम जगत् कों बाधदृष्टि सें ब्रह्मरूप ही मानें हैं तो हम कहैं हैं कि उपनिषदों में कहीं ऐसा लेख दिखावो कि

अयमात्मा ब्रह्म ॥

इस महा वाक्य सें आत्मा में जो पूर्णत्व प्रतिपादन है सो तो स्वरूप दृष्टि सें है ओर

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

यहाँ जो सर्व में पूर्णता प्रतिपादन है सो बाध दृष्टि सें है सो ऐसा लेख उपनिषदों में कहीं भी नहीं है ॥

अब हम यह ओर कहैं हैं कि उपनिषद् अथवा ब्रह्मसूत्र अथवा गीता इनके रहस्य अर्थ के बोधकी इच्छा होय तो केवल मूल ग्रन्थ का ही दृढ अभ्यास करो ओर कहीं पदके अर्थ में अथवा वाक्य के अन्वय में सन्देह होय तो शङ्कर कृत भाष्य सें उसकों निवृत्त करो ओर मूल के वाक्यों

की अभेद सैं व्यवस्था नहीं होवे तो अनुभवी पुरुषों का अन्वेषण करिकैं उनसैं व्यवस्था कौं ग्रहण करो और भाष्यकार व्याख्यान करैं हैं उससैं भी यह विचार करो कि यह लेख व्यवहार दृष्टि सैं है अथवा परमार्थ दृष्टि सैं है जो परमार्थ दृष्टिसैं होवै तो विचार करना और व्यवहारदृष्टिसैं होवे तो विचार नहीं करना काहेतैं कि व्यवहार तो अनुभवी पुरुषों का भी अनियत होय है ऐसैं हमनैं इस ग्रन्थका तात्पर्य संक्षेप सैं वर्णन किया है विशेष लेख सैं पुनरुक्ति होयहै यातैं हम उपरत होय हैं परन्तु अनुभवी पुरुषों सैं यह प्रार्थना है कि आप इस ग्रन्थका साद्यन्त अवलोकन करैं और आपका तत्तत्स्थल मैं जो विशेष विचार होय तो उसकौं लिखकर ग्रन्थकर्त्ताके पास भेज देवैं यह लेख द्वितीय आवृत्ति मैं आपके नामसैं टिप्पणी की तरैंह इस ग्रन्थ के सहित मुद्रित कराया जावेगा जैसैं ग्रन्थ कर्त्ता नैं हीं अपना विशेष विचार अनुव्यवसायकी स्वप्रकाशता के विषय मैं मुद्रित कराया है ॥

अब हम आत्मविद्या होनें का अनुभूत क्रम भी संक्षेपसैं प्रकाशित करैं हैं प्रथम श्रुति स्मृति सिद्ध धर्मका यथाशक्ति मुक्तिकाम सेवन करिकैं अन्तःकरणकौं शुद्ध करै जब धर्म सेवन सैं अशुभ वासना निवृत्त हो जावै तब ज्ञान कामनासैं सगुण ब्रह्मकी उपासना करै जब इसका सँस्कार ऐसा दृढ हो जावै कि जाग्रत् मैं ध्यान समय मैं तथा स्वप्न मैं अपनें इष्टका दर्शन होनें लगै तब शनैः २ उपनिषदों के श्रवणमैं प्रवृत्त होवै और जब श्रवण करै तब अपनें इष्टसैं ऐसैं प्रार्थना करै कि हे परमेश्वर आप कृपादृष्टि करिकैं वेदान्त के रहस्य अर्थका प्रकाशकरो और श्रवणसमय यह है कि जब चित्त निर्विक्षेप होवै और श्रवण कालमैं खण्डन दृष्टिका त्याग करिकैं तत्त्व दृष्टिसैं श्रवण करै जब यह निश्चय होजावै कि उपनिषदों का अभिप्राय जीव ब्रह्म के एकत्व प्रतिपादन मैं है तब उनका तो नित्य यथाशक्ति पाठ करै और अनुभवी पुरुषों के रचित पञ्चदश्यादि ग्रन्थों का मनन करै ईश्वर प्रणिधान पूर्वक जो पुरुष इनका मनन करै है उसके प्रमेय गत सन्देहों कौं ईश्वर ही स्वयं उपदेश करिकैं निवृत्त करैहै यह अनुभव सिद्ध है यह वृत्तान्त हमनैं हमारे जीवन चरित मैं लिखा है ऐसैं मनन करनैं तैं जे चमत्कार भये हैं वे यहाँ लिखे हैं ॥

और इन ग्रन्थों का मनन करै तब अधिकारी पुरुष कौं चाहिये कि

प्रथम आवृत्ति मैं तो इनमैं विषय विभाग करै तात्पर्य यह है कि इनमैं कल्पितांश और अनुभवांश इनका विभाग करै पीछै कल्पितांशका त्याग करिकैं अनुभवांशका मनन करै ऐसैं मनन करतैं २ प्रमेय वस्तु मैं संशय निवृत्त होकर इसके स्थिरता होजाय है यह ही निदिध्यासन है इससैं आत्म साक्षात्कार होय है इसके अनन्तर आभास वाद की प्रक्रिया सैं अभेद का मनन करै पीछैं प्रतिबिम्बवादकी प्रक्रियासैं अभेदका मनन करै पीछैं अवच्छेदकवाद की प्रक्रिया सैं अभेदका मनन करै पीछैं एक जीववादकी प्रक्रियासैं अभेदका मनन करै परन्तु यावत्काल अपनैं साक्षिस्वरूप मैं पूर्णता प्रतीत होवै नहीं तावत्काल आपके अभेद सिद्धि मैं निश्चय नहीं माननाँ चाहिये यद्यपि इन ग्रन्थों मैं अभेद की साधक युक्तियाँ तथा प्रमाण बहुत हैं तथापि उनसैं अभेदका भान होवै नहीं काहेतैं कि अभेदभानका प्रकार रहस्य है यातैं परम्परोपदिष्टओर जिनकों अभेद भान है उनके कहे उपाय सैं जीव और परमात्मा इनके अभेदका भान होय है जैसैं हमनैं इस ग्रन्थ के अन्त मैं गुरूपदिष्ट स्वानुभूत एक प्रकार लिखा है ऐसैं जब जीवात्मा और परमात्मा इनके अभेदका भान होजावै तब जीव जगत् और परमात्मा के अभेदकी दृष्टि करणें के अर्थ इस ग्रन्थका अभ्यास करै ऐसैं सर्वत्र चिद्दृष्टि करिकैं पुरुष कृतकृत्य होयहै सो यह दृष्टि यावत्काल नहीं होवै तावत्काल अपनैं इष्टदेवसैं प्रार्थना करता रहै और शङ्कर कौं अथवा श्रीकृष्ण कौं इष्टदेव मानैं यह हमारा अनुभव है ।

ओर द्वितीय अभेदभानका प्रकार इस ग्रन्थका मनन है जे शास्त्रज्ञ नहीं हैं वे तो पूर्वोक्त प्रकार सैं अभेदानुभव करैं ओर जे शास्त्रज्ञ हैं वे इस ग्रन्थ के मनन सैं अभेदानुभव करैं हमारे दोनों प्रकार अनुभूत हैं ॥

अब अनुभवी पुरुषों सैं यह प्रार्थना है कि आप मैं जिन जिनकों जिस जिस प्रक्रिया सैं गुरुनैं अभेदभान कराया है आप उस उस प्रक्रिया कौं प्रसिद्ध करैं तो अधिकारी पुरुष युक्ति जालसैं निकसि कैं कृतार्थ होवैं ओर आपका तथा आपके उपदेशकों का धन्यवाद करैं जैसैं हमारे इस ग्रन्थ कौं पढिकैं हमारे उपदेशकों का धन्यवाद करैंगे यातैं हीं अनुभवी पुरुषों के विषय मैं विद्यारण्य स्वामी नैं ऐसैं कही है कि

अज्ञप्रबोधान्नैवाऽन्यत्कार्यमस्त्यत्र तद्विदः ॥

इसका अर्थ यह है कि अज्ञ कौं बोध करानैं तैं भिन्न तत्त्वज्ञ के कार्य नहीं है ।

और सगुण ब्रह्म की उपासना कहनेंका प्रयोजन यह है कि ऐहिक दुःखकी निवृत्ति के बिना स्थिरता होवै नहीं और स्थिरता के बिना आत्मविद्या होवै नहीं सो यौक्तिक मतानुयायि पुरुष तो श्री कृष्ण कों सगुण ब्रह्म मानैं हैं और उनकी यह प्रतिज्ञा है कि

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्य्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

इस का अर्थ यह है कि जे भेद बुद्धि का त्याग करिकैं मेरी उपासना करैं हैं नित्याभियुक्त जे वे हैं तिनको मैं योग क्षेम करूँ हूँ यातैं सगुण ब्रह्म की उपासना करना यह हमारा निश्चय है ॥

इति शुभम् ।

सोरठा ॥

हरि नहिं पूरन होइ तो मैं अरु जग हैं सही ।
हरि है पूरन ज्योइ तो मैं अरु जग एक हरि ॥१॥
आपहि होत उपास्य आप उपासक होइ कैं ।
करै नित्य ही दास्य हरि लीला को जान सक ॥२॥
श्रुति पावत नहिं पार रैन द्योस वरनन करत ।
जो नर रत धन दार सो किहिं विधि वरनन करहि ॥३॥
अपनी रचना देखि आप हि मोह विवश भयो ।
वेदतत्वकों लेखि सर्वरूप आप हि लह्यो ॥४॥
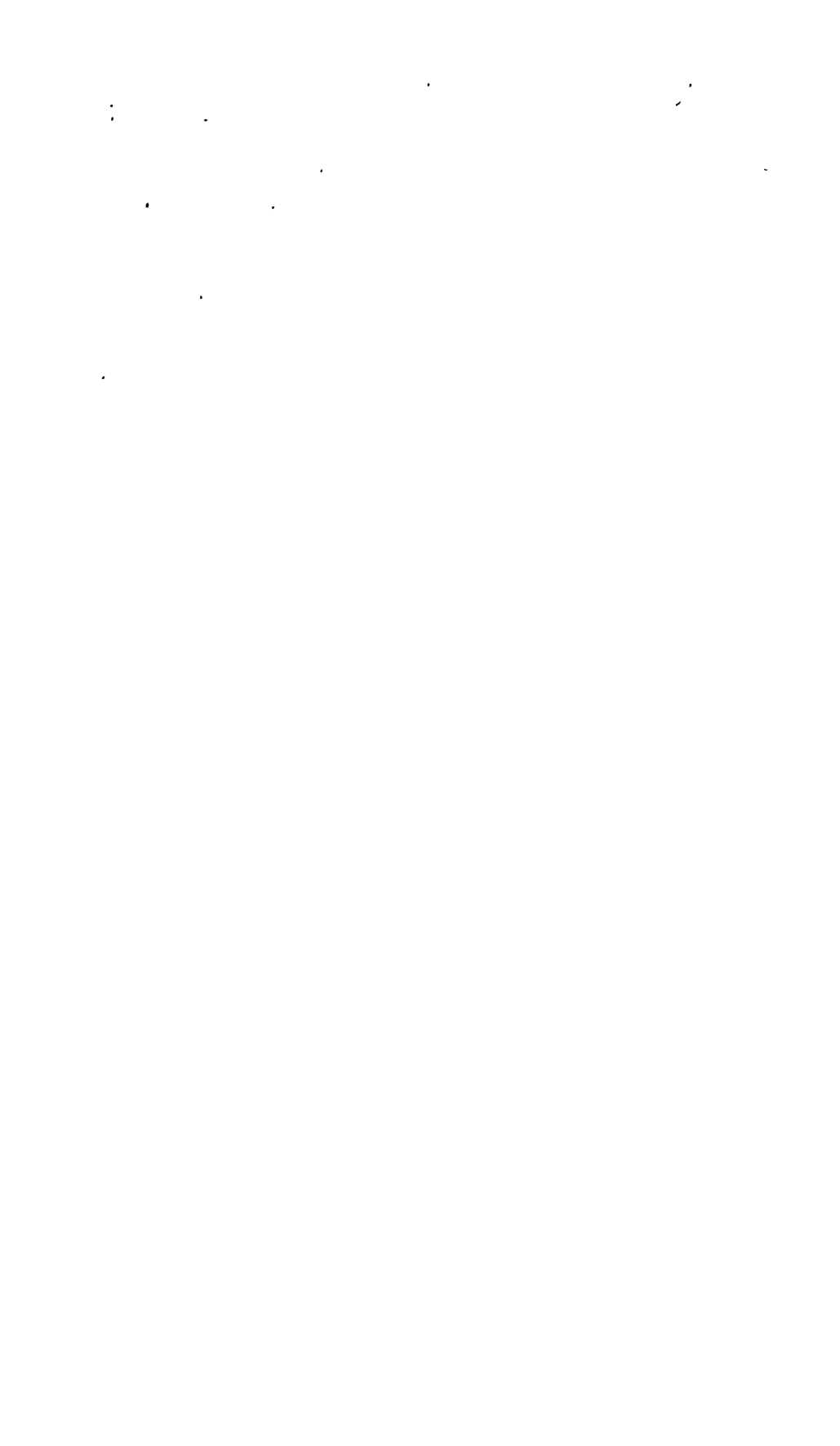
स्वानुभवसार का शुद्धि पत्र ।

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२	१७	अज्ञान
२	२४	सहायतासैं
३	१३	पदार्थ
३	१७	दूषण
३	१९	दूर
३	२१	परन्तु
४	३	हुवा
६	१	कर्म
६	५	करैगा
६	७	यातैं
६	१०	का तो
६	१४	पटादिक
८	३	प्रतीति
९	२४	यातैं
१०	२१	दूसरा
१०	२५	अभाव
१६	१९	कहयाँ
१७	३	अप्रामाणिक
१९	१३	कपाल
२०	९	तैसैं
२०	२१	महत्व
२०	२३	त्र्यणुक का
२२	२४	तो
२२	२८	व्यर्थ
२३	३०	प्रत्येक
२४	२२	आरम्भ
२४	२६	जैसैं
२५	३	आरम्भवाद
२६	८	मानैंगे तो

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२६	२३	अन्यथा सिद्ध
२७	६	मानौं
२८	१४	कि क
२८	३०	दूध और कार्य है
३०	२	अवयवौं सैं
३१	४	स्पर्श
३१	१०	आकाश
३१	१४	अन्तमैंमूल
३१	१९	शब्द
३२	७	अप्रामाणिक
३२	१५	नित्यपर्णौं
३२	३०	सिद्ध होगा
३६	२९	विनिगमना
३८	२८	यत्न
३९	१९	घट
४०	२४	होगा
४२	७	दुःखौं कूँ
४३	३०	कहैं हैं
४६	६	स्वप्रकाश
४९	२	का यह अर्थ
५७	२४	अनुव्यवसाय
६०	१४	उसका
६१	१५	प्रागभाव का
६१	२३	जावौं
६६	२५	नीयमाना
७२	८	तात्पर्य
७४	२४	चर्ममनःसंयोग
७४	३०	ज्ञानसामान्य
७६	३	ज्ञान विशेष २
७६	६	ज्ञानविशेष

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
७७	१	विशेष ज्ञान
७७	२	ये ज्ञान
८१	२७	असद्रूप
८१	२९	सद्रूप
८२	१	असद्रूप
८२	१४	असत्कार्यवाद
८२	१५	असत्
८४	१८	वर्त्तमानकालासत्
८४	१८	पूर्वोत्तरकालासत्
८४	१९	वर्त्तमानकालासत्
८४	२१	पूर्वोत्तरकाल
८६	५	बताया
८६	१४	हो गये
८६	२०	सद्रूप
८६	२१	सद्रूप
८६	३०	गुणसमुदायरूप
८८	४	आवरण
८८	१५	न्याय के
८८	२९	दो
८९	१४	समुदाय
९१	२९	गुण समुदाय
९२	१०	गुणसमुदाय
९४	२९	निराधार
९५	८	स्वरूपलक्षण
९५	१५	ये वी
९५	३०	निर्पक्ष
९६	६	गन्धर्वनगर
९६	१५	अध्यात्मविद्या के
९६	२७	निवृत्त
९६	२८	सद्रूप
१००	१३	तुम
१००	१४	स्थितिस्थापकौं
१०१	१३	इत्यादिक
१०१	१५	मूल १०४।७ सुजाण
१०५	२१	समवाय सम्बन्ध
१०६	१५	तुम
१०७	२	न्यायका
१०८	३०	तद्रूप
११२	१	निरावरण
११२	२९	काव्य प्रकाश
११३	२२	नाश
११४	२३	अभाव
११५	३	नष्ट भी
११५	६	अज्ञान
११५	२९	अज्ञानी
११६	२२	जीवकूँ
११६	२२	वस्तुका
११७	७	जीवोंमें
१२१	२७	ब्रह्महूँ
१२२	५	षट्शास्त्र
१२२	१५	आजन्म
१२३	२७	भगवान् के
१२४	२	ईक्षण
१२७	१९	अन्येन
१२८	२५	पुरुष
१२९	२०	अद्वैतकी
१३०	५	स्वरूपतैं
१३१	२	उपदेश
१३१	१६	ऐसैं
१३२	१२	ब्रह्मरूप

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
१३२	१५	हो गई
१३३	२	होय
१३३	१३	नास्तिक
१३३	२१	निषेध
१३४	२	हम
१३५	२४	वृत्ति
१३६	२१	प्रागभावध्वंस
१३८	८	इनकी
१३८	२१	चक्रवर्तीननैं
१४१	१	ईश्वर
१४३	४	निमित्तोपादान
१४४	५	मानैं
१४४	२३	व्याख्यान
१४५	११	इस
१४५	१५	च्छ,णोति
१४६	२६	मन्विच्छाद्भिः
१४६	२७	मन्विच्छ
१४८	४	अर्थ
१५१	११	अबाध्य
१५१	१२	असत्
१५१	२४	चतुर्थी
१५१	२९	इस ही
१५२	३०	पूछैं
१५३	५	व्यवहार
१५३	६	वो
१५३	७	व्यवसाय
१५३	१०	जावाँ
१५३	१०	वो
१५३	२०	उयो
१५४	२८	अज्ञानवादियाँ
१५४	१	भ्रान्त(
१५४	२	ये सैं
१५४	५	मानौं
१५४	९	प्रतीति
१५४	२५	वहाँ
१५४	३०	मानणैं
१५४	३०	पड़ैं गे
१५५	५	मानणैं
१५५	९	प्रतिबन्धक
१५६	९	उस
१५८	२०	अजी
१५९	२८	अज्ञान का
१६०	१९	जगत्
१६१	११	की वी
१६१	१७	सर्प का
१६१	२७	सर्प के
१६१	२८	ये
१६१	२८	पीछैं
१६३	२१	विषया
१६४	१३	निवृत्त
१६५	१९	साधकता
१६५	२२	व्यवहार
१६६	६	अनुव्यवसाय
१६६	७	उसकूँ
१६८	१९	विचित्रता
१६९	३	करिकैं
१६९	४	दुर्लभ
१६९	५	एक
१६९	९	ध्याय
१६९	१५	संन्यस्य
१६९	१८	चिरात्यार्य

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
१६९	२०	मेरे
१७०	१०	दोष
१७०	१०	मिथ्यात्व
१७०	१२	परमात्म
१७०	१२	कल्पना
१७०	१८	चिद्रूप
१७१	६	हुवा
१७१	१३	स्पर्शनं
१७१	१६	करिकैं
१७१	१८	वता
१७१	२०	वाक्य
१७१	२७	करणैं
१७२	१६	चेतनाश्रित
१७२	१८	करिकैं
१७२	१९	रज्जुका
१७२	२०	दोनूँ
१७३	१	तहाँ
१७३	१०	मानैं
१७३	१२	कारण
१७३	१३	वन्ध्या
१७३	१४	होवैं
१७३	१५	ख्यातिका
१७३	१५	अङ्गीकार
१७३	१५	स्फटिक
१७३	१६	होवै
१७३	१९	सवन्ध
१७३	२०	पुष्पाकार
१७३	२३	होणैं तैं
१७३	२४	संम्बन्ध
१७३	२७	रज्जुसर्प

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
१७३	२७	अनिर्वचनीय
१७३	३०	पदार्थौं
१७३	३०	स्वप्नपदार्थौं मैं बी
१७६	५	प्रमाता की
१७६	२३	जिसकूँ
१७६	२८	उस ही
१८१	१७	सर्वे
१८२	१३	रज्जुका
१८३	१	मानैं
१८६	११	वहाँ
१८६	१४	अदर्शन
१८६	१५	संवन्ध
१८६	२१	तौ
१८६	२२	आत्माका विशेष
१८६	२७	समुझै
१८७	२	जलमैं
१८७	२९	उपादान
१८७	३०	अनुभव
१८८	१७	उपासक
१८९	१२	उद्भूत
१९१	७	माँहिं
१९१	१०	कवहू
१९१	१२	नाँहीं
१९२	४	डेरोल्या
१९३	११	नहिं
१९५	६	विषयका
१९५	३०	ज्ञान वी
१९६	५	वृत्तिप्रभाकर
१९९	२६	ज्ञानका करण
२०१	१३	प्रयोजन

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२०१	२३	वेदान्त
२०१	२८	करैं
२०२	४	बताया
२०२	६	ज्ञान
३०२	७	तुमारे
२०२	८	दुःखौँ का
२०२	२९	अब
२०२	३०	चतुर्थ
२०५	८	अभिमान
२०५	८	प्रतीति
२०५	११	किन्तु१६ सो
२०५	२२	विशेष्य
२०५	३०	व्यवहार
२०५	३०	अवकाश
२०६	४	आभासकूँ
२०६	७	काहेतैं
२०६	२०	प्रमाता
२०६	२४	प्रतीति
२०७	१५	प्रवेश
२०७	१६	च्छेदक
२०७	२८	प्रतिबिम्बवाद
२०७	२९	प्रथम
२०७	२९	प्रतिबिम्ब
२०७	३०	ज्योहठ करिकैं
२०८	२	अन्तःकरण
२०८	७	प्रवेश
२०८	८	बस
२०८	१०	ज्यो
२०८	११	दर्पण
२०८	१२	सावयव

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२०८	१५	एक
२०८	१८	परमात्म
२०८	२५	दर्पण कूँ
२०८	२६	दर्पण के
२०८	२६	दर्शन का
२०८	२८	उलटणाँ
२०८	२९	ह्रस
२०९	४	सकै
२०९	६	अब
२१०	२	विचार
२१०	३	हम
२१०	५	और
२१०	८	चाहिये
२१०	११	बिम्बरूप
२१०	११	प्रतिबिम्बवाद
२१०	१६	उयो
२१०	२२	प्रवृत्ति
२१०	३०	उपाय
२११	४	करण मत
२११	८	मनुते
२१२	१०	महावाक्य
२१२	१२	बो
२१३	६	वार्त्ता वर्ष
२१३	१०	अर्थ
२१३	१८	अर्थ
२१३	२५	सो
२१४	१	वाक्य मैं
२१४	२६	बो
२१४	३०	बोध
२१५	२७	बी

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२१५	२८	फलव्याप्ति थी
२१५	२८	रही
२१५	२८	वृत्ति
२१५	२८	आवरण
२१५	२८	भङ्ग
२१५	२८	रूप
२१५	२८	उपयोग
२१५	२८	क्रिया
२१६	२	वृत्ति व्याप्ति
२१६	८	व्याप्ति
२१६	२८	ओर
२१७	१	कर्त्ता
२१७	१	तो
२१७	३	प्रमाणौं
२१७	१५	प्रत्यभिज्ञा
२१७	२३	प्रत्यक्ष
२१७	२६	इन्द्रिय
२१८	१३	हानि
२१९	१२	व्यर्थ
२२१	१७	नहीं
२२२	२	अभेद
२२२	९	घटकी
२२३	९	पूरक
२२४	२९	करिकैं
२२७	१६	जगद्दृष्टि
२२८	२०	शास्त्रज्ञ
२३०	१२	कारण है
२३१	२२	जनक
२३१	२६	उनकूं
२३१	२६	उन्मत्त

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२३२	२	किञ्चित्
२३२	८	हेतुताको
२३२	२३	हेतुताको
२३२	२५	कहे
२३५	११	कषाय
२३५	१३	कषाय
२३८	१०	जाग्रतके
२३९	५	कहो
२३९	३०	किये हैं
२४०	१४	काहेतैं कि
२४०	१६	अवस्था के
२४२	७	अनिवृत्ति
२४३	२	त्यारतौं
२४३	९	जगत्
२४४	७	तःकल्पित
२४४	२५	विरञ्चिका
२४५	२४	पुरुष
२४६	५	लगावै
२४६	२०	सुषुप्तिमैं
२४७	२५	ब्रह्म ही
३	१५	जगत्
६	८	चेतितम्
६	२०	केवल
६	२३	सर्व मैं
६	२५	होनैं मैं
६	२७	साक्षात्कार
६	२८	करिकैं
६	२९	होवैं नहीं
६	२९	पुरुषोंकौं
८	३०	सर्वोऽपि

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
९	१२	व्यावहारिक
९	२६	अखण्ड
१३	१	कहनैं का

पण्डित गोपीनाथजीके रचित ग्रन्थोंकी सूचना।

१ शिवपदमाला श्रीमन्महाराजाधिराज राजराजेन्द्र स्वर्गवासी श्री १०८ सवाई रामसिंहजी जी सी ऐस आई की आज्ञासैं जयपुरके कालिजमैं छपी २ स्वानुभवाष्टक सटीक मु० मुम्बई निर्णयसागरसैं जावजी दादाजीनैं स्वोत्साहसैं मुद्रित किया ३ रामसौभाग्यशतक टीका २ रा० टा० श्रीहरिसिंह जीनैं अमूल्यही परोपकारार्थ देनेंकों मु० अजमेर राजस्थान यन्त्रालयमैं छपाया है ४ कुलदेवीपञ्चपादिका यह स्वयं मुद्रित कराय करिकैं स्वजातीयोंकों तथा अन्य सज्जनोंकों दिई है ५ श्री भावनगरप्रशस्ति यह स्वयं मुद्रित करायकैं भावनगराधीश्वर महाराज श्री १०८ तख्तसिंहजी जी सी ऐस आई कै नजर किई है ६ विज्ञप्तिपञ्चाशिका यह काव्यमालाके सङ्ग मुद्रित भई है—यह तो सँस्कृत ग्रन्थ छपे हैं ७ उपदेशामृतघटी भाषा गानके पदोंसैं श्रीगीताका अनुवाद यह खेतड़ी नरेश श्री अजितसिंहजी वहादुरनैं मुद्रित कराई है ८ स्वानुभवसार यह अब मुद्रित हुवा है—

१ पञ्चदेवनीराजन २ संतोषपञ्चाशिका ३ नीतिदृष्टांतपञ्चाशिका ४ प्रधानरसपञ्चाशिका ५ आनन्दनन्दन अमरोदाहरण ६ स्वजीवनचरित ७ हरिपञ्चविंशति— यह सँस्कृत ग्रन्थ यथावकाश मुद्रित होंगे—

राजस्थान समाचार।

(चित्रों सहित)

"राजस्थान समाचार" नाम का साप्ताहिक समाचार पत्र "राज-
स्थान यन्त्रालय" अजमेर से सफेद चिकने चौपेजी रायल
पृष्ठ पर बहुत शुद्ध, सरल और सब के समझने योग्य हिन्दी
छप कर प्रत्येक शनिवार को मार्च सन १८८९ से प्रकाशित
यह पत्र राजपूताना प्रदेश के निवासियों को ही क्या वरन सब
वासियों को बहुत कुछ लाभ पहुंचा रहा है। भारत वर्ष का
मनुष्य जो अपने देश और मातृभाषा से कुछ भी प्रेम रखता है,
नीति, सेना, युद्ध, देश के प्रबन्ध राजपूताना के सब राज्य
और विदेशी राज्यों का वृत्तान्त संसार भर के भांति भांति के समाचार
विद्या के प्रचार समाज के सुधार, व्यापार, खेती कविता, देशी
राजा, देशहितैषी और महान पुरुषों के चित्र और जीवन चरित्र बनाना
धर्म और सभा सम्बन्धी सब प्रकार के ठीक २ समाचार जानना, राज
नीति आदि विषयों पर गंभीर तथा यथोचित लेख देखना चाहता
हो वह इस समाचार पत्र को अवश्य ही मोल लेकर सदा पढ़ा करे
और देश तथा परदेश में रहने वाले मारवाड़ी लोगों के लिये तो
घर बैठे अपनी जन्म भूमि के समाचार जानने के लिये यह पत्र एक
उत्तम उपाय है। यह पत्र अन्यायी अधिकारियों के सताये दीन
लोगों की पुकार भी राजाओं तक पहुंचा देता है। शुद्ध भाषा सिखना
पढ़ना तो इसे ध्यान से पढ़ने से शीघ्रही आजाता है
है कि प्रसिद्ध पुरुषों तथा स्थानादि के चित्र दिये जाते हैं अधिक
लिखना ठीक नहीं इसलिये इतना ही लिखते हैं कि एक बेर इस
को पढ़ देखें। वार्षिक मूल्य इसका डाकव्यय सहित ३।) रु० है और
नमूना =) भेजने से भेजा जा सकता है। बिना दाम आये किसी के
पास नहीं भेजा जायगा पत्रादि इस पते पर भेजें:—

मुन्शी समर्थदान
प्रबंधक और सम्पादक राजस्थान समाचार
अजमेर।